उपवास कालमें एन्ड्रयूज और मीराबहनके साथ

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

५५

(२३ अप्रैल से १५ सितम्बर, १९३३)

सत्यमेव जयते

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

१२ मार्च, १९३० को गांधीजी ने सविनय अवज्ञा आन्दोलनका श्रीगणेश किया तो देशमे स्वदेश-प्रेम और नैतिक आदर्शवादकी भावनाका ज्वार आ गया। किन्तु वह धीरे-धीरे घटने लगा था। सितम्बरमें उनके उपवासके कारण पुन: उसमे एक प्रचण्ड तरंग उठती देखी गयी। पर उसके बाद उतारकी प्रक्रिया फिर तेज हो गई और इस खण्डमें —जो २३ अप्रैलसे शुरू होता है और १५ सितम्बर, १९३३ तक जाता है—हम गांधीजी को ऐसे उपायकी खोजमें व्यस्त पाते हैं जिससे जनताकी सद्बुद्धिको प्रेरित और उसकी संकल्प-शक्तिको दृढ़ किया जा सके। जनता इस समय दुहरी लड़ाई लड़ रही थी : एक ओर तो वह अस्पृश्यताके खिलाफ एक धार्मिक आन्दोलन चला रही थी और दूसरी ओर विदेशी शासनके खिलाफ राजनीतिक संघर्ष। जाहिर है कि इस दुहरी लड़ाईके लिए ऊँचे और अटूट मनोबलकी आवश्यकता थी और गांधीजी उसके विषयमे चिंतित थे। हरिजन-सेवाके क्षेत्रमें काम करनेवाले सेवकोंमें तो सचाई और नैतिक सदाचारकी छोटी-मोटी न्यूनता भी उन्हें असह्य मालूम होती थी, तथापि ऐसी घटनाएँ बढ़ती ही जा रही थी। गांधीजी को इससे बहुत दु:ख हुआ और यह मानकर कि कार्यकर्त्ताओंकी इन दुर्बलताओंका कारण उनकी अपनी अपूर्णता है (पृ० १३६), उन्होंने २१ दिनका आत्मशुद्धिमूलक उपवास किया। उपवासके आरम्भमें ही जेलसे छोड़ दिये जानेपर उन्होंने पहले तो सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्थगित कर दिया और बादमें उसे वापिस लेकर उसकी जगह वैयक्तिक सविनय अवज्ञा जारी करनेका विचार प्रगट किया और तदनुसार उसका आरम्भ १ अगस्तको साबरमती आश्रमसे रासकी ओर कूच करके किया तथा उसकी तैयारीके रूपमें इस यज्ञ-कार्यमें "जो मेरे लिए सबसे निकट है, सबसे प्रिय है" (पृ० ३१८), उस साबरमती आश्रमकी आहुति दी—उसे भंग कर दिया। इसके बाद गिरफ्तारी और रिहाईका—"बिल्ली-चूहेके खेल" (पृ० ४४५) का जो अशोभन सिलसिला शुरू हुआ उससे विरक्त होकर गांधीजी ने निश्चय किया कि ४ अगस्तको दी गई एक वर्षकी कैदकी सजाकी शेष अवधिमे वे अब अपनी गिरफ्तारी नहीं देंगे, बल्कि, यदि सरकारने उन्हें मुक्त रहने दिया तो, "मैं यह समय हरिजन-सेवामे और यदि सम्भव हुआ तो ऐसे रचनात्मक कार्योंमें लगानेकी कोशिश करूँगा जिन्हें मेरी सेहत गवारा कर सकेगी" (पृ० ४४६)।

उपवासका निर्णय गांधीजी ने ३० अप्रैलको सुबह-तड़के लगभग अकस्मात् किया था—बल्कि यह कहना ज्यादा सही होगा कि निर्णय तो किसी लोकोत्तर शक्तिका था; उन्होंने उसे स्वीकार किया था। "कुछ दिनोंसे" उनके "अन्तरमें एक तूफान" उठ रहा था (पृ० ७४) और इस निर्णयके तीन दिन पूर्वसे उन्हें नींद नहीं आ रही थी (पृ० ७७)। उसके विषयमें लिखते हुए बादमें उन्होने कहा था, "जिस

रातको वह प्रेरणा हुई, उस रातको बड़ा हृदय-मंथन होता रहा। चित्त व्याकुल था। मार्ग नहीं सूझता था। जिम्मेदारीका बोझा मुझे कुचले डालता था। . . . आवाज सुननेके बाद हृदयकी वेदना शान्त हो गई" (पृ० २६७)। चित्तकी इस व्याकुलताका ठीक कारण क्या था, इसके बारेमें गांधीजी स्पष्ट कुछ नही बता पाये। यह सही है कि नैतिक स्खलनके कुछ बहुत ही चौकानेवाले मामले उनकी निगाहमें आये थे और उन्होने यह स्वीकार भी किया कि "मेरे मनमें कोई सन्देह नहीं है कि भले ही उन मामलोंने अनजाने मुझे उपवास करनेके लिए प्रेरित किया हो, फिर भी मैं उनमें से किसी एक विशेष घटनाकी ओर उँगली उठाकर यह नहीं कह सकता कि पूरी तरहसे या मुख्य रूपसे इस घटनाने मुझे इस यज्ञकी प्रेरणा दी है" (पृ० १३८)। कारण शायद यह था कि अस्पृश्यता-निवारणके अभियानकी गति धीमी थी; वे उसे गति नही दे पा रहे थे और यह परिस्थिति, अपनी लाचारीका यह अहसास, उन्हें असह्य हो गया था। उपवासकी घोषणाके अगले दिन जवाहरलाल नेहरूको लिखते हुए उन्होने अपने मनका दुःख इस तरह प्रगट किया था, "सारे संसारमें" अस्पृश्यता-जैसी "बुरी चीज और कोई नहीं है। फिर भी मैं धर्मको और इसलिए हिन्दुत्वको छोड़ नहीं सकता। हिन्दू-धर्मसे यदि मै निराश हो जाऊँ, तो मेरा जीवन मेरे लिए भार बन जायेगा। . . . यह छीन लिया जाये तो मेरे पास और रह ही क्या जाता है? लेकिन मैं इसे छआछूत और ऊँच-नीचकी मान्यताके साथ सहन नहीं कर सकता। सौभाग्यसे हिन्दू-धर्ममें इस बुराईका रामबाण इलाज भी है" (पृ० ९७)। गांधीजी ने उससे निपटनेके लिए इसी रामबाण इलाज — उपवास — का प्रयोग किया।

उपवास आरम्भ करनेकी तिथि और समयका निश्चय करनेके बाद गांधीजी अविलम्ब उसके विषयमें अपने निवेदनका मसविदा तैयार करने बैठ गये। यह निवेदन कुछ दिन बाद प्रकाशित हुआ था। इस निवेदनमें उन्होंने स्पष्ट किया कि "यह उपवास किसी खास व्यक्तिके विरुद्ध नही है और हर उस व्यक्तिके विरुद्ध है जो इसके आनन्दमें भाग लेना चाहता है। . . . यह आत्मशुद्धिके लिए और साथियोंकी शुद्धिके लिए, अधिक जागरूकता और सतर्कताके लिए हृदयसे की गई प्रार्थना है" (पृ० ७४-७५)। उन्होंने समझ लिया था कि अस्पृश्यताकी बुराई कितनी बड़ी है और उसकी जड़ें कितनी गहरी हैं और इसलिए अस्पृश्यता-विरोधी अभियानकी सफलताके लिए किसी बाहरी संगठन और बाहरी शक्तिसे काम नहीं चलेगा; उसके लिए "आन्तरिक सम्पदा, आन्तरिक संगठन और आन्तरिक शक्ति, दूसरे शब्दोंमें आत्मशुद्धि" की आवश्यकता होगी। "वह उपवास और प्रार्थनासे ही हो सकती है। शक्तिके अहंकारसे हम परमेश्वरके पास नहीं पहुँच सकते, पर दुर्बल और असहायकी प्रार्थनासे पहुँच सकते हैं" (पृ० ७५)। गांधीजी के लिए हरिजन-सेवाका, अस्पृश्यता-निवारणका यह आन्दोलन भी, मन्दिर-प्रवेशके आन्दोलनकी ही तरह, एक धार्मिक आन्दोलन था — इसमें "सुधारकको बाह्य रूपसे अधिक आन्तरिक भावनामें आमूल परिवर्तन लानेकी बात सोचनी चाहिए। यदि आन्तरिक भावना बदल गई तो बाह्य रूप अपने-आप ठीक हो जायेगा" (पृ० ६५)। "धार्मिक आन्दोलनकी सफलता उसके प्रवर्तकोंके बौद्धिक और भौतिक

साधनोंपर नहीं, बल्कि आध्यात्मिक साधनोंपर निर्भर होती है। और उपवास वह सुप्रसिद्ध पद्धति है जिससे इन साधनोंकी अभिवृद्धि होती है" (पृ० ८५)। इसी विचारको और स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि "मेरे विचारमें तो यरवदा-समझौते पर हस्ताक्षर करनेके बाद हरिजन-आन्दोलन प्रारम्भ करते समय ही मुझे इस तरहका उपवास करना चाहिए था"; तब इसका रूप एक महत्कार्यके लिए आवश्यक योग्यताकी प्राप्तिकी तैयारीके हेतु किये गये यज्ञका होता; अब इतने दिनके बाद किये जानेके कारण यह एक शुद्धिकारक यज्ञ बन गया है। उन्होंने स्वीकार किया कि "यह तर्क मुझे घटना घट चुकनेके उपरान्त सूझ रहा है। जब मुझे महसूस हुआ कि मुझे ईश्वरीय आज्ञा प्राप्त हुई है, तब मेरे पास ऐसा कोई तर्क नहीं था। आवाज आई और मैं विवश हो गया" (पृ० १३७-३८)। जब वल्लभभाई, जिन्होंने जेलमें १६ माहतक "माँके स्नेह" (पृ० १६६, १७२)से उनकी परिचर्या की थी, राजाजी और जनरल स्मट्स आदि ने उनसे अपना यह प्रस्तावित उपवास छोड़ देनेका अनुरोध किया तो उन्होंने यही कहा कि जिस दुर्निवार शक्तिके संकेतपर उन्होंने यह उपवास करनेका निश्चय किया है, वह उन्हें उनका अनुरोध स्वीकार करनेकी इजाजत नही देती। उपवास ईश्वर-प्रेरित था, इस दावेको दुहराते हुए उन्होंने कहा कि "ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, उसका अन्तर्नाद मेरे लिए अधिकाधिक स्पष्ट होता गया। मेरे जीवनकी अंधेरीसे-अंधेरी घड़ियोंमें भी उसने मेरा हाथ नहीं छोड़ा। कितनी ही बार तो उसने मेरे ही संकल्पोंके विरुद्ध मेरी रक्षा की और स्वतन्त्रताका लेश भी मुझमें शेष नहीं छोड़ा। मै जितना ही अधिक अपनेको उसकी शरणमें अर्पित करता गया, मैंने उतना ही अधिक आनन्द पाया" (पृ० १२३)। उपवासका निर्णय करते ही गांधीजी को महसूस हुआ कि उनके मनसे एक बड़ा बोझ उतर गया है। उपवास आरम्भ करते हुए सी० एफ० एन्ड्रयूजको लिखे अपने पत्रमें उन्होंने कहा, "मैं ऐसी घटनाओंके बीच शान्त खड़ा हूँ, या लगता है कि शान्त हूँ जो, यदि उपवास पास न आ रहा होता, तो मेरे टुकड़े-टुकड़े कर देतीं" (पृ० १५६)। उसी दिन दिये गये अपने सार्वजनिक वक्तव्यमें उन्होंने कहा, "इस उपवासका चाहे जो मूल्य हो, पर यह निश्चय है कि यह मेरी रक्षा करेगा। . . . अगर मैं यह उपवास न करता तो, बहुत सम्भव है, मैं हरिजन-सेवा या किसी अन्य सेवाके लिए किसी कामका न रह जाता" (पृ० १६२)।

उपवासका प्रकृत उद्देश्य तो अपनी और अस्पृश्यताके कलुषसे हिन्दू-धर्मकी शुद्धि करना ही था (पृ० १४०), किन्तु इसके साथ ही वह शरीरके विषयमें अनासक्तिकी भावना विकसित करनेका साधन भी था। मीराबहनको उन्होंने लिखा, "कन्धोंपर चिन्ताका यह भार लिये फिरनेकी जड़में कही कोई मौलिक खराबी है। एक जीवन्त ईश्वरके अस्तित्वमें जीवन्त श्रद्धा रखनेका इससे मेल नहीं बैठता। जैसे-जैसे समय बीतता है, वैसे-वैसे मैं रोम-रोममें उसका जीवन्त अस्तित्व अनुभव करता हूँ" (पृ० १९६)। लेकिन मीराबहन बहुत विचलित हो उठी थीं; उनके "सबसे छोटे पुत्र और योग्य सहयोगी" (पृ० १२२) देवदासका भी यही हाल था और कुछ समयके

लिए तो वल्लभभाईके विनोदका निर्झर भी "सूख गया" (पृ० १३६)। गांधीजी के लिए यह परिस्थिति बहुत ही मर्मातक रही होगी, किन्तु ईश्वरमें उनकी आस्थाने और 'गीता'की 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' की शिक्षाके उनके प्रगाढ़ अभ्यासने उन्हें टिकाये रखा।

यद्यपि यह उपवास गांधीजी और भगवानके बीचकी बात थी, किसी व्यक्ति या समुदाय-विशेषसे वे कोई अपेक्षा नही कर रहे थे, तथापि आश्रम तो उनकी अपनी सृष्टिके नाते उनके ही व्यक्तित्वका अंश था और उन्होंने कहा, "आश्रमसे मुझे बहुत बड़ी आशाएँ हैं" (पृ० ९०)। आश्रमसे, उसकी सारी कमियोके बावजूद, वे बहुत प्यार करते थे। उसकी कमियोंसे वे बेखबर नहीं थे। आश्रमवासियोके पारस्परिक मनोमालिन्यको, और वहाँ जब-तब जो अत्यन्त चौकानेवाली घटनाएँ हो जाती थीं, उनका उन्हें बहुत दु:ख था। नारणदास गांधीको अपने एक पत्रमें उन्होने लिखा, इन घटनाओसे मैं इतना दु:खी हुआ कि "अब दु:ख पहुँचाने लायक ज्यादा कुछ नही रहा" (पृ० १२९)। नारणदास स्वयं भी महसूस कर रहे थे कि उनकी जिम्मेदारीका बोझ बहुत ज्यादा है और उन्होने उसके विषयमें गांधीजी को एक "हृदयद्रावक" पत्र (पृ० ९१) लिखा। लेकिन गांधीजी निराशा स्वीकार करनेके लिए तैयार नही थे। नारणदाससे उन्होंने कहा, "आश्रमको छोड़कर या बन्द करके बैठ जाना तो कायरता होगी" (पृ० ११५)। आश्रमके लिए उन्होने जिस नैतिक आदर्शकी कल्पना की थी, आश्रमवासियोंको उस आदर्शतक उठानेमें उन्होंने अनवरत कठिन परिश्रम किया था। इस अवसरपर भी उन्होंने आश्रम-जीवनकी शुद्धिके लिए ब्यौरेवार सूचनाएँ भेजीं और यह आशा प्रकट की कि आश्रमवासियोंमें कुछ तो अवश्य ही इतनी योग्यता अर्जित कर चुके होंगे कि आवश्यकता होनेपर अस्पृश्यता-निवारणके लिए सुयोग्य व्यक्तियों द्वारा अनिश्चितकालीन उपवास किये जानेकी जो योजना उनके मनमें आकार ग्रहण कर रही है, उसमें योग दे सकें। (पृ० ९१, १४९, १५२)। उन्होंने कहा कि मैं आश्रमवासियोंके प्रेमकी पात्रता और उन्हें आगे ले जानेकी शक्ति हासिल करनेके लिए जो प्रयत्न कर रहा हूँ, मेरा यह उपवास उसीका एक हिस्सा है। यदि मैं इसमें विफल हो जाता हूँ "तो मैं कोई आशा नही कर सकता" (पृ० ११५)।

आश्रमके प्रति अपने इस प्रगाढ़ स्नेहके बावजूद, जब राजनीतिक आवश्यकताओंकी माँगके फलस्वरूप आश्रमके बलिदानका अवसर उपस्थित हुआ तो गांधीजी को उसमें कोई संकोच नहीं हुआ। उन्होंने देखा कि व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा, जिसे कि सामूहिक आन्दोलनकी जगह लेनी थी, लम्बे कालतक चलेगी और उसमें लोगोंको पहलेकी तुलनामें ज्यादा बड़े बलिदान देने होंगे। अत: इस आन्दोलनके प्रणेताके नाते उन्होंने महसूस किया कि ऐसी स्थितिमें महत्तम बलिदान तो उन्हें स्वयं करना चाहिए और तदनुसार उन्होंने आश्रम सरकारको सौंप देनेका निश्चय किया। सरकारको अपने इस निश्चयकी सूचना देते हुए उन्होंने लिखा, इसकी "रचनाके लिए मैंने और दूसरे बहुत-से आश्रमवासियोंने अटूट धीरज और अपार सावधानीसे अठारह सालतक मेहनत की है। आश्रमके एक-एक पशु और एक-एक पेड़का अपना इतिहास है और उससे

पवित्र संस्मरण जुड़े हुए हैं। वे सभी एक विशाल कुटुम्बके सदस्य हैं। . . . इस कुटुम्ब और इसकी गतिविधियोंको भंग करनेका काम हमसे आँसू बहाये बिना नहीं हो सकेगा" (पृ० ३१८)। आश्रमको भंग करनेमें गाधीजी की अपेक्षा यह थी कि इससे आश्रमवासियोंकी साधना और ध्येय-निष्ठा तीव्रतर बनेगी और प्रत्येक "आश्रम-वासी एक चलता-फिरता आश्रम बन जायेगा" (पृ० ३२५)। गांधीजी ने आश्रम सरकारको सौंपना तो चाहा था पर, सरकारने उसे स्वीकार नही किया और अन्तमें वह हरिजन-सेवक संघको सौप दिया गया।

जिन राजनीतिक परिस्थितियोंके कारण गांधीजी को आश्रम भंग करना पड़ा था वे तो उनकी अनासक्तिकी भावनाकी परीक्षा ले ही रही थी; साथ ही अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनसे सम्बद्ध समस्याओंका भी उनकी इस परीक्षामे कम योग नही था। जिस दिन उन्होंने उपवासका आरम्भ किया, उसी दिन उन्हें एकाएक जेलसे रिहा कर दिया गया। उन्हींके शब्दोमें, "सत्यके एक शोधकके नाते और स्वाभिमानी मनुष्यके नाते मुझपर इस रिहाईसे बड़ा बोझ और तनाव आ पड़ा" (पृ० १६४)। फलतः गांधीजीने सरकारको अपनी ओरसे यह आश्वासन दिया कि वे अपनी रिहाईका, सरकार जिसे अवांछित कह सके, ऐसा कोई उपयोग नही करेंगे। उन्होंने कहा कि मैं सविनय अवज्ञाको "आगे बढ़ानेके लिए खुले या छिपे तौरपर एक भी कदम" नही बढ़ाऊँगा (पृ० १६५-६६)। उन्होंने कांग्रेस-अध्यक्षको भी आन्दोलन छः हफ्तेके लिए स्थगित करनेकी सलाह दी। इस बातकी जरूरत उपवास करनेके लिए भी थी ही। अपने उपवासके विषयमें गांधीजी की इच्छा यह थी कि उसका रूप "२१ दिनकी अखण्ड प्रार्थना"का हो और वे अपने मनमें ऐसे कोई विचार आने ही नही देना चाहते थे जिनका सम्बन्ध हरिजन-सेवासे न हो (पृ० १६४)। बादमें उन्होंने बताया कि यदि सविनय अवज्ञा जारी रहती तो गिरफ्तारियोंकी, सत्याग्रहियोंपर लाठियाँ बरसाने आदिकी खबरें उनके पास आती ही और उनके लिए यह सब शान्तिसे सुनना सम्भव नही होता (पृ०-२७६)। किन्तु गाधीजी के इस सद्भावपूर्ण कदमका सरकारपर कोई प्रभाव नही पड़ा। अध्यादेशोंकी मददसे उसने जनताको डरा-धमकाकर चुप कर रखा था। इस भयावह परिस्थितिकी चर्चा करते हुए गाधीजी ने सी० एफ० एन्ड्रयूजको लिखा, "इस प्रकार देशमें एक प्रकारसे मौतका-सा सन्नाटा है जिसे मैं, हालाँकि मैं डॉक्टरोके आदेशसे लोगोके सम्पर्कसे दूर हूँ, अपने बिस्तर पर भी महसूस किये बिना नहीं रह पाता" (पृ० २०७)। इसलिए जब पूनामें कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओंकी एक अनौपचारिक बैठकके बाद उन्होंने सरकारके समक्ष ऐसा कोई प्रस्ताव रखनेके लिए "जो सरकार और जनता दोनोंको स्वीकार होता" (पृ० ३२९), वाइसरायसे भेंट की अनुमति चाही और उनका यह अनुरोध इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया कि "सविनय अवज्ञा आन्दोलन पूर्णतः असंवैधानिक है, उसके साथ कोई समझौता नहीं हो सकता और सरकार उसे बन्द करानेके लिए किसी तरहकी बातचीतमें कोई हिस्सा नहीं लेना चाहती" (पृ० २७८) तो, गांधीजी को लड़ाई जारी रखनेकी बात फिर सोचनी पड़ी। वे सरकारके समक्ष इतने सम्पूर्ण और

असम्मानजनक आत्मसमर्पणके लिए तो कदापि तैयार नही हो सकते थे: "मैं मिट्टीमें मिल जाऊँगा, पर आत्मसमर्पण नही करूँगा" (पृ० २७६-७७)। उन्होने कहा कि सत्याग्रह "उसमें भाग लेनेवालोंकी कमजोरीके कारण, . . . प्रतिपक्षीकी दिखाई देनेवाली विजयके कारण, छोड़ा नही जा सकता" (पृ० ३१०)। इसलिए उन्होंने १ अगस्तसे संघर्षको व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाके नये रूपमें दुबारा शुरू करनेका निश्चय किया। सामूहिक संघर्षके वापिस लिये जानेका मतलब यही होता था कि वह विफल सिद्ध हुआ है; वह इस तथ्यकी स्वीकृति थी कि जनता "अध्यादेश राज्यकी लम्बी यातनाको अब और नहीं सह सकती" (पृ० ३१०-११)। किन्तु व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाके विषयमें गांधीजी का दावा था कि उसमें विफलताकी गुंजाइश ही नहीं है: "सत्याग्रहमें व्यक्तिगत अवज्ञा अन्तिम चीज है . . . एक अजेय शक्ति है" (पृ० २९६)। वह उन्ही व्यक्तियोंतक सीमित रहनी थी जो "अपने कार्यसे जुड़े सभी खतरोंका, जिनमें बेहद गरीबी और चल व अचल सारी सम्पत्तिका नुकसान या शारीरिक यन्त्रणाएँ शामिल होगी, सामना करनेको तैयार" रहेंगे। "मुझे विश्वास है कि ये नर-नारी राष्ट्रीय भावनाका और पूर्ण स्वाधीनताके राष्ट्रके दृढ़ संकल्पका प्रतिनिधित्व करेंगे" (पृ० ३१२)। अतः सामूहिक सविनय अवज्ञाको वापिस लेने और उसकी जगह व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाको चलानेकी गांधीजी की सलाह "निराशा या पराजयकी भावनाकी उपज नही" (पृ० ३१२) थी। जैसा कि उन्होंने इस निर्णयके बहुत पहले सी० एफ० एन्ड्रयूजको लिखे अपने एक पत्रमें कहा था, "महत्त्व समयका नहीं है . . जबतक सत्यका एक भी प्रतिनिधि सचेष्ट है, सत्यकी अन्तिम विजय निश्चित है। भारतमें आज सत्यके कुछ प्रतिनिधि ऐसे है जो सत्यकी रक्षाके लिए कोई भी मूल्य चुकानेमें आगा-पीछा नहीं करेंगे" (पृ० २०७)।

गांधीजी को ३१ जुलाईको आधी रातके समय गिरफ्तार करके यरवदा जेल ले जाया गया। और वहाँ उनपर यह आदेश तामील किया गया कि वे पूना शहरकी म्युनिसिपल सीमाओके भीतर ही रहें और सविनय अवज्ञाकी प्रवृत्तियोंमें कोई हिस्सा न लें। इस आदेशको माननेसे इनकार करनेपर उन्हें दुबारा गिरफ्तार किया गया और ४ अगस्तको एक सालकी कैदकी सजा दी गई। उनकी यह माँग कि उन्हें जेलमें रहते हुए हरिजन-सेवा करनेकी जैसी सुविधायें पहले भी दी जाती रही हैं वैसी इस बार भी दी जाये, इस आधारपर अस्वीकार कर दी गई कि इस बार वे पहले की तरह राज्यके कैदी नहीं बल्कि एक दंडित कैदी हैं। इसपर गांधीजी ने १६ अगस्तकी दोपहरसे अनिश्चितकालीन अनशन आरम्भ कर दिया। तारीख २३को जब उनकी शारीरिक हालत बहुत गम्भीर हो गई तब उन्हें बिना शर्त रिहा कर दिया गया और वे जेलसे सैसून अस्पताल भेज दिये गये। वहाँ कुछ समयतक वे जीवन और मृत्युके बीच झूलते रहे। उन्हें लगा कि वे अब अधिक नहीं टिक सकेंगे: "मृत्युसे अब लड़ नहीं सकूँगा" (पृ० ४१३)। और उन्होंने, उनके पास जो-कुछ भी था, सब लोगोंको बाँट दिया। सैसून अस्पतालसे मुक्त होनेपर वे विश्रामके लिए प्रेमलीला ठाकरसीके पूना-निवास पर्णकुटी ले जाये गये। पर्णकुटीमें अपनी रोग-शय्यासे

उस दिन वल्लभभाई पटेलके नाम लिखाये गये पत्रमें उन्होंने कहा कि "यह सब स्वप्नवत् हो गया है" (पृ० ३८९)। वस्तुओं और घटनाओंकी अवास्तविकताका जो अनुभव उनके मनपर इस समय छाया हुआ था, उससे मुक्त होनेमें और अपने नये कदमका निर्णय करनेमें उन्हें कुछ समय लगा। 'हरिजन' में इस सम्बन्धमें उन्होंने जो संक्षिप्त निवेदन दिया था उसमें उन्होंने कहा, "मेरे इस लम्बे सार्वजनिक जीवनमें अनहोनी लगनेवाली कई घटनाएँ घट चुकी हैं, पर यह घटना तो सबसे अधिक अप्रत्याशित थी।" इसी वक्तव्यमें उन्होंने आगे कहा, "मै नहीं जानता कि जेलके बाहर जीवनका उपयोग किस तरह करूँगा, पर इतना तो मैं जरूर कहूँगा कि मै चाहे जेलके भीतर रहूँ चाहे बाहर, हरिजन-सेवा ही मेरे लिए प्रिय वस्तु-रहेगी" (पृ० ३८५)। कुछ दिनोंतक गांधीजी को ऐसा लगता रहा कि वे चारों ओर अंधेरेसे घिरे हुए हैं और कर्त्तव्यका पथ कहीं साफ दिखाई नहीं पड़ता। अन्तमें प्रार्थनारत रहकर और पर्याप्त सोच-विचारके बाद वे इस निर्णयपर पहुँचे कि जबतक उनकी सजाकी अवधि पूरी नहीं हो जाती तबतक "मैं आन्दोलनके रूपमें सत्याग्रह करके जेल नही जाऊँगा।" अपने ऊपर उन्होंने यह बन्धन स्वेच्छासे ही लादा था, किन्तु था तो यह एक कड़ुवा घूँट ही (पृ० ४४५)।

गांधीजी की नीतियोंके सही होनेके बारेमें दो विपरीत दिशाओंसे सन्देह व्यक्त किया जाने लगा था। लिबरल नेता वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीका मत था कि गांधीजी की राजनीतिक कार्यपद्धतिमें देशका विश्वास उठता जा रहा है और लोगोंके मनमें प्रस्तुत राजनीतिक समस्यासे निपटनेके "एक नये उत्तर"का उदय हो रहा है। उत्तर यह था कि सामूहिक अथवा व्यक्तिगत सत्याग्रहकी जगह एक ऐसी नई नीति अपनायी जानी चाहिए "जिसका उद्देश्य विधान, वित्त और प्रशासनमें सर्वत्र राष्ट्रका रचनात्मक कल्याण" हो। उन्होंने गांधीजी से अनुरोध किया कि वे कांग्रेससे हट जायें और उसे अपनी इच्छाके अनुसार उपयुक्त नये कार्यक्रमका विकास करने दें (परिशिष्ट–१३)। गांधीजी इस सलाहके विरुद्ध नहीं थे। अपने उत्तरमें उन्होंने कहा, "मै खुशीसे कांग्रेससे हट जाऊँगा और कांग्रेसके बाहर सविनय अवज्ञा चलानेके काममें और हरिजन-कल्याण कार्यमें लग जाऊँगा।" लेकिन यह कैसे किया जाये, यह मेरी समझमें नहीं आता, "कर्त्तव्य-पालनको मैंने सदैव सुन्दर और आनन्ददायक माना है। फिर कर्त्तव्य क्या है, यह जानना बहुत कठिन होता है" (पृ० ४०२)।

इसके खिलाफ, दूसरी दिशासे जवाहरलाल नेहरूका यह आग्रह था कि गांधीजी कांग्रेसकी नीतियोंको अभीष्ट परिवर्तनकी दृष्टिसे ज्यादा मूलगामी बनायें और सविनय अवज्ञाके सवालपर उनके तथा मा० श्री० अणेके वक्तव्योंसे जो वैचारिक भ्रम पैदा हुआ प्रतीत होता है, उसे दूर करें (परिशिष्ट–१४)। गांधीजी का उत्तर उन दोनोंके बीच स्नेह और आपसी समझके सम्बन्धोंके अनुरूप परन्तु बिलकुल स्पष्ट और दृढ़ था। उन्होंने जवाहरलालके इस विचारसे अपनी सहमति जाहिर की कि "निहित-स्वार्थोंमें ठोस परिवर्तन किये बिना जनसाधारणकी दशामें कदापि सुधार नहीं हो सकता", यह भी स्वीकार किया कि भारतके राष्ट्रीय आन्दोलनको "अन्तर्राष्ट्रीय

प्रगतिशीलता" से जोड़नेकी आवश्यकता है, किन्तु उन्होंने यह भी स्पष्ट कहा कि "आदर्शोंके प्रतिपादनमें इस तरहकी सहमति होते हुए भी, हममें स्वभावगत मतभेद हैं। . . . इसलिए मैंने मुख्यत: साधनोंके संरक्षण और उनके अधिकाधिक उपयोगसे सरोकार रखा है" (पृ० ४४७)। उन्होंने अपने हालके निर्णयोंको इस दृष्टिसे उचित ठहराया और अन्तमें उन्होंने जवाहरलालको आश्वस्त किया कि "मुझमें पराजयका कोई भाव नही है और यह विश्वास कि हमारा देश तेजीसे अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रहा है, मुझमें आज भी उतना ही ज्वलन्त है जितना कि १९२०में था . . ." (पृ० ४४९)।

क पत्र-लेखकको, जिसने उनका ध्यान अन्तर्जातीय भोज और अन्तर्जातीय विवाहके सवालोंपर उनके सन् १९२१के और १९३२के विचारोंकी असंगतियोंकी ओर खीचा था, जवाब देते हुए उन्होंने उसकी इस शंकाका यह उल्लेखनीय समाधान पेश किया: "मेरे लेख सदा सुसंगत ही प्रतीत हों, इसकी मुझे तनिक भी चिन्ता नहीं है। . . . प्रतिक्षण मैं सत्यरूपी नारायणकी आज्ञा माननेके लिए ही तैयार रहता हूँ। . . . एक ही विषयपर लिखे दो लेखोंमें से बादके लेखको चुनना ही अच्छा रहेगा" (पृ० ६१)।

अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनमें कर्त्तव्यका दायित्व मुख्यत: सवर्ण हिन्दुओंका ही था, किन्तु चूँकि उसका उद्देश्य समूचे हिन्दू-धर्मका शुद्धीकरण था, इसलिए उसमें हरिजनोंका योग भी आवश्यक था। अत: गांधीजी ने उन्हें सलाह दी कि वे भी अपनी गन्दी आदतें छोड़कर और अपने रहन-सहनमें स्वच्छताको अपनाकर इस महत् अनुष्ठान में अपना हिस्सा अदा करें (पृ० २९१)। "आप अपनेको नीच, अशक्त या अपंग न मानें" पर साथ ही "अपने दोषोंको पहाड़के समान बड़े मानें और उन्हें दूर करनेके लिए सतत् प्रयत्न करें" (पृ० ३८३)।

जो सनातनी अस्पृश्यताके पक्षमें यह कहते थे कि वे उसे प्रेम-भावसे मानते हैं, उनके आचरण और उनके स्वीकृत तत्त्वज्ञानके विरोधको उजागर करते हुए उन्होंने प्रेमके स्वरूपके विषयमें कहा: "प्रेम अगणित सूर्योंसे मिलकर बना है। एक छोटा-सा सूर्य जब छिपा नही रहता तब प्रेम क्यों छिपा रहने लगा? किसी माताको कहीं यह कहना पड़ता है कि मै अपने बच्चेको चाहती हूँ? जिस बच्चेको बोलना नहीं आता, वह माताकी आँखोंको देखता है। जब आँखें मिल जाती हैं तब हम देखते हैं कि वे किसी अलौकिक चीजको देख रहे है" (पृ० १७८)।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजी के स्वाक्षरोंमें मिली है, उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरोंके द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलें सुधार दी गई हैं।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय भाषाको यथासम्भव मूलके निकट रखनेका प्रयत्न किया गया है। जो अनुवाद हमें प्राप्त हो सके हैं, हमने उनका उपयोग मूलसे मिलाने और संशोधन करनेके बाद किया है। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणके बारेमें संशय था, उनको वैसे ही लिखा गया है जैसाकि गांधीजी ने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दिये गये अंश सम्पादकीय हैं। गांधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी-अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजी के कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याही में छापे गये है। भाषणों और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें जो गांधीजी के नही हैं, कही-कहीं कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दायें कोनेमें ऊपर दी गई है। जहाँ यह उपलब्ध नही है वहाँ अनुमानसे तिथि चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई है और आवश्यकता होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है, उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्ष के अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी निश्चित आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ है, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमि देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ भी दी गई हैं।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियो, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओके आभारी हैं :

संस्थाएँ : साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि व संग्रहालय, हरिजन-सेवक संघ, नेहरू स्मारक संग्रहालय व पुस्तकालय, तथा राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

व्यक्ति : श्री एम० वी० एस० रमन; श्री भाऊ पानसे, वर्धा; श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड; श्रीमती वनमाला देसाई, श्री द० बा० कालेलकर, श्री परशुराम मेहरोत्रा, नई दिल्ली; श्री नारणदास गांधी, श्री छगनलाल जोशी, राजकोट; श्रीमती एफ० मेरी बार, श्रीमती मीराबहन, आस्ट्रिया; श्रीमती प्रेमलीला ठाकरसी, श्रीमती लीला आसर, श्रीमती तहमीना खम्भाता, श्रीमती मनुबहन मशरूवाला, श्री सुरेन्द्र मशरूवाला, बम्बई; श्री घनश्यामदास बिड़ला, श्रीमती शान्ता देवी, कलकत्ता; श्री आनन्द तो० हिंगोरानी; श्रीमती मेडेलिन रोलाँ; श्री अमृतलाल नानावटी, नई दिल्ली; श्रीमती गंगाबहन वैद्य, बोचासण; श्री कनुभाई मशरूवाला, अकोला; श्री रामनारायण एन० पाठक, भावनगर; श्री छगनलाल गांधी, श्री हमीद कुरैशी, अहमदाबाद; श्री भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या, वढवाण; श्रीमती शारदाबहन गो० चोखावाला, सूरत; श्रीमती सुशीला गांधी, फीनिक्स, डरबन; श्री नारायण देसाई, बारडोली; श्री वा० गो० देसाई, पूना।

पुस्तकें : 'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने', 'बापुना पत्रो– २ : सरदार वल्लभभाई पटेलने', 'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री', 'ए बंच ऑफ़ ओल्ड लेटर्स', 'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह बर्ष', 'द मैन्यूस्क्रिप्ट ऑफ महादेव देसाईज डायरी', महादेवभाईनी डायरी – ३', 'बापूना पत्रो – ५ : कुमारी प्रेमाबहन कंटकने', 'बापुना पत्रो – ९ : श्री नारणदास गांधीने', 'गांधी : १९१५–४८', 'गोसेवा', 'इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९३३', 'बापुनी प्रसादी', 'बापूज लेटर्स टु मीरा', 'दि ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एल्विन', 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'माई डियर चाइल्ड', तथा 'पांचमा पुत्रने बापुना आशीर्वाद'।

पत्र-पत्रिकाएँ : 'अमृतबाजार पत्रिका', 'टाइम्स ऑफ इंडिया', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'विश्व भारती न्यूज', 'हरिजन', 'हरिजन-बन्धु', 'हरिजन-सेवक' 'हिन्दुस्तान टाइम्स', 'ट्रिब्यून' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, नई दिल्ली तथा श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं। कागज-पत्रोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें सहायता देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्लीके फोटो-विभागके आभारी हैं।

विषय-सूची

१. उत्तर : पत्र-लेखकोंको[1]

मन्दिर-प्रवेशके विषयमें कुछ और[2]

इस विषयमे कुछ सन्देह नहीं है कि जो मूर्ति-पूजामें विश्वास नही करता उसे मन्दिर-प्रवेश-सम्बन्धी आन्दोलनमें भाग लेनेका अधिकार नहीं है। मन्दिरके नक्शेमें तुमने कुछ स्थानोंपर निशान लगाये हैं। हरिजनोको उन स्थानोंतक दर्शनके लिए प्रवेश देनेसे काम नही चल सकता। जो मर्यादाएँ अन्य हिन्दुओंके लिए रखी जायें, वे ही हरिजनोंके लिए भी रखी जानी चाहिए। और यदि जनता इसका विरोध करती हो तो फिलहाल यही अच्छा होगा कि हरिजन मन्दिरमें न जायें। यदि न्यासी मूर्तिकी शुद्धि करनेकी माँग करें तो उन्हें वैसा करनेका अधिकार है। हरिजनोंको प्रवेश देनेसे पहले उन्हें सर्वसामान्य मर्यादाओंका ज्ञान अवश्य कराया जाना चाहिए। संक्षेपमें मेरा यह स्पष्ट मत है कि मन्दिर-प्रवेशके विषयमें जबरदस्तीको कोई स्थान नही है। जिस मन्दिरके विषयमें दर्शनार्थ जानेवाले लोगोंके अधिकांशका विरोध हो वहाँ हरिजनोंको प्रवेश देना अनुचित है। मन्दिरमें जानेवाले लोगोका मत इसके अनुकूल हो तो हरिजन अवश्य जायें। और कुछ भी क्यो न हो, मन्दिर-प्रवेशका अधिकार केवल उन्हीं हरिजनोंको है जो साधारण जनताके लिए निश्चित किये गये नियमोंका पालन करते हैं।

सच्चा बहुमत[3]

जब मेरे सामने विधेयक रखा गया था मैंने उसी समय बहुमत-सम्बन्धी अपनी कठिनाई व्यक्त की थी और मैंने राजाजी से कहा था कि ५१ फीसदीकी बात ठीक नहीं। मैंने उसमें संशोधन भी सुझाया था, क्योंकि मेरा तो निश्चित मत है कि जबतक स्पष्ट बहुमत न हो तबतक यह महान सुधार, जिसकी हम तैयारी कर रहे हैं, सर्वव्यापी नहीं हो सकता। आप लोगोंने देखा होगा कि इसी कारण मैंने, एक भी विरोधी हो तो उसतककी भावनाका सम्मान रखनेकी पैरवी की है। क्योंकि जिसे मैं अंधविश्वास समझता हूँ, सम्भव है कि वह मनुष्य उसे जीवन-मरणका सवाल मानता हो, उसे अपना मन्दिर इतना प्यारा हो कि वह उसे सर्वस्व माने और यदि उसे हरिजनोंके साथ खड़े रहकर दर्शन करना पड़े तो सम्भव है, वह ईमानदारीसे ऐसा सोचता हो कि उसे दर्शनका फल नहीं मिलेगा। इसीलिए मैंने सूचित किया

१. यह "डाककी पेटीसे" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. एक सज्जनने मन्दिरका नक्शा बनाकर कुछ स्थानोंपर चिह्न लगाकर सुझाया था कि उक्त जगहोंतक हरिजनोंको प्रवेश देनेमें क्या हर्ज है? इसी सम्बन्धमें कुछ अन्य प्रश्न भी पूछे गये थे।

३. एन्ड्रयूजने मन्दिर-प्रवेश-सम्बन्धी विधेयकके लिए ६६ प्रतिशत बहुमतका प्रस्ताव रखा था। गांधीजी के मूल पत्रके लिए देखिए खण्ड ५४, पृ० ४१५-६।

है कि ऐसे व्यक्तिके लिए दर्शनका अलग समय रखा जाये और उसकी दृष्टिसे मन्दिरको शुद्ध कर लिया जाये।

मैंने इस के सिवाय और भी सुझाव दिये हैं, किन्तु इस समय मैं उनकी चर्चा नहीं करना चाहूँगा। जब विधेयक समितिके सामने आयेगा तब कोई भी सुधारक 'प्रतिशत' तथा अन्य बातोंके सम्बन्धमें वांछनीय संशोधनोंको स्वीकार करते हुए आगा-पीछा नहीं करेगा। अलबत्ता, सिद्धान्त तो वह किसी भी समय नहीं छोड़ सकेगा।

रोटी-बेटी व्यवहार[1]

उक्त दोनों विषयोंके साथ अस्पृश्यताका कोई सम्बन्ध ही नहीं है। मैं किसीको अस्पृश्य नहीं मानता, किन्तु इसी कारण मैं जिसे अस्पृश्य नहीं मानता, उसके साथ मेरा भोजन करना अथवा उसके यहाँ बेटे या बेटीका सम्बन्ध जोड़ना कहाँका न्याय है? ये दोनों बातें तो अपनी व्यक्तिगत इच्छा और अधिकारकी बातें हैं। किन्तु किसी मनुष्यको उसके जन्मके कारण अस्पृश्य गिननेका किसीको अधिकार नहीं है। यह तो घोर अन्याय और जघन्य पाप है।

हरिजनोंको क्या पड़ी है?[2]

प्रश्न यह नहीं है कि वे क्या चाहते हैं। मुख्य बात यह है कि इन लोगोंका हमारे ऊपर कितना कर्ज चढ़ चुका है। मुख्य बात यह है कि हमने मालवीयजी की अध्यक्षतामें बम्बईकी भरी सभामें[3] हिन्दू-संसारकी ओरसे इन लोगोंको क्या वचन दिया था। हमने वचन दिया था कि हरिजनोंको मन्दिरमें प्रवेश दिया जाये। हमने यह प्रतिज्ञा भी की थी कि यदि इसके लिए आवश्यकता हुई तो हिन्दू-समाज प्राणकी बाजी भी लगा देगा। क्या आपको महाभारतका यह वचन याद है — "यदि सत्यको तराजूके एक पलड़ेमे और दूसरे पलड़ेमें एक सहस्र यज्ञोंको रखें, तो सत्यका पलड़ा भारी होगा।" हरिजनों और ईश्वरको दिये गये वचनका उल्लघन करना एक असह्य वस्तु है। इसके विचार-मात्रसे कँपकँपी आ जाती है। हम सनातनियोंके साथ धीरजसे काम ले सकते हैं, उनसे प्रार्थना व आग्रह कर सकते हैं; किन्तु मन्दिर-प्रवेशकी बात नहीं छोड़ सकते।

आप कहते हैं कि हरिजनोंको शिक्षा दे दें तो सब बातें अपने-आप हो जायेंगी। नहीं, सवर्ण हिन्दुओंको शिक्षित करना भी उतना ही जरूरी है। आज उनमें शिक्षाका प्रचार नहीं हो, ऐसा नहीं है। दुःखकी बात तो यह है कि उनमें उल्टी शिक्षाका प्रचार किया गया है। इस उल्टी शिक्षाने हमें उल्टा पाठ पढ़ाया है। इस शिक्षाने

१. एक पत्र-लेखकने सुझाव दिया था कि अन्तर्जातीय भोजों और विवाहोंके द्वारा अस्पृश्यता मिटानेका प्रयत्न किया जाना चाहिए।

२. यह उत्तर पत्र-लेखक मोतीलाल रायको उनकी इस दलीलपर दिया गया था कि हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेशकी परवाह नहीं है। गांधीजी के मूल पत्रके लिए देखिए खण्ड ५४, पृ० ४६९-७१।

३. जो २५ सितम्बर, १९३२ को हुई थी; देखिए खण्ड ५१, पृ० १४८-९।

हमे यह बताया है कि अधर्म धर्म है, पाखण्ड धर्म है, अंधविश्वास ज्ञान है, असहिष्णुता ही दया है, स्वेच्छाचार ही सयम है और शास्त्रोंका शुद्ध और सीधा अर्थ करनेके बदले खींचतान कर उसका उल्टा अर्थ निकालना ही शास्त्रार्थ है। पहले तो हमें इस उल्टी शिक्षामें सुधार करना पड़ेगा।

फिर वही बात[1]

क्या आप भूल गये कि आपने बम्बईमें हरिजनोंको उनके बिना माँगे वचन दिया था? यदि हरिजन न माँगें तो इससे क्या होता है। अनेक स्थानोंपर बेचारे दरिद्र और दलित हरिजन न तो शालाकी माँग करते हैं, न उनकी हिम्मत कुएँ माँगनेकी होती है और न वे अन्य किसी हककी बात उठाते है। क्या इसलिए हमारा यह कहना उचित है कि जबतक इन चीजोंकी माँग न उठे तबतक हम उन्हें इनमे से कुछ भी न दे। हम उनके कन्धोंपर चढकर बैठे हैं। यदि हम वहाँसे उतर जायें तो यह भी पर्याप्त है। ये बेचारे इतने अधिक कुचले जा चुके हैं कि उनके कन्धोसे हमारे उतर जानेपर भी उन्हें वजनके उतर जानेका भान नहीं होगा। किन्तु इसका यह अर्थ नही है कि हम इस दलीलके बलपर उनपर सवार ही रहें। यह न्यायकी बात नहीं है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २३-४-१९३३

२. मेरे लिए चेतावनी

इसे लिखनेवालेका नाम मैं देना नहीं चाहता,[2] पर उन्हे सभी जानते है। वे देशके सच्चे सेवकोंमें से एक है। उन्होंने हरिजनोंकी विशेष सेवा की है। इसलिए मै चाहता हूँ कि सभी इस पत्रको ध्यानसे पढ़ें। मैंने तो इसे दो बार पढ़ा और इसपर विचार किया। उनकी चेतावनी उचित है, समयानुकूल है। उनकी आशंका सही भी निकल सकती है।

यदि आशंका सही सिद्ध हुई तो मुझे इसका कोई पछतावा नही होगा। मनुष्य सोचता कुछ है और ईश्वर कुछ दूसरा ही करता है। यदि ऐसा ही इस सम्बन्धमें भी हुआ तो यह कोई पहली बार नहीं होगा। ईश्वर सब-कुछ करते हुए भी अपने सिर किसी बातकी जिम्मेदारी नहीं लेता। लेता होता तो इसकी जिम्मेदारी मै

१. पत्र-लेखक पी० एन० शंकरनारायण अय्यरने कहा था कि हरिजन मन्दिरोंमें प्रवेशकी चिन्ता नहीं करते, इसलिए मैं तो केवल उन्हें शिक्षित बना रहा हूँ। गांधीजी के मूल पत्रके लिए देखिए, खण्ड ५४, पृ० ४६९-७१।

२. अपनी टिप्पणीसे पहले गांधीजी ने पत्रके जो उद्धरण दिये थे उनका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने कहा था कि गांधीजी के नामपर जो अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलन चलाया जा रहा है, वह वस्तुतः हिन्दू-समाजसे हरिजनोंके अलगावको और पक्का कर रहा हैं।

उसीपर डालता, और अपनी जिम्मेदारी बिलकुल भी न मानता। या फिर 'अन्त्यज' नामके बदले किसी अन्त्यज द्वारा सुझाया हुआ मीठा और उचित नाम 'हरिजन' पसन्द करनेकी ही जिम्मेदारी मानता। फिर भले ही 'अन्त्यजकी जय' के बदले 'हरिजनकी जय' कहा जाये।

सनातनियोंका कहना है कि अन्त्यज आदिकालसे ही अलग गिने जाते रहे हैं और उन्हें अलग रखनेके लिए वे प्राण न्यौछावर कर देंगे। मैं उन्हें हिन्दुओंमें मिलाने और उनका अलग वर्गके रूपमें माना जाना बन्द करानेके लिए ईश्वरसे प्राण न्यौछावर करनेकी शक्ति माँग रहा हूँ, और ऐसी शक्ति पानेकी प्रार्थना करनेके लिए दूसरोंको भी कह रहा हूँ। सनातनी भाई हरिजनोंको अलग रखनेके लिए प्रयत्न कर रहे हैं और वे इसके परिणामोंकी जिम्मेदारी भी लेनेको तैयार हैं। इसलिए, जिम्मेदारी किसकी होगी, यह प्रश्न ही नहीं उठता।

हरिजन गरीब और गुलाम रहें और वे सदा सवर्ण हिन्दुओंके आश्रित, उनकी जूठन खानेवाले रहें, इससे अच्छा तो यही होगा कि वे शक्तिशाली बनें और सवर्णोंसे लड़ें। ऐसी लड़ाईके लिए तैयारी करनेमें न तो डॉ० अम्बेडकरको और न ही रावबहादुर श्रीनिवासनको मेरी मददकी जरूरत है। समय अपना काम कर रहा है। समयने ही इन दोनोंको और ऐसे ही अन्य भाइयोंको तैयार किया है, और यदि सवर्ण हिन्दू अपना कर्त्तव्य नहीं निभाते तो वह उन-जैसे अन्य अनेक लोगोंको तैयार करेगा।

जो चीज अपनी आँखोंके सामने ही हो रही है, उसके विषयमें ऐसा मान लेनेसे कि वह है ही नहीं, वह समाप्त नहीं हो जाती। घरमें प्रविष्ट हुए सर्पके लिए, 'वह घरमें नहीं है' यह मान लेनेसे वह वहाँसे चला नहीं जाता। दुःखकी अवज्ञा करनेसे वह दूर नहीं होता। मैं इस बारेमें अपनेको सच्चा वैद्य मानता हूँ। मैंने ठीकसे नाड़ी-परीक्षण किया है। रोग किस दवासे दूर होगा, यह भी बता दिया है। उसका उपयोग किया जाये तो रोगका नाश होगा ही, इस विषयमें भी शंका नहीं है। लेकिन यदि रोगी इस दवाका उपयोग ही न करे तो बेचारा वैद्य क्या करे? बहुत हुआ, तो वह रोगीके घर धरना दे सकता है, उसके घर अनशन कर सकता है। और वैसा करनेकी तैयारी भी वैद्य कर ही रहा है। अनशन करनेके लिए योग्यता चाहिए। यह योग्यता ज्यों ही उसे मिलेगी उसे कोई रोक नहीं सकेगा।

रोग हरिजनोंको नहीं है। और यदि कुछ है तो उसका कारण सवर्ण हिन्दू हैं। असल रोग तो सवर्ण हिन्दुओंको है। लेकिन रोगी रोग होनेसे इनकार करता है; इलाज करनेवाले वैद्यको उसकी परीक्षाके लिए धमकाता है। फिर भी वैद्य शान्त नहीं बैठता। वह पुकार-पुकार कर कह रहा है कि घर जल रहा है।

लेकिन भाग्यमें लिखा कभी टल नहीं सकता, किसीका टला भी नहीं। हिन्दू-धर्मका नाश ही होना होगा तो कोई क्या करेगा? बुद्धि कर्मानुसारिणी होती है। कर्म अर्थात् भविष्य। जैसा भविष्य होगा वैसी ही बुद्धि सवर्ण हिन्दुओंको सूझेगी। इसलिए इसमें उनका भी क्या दोष है?

अतः इस देशसेवकको मेरा सुझाव है कि वह व्याकुल न हो, अपना भोजन या निद्रा न खोए और एकाग्र होकर अपना कर्त्तव्य किये जाये। कदाचित् वह कहेगा,

और सच भी है कि 'आपको चेतावनी देना मेरा धर्म था, उस धर्मका मैंने पालन किया है, इसलिए मैं शान्त हूँ।' वह ऐसा कहे तो मुझे उसे सान्त्वना देना शेष नहीं रहता। उसने चेतावनी देकर अच्छा ही किया है। मैं अधिक सावधान रहूँगा। अपना रास्ता तो मैं अपने सामने प्रत्यक्ष देखता ही हूँ। उसे न छोड़नेका ध्यान रखूँगा। इस सेवकका और मेरा आदर्श एक है। जैसे वह हरिजनोंका कोई नया सम्प्रदाय नहीं देखना चाहता, वैसे ही मै भी नहीं चाहता। मैं स्वप्नमें भी इस नये सम्प्रदायका आचार्य होना पसन्द नहीं करता। मैं हिन्दुओंका, इसलिए हरिजनोंका, और देशका, इसलिए हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई, यहूदी इत्यादिका सच्चा सेवक बनना और वैसा होकर मरना चाहता हूँ।

लेकिन इस देशसेवककी चेतावनी जितनी मेरे लिए है उतनी ही सनातनियोंके लिए भी है। क्या वे चेतेंगे?

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २३-४-१९३३

३. काठियावाड़की हरिजन शालाएँ

काठियावाड़ हरिजन समितिके मन्त्री श्री मूलचन्द पारेखने 'हरिजनबन्धु'में हरिजन शालाओंके सम्बन्धमें कुछ शब्द लिखनेका सुझाव दिया था। उसपर मैंने उनसे उनके कार्यका विवरण माँगा। उन्होंने यह विवरण भेजा है:[1]

अपनी राय मैं बता चुका हूँ। एक भी चालू शाला या आश्रम पैसेके अभावके कारण बन्द नही होना चाहिए। मुट्ठी-भर भी सेवक क्यों न हो उन्हें घरबार बेचकर और आवश्यक हो तो अपने-आपको बेचकर भी इन संस्थाओंको चलाते रहना चाहिए। यदि हाथ तंग रहे तो इसका सीधा-सीधा अर्थ यही होगा कि या तो काठियावाड़ियोंकी हरिजन-सेवामें रुचि नहीं है या उन्हें अपने सेवकोंमें विश्वास नही है। दोनोंमें से जो भी कारण हो, उनमें रुचि या विश्वास पैदा करनेका यही तरीका है कि सेवक सब-कुछ अर्पित कर दें।

काठियावाड़से बाहर चन्दा इकट्ठा करनेकी बात सुनता हूँ। आफ्रिकातकका विचार किया गया है। ऐसा करना पड़े तो यह शर्मकी बात मानी जायेगी। जो काठियावाड़ी बाहर रहते हैं, उन्हें ऐसे परोपकारी कामोंका ध्यान रखना ही चाहिए और उन्हें बिना माँगे मदद करनी चाहिए। प्रत्येक धनी कठियावाड़ी अपने-आप

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। काठियावाड़ हरिजन समिति प्रान्तके विभिन्न भागोंमें २३ हरिजन शालाओंका संचालन कर रही थी। इन शालाओंमें १६४८ छात्र शिक्षा पा रहे थे। धनाभावके कारण समितिने शालाएँ बन्द करनेका निर्णय किया था, पर गांधीजी की सलाहपर एक सार्वजनिक अपील जारी की गई और कोई ७,००० रुपये चन्देमें प्राप्त हुए। फिर भी इन शालाओंको एक वर्षतक चालू रखनेके लिए ३,००० रुपयोंकी आवश्यकता और थी।

अपनी कमाईका दसवाँ भाग, या जितना भी उसे ठीक लगे उतना भाग, ऐसे कामोंमें मददके लिए अलग रखे, तो काठियावाड़ हरिजन समिति-जैसी संस्थाओंका सहज निर्वाह हो सकता है।

न्यायकी बात तो यही है कि काठियावाड़-निवासियोंको ही ऐसी संस्थाओंके काममे रुचि लेकर उन्हें अपना लेना चाहिए। अब्बाससाहब-जैसे बुजुर्गको चन्दा इकट्ठा करनेमें मदद देनेके लिए तकलीफ देनी पड़े, यह बात हमारे लिए बहुत लज्जाजनक है। इसीलिए मै यही आशा करता हूँ कि श्री मूलचन्द पारेखका निवेदन पढ़कर सभी सामर्थ्यानुसार बिना माँगे दान भेजकर ऐसी संस्थाओकी रक्षा करेंगे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २३-४-१९३३

४. बहनोंसे एक शिकायत

कराचीसे एक हरिजनने अपनी टूटी-फूटी भाषामें एक पत्र लिखा है, जिसका सारांश यथासम्भव उसीकी भाषामें नीचे दे रहा हूँ :

> छूतछातनको बहने बहुत मानती हैं। जूठा, गन्दा, बासी खाना दूरसे हरिजनोंको फेंककर देती है। वे मानती है कि भंगियोंको इसी तरह दिया जा सकता है। बेचारे भंगी भी उसे ले लेते है। बहनें अगर यह आदत छोड़ दें तो छुतआछूत नष्ट होनेमें बहुत समय नही लगेगा।

मैंने उस लम्बे पत्रका सार ही दिया है। यदि बहनें जूठा खाना देनेके बजाय अच्छा खाना देने लगेंगी तो इतनेसे ही अस्पृश्यता दूर नहीं हो जायेगी। लेकिन इतना सुधार हो तो इससे यह अवश्य समझा जायेगा कि बहनोंके हृदयमे कुछ दया और करुणा आ गई। बहनोके विरुद्ध की गई यह शिकायत बिलकुल ठीक है। वे चाहे तो इतना सुधार फौरन कर सकती है। इसमें कोई पैसे खर्च करनेकी नही, केवल हृदय-परिवर्तनकी बात है। जिस बहनके हृदयमें हरि बसते हैं, वह तो आज ही हरिजनको अपना लेगी। देहरादूनके विद्यार्थियोने भी ऐसा ही एक प्रश्न उठाया था। उसके जवाबमें मैंने जो लिखा था,[1] वही बहनोंके लिए भी कहा जा सकता है। बहनोंको अपने स्वादिष्ट भोजनमें कुछ कमी करना जरूरी है। इतना वे कर लें, तो एक धेला अधिक खर्च किये बिना भी हरिजनोके लिए वे शुद्ध भोजन अलग रख सकती हैं। बचपनकी एक बात मुझे याद है। प्राय: मेरी माता घरपर आये हुए साधु-वैरागियोंको खाना खिलाकर ही खाती थी। घरमे जो भोजन बनता था, वही उनके लिए वह पहलेसे निकाल कर रख छोड़ती थी। उन्हें प्रेमपूर्वक परोसकर बादमें आप खाती थी और अपनेको धन्य मानती थी। इसी तरह बहनें अगर

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० २८७-९।

हरिजनोंका हिस्सा भी पहले निकाल कर रख दें और फिर भोजन परोसें, तो कितना अच्छा हो। ऐसा करनेसे हरिजन भिखारीके बजाय अतिथि अथवा कुटुम्बी बन जायेगा। इस प्रकार प्रेमपूर्वक भोजन देनेसे ही हरिजन स्वच्छ किये जा सकते है। इससे यह होगा कि दूरसे गर्वपूर्वक भंगियोंपर जूठन फेंकनेके बजाय, बहनें उनके हाथमें शुद्ध भोजन देने लगेंगी। उनके हाथ साफ न होंगे, तो उन्हें धो लेनेको कहेंगी। उनके पास साफ कपड़ा न होगा, तो वे अपने पास से दे देंगी। उन लोगोंके लिए बर्तन भी खास रखेंगी। या उनको सूखी, कच्ची वस्तुएँ देंगी अथवा उनका वेतन बढ़ा देंगी। जब भंगी भाई-बहनोंमें स्वाभिमान जागृत हो जायेगा, तब वे दूसरोंकी तरह खाना लेनेके बजाय वेतन लेना ही पसन्द करेंगे। जबतक वह समय नहीं आता, तबतक के लिए तात्कालिक सुधार की ये तजवीजें मैंने बहनोंके सामने रखी हैं।

हृदय-परिवर्तन होते ही, छुआछूतका भूत भागते ही, हरिजन हमसे नीचे नहीं, हमारे ही समान हैं, ऐसी भावना पैदा होते ही बहनोंको आप-ही-आप कुछ सुधार सूझेंगे। कोई व्यक्ति इसे विस्तृत रूपसे शुरू करे, इसकी राह देखनेकी जरूरत नहीं है। जिस बहनको इस सुधारकी आवश्यकता दिखाई दे वह इसे शुरू कर सकती है। खुद आरम्भ करके अपने पड़ोसियोंसे भी वैसा ही करनेको कहना चाहिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २३-४-१९३३

५. पत्र : एम० वी० एस० रामनको

यरवदा सेंट्रल जेल[१]
२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र और उसके साथ आपकी पुस्तिका भी मिली। हाथमें लिया हुआ काम ही मेरा पूरा समय ले लेता है और उसके सिवा किसी और चीजपर ध्यान देना मेरे लिए बहुत कठिन है। इसलिए यदि मैं आपकी योजनापर कोई राय न दे सकूँ, तो आप कृपया मुझे क्षमा करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एम० वी० एस० रामन
डायरेक्टर, यूनिवर्सल यू० यूनिफार्मिटी
३० कामाक्षीजोश्यर स्ट्रीट, कुम्भकोणम

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६७८) से; सौजन्य: एम० वी० एस० रामन।

१. गांधीजी इसे यरवदा मन्दिर कहते थे। बादके शीर्षकों में इस स्थानका नाम नहीं दिया जा रहा है।

६. पत्र : बी०को[1]

२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय . . .,

तुम्हारा १८ अप्रैलका पत्र मिला। मुझे उसपर कतई विश्वास नही होता। मैं जब तुम्हारा पत्र पढ़ रहा था तब नी०[2] मेरे पास ही थी। मैंने उससे पूछा कि जब वह आगसे खेल रही थी तो क्या, उसके खयालमें, तुम उससे अछूते थे। उसने बिलकुल साफ कहा कि 'नही'। मेरा यदि हजारों नही तो सैकड़ों नवयुवकोंसे तो परिचय रहा ही है। पर मैं ऐसे किसी भी नवयुवकको नही जानता जिसने पथ-भ्रष्ट होनेके बाद अपने-आपको धोखा न दिया हो। तुमने भी लगता है, वैसा ही किया है। क्योंकि तुम्हारे पत्रसे मैं यह ध्वनि निकालता हूँ कि नी०के साथ रहते हुए तुम किसी भी क्षण किसी तरहकी पाशविक वासनासे प्रभावित नहीं हुए। किसी भी व्यक्तिके लिए, जबतक कि वह बिलकुल नपुंसक या देवता न हो, यह असम्भव है; और मेरा खयाल है कि तुम इन दो में से एक भी नही हो। यदि तुम सच्चे मनुष्य बनना चाहते हो, तो तुम्हें इस आत्म-प्रवंचनासे मुक्त होना चाहिए। तुम बच्चे नहीं थे, और न नी० थी। जब वह अपने-आपको और ईश्वर द्वारा मानव प्राणियोंके लिए नियत की गई कामवासनाकी मर्यादाओंको भूल गई थी, तब वह कोई माँ की भूमिका अदा नहीं कर रही थी।

इसलिए मैं तुम्हें पूरे जोरके साथ यही सलाह दूँगा कि यह सारी भावुकता छोड़ दो, व्यावहारिक मनुष्य बनो और अपने-आपको सचाईके साथ हरिजन-सेवामें लगा दो। अबतक तो तुम उसका केवल स्वाँग ही कर रहे थे।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजीकी नकल (एस० एन० १९०३५) से।

१. नाम छोड़ दिया गया है।

२. एक अमरीकी महिला, जो बादमें कुछ समयके लिए आश्रममें रही थी। उसका नाम यहाँ और अगले शीर्षकोंमें नहीं दिया जा रहा है।

७. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय सतीशबाबू,

आपका पोस्टकार्ड और पत्र मिला। दोनों एक ही दिन मिले। अपने तारके बारेमें आप मुझे अब क्या भूल-सुधार भेजेंगे[1]? मेरा खयाल है कि वह बात तो अब तक बिलकुल आई-गई हो चुकी है, और सत्यकी खातिर अब आवश्यकता भूल-सुधारकी नहीं – वह अनावश्यक है – बल्कि ऐसी मानसिक सतर्कता की है जो अपरीक्षित तथ्यों या लचर दलील या वैसे तथ्योंपर आधारित कथनोंसे सन्तुष्ट न हो। अस्पृश्यताका प्रसार मद्रासमें बंगालसे बहुत ज्यादा है, यह बात तर्कसे पूर्णतया सिद्ध करना किसीके लिए सम्भव नहीं है। परन्तु हमारे उद्देश्यके लिए अर्थात्, उस सुधारकके लिए जो इस बुराईकी जड़तक जाना चाहता है और केवल सत्यकी सेवा करना चाहता है, यह स्थापना पूर्णतया सिद्ध है कि अस्पृश्यता दक्षिणमें सबसे अधिक है। कारण कि वहाँ स्थिति यह नहीं है कि एक ओर सवर्ण हिन्दू और दूसरी ओर अस्पृश्य हैं, बल्कि यह है कि एक ओर ब्राह्मण और दूसरी ओर अब्राह्मण हैं। अब्राह्मणोंमें सभी हिन्दू शामिल हैं और वे सभी अब्राह्मण निस्सन्देह अस्पृश्य माने जाते हैं –– मताधिकार समिति या जनगणना आयुक्तकी परिभाषाके अनुसार शायद ऐसा न हो, पर हमारी परिभाषाके अनुसार वे निश्चित रूपसे अस्पृश्य माने जाते हैं। ब्राह्मणो और अब्राह्मणोंके बीच खाने-पीने और मन्दिर जानेके मामलेमें अस्पृश्यता है। पर अस्पृश्यताके दर्जे हैं। निम्नतम स्थान 'अदर्शनीय' का है। 'अदर्शनीय' व्यक्तिको ब्राह्मणोंकी आँखोंके सामने तो आना नहीं चाहिए, उसकी आवाजतक उन्हें सुनाई नहीं पड़नी चाहिए। दक्षिणमें मन्दिरोंकी व्यवस्था उत्तर भारत-जैसी नही है। वहाँ सभी वर्गोंके लिए रुकावटें हैं। वहाँ सचमुच किसके लिए कौन-कौनसी रुकावट रूढ़ है, यह मुझे भी मालूम नहीं है। पर वहाँ रुकावटें हैं, और आप और मैं उन रुकावटोंको ही हटाना चाहते है। मै अभी बंगाल जनगणना रिपोर्टके अस्पृश्यता-सम्बन्धी अध्यायको पढ़ने जा रहा हूँ; वह इस मसलेपर बहुत प्रकाश डालता है। पर आप मेरा आशय अब समझ गये होंगे। आपके द्वारा किये जानेवाले किसी भी भूल-सुधारसे उद्देश्य पूरा नहीं होगा। परन्तु जो स्थिति है, उसे हमें अच्छी तरह समझ लेना चाहिए और मेरी आपको अब यही सलाह है कि 'दक्षिणको अपने मनसे बिलकुल निकाल दें, किसी तरहकी तुलना न करें।' जहाँ भी हम जाते हैं, स्थिति काफी खराब मिलती है। यदि हम मानसिक स्थितिकी दृष्टिसे विचार करें तो अपेक्षाकृत अधिक संवेदनशील नामशूद्र किसी हल्की अस्पृश्यताको भी कहीं अधिक महसूस करता है,

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० १३०-१।

जबकि 'अदर्शनीय' माना जानेवाला अपेक्षाकृत कम सवेदनशील व्यक्ति अस्पृश्यताके कठोरतम रूपको भी उतना महसूस नहीं करता। इसलिए दक्षिण क्या करता है या क्या नहीं करता — इसका विचार किये बिना, आपका अपना काम निश्चित है। आपको बंगालमें प्रचलित अस्पृश्यतासे मुक्ति पानी है, फिर चाहे उसका असर हिन्दू आबादीके ५० प्रतिशत भागपर पड़ता हो, चाहे ५ प्रतिशत पर।

डॉ० पी० सी० राय और गुरुदेवके बारेमें आप जो कहते है, वह मैं समझता हूँ।[१] मेरा यह खयाल है कि आप परिस्थितिका जितना अधिक अध्ययन करेंगे उतना ही अधिक यह देखेंगे, जैसाकि मैंने देख लिया है, कि बंगालका शिक्षित वर्ग यरवदा-समझौतेमें सुधार नहीं चाहता।[२] जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, यदि बंगालके हरिजनों और अन्य सभी सम्बन्धित पक्षोंको मनाया जा सके तो वे उसमे सुधार कर सकते हैं, अलबत्ता यह देखें कि उससे संयुक्त व्यवस्था तो कमजोर नहीं पड़ती। वे उसे गलत तरीकेसे कर रहे हैं, यह बात सच है और दुर्भाग्यपूर्ण है। यह बात भी उतनी ही दुर्भाग्यपूर्ण है कि जो-कुछ हुआ उसके लिए गैर-बंगालियोंको दोष दिया जा रहा है। बंगालियोंको बम्बईकी मीटिंगमें पूरी संख्यामें आना चाहिए था। लेटिनमें कानूनके बारेमें एक बहुत ही सुन्दर नीति-वचन है, जिसका आशय है — "न्यायसाम्य सजगका हित-साधन करता है, सोये हुए का नही।" परन्तु जिस व्यक्तिको शिकायत होती है और जो पीड़ित और क्रुद्ध होता है, उससे आप कुछ कह नहीं सकते। इसीलिए मैं बिलकुल मौन रहा हूँ। इस तरह लोगोंमे अपने-आप विवेककी भावना पैदा होगी। इसलिए मैं आपको भी बिलकुल मौन रहनेकी सलाह दूँगा। आप काफी कह चुके हैं और बंगालके हरिजनोंको यह वचन दे चुके है कि जहाँतक आपका सम्बन्ध है, आप समझौतेको एक पवित्र वस्तु मानते हैं, और उसे सभी पक्षोंकी सर्वसम्मत स्वीकृतिके बिना बदला नही जा सकता। मेरी बातका आशय आपके सामने बिलकुल स्पष्ट हो गया न?

मैं देख रहा हूँ कि 'हरिजन' की बिक्री आपके यहाँ इस समय गिर रही है। पर मुझे आशा है कि उसे घाटेमें नहीं चलाना पड़ेगा। यदि उसमें घाटा होने लगे तो प्रकाशन बन्द कर दें। यदि बंगाल बंगला 'हरिजन' नही चाहता, तो उसपर वह थोपा नहीं जा सकता। हिन्दी, गुजराती और अंग्रेजी-संस्करणोंकी बिक्री बराबर बढ़ रही है। अंग्रेजी-संस्करण प्रायः आरम्भसे ही स्वावलम्बी रहा है, और गुजराती

१. सतीश बाबूने कहा था कि डॉ० पी० सी० राय यद्यपि पहले पूना-समझौतेके पक्षमें थे पर अब वे उसके विरुद्ध हो गये हैं। गुरुदेवके बारेमें उनका कहना था कि मैंने उनसे यरवदा-समझौतेके सिलसिलेमें आयोजित एक सन्देश भेजनेको कहा था। पर रवीन्द्रनाथ ठाकुरने यह उत्तर दिया कि मैं परिस्थितिका एक उच्चतर स्तरसे सर्वेक्षण कर रहा हूँ और चालू राजनीतिसे अलग ही रहना चाहता हूँ।

२. दलित वर्गोंके नेताओं और शेष हिन्दू-समाजके नेताओंके बीच हुआ समझौता, जिसमें विधानसभाओंमें दलित वर्गोंके प्रतिनिधित्व और उनके कल्याणसे सम्बन्धित कई अन्य मुद्दे तय किये गये थे। समझौतेके पूरे मजमूनके लिए देखिए खण्ड ५१, परिशिष्ट २ और खण्ड ५४, पृ० १८० और २६८ भी।

व हिन्दी-संस्करण, आशा है, महीने-भरमें स्वावलम्बी हो जायेंगे। क्या मैंने आपको कभी बताया था कि [इसका] एक तमिल-संस्करण भी था, जिसे गणेशन प्रकाशित करते थे? वे बहुत ही उत्साही कार्यकर्त्ता हैं और उन्होंने अपने-आपको पूर्णतया इस तरहके ध्येयोंके लिए समर्पित कर दिया है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०३६) से।

८. पत्र : पी० एस० रुद्रमणिको

२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय रुद्रमणि,

तुम्हारे पत्रके लिए धन्यवाद। तुम्हारा सम्बन्ध हरिजनोंके पुरोहित वर्गसे है, इसीलिए तुम्हारे बारेमें मुझे इतना बुरा लगा। मेरा मन यही कहता है कि तुमने नी०की उपेक्षा की है। तुम्हें उसे वहाँ नहीं ले जाना चाहिए था। जिस कामके लिए तुम उसे अपने गाँव ले गये थे उसमें उसे लगानेके लिए तुमने कुछ भी नही किया। और नी० जो कुछ कहती है यदि वह सच है, तो तुम कोई शारीरिक काम करनेको तैयार नही हो। मेरी बड़ी इच्छा है कि तुम हरिजनोंके आदर्श पुरोहित बनो और उनके साथ तथा उनके लिए श्रम करो, और सवर्ण हिन्दू पुरोहितोंमें पाई जानेवाली सभी कमजोरियों और बुराइयोंसे बचो। मेरी बड़ी इच्छा है कि तुम अपने चरित्र और अपनी विद्याके बलपर कट्टर-से-कट्टर सवर्ण हिन्दुओंसे भी आदर प्राप्त कर सको।

जहाँतक मैं समझ सका हूँ, तुमने नी० के टिकटके दाम रामचन्द्रको नही लौटाये हैं। वह टिकट तुम्हें खुद खरीदना चाहिए था। पर तुमने उसमें बहुत विलम्ब कर दिया। और नी० मुझे यह भी बताती है कि उसका अपने केश कटवाना तुम्हें बहुत बुरा लगा। यदि एक बहन, जो कलतक मलिन जीवन बिता रही थी, अचानक सारी मलिनताको छोड़ने और त्यागका जीवन अपनानेका संकल्प करती है, तो तुम्हें निश्चय ही उसके संकल्पका स्वागत करना चाहिए था। वैसे भी किफायत और स्वच्छताकी दृष्टिसे केशोंको हटाना आवश्यक है। हिन्दू होकर भी क्या तुम यह नहीं जानते कि संन्यासिनीकी हैसियतसे, हमारी धारणाके अनुसार तो वह वही हो गई है, वह केश और ऐसे अलंकार नहीं रख सकती जो मनुष्यकी नीच प्रवृत्तियोंको ललचाते हैं।

आखिरी बात, तुमने मुझे यह भी नहीं बताया कि उसके पूनाके टिकटके दाम दया करके एक पारसी सज्जनने दिये थे। कृपया मुझे उनका पूरा नाम और पता भेजो। यह समझनेकी कोशिश करो कि मैंने यह पत्र तुम्हें डाँटने-फटकारनेकी नीयतसे नहीं लिखा है। ऐसा करनेका मुझे कोई अधिकार नहीं है। नी०के द्वारा ही मैं तुम्हें जानता हूँ। परन्तु, क्योंकि तुम्हें मैं अपना आदमी भी समझता हूँ

और तुम्हारे साथ सहानुभूति रखता हूँ, इसीलिए यह सब मैं इस आशा से लिख रहा हूँ कि भविष्यके लिए तुम इससे सावधान हो सकते हो। यदि अनजानेमें मुझसे तुम्हारे प्रति कोई अन्याय हो गया हो, तो कृपया मेरी भूल सुधार देना।

हृदयसे तुम्हारा,

श्रीयुत पी० एस० रुद्रमणि,
चितलदुर्ग

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१०३८)से।

९. पत्र : रामचन्द्रको

२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय रामचन्द्र,

नी०के पत्रके साथ आपका पत्र भी मिला। दोनों पत्र एक ही डाकसे पहुँचे। इस तरह आप देखेंगे कि मैं आपकी उम्मीद कर रहा था[1]। चितलदुर्गमें उसकी प्रगति को मैं बड़ी उत्सुकतासे देखता रहा हूँ। उसके जीवनमें अचानक क्रान्ति लानेमें मैं सहायक रहा हूँ। अतः चितलदुर्गमें यदि मैं उसे यूँही घुलने देता और उसकी उपस्थितिसे वहाँ हरिजनोंको कोई लाभ न पहुँचता, तो मैं अपनेको अपराधी महसूस करता। इसलिए उसे सीधे अपनी देखरेखमें रखनेके सिवा और कोई चारा नहीं है। मैं जानता हूँ कि यह प्रयोग खतरेसे खाली नहीं है। मुझे नहीं मालूम, और मेरा खयाल है, उसे खुद भी मालूम नहीं है, कि उसके जीवनमें जो क्रान्ति आई है वह टिकेगी या नहीं। अतीतसे विच्छेद बहुत ही आकस्मिक है। पर मैं ऐसे लोगोंको जानता हूँ जिनके जीवनमें इस तरह अचानक कायाकल्प हुआ है। उसके पिछले पत्रों पर जब मैं दृष्टि डालता हूँ तो वहाँ मुझे उसके मनकी अदृश्य क्रियाका और उसके भीतर चल रहे सत् और असत्‌की शक्तियोंके युद्धका संकेत मिलता है। हमें आशा करनी चाहिए कि सत्‌की शक्तियोंकी असत्‌की शक्तियोंपर विजय हो गई है।

कृपया मुझे बताइए कि उसकी वजहसे आपका हाथ कहीं बिलकुल खाली तो नहीं हो गया है। यदि ऐसा हो तो अपना हिसाब-किताब लिखना। चितलदुर्गके उसके टिकटके लिए आपने जो रुपये दिये थे, वे रुद्रमणिने आपको लौटाए या नहीं?

हृदयसे आपका,

श्रीयुत रामचन्द्र
दीन सेवा संघ
मलेश्वरम, बंगलौर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१०४२)से।

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० ५२७-८।

१०. पत्र : भाऊ पानसेको

२३ अप्रैल, १९३३

चि० भाऊ,

गाँवोंमें जो जानकारी मिलती रहे, मुझे लिखते रहना। गाँवके लोगोंके साथ मिलकर उनके जैसा बनकर उनसे बातें करना। वे क्या करते हैं, क्या खाते हैं, काहे की खेती करते हैं, कौन-सी खाद इस्तेमाल करते है, मलके लिए गड्ढा कहाँ बनाते हैं, उसका उपयोग करते हैं या नहीं, पशु कितने हैं, कैसे हैं, फल के या दूसरे पेड़ हैं या नहीं, पानीका क्या प्रबन्ध है, आदि सारी जानकारी प्राप्त करना। बच्चोंके साथ घुलना-मिलना चाहिए। मतलब यह है कि वे हमारे सम्बन्धी ही हैं ऐसा मानकर उनमें दिलचस्पी लेनी चाहिए। और जिस प्रकार सम्बन्धीसे सब-कुछ पूछ-पूछकर उसके सुख-दुःख मालूम करते हुए हम नहीं थकते, उसी तरह इनके विषयमें भी न थकें। अद्वैत भावनाका पोषण और वृद्धि इसी प्रकार की जा सकती है।

स्वास्थ्य अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७५६)से। सी० डब्ल्यू० ६७५६ से भी; सौजन्य : भाऊ पानसे।

११. पत्र : प्रागजी के० देसाईको

२३ अप्रैल, १९३३

चि० प्रागजी,

तुम्हारा पत्र बहुत राह देखनेके बाद मिला। तुम्हारे भाईके अच्छे हो जानेकी कामना करता हूँ।

पार्वतीने सम्बन्ध तोड़ ही दिया है। वह सन्देशा भेजती रहती है; किन्तु उसकी कुछ कीमत नहीं है। क्या उसने कभी किसी भी निमित्त पत्र लिखा है? पहलेकी बातें न करे। तुम्हें मेरा पत्र मिल गया होगा। अस्पृश्यताके बारेमें ही साफ-साफ बात करनी है तो मिल सकोगे, नहीं तो पत्रसे ही सन्तोष कर लेना। मेरी सलाह तो यही है कि पत्रसे ही सन्तोष करो।

मणिलालके बारेमें तुम्हारी शिकायतका जवाब मुझे अभी देना है। तुम्हारा पता ठीक हो जानेपर उसका जवाब दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री प्रागजी खण्डूभाई देसाई
मार्फत – डॉ० एन० डी० पटेल
सी व्यू बिल्डिग, क्वीन्स रोड, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०३४)से।

१२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२३ अप्रैल, १९३३

चि० प्रेमा,

दायाँ हाथ काफी थक गया है, इसलिए जो-कुछ शक्ति उसमें बाकी हो उसे 'हरिजन' के लेखोंके लिए सुरक्षित रखना चाहता हूँ। मेरा खयाल है कि पूरे आराम की जरूरत नहीं पड़ेगी।

बीचमें एक पत्र मैंने तुझे लिखा ही है।[1] इसलिए यह छोटा रहे तो हर्ज नहीं।

परचुरे शास्त्रीके लिए मैं पुस्तकोंकी तलाश कर रहा हूँ।

मैत्री तकलीफ देगी। अगर उसे सुधारना है तो सहन करनेसे और प्रेमसे ही सुधरेगी। उसे माँ की कमी महसूस नहीं होनी चाहिए। मासिकधर्म के समय जो छूट रखनी उचित हो वह रखी जाये। कोई एक या अनेक लोग भी उसका दुरुपयोग करें तो उसके लिए आश्रम जिम्मेदार नहीं होगा। नींदके समयका कोई व्यक्ति दुरुपयोग कर सकता है, इस कारण हम वह समय काट नहीं सकते।

तू अपना धीरज टूटने न देना। सुधारक या सेवकका काम इसके बिना घड़ी-भर भी नहीं चलता, इसे हमेशा याद रखना, अपनी दीवारपर लिख रखना; उसका तावीज बनाकर पहन लेना।

वहाँसे मंजूरी आ जायेगी तो नी० थोड़े ही दिनोंमें आश्रममें आयेगी। उसने खुल्लम-खुल्ला व्यभिचार किया है, कर्ज लिया है, असत्य बोला है। अब वह साध्वी-जैसी बनकर बैठी है। मुझे उसमें कृत्रिमता नहीं लगी। उसने अपने दोषोंका दर्शन किया, उसके बाद मैंने उससे जो कहा वही उसने किया है। यदि उसे अपने शुभ निश्चयपर स्थिर रहनेका मौका मिल सकता है, तो वह आश्रममें ही मिलेगा। और कहीं वह सूख जायेगी अथवा फिरसे स्वेच्छाचारमें फँस जायेगी। उसमें शक्ति बहुत है। वह बहुत बातें जानती है। वह महाभारत खूब जानती है। वह आये तो

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० ४१३-१४।

उससे परिचय करना। दूसरी बहनोंसे भी परिचय कराना। उसके भूतकालकी बात न करना। वह ऐसी है कि खुद ही करेगी। परन्तु उसकी बात करने-करानेमें दोष है। विषयका स्मरण हानिकर है। अपने विषयी भूतकालकी बात वह रसपूर्वक करे, तो जान लेना कि विषय उसमें से गया नहीं। उसे छोटी बहन समझकर प्रेमपूर्वक टोक देना। उसके जीवनके बारेमें मुझसे जो पूछना हो वह तू पूछ सकती है। उसे भेजनेका समय आये तब कदाचित् मुझे बहुत लिखनेका समय न मिले, इसलिए आज ही इतना लिख डाला। उसका लड़का बहुत अच्छा है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३३८) से। सी० डब्ल्यू० ६७७८ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१३. पत्र : नारायण म० देसाईको

२३ अप्रैल, १९३३

चि० नारायणराव उर्फ बाबलो,[1]

तूने जो सवाल पूछा है उसका जवाब तभी दे सकता हूँ जब तू मुझे यह लिखे कि प्रेमाबहनने जब तुझसे कुछ कहा तब तूने उत्तर दिया; "मैं खेल नहीं रहा हूँ, चींटीको मरनेसे बचा रहा हूँ।" इस पत्रका मुझे ठीक जवाब देना। तूने और धीरूने[2] तो खूब कताई की है। तुम लोग बादमें थक तो नहीं गये थे? एक साथ कितने घंटे काता था?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४८१)से।

१४. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला।

इतवारको खत लिखनेकी प्रतिज्ञा की उससे मुझे बहुत शांति मीली। जो कार्य करनेका रहता है उसके लिये समय निश्चित करनेसे वखतका और शक्तिका संग्रह होता है, शांति बढ़ती है।

१. महादेव देसाईका पुत्र।
२. छगनलाल जोशीका पुत्र।

अरुणका सुनकर खुशी हुई। आजकल जो मैं सोच रहा हूँ और देख रहा हूं उस परसे मुझे लगता है कि अरुणको और तुमारे भातका त्याग करना चाहिये और दूध, दहि और रसदार फलपर और सालेड पर रहना चाहिए। चावल अनावश्यक वस्तु है।

प्रतिष्ठानमें जो तकलीफ आती है उस बारेमें लिखो। उसको दु:ख मत मानो। विपदो नैव विपद: संपदो नैव संपद: विपद्विस्मरणं विष्णो: संपन्नारायणस्मृति:[1] तुमको कोई आश्वासनकी आवश्यकता ही नहिं है तो भी पिता बनकर बैठ गया हूं इसलिए जी नहिं रहता। तुमारा साथी, मित्र, सखा, पिता सब कुछ ईश्वर है। जिसको हम रामनामसे पहचानते हैं। कल कुछ ऐसा ही हुआ निंद आनेमें देर लगती थी रामनाम शरू कर दिया छा एसी ही निंद आ गई।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७००)से।

१५. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको[2]

२३ अप्रैल, १९३३

डॉ० अम्बेडकर[3] को हरिजन मित्रोंसे कई पत्र इस आशयके मिले है कि पूना-समझौते[4] की 'पैनल' व्यवस्थामें परिवर्तन वांछनीय है। इसीलिए वे उस सुझावपर मेरे विचार जाननेके लिए यहाँ आये। जो विकल्प सुझाया गया है वह यह है कि जो हरिजन उम्मीदवार संयुक्त निर्वाचक-मंडलोंमे हरिजनोंके निर्धारित न्यूनतम मत प्राप्त करनेमें सफल हो जाये, केवल उन्हें ही निर्वाचित घोषित किया जाये। इस योजना पर मैंने अभीतक विचार नहीं किया है, इसलिए मै उन्हें कोई उत्तर नहीं दे सकता था। मैंने उनसे केवल यही कहा कि वे पहले विभिन्न हरिजन दलो और इस विषयमें दिलचस्पी रखनेवाले अन्य लोगोंसे मिल लें और उनके विचार मुझे बताएँ। परन्तु उन्होंने मुझसे कहा कि मै इस सुझावपर स्वतन्त्र रूपसे विचार करूँ और अपनी राय उन्हें लन्दन भेजूँ। मैं ऐसा करनेकी कोशिश करूँगा।[5]

यह पूछनेपर कि डॉ० अम्बेडकर परिवर्तन क्यों चाहते हैं, गांधीजी ने कहा कि

१. देखिए खण्ड ४४, पृ० ३९७।

२. साधन-सूत्रके अनुसार डॉ० अम्बेडकरकी गांधीजी के साथ ४५ मिनट बातचीत हुई। सर्वश्री के० ओ० चित्रे, के० जी० शिन्दे और अन्य अब्राह्मण नेता भी मौजूद थे। डॉ० अम्बेडकरके साथ बातचीतकी विशेष रूपसे व्यवस्था की गई थी, क्योंकि वैसे गांधीजी रविवारको मुलाकातियोंसे नहीं मिलते थे।

३. दलित वर्गोंके नेता।

४. यरवदा-समझौता भी कहलाता है। देखिए पाद-टिप्पणी संख्या २, पृ० १०।

५. गांधीजी की रायके लिए देखिए "यरवदा-समझौता", २७-४-१९३३।

डॉ० अम्बेडकरका कहना है कि जहाँतक उनका सम्बन्ध है, वे 'पैनल' व्यवस्था से बिलकुल संतुष्ट हैं और पूना-समझौतेसे पीछे नहीं हटेंगे। पर उपरोक्त परिवर्तन करानेके लिए उनपर दबाव डाला जा रहा है।

'पैनल' व्यवस्थापर जब उनका विचार पूछा गया, तो गाँधीजी ने कहा :

व्यक्तिगत रूपसे मेरी राय यह है कि हरिजन यदि सवर्ण हिन्दुओंपर अविश्वास न करें, तो 'पैनल' व्यवस्था बिलकुल निरापद है।

यदि अन्य लोग भी सहमत हो जायें, तो क्या आप इस परिवर्तनको स्वीकार करनेको तैयार हो जायेंगे ?

मैं इस परिवर्तनको आसानीसे स्वीकार नहीं करूँगा। मैंने अभी इसपर विचार नहीं किया है। इस तरहके हर सुझावकी मैं केवल हरिजन दृष्टिकोणसे ही जाँच करूँगा, क्योंकि हरिजनों और सवर्ण हिन्दुओंके हितोंमें कोई टकराव हो सकता है, यह बात मेरे दिमागमें नहीं आती। मेरा यह दृढ़ विचार है कि जो चीज हरिजनोंका वास्तविक हित सिद्ध करती है, उससे सवर्ण हिन्दुओंका हित भी अवश्य सिद्ध होना चाहिए। मेरा यह विश्वास है कि मुझमें इस तरहके प्रश्नोंकी हरिजन दृष्टिकोणसे जाँच करनेकी क्षमता है। इसलिए यदि दुर्भाग्यसे स्थिति ऐसी हो जाये कि मुझे अपनी रायके लिए एक भी समर्थक न मिले, तो भी अकेले खड़े होकर अपने विचारका प्रतिपादन करना मुझे बुरा नहीं लगेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-४-१९३३

१६. पत्र : नारणदास गांधीको

२३/२४ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

ठीक हुआ जो तुम्हारा पोस्टकार्ड मिल गया। कल तुम्हें पत्र लिखा था वह मिला होगा। नर्मदा कल मिल गई है। बहुत भली लड़की लगी। वह तो काम करनेको तड़प रही है। लक्ष्मीबहनके साथ फिर आनेके लिए कहा है।

डॉक्टर[1] कामका निकले तो बहुत अच्छा हो।

नी० अपने लड़केके साथ आ गई है। अभी तो जिस ढँगसे नियमोंका पालन कर रही है वह आश्चर्यमें डाल देता है। यदि अभीतक तुमने अपना निर्णय न लिख भेजा हो और कोई निर्णय कर लिया हो तो मुझे तारसे सूचना देना। सबसे न पूछा हो तो पूछ लेना।

१. डॉ० हीरालाल शर्मा।

आश्रम नियमावली जिस-जिस भाषामें हो उनकी एक-एक प्रति भेज देना।

गोदावरी और पाण्डुरंग चौधरी किन परिस्थितियोंमें चले गये थे, इसका अनुमान हो तो लिखना। गोदावरीके बारेमें प्रेमाको ज्यादा जानकारी होगी।

२४ अप्रैल, १९३३

नी० के बारेमें हम सब चर्चा कर रहे थे, उसमें छगनलाल[1] हमसे सहमत नहीं था। इसलिए मैंने उससे अपना विचार लिख डालने और यदि नी०को आश्रममें रखना हो तो क्या करना चाहिए, यह भी लिखनेको कहा। अभी सब पत्र लिखनेके बाद उसकी राय पढ़ डाली है। उसको रखनेका निर्णय करें तो छगनलालकी जैसी राय है वैसी मर्यादा निर्धारित नहीं कर सकते। ऐसा करनेसे उसकी और आश्रमकी भलाई नहीं होगी। आश्रमकी मर्यादाका पालन करते हुए उसकी जिस शक्तिका उपयोग किया जा सकता हो उसे करना ही चाहिए। नये व्यक्तिको शायद एकाएक बाहर भी नहीं भेज सकते। लेकिन मैं हरिजन बालकोंका भार उसे अवश्य सौंपना चाहूँगा। उसने नई जिन्दगी शुरू की है। यह समझकर ही हम उसे रखें या फिर न रखें। किन्तु इस विषयमें खूब स्पष्ट रूपसे कह देना चाहता हूँ। यदि तुम अपनी राय भेज चुके होगे तो सारे सुझाव भेजूँगा ही। वह पापी है यह समझकर नहीं लेना है। फिलहाल इतना समझ लेना ही काफी है।

बापू

[पुनश्च :]

महादेवकी राय भी इसके साथ भेज रहा हूँ।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

१७. पत्र : रामानन्द चटर्जीको

२४ अप्रैल, १९३३

प्रिय रामानन्द बाबू,

आपको एक बार फिर कष्ट देना है। यरवदा-समझौतेकी 'पैनल' व्यवस्थाके लिए डॉ० अम्बेडकरका विकल्प[2] तो आपने देखा ही होगा। उनके सुझावपर यदि

१. छगनलाल जोशी।

२. देखिए पृ० १६।

सार्वजनिक रूपसे नहीं तो कम-से-कम मेरे व्यक्तिगत उपयोगके लिए ही अपनी राय दें।[1] मैं उसकी कद्र करूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत रामानन्द चटर्जी
'मॉडर्न रिव्यू', चितपुर रोड
कलकत्ता

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९५०३)से; सौजन्य: शान्ता देवी। एस० एन० २१०४६ से भी।

१८. पत्र : अमृतलाल वी० ठक्करको

२४ अप्रैल, १९३३

प्रिय ठक्कर बापा,

यरवदा-समझौतेमें संशोधनके डॉ० अम्बेडकरके सुझावपर मैं 'हरिजन' के आगामी अंकमें विचार करनेवाला हूँ[2]। आपने वह जरूर देखा होगा और उसपर कुछ सोचा भी होगा। उसके बारेमें आपका क्या विचार है, कृपया मुझे बतायें। यह पत्र कृपया घनश्यामदास[3] को दिखा दें और उनकी राय भी मुझे भेजें, या आप दोनों अपनी संयुक्त राय भी भेज सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२०) से। एस० एन० २१०५२ से भी।

१. रामानन्द चटर्जीने ३ मईके अपने पत्रमें लिखा था: "कलके अपने पत्रमें मुझे यह कहना चाहिए था कि यद्यपि मुझे डॉ० अम्बेडकरका सुझाव 'पैनल' व्यवस्थासे बेहतर लगता है, पर उनमें से कोई भी मुझे पसन्द नहीं है। संयुक्त निर्वाचक-मण्डल, जिसमें दलित वर्गोंके लिए उनकी संख्याके अनुपातमें सीटें आरक्षित हों, दोनोंसे बेहतर रहेगा।" (एस० एन० २११४९)। इससे पहले २ मईके अपने पत्रमें उन्होंने लिखा था: "इसपर अपनी राय व्यक्त करनेसे पहले मैं यह कहनेकी अनुमति चाहता हूँ, कि जिस तरह मैं साम्प्रदायिक निर्णयके विरुद्ध हूँ, उसी तरह पूना-समझौतेके भी विरुद्ध हूँ, क्योंकि उसमें भी उस निर्णयके हानिकारक तत्त्व हैं या वह उन्हें और बिगाड़ता है (एस० एन० २११४५)।

२. देखिए पृ० ३६-९।

३. घनश्यामदास बिड़ला।

१९. पत्र : सी० वाई० चिन्तामणिको

२४ अप्रैल, १९३३

प्रिय श्री चिन्तामणि,

यरवदा-समझौतेकी 'पैनल' व्यवस्थामें सुधारका डॉ० अम्बेडकरका सुझाव अब आपको मालूम ही है। मैं चाहता हूँ, उनके द्वारा सुझाये गये विकल्पपर आप अपनी राय दें। यदि आपने 'लीडर' में उसपर सार्वजनिक रूपसे विचार किया हो, तो कृपया इस पत्रका उत्तर देनेका कष्ट न करें। लेकिन यदि न किया हो, तो मैं आपकी रायकी कद्र करूँगा। 'हरिजन' के आगामी अंकोंमें मैं उस विकल्पपर सार्वजनिक रूपसे विचार करनेवाला हूँ।[1]

हृदयसे आपका,

[पुनश्च :]

यह पत्र मेरे नये टाइपिस्टका कारनामा है। इसलिए उसपर और मुझपर दयाभाव रखें। आशा है, आप अच्छे होंगे।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१०५१) से।

२०. एक पत्र

२४ अप्रैल, १९३३

प्रिय मित्र,

मेरी पुस्तक 'गाइड टु हैल्थ'[2] में कुछ स्थानोंपर संशोधन आवश्यक है। इसलिए मेरा कहना है कि अभी आप उसका अनुवाद न करें। यदि मैं इस संस्करणको सुधार सका तो ऐसी पुस्तकका अनुवाद करनेके बजाय, जो कुछ महत्वपूर्ण प्रकरणोंमें अच्छी मार्गदर्शिका नहीं है, उस संशोधित संस्करणका अनुवाद करना ही अच्छा होगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०३७) से।

१. अपने २९ अप्रैलके पत्रमें श्री सी० वाई० चिन्तामणिने लिखा था : "सुझावके गुण-दोषोंपर किसी की जो भी राय हो, उद्देश्यसिद्धिकी दृष्टिसे मेरा दृढ़ मत है कि समझौतेपर दुबारा विचार न किया जाये" (एस० एन० २१०८३)।

२. मद्रासके एस० गणेशन द्वारा जुलाई, १९२१ में प्रकाशित। देखिए खण्ड १२, पा० टि० १, पृ० ४ भी।

२१. पत्र : मोहन और वनमाला परीखको

२४ अप्रैल, १९३३

चि० मोहन और वनमाला,

तुममें से बड़ा कौन है यह तो मैं भूल गया हूँ। वनमाला बड़ी हो तो अपना नाम बादमें लिखनेके लिए क्षमा करे। हम पश्चिमके नियम नहीं मानते। वहाँ तो लड़की छोटी हो तो भी उसका नाम लड़केसे पहले लिखते हैं। हम तो आयुकी मर्यादा मानते हैं।

मुझे लिखना तो था तुम दोनोंके स्वास्थ्यके बारेमें और लिख कुछ और ही दिया है। कोई बात नहीं। दोनों अपनी तबीयतका हाल लिखो।

वनमालाने अच्छा सूत काता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८१)से। सी० डब्ल्यू० ३००४से भी; सौजन्य: वनमाला म० देसाई।

२२. पत्र : नारणदास गांधीको

२५ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी भाषासे तुम्हारा दुःख टपक रहा है, यह मैं देख पा रहा हूँ। तुमने जवाब दिया है[1] सो मेरे लिए तो नहीं है। क्योंकि मुझे उसकी जरूरत न थी। किन्तु वह छगनलालके लिए है ऐसा मैं मान लेता हूँ।

तुम्हारी पवित्रता और तुम्हारी कार्यदक्षताके बारेमें मेरी राय बदली नहीं है। मेरी राय बदलेगी तो मैं तुम्हारे बारेमें आग्रह नहीं रख सकूँगा। जबतक मेरा विचार न बदले तबतक तुम्हें परेशान नहीं होना चाहिए। छगनलालकी शिकायतका तुमने जो जवाब दिया है, वह मुझे बिलकुल ठीक लगा है। तो भी मैं देखता हूँ कि तुम्हारी भाषामें क्रोध छिपा हुआ है। क्रोधका तो कारण ही नहीं है। छगनलालको जैसा लगा वैसा तुझे लिख दिया। उसमें द्वेष नहीं है। उसमें सत्य न देख पानेकी उसकी असमर्थता है। नी० -सम्बन्धी पत्रमें तुम यही बात देखोगे। उसके लिए छगनलालके मनमें द्वेष क्योंकर होगा। किन्तु वह उसके कलुषित जीवनसे डर गया और उस

१. सम्भवत: छगनलाल जोशी द्वारा की गई उनकी आलोचनाके बारेमें; देखिए खण्ड ५४, पृ० ४६१।

डरसे पीछा नहीं छुड़ा पाया। इसलिए ऐसे विचार लिख डाले। इस प्रकार यह उसकी विचार-शक्तिकी कमी है, उसके हृदयकी नहीं। कुछ भी हो, तुमको ऐसी बातोंको बिना दुखी हुए समझ लेनेकी और उनमें जितना लेने लायक हो उतना ले लेनेकी शक्ति प्राप्त कर लेनी है। यह एक दिनमें प्राप्त नहीं हो जाती। प्रयत्न करते रहो, इतना ही काफी है।

बापू

[पुनश्च :]

प्रेमा या दूसरी लड़कियाँ गलेमें हाथ डालकर चलती हैं, इसमें कोई दोष है या नहीं यह प्रत्यक्ष देखे बिना कहा नहीं जा सकता। यदि गँवारू ढँगसे ऐसा किया जाये तो शोभा नहीं देगा। मर्यादाका उल्लंघन न हो तो उसमें कोई हानि भी नहीं। इस सम्बन्धमें मैंने लक्ष्मीदासके पत्रमें लिखा है। तुमने पढ़ा न हो तो पढ़ लेना। बादमें कुछ और पूछना हो तो पूछ लेना।

अभी शायद एक और व्यक्तिका बोझ तुमपर लादना पड़ेगा। मार्गरेट स्पीगलको तो तुम जानते हो न? उसने वहाँ रहकर हरिजन-कार्य किया था। वह शायद कल बम्बई पहुँची होगी। उसे रखोगे न? उसके बारेमें कुछ कहनेकी जरूरत नहीं। बहुत अच्छी महिला है। यहाँ पत्र लिखती रही है।

सोनीरामजीके २५०० रु० आ गये हों तो घनश्यामदासको भेज देना। २५ चरखोंमें पाँच और जोड़ देना। उनकी कीमत डेढ रुपया मिलेगी।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२३. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२५ अप्रैल, १९३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तूने मेरे पत्रका बहुत गहरा अर्थ लगा लिया है।[1] ऐसा उसमें कुछ था नहीं। नारणदासके नाम मैंने जो पत्र लिखा था उसमें तेरे बारेमें की गई शिकायतोंका उल्लेख था। उसे ध्यानमें रखकर मैंने लिखा था कि तेरे अनेक गुणोंमें यदि दूसरोंके दोषोंको उदारतापूर्वक सहन करनेकी शक्ति भी आ जाये तो कितना अच्छा हो। मुझे नारणदासको यह लिखना पड़ा कि पत्र तुझे न दिखाये तो अच्छा हो। इससे मुझे दुःख हुआ और मैंने उसे प्रगट भी किया। इसमें तुझे उलाहना देनेकी तो बात ही नहीं थी। मनुष्यके स्वभावको पलटनेकी भी हद होती है, इसलिए तुझे कुछ लिखना मुझे ठीक नहीं लगा।

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० ३०९-१०।

इतना स्पष्टीकरण काफी हुआ न? अब तुझे वह पत्र देखना हो तो देख लेना।

तुझे एक मासकी छुट्टी लेनी चाहिए या नहीं, इसका निर्णय तू ही कर लेना। यह जरूर है कि नी०को वहाँ आना हो तब तू वहाँ रहे, यह मुझे अच्छा लगेगा। परन्तु जैसा नारणदास कहे वैसा करना।

तेरे गलेके बारेमें मुझे चिन्ता तो होती ही है। परन्तु क्या हो सकता है? वह बिगड़ेगा तो दोष जरूर तेरा ही निकालूँगा। तू पूर्ण मौनव्रत ले ले तो मुझे अच्छा लगेगा। इससे तेरा काम कम नहीं होगा। ट्रेपिस्ट साधु और साध्वियाँ मौनव्रत लेने पर भी सतत काम करते हैं। कच्चा शाक भले ही खा, परन्तु उसे पीसकर लेना चाहिए। कच्चा दूध और फल हों तो सागके बिना भी काम चल सकता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३३९) से। सी० डब्ल्यू० ६७७९ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

२४. पत्र : नानालाल के० जसानीको

२५ अप्रैल, १९३३

भाई नानालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। भाई प्रभाशंकरसे[1] कहना कि पूना जरूर आये। मेरा उससे कोई बैर तो नहीं है। मैंने तो अपनी स्थिति बता दी। मैं तो चाहता हूँ कि मैं उसपर विश्वास कर सकूँ। पर करूँ या न करूँ, उसको इसकी कोई बात नहीं सोचनी चाहिए। उसे चम्पा और रतिलालकी भलाईके विचारसे आना चाहिए। वह इससे ज्यादा मुझसे और क्या चाहता है? या तुम क्या सुझाव देते हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९६३२) से।

१. प्रभाशंकर पारेख, रतिलाल मेहताके श्वसुर।

२५. पत्र : वेरियर एल्विनको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय वेरियर,

मैं हैरान था कि लम्बे अरसेसे तुम्हारा कोई पत्र क्यों नहीं आया। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि शामराव अब पहलेसे बहुत अच्छा है और तुम दोनोंका एक उच्च कोटिके डॉक्टरने कायाकल्प कर दिया है। बेशक, मुझे यकीन है कि तुम मुझे अपने स्वास्थ्यके बारेमें सही रिपोर्ट देते रहोगे। अंत्र-व्रण और तिल्ली-वृद्धि कोरी कल्पनाएँ निकलीं, इसकी भी मुझे खुशी है। आशा है, तुम्हारे मोतीझारेने चेचकका रूप कदापि नही लिया होगा और वह अब अतीतकी बात हो चुका होगा। मुझे यह भी आशा है कि मेरी[1] तुम्हें सानन्द और प्रसन्न लगी होगी।

हम सबकी ओरसे तुम सबको प्यार।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रेक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (३), भाग-४, पृ० ३४३। एस० एन० १९०४६ भी।

२६. पत्र : एफ० मेरी बारको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० मेरी,

मैं हैरान था कि आखिर तुम्हें क्या हो गया है जो आश्रमसे जानेके बाद तुम्हारा कोई समाचार ही नही मिला। इसलिए तुम्हारा पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। मेरीया[2] पर रोगका इस तरह आक्रमण हुआ, इसका मुझे दुःख है। सचाई यह है कि उसे बहुत समयसे विश्राम नहीं मिला था। परन्तु आशा है कि वह अब विश्रामसे लाभ उठा रही होगी। उसे शक्तिदायक वायुसे कहीं अधिक जरूरत मानसिक और शारीरिक विश्राम की है। इसलिए उसे अपने शरीर और मन दोनोंको यथासम्भव अधिक-से-अधिक आराम देना चाहिए। एक नीम हकीमकी हैसियतसे मेरा उसके

१. मेरी गिलेट।
२. ऐने मेरी पीटर्सन।

लिए यह सुझाव है कि उसे बहुत ही कम भोजन लेना चाहिए और अपनेको यथासम्भव दूध और फलोंतक सीमित रखना चाहिए और उनको काफी मात्रामें लेना चाहिए। सलादके रूपमें सब्जियाँ वह ले सकती है, पर उनकी उसे जरूरत नहीं है। यदि वह इन बिलकुल सीधी-सादी हिदायतोंका अक्षरशः पालन करे, तो वह देखेगी कि इस परिवर्तनसे उसे अधिक-से-अधिक लाभ होगा। पुस्तक लिखनेकी बात उसे फिलहाल नहीं सोचनी चाहिए। अपनी शक्ति जब उसे पूरी तरह फिरसे प्राप्त हो जाये और मुलाकातके समय उसके चेहरेपर मुझे जो म्लान और चिन्ताग्रस्त भाव दिखा था वह जब जाता रहे, तो वह उस पुस्तकको लिखना शुरू कर सकती है। साथ ही मैं यह भी बता दूँ कि उसे चाय[1] और कॉफी, ये दो जहर, जो स्नायुओंके लिए इतने खराब हैं, हरगिज नहीं लेने चाहिए। इनका एक घरेलू विकल्प मैं सुझाता हूँ – गर्म पानी, कश्मीरका शहद और नींबूके रसकी कुछ बूँदें। यह उसके लिए दूध या कॉफी या कोकोका एक पूर्ण और प्रभावकारी विकल्प सिद्ध होगा।

तुम दोनोंके लिए मैं एक निराला मनोरंजन सुझाता हूँ। तुम जब घूमने निकलो तो ज्यादा-से-ज्यादा हरिजनोंका पता लगाओ और अपनी बात उन्हें समझाने और उनकी बात खुद समझनेकी कोशिश करके हिन्दीका अपना ज्ञान बढ़ाओ। ठंडसे बचनेका जो नुस्खा है उसे भी मत भूलना। खुली हवामें जितना हो सके उतना चलो-फिरो।

महादेवको तुम्हारा पत्र मिल गया था। हम सब अच्छी तरह हैं और तुम्हें अपना प्रेम भेजते हैं।

बापू

मार्फत – पोस्ट मास्टर
श्रीनगर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६००१)से। सी० डब्ल्यू० ३३२६ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार।

१. साधन-सूत्रमें 'घी' है।

२७. पत्र : मेसर्स दामोदर शान्तिराम गंड़े[1]को

२६ अप्रैल, १९३३

सज्जनो,

नासिकके वकील श्रीयुत पी० एच० गद्रे हरिजन कल्याणमें दिलचस्पी ले रहे हैं। हरिजनोंमें बाँटनेके लिए उन्हें महाराष्ट्र आदिके सन्तोंपर सस्ते मराठी साहित्यकी बड़ी जरूरत है। उन्होंने मुझे बताया है कि यदि मैं आपको लिखूँ तो शायद आप उन्हें इस तरहके साहित्यका एक छोटा पार्सल उपहारके रूपमें भेज सकें। जिस तरहकी पुस्तकें श्रीयुत गद्रेको चाहिए उनमें से कुछ यदि आप कृपा करके उन्हें भेज सकें तो मैं आपका आभारी होऊँगा। [पुस्तकोंके] चुनावमें यदि कोई कठिनाई हो तो आप, मेरी राय है, श्रीयुत गद्रेसे पत्र-व्यवहार कर जो पुस्तकें उन्हें चाहिए, उनकी सूची उनसे माँग लें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस०. एन० १९०४४)से।

२८. पत्र : पी० एच० गद्रेको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय गद्रे,

आपका पत्र मिला।[2] जो सामान आपको चाहिए उसकी ठीक-ठीक रकम कृपया मुझे बताइए और प्रयोजन भी स्पष्ट कीजिए, जिससे कि मै लोगोको नकदी और सामानके रूपमें दान देनेके लिए कह सकूँ। क्या मैं यह समझूँ कि सामान मिल जानेपर नगरपालिका निर्धारित सुधार अपने खर्चेपर करवा देगी?

आपका वह पत्र भी मिला जिसमें मुझे 'नारद भक्ति-स्तोत्र' के उद्धरण भेजे गये हैं। उनके लिए आपको धन्यवाद।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०४९)से।

१. बम्बईके पुस्तक-विक्रेता।

२. २५ अप्रैलका (एस० एन० २१०५८)। इसमें श्री गद्रेने पाठशालाओं और हरिजनोंके पाखानोंके लिए लोहेकी चादरोंकी माँग की थी।

२९. पत्र : मोतीलाल रायको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय मोती बाबू,

आपका पत्र मिला। आँखें दुखनेके कारण अपने पत्र-व्यवहारसे पार पानेमें आपको कितनी कठिनाई होती होगी, यह मै अच्छी तरह समझ सकता हूँ। इसलिए आपके सीमित शारीरिक साधनोंपर मैं कोई दबाव डालने नहीं जा रहा हूँ। इसलिए इस पत्रका कृपया उत्तर न दें। आपका अनुवाद जब मुझे मिलेगा मै उसे पढ़ूँगा। पर अनुवादके बारेमे अभी मैं आपसे कुछ नहीं कहूँगा। आपका लेखन हो सकता है कभी-कभी आन्तरिक एकलयतासे मेल न खाता हो, पर मैं यह जानता हूँ कि वह अन्तमें उससे अक्षुण्ण ही रहेगी। इसलिए इस तरहकी चीजे यदि कोई मेरी दृष्टिमे लाये, तो भी मै उनकी चिन्ता नही करूँगा।

हृदयसे आपका,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०४४) से।

३०. पत्र : हरिभाऊ फाटकको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय हरिभाऊ,

आपका पोस्टकार्ड मिला। मैंने पाँच चरखोंका आर्डर और दे दिया है।[1] वे सब बारडोलीमें विशेष रूपसे तैयार किये जा रहे हैं। इसलिए सम्भव है, उनमें कुछ देर लग जाये।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०४८) से।

१. देखिए पृ० २२।

३१. पत्र : एस० पोन्नम्मलको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय पोन्नम्मल,

आपका पत्र मिला। श्रीयुत केलप्पनके लिए आपको किसी औपचारिक परिचय-पत्रकी आवश्यकता नहीं है। आप उन्हें बस यह पुर्जा देकर अपनी सारी कहानी सुना सकते हैं। मैं जानता हूँ कि वे आपकी सेवाओंका पूरा-पूरा सदुपयोग करेंगे और आपके कार्यमें यथासम्भव सहायता देंगे।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०५०) से।

३२. पत्र : पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय सर पुरुषोत्तमदास,

यरवदा-समझौतेसे आपका सक्रिय सम्बन्ध रहा है, इसलिए यरवदा-समझौतेमें संशोधनके डॉ० अम्बेडकरके सुझावपर मैं आपकी राय जानना चाहूँगा।

आशा है, आप अच्छी तरह होंगे।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१०६२) से।

३३. पत्र : हृदयनाथ कुंजरूको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय हरिजी,

डॉ० अम्बेडकरने यरवदा-समझौतेमें जिस संशोधनका सुझाव रखा है, पता नहीं आपने उसपर विचार किया है या नहीं। यदि किया हो तो कृपया अपनी रायसे मुझे सूचित करें।[1]

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१०६६) से।

१. अपने ६ मई, १९३३ के पत्रमें श्री कुंजरूने लिखा था: "डॉ० अम्बेडकरके सुझावके विषयमें मुझे तो स्पष्टत: ऐसा ही लगता है कि यदि उसे विचारके लिए स्वीकार किया जाये तो पूना-समझौतेके द्वारा जिस प्रश्नका निर्णय किया जा चुका है, वह सारा प्रश्न हमारे सामने दुबारा उपस्थित हो जायेगा। क्योंकि मैं मानता हूँ कि ऐसा करना एकदम अवांछनीय होगा, इसलिए मैंने उनके प्रस्तावपर उसके गुण-दोषकी दृष्टिसे कोई विचार ही नहीं किया" (एस० एन० २१२०३)।

३४. पत्र : जमनाबहन गांधीको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मुझे बहुत पसन्द आया। यदि हम कोई अन्याय होता देखें तो पतिको, पिताको या वह राजा ही क्यों न हो, आगाह करें और रोकें। और यदि वह हमारी बात तत्काल न सुने तो हम उसे बार-बार आगाह करें। लेकिन यह तो भविष्यकी बात हुई।

मैं यह बात नहीं मानता कि जिन लड़कियोंपर सख्त नियन्त्रण रखा जाता है, उनमे वासना नही होती। बल्कि उल्टे ऐसी लड़कियाँ आत्म-नियन्त्रण खो बैठती है और जब माँ-बापको वस्तुस्थितिका पता चलता है तो वे भी उसपर पर्दा डालते हैं। अतः हमें कोई मध्यम-मार्ग खोजना चाहिए। हमें लड़के-लड़कियोंको स्वतन्त्रता देनी चाहिए और साथ ही आत्म-नियन्त्रणकी शिक्षा भी। जहाँ सिर खुला रखनेका ही रिवाज है, वहाँ क्या केवल इसीके कारण वासनाएँ जाग्रत हो जाती हैं? भला मद्रास इलाकेमें क्या होता होगा, जहाँ लड़कियाँ अपने बाल खुले और छूटे ही रखती है? वासनाओंका उद्‌गम स्थान कहीं अपने बाहर थोड़े ही है। वह तो हमारे भीतर, हमारी आँखों ही मे है। और विकृत दृष्टिको तो हर कहीं अपवित्रता या विकार ही नजर आता है।

बहरहाल यह प्रौढ़ महिलाओंका कर्त्तव्य है कि वे मिलकर बैठें और लड़कियोंकी समस्याओंपर विचार-विनिमय कर उनके लिए हिदायते तैयार करें और उन्हें लड़कियोंके समक्ष रखें, पुरुषोंके सामने भी। मैंने ऊपर केवल अपना दृष्टिकोण पेश किया है ताकि तुम सब मिलकर इस समस्यापर विचार कर सको। मैं चाहता हूँ कि तुम सारी स्त्रियोंको बुलाओ और इसपर चर्चा करो। क्या तुम पहल करोगी?

मैंने पुरुषोत्तमको लिखा है कि वह राजकोट न जाये। उसे और कुछ नहीं तो तुम्हारे लिए ही रुकना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८७७) से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

३५. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० पुरुषोत्तम,

अच्छा किया जो राजकोट चले गये। मुझे परिणाम लिखते रहना। मेरे पास दूध-सम्बन्धी वह किताब अभी हालमें आई है जिसको लेकर बहुत-से लोगोंने बादमें लिखा है। उसके लेखकने गर्म पानीमें बैठनेपर बहुत जोर दिया है। और कभी-कभी फीकी छाछ ही पीनेकी सलाह दी है। किन्तु गौरीशंकर ठीक ही कहता है। इस पुस्तकके बादकी किताबोंमें सुधार हुए होंगे।

भाऊ कैसा है, लिखना।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९११) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३६. पत्र : नारणदास गांधीको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

कल तुम्हें पत्र[1] लिखा था वह मिल गया होगा। उसमें डॉक्टर शर्माको दिखानेवाली अखबारकी कतरन रखना भूल गया था। इसके साथ भेज रहा हूँ। आजकल बायें हाथसे लिखना पड़ता है इसलिए कल जी-भर कर नहीं लिख सका। आशा है, आज जी-भर कर लिख पाऊँगा। मुझे लगा कि छगनलालकी आलोचनावाले तुम्हारे पत्रका उत्तर छगनलाल ही दे तो अच्छा है। इसलिए मैंने उससे आग्रह किया और उसने तुम्हारे पत्रका जवाब लिख दिया है। फिर और विचार करते हुए लगा कि मुझे यह जवाब तुम्हें भेजना चाहिए। इसलिए भेज रहा हूँ। उससे शायद तुम्हारे काममें सुधारकी आवश्यकता सिद्ध नहीं होती, किन्तु उसमें मैं छगनलालकी निर्दोष बुद्धि देख पा रहा हूँ। किसी भी दिन मुझे छगनलालमें द्वेषभाव होनेका आभास नहीं मिला। किन्तु वह स्वभावसे ही शंकालु है। वह जल्दी सीधा-सादा अनुमान लगा नहीं पाता। किसी व्यक्तिके गुण परखनेमें उसे समय लगता है। और वह दोष

१. देखिए पृ० २१-२।

बढ़ा-चढ़ा कर देख लेता है। इस प्रकार दूसरोंको लगता है कि वह उदारतापूर्वक व्यवहार नहीं कर रहा है। परन्तु वह किसी तरह कृपणतासे काम लेना चाहता हो, ऐसी बात नही है। वह स्वभावसे कृपण हो, ऐसी बात भी नहीं है। किन्तु उसे न समझनेवाला सहज ही उसपर कृपणताका आरोप लगा सकता है। यदि यह बात तुम्हें समझा पाया होऊँ तो तुम्हारे जवाबमें जो क्रोध और असहिष्णुता भरी है वह नहीं होगी। आश्रमवासियोंको बाल-बच्चेदार होनेके बाद बच्चोंको ज्यादा शिक्षा देना सूझने लगता है, ऐसा आरोप तुम्हें शोभा नही देता। और असलमे वह सच भी नहीं है। नरहरि, छगनलाल या जो दूसरे उनकी आलोचनासे सहमत हैं वे सब स्वार्थी हैं, ऐसा मानना भयंकर है। वे भी आश्रमवासी है। भले व्यक्ति हैं। उन्हें भी आश्रमका हित प्रिय है। भले ही वे उतने कार्यकुशल न हों या नहीं हैं। किन्तु तुम्हें अधिक कार्यकुशल होनेका तनिक भी अभिमान या एहसासतक न होना चाहिए। दूसरेकी अयोग्यताका उल्लेख भी एक प्रकारकी छिपी आत्मप्रशंसा है। तुममें तो मै यह भी नही चाहता। और सोचो कि आश्रममे किसीके यहाँ बालक पैदा हो, जरा बड़ा हो और उन्हें कुछ नई बात सूझे, तो इसमे हमें माँ-बाप होनेके नाते उनमे स्वार्थकी बू नहीं माननी चाहिए। यह तो मनुष्यमात्रके स्वभावकी बात है; यहाँ आलोचनाका स्थान नहीं है। आश्रमवासीसे इतनी ही आशा की जा सकती है कि वह जैसी अपने बच्चोके बारेमें इच्छा करे वैसी ही दूसरोके बच्चोंके लिए भी करे, और आश्रममे रहनेवाले बच्चों और अपने बच्चोंमे तनिक भी भेदभाव न करे। जिस हदतक यह बात आश्रममे नहीं है और नही होती उस हदतक हमारी त्रुटि है, ऐसा कह सकते हैं। लेकिन आश्रममे कोई ऐसा न कहे कि दोष दूसरेमे है, हममे नहीं। अपनी कमीका पूरा एहसास होना तो आत्मदर्शन-जैसी दुर्लभ बात है। और जो अपनी कमियाँ पूरी तरह देख सकता है और उन्हें दूर करनेका यथासम्भव प्रयत्न करता है, उसे आत्मदर्शन हस्तामलकवत है, ऐसा मैं मानता हूँ। इसलिए मैं यह जरूर चाहता हूँ कि यदि तुम्हें लगे कि ऐसे वचन कहना उचित न था और उन्हें प्रमाणित नही किया जा सकता तो तुम उन्हें वापस ले लो और साथियोंसे माफी माँग लो। किन्तु यदि तुम्हें उसमें कुछ भी अनुचित नहीं लगता तो मेरी खातिर उन्हें वापस लो यह मै कभी नहीं चाहूँगा। क्योकि यदि तुम्हें सचमुच ऐसा विश्वास हो कि इस आलोचनाके मूलमें उन लोगोंके यहाँ बच्चे हो जानेकी बात है, और समय बीतनेपर भी तुम्हारा यही अनुभव बना रहे, तो तबतक अपनी यह आलोचना तुम कायम रख सकते हो। हमारे यहाँ किसीको औपचारिकताके लिए तो माफी माँगनेकी जरूरत नहीं। ऐसी माफीसे किसीका भला नहीं होता। हमारे पास माफी माँगनेका अर्थ अपनी भूलकी ज्ञानपूर्वक स्वीकृति ही हो सकता है। अपने साथियोंके आक्षेप तो हमें सहन करने ही चाहिए। तुमपर आरोप लगानेवालोंको मैं माफी माँगनेका सुझाव नहीं देता, क्योंकि वे अपनी बातको सच मानते हैं। उनकी मान्यता बदल सकूँ तभी उन्हें माफी माँगनेका सुझाव दे सकता हूँ। यही नियम तुमपर भी लागू होता है।

छगनलालकी दूसरी शिकायत उसके थाली मँगानेपर की गई तुम्हारी आलोचनाके सम्बन्धमें है। हो सकता है, कोई मिलने आया हो जिसके लिए भोजन मँगवाना पड़ा हो। यह बात मुझे उचित लगती है। वक्त-बेवक्त कोई चला आये और उस समय अपने यहाँ रसोई चालू न हो तो वह और क्या करे। भोजनके समय ही कोई आया हो, फिर भी उसे रसोईमें ले जाना ठीक न हो, यह मैं समझ सकता हूँ। क्योंकि बात करनेके लिए यही समय हो यह भी हो सकता है। छगनलालके पास ये सब ठोस कारण थे या नहीं यह तो मैं नहीं जानता, किन्तु ऐसी बातोंके बारेमें तुमसे आलोचनाकी आशा नही करता। क्या उदारताकी कोई सीमा होती है? हमारे पास तो राजा बलि, युधिष्ठिर आदिकी उदारताके उदाहरण हैं। एकने तो उदारताके कारण अपना सर्वस्व खो दिया। युधिष्ठिरने राजा विराटको भाईके क्रोधसे बचानेके लिए अपना खून नहीं बहने दिया और अर्जुनके पहुँचनेसे पहले द्रौपदीसे अपना घाव साफ कराकर बैठ गया। हमारा यही आदर्श है कि बीते दिनोंमे जितने अच्छे काम हुए हैं उन्हें इस युगमें सहज भावसे करते जायें।

तुमने पुरुषोत्तम, कनु आदिका जो उल्लेख किया है, उसमें आक्षेप नहीं दिखाई दिया। किन्तु उसमें इस बातकी मौन स्वीकृति है कि आश्रमकी वस्तुस्थिति दूसरी हो नहीं सकती। महादेव छगनलाल द्वारा किये गये अर्थका समर्थन करता है और उसका कहना है कि पुरुषोत्तम,[१] कनु[२] इतिहास व भूगोलसे वञ्चित रहे हैं, इसका तुम्हें दु:ख है। दु:ख है या वस्तुस्थितिकी स्वीकृति, इसका तो जो अर्थ तुम करो वही सही मानना चाहिए। इसलिए सही स्थिति क्या है सो लिखना। लेकिन मेरी अपनी मान्यता यही है कि आजके जमानेमे किसी लड़केको इतिहास-भूगोलकी शिक्षा नही मिली तो उसका हमें दु:ख नहीं होना चाहिए। मैं तो इतना भी मानता हूँ कि उन्हें जो-कुछ शिक्षा मिली है वह किसी दूसरी जगह नहीं मिल सकती थी। और उन्होंने हमारे ढंगसे इतिहास, भूगोलका शिक्षण भी पाया है। मुझे इसके बारेमें दु:ख अवश्य है, परन्तु किसीसे शिकायत नहीं है। आश्रमके मूलमें जो कमियाँ हैं, उनका मुझे दु:ख है। इससे बहुत ज्यादा सिखानेकी इच्छा थी, पर वह पूरी नहीं हो सकी, यह मैं समझता हूँ। लेकिन यह तो मेरी अपनी कमी ही मानी जायेगी न? मेरी कमी न मानें, यह अलग बात है। किन्तु जब सारा हिसाब लगाने बैठें और जमा-उधारका लेखा करने बैठें, तब कमीको कमी मानकर ही छुटकारा मिल सकता है। जिन्हें मैं आकर्षित कर सका, जिस काममें सफल हो सका उस प्रमाणमें आश्रम फूला-फला है। मै स्वयं आश्रमकी अगणित कमियाँ गिना सकता हूँ। इसपर भी मुझे आश्रम बहुत प्रिय लगता है, क्योंकि उसे बनानेमें मुख्य हाथ मेरा है। यदि मुझमें अधिक योग्यता होती, आसपासकी परिस्थितियाँ अधिक अनुकूल होतीं तो आश्रम अधिक सुन्दर लगता। अभी तो कई बातोंके लिए वह सचमुच आलोचनाके योग्य है, पर तब आलोचनाके लिए कोई आधार नहीं रहता। किन्तु यह सब लिखकर मैं तुम्हें यह समझाना चाहता हूँ कि तुम दूसरोंकी त्रुटियाँ न देखो। दूसरे आलोचना

१ और २. नारणदास गांधीके पुत्र।

करें तो उनको जवाब न दो। उसमें जितना गलत लगे उतना बताकर जो सही हो उसे स्वीकार करनेके बाद उसपर यथाशक्ति अमल करो। ऐसा करनेसे तुम कई झंझटोंसे बच जाओगे।

अब दो शब्द छगनलालके पत्रके सम्बन्धमें। जिस तरह पहला पत्र मुझे पसन्द नहीं आया था उसी तरह यह भी अच्छा नहीं लगा। सुधारनेकी माँग करूँ तो छगन लाल उसे तुरन्त सुधार डाले। लेकिन ऐसा करूँ तो पत्र जैसा है वैसा तुम नही देख सकोगे। और जैसा है वैसा होनेपर भी तुम्हें और मुझे वह प्रियजनका पत्र लगना चाहिए। ऐसा न हो तो हम यह सिद्ध न कर सकेंगे कि हम एक विशाल कुटुम्बके सदस्य हैं। और छोटे-छोटे दोषोंके कारण हम अपने मनसे एक-एक व्यक्तिको दूर करते जायें तो अन्तमें हम अकेले रह जायेंगे। यह काम तो सिर्फ ईश्वर ही कर सकता है और किसीके पास ऐसा करनेकी शक्ति ही नहीं है। इसलिए मैंने कई बार यह कहा है कि हमें अपने-आपको मिटाकर शून्यवत रहना है। और ऐसा बननेमें जो आनन्द है वह और किसी चीजमें नहीं है। छगनलालके इस दूसरे पत्रमें मैं पग-पगपर दोष तो देख ही रहा हूँ।

छगनलालकी भाषामें अविवेक, नासमझी, असहिष्णुता, आदि भरी है। तुम्हारे क्रोध और आलोचनाको एक तरफ रखकर वह देख ही नहीं सका कि तुम्हारा उत्तर कितना अचूक है। जहाँ तुमने पूरा जवाब दिया है, वह वहाँ भी फिर सलाह देने बैठ गया है।

मैंने छगनलालके बारेमें जो लिखा है, उसमें किसी प्रकारका संकोच नहीं बरता है। तुम्हें जागृत करनेकी आवश्यकता तो थी नही, यह मैं जानता हूँ। मैंने उसे समझाया है। मैंने तुम्हें जो लिखा है वह भी उसने देखा था, फिर भी उसने यह सब लिखा है। मैं यदि छगनलालको जानता न होता तो मुझे भी उसके उत्तरमें छिछोरापन लगता। ऐसा होते हुए भी मैं चाहता हूँ कि तुम उसके हलकेपन पर ध्यान न दो। वह अनगढ़ है, यही समझो। ऐसी बेकारकी आलोचनाको भी तुम उदार भावसे पी जाओगे, इसी आशासे ऐसा पत्र तुम्हें भेजा है। ऐसा पत्र मेरी मार्फत आया है, इसलिए तुम सुरक्षित हो। और छगनलाल भी सुरक्षित है। ऐसा मैं मान लेता हूँ। यह आश्रमका सौभाग्य है कि हम एक-दूसरेके प्रति अपने मनमें रहनेवाले विरोधी विचारोंको भी एक-दूसरेसे निर्भयतापूर्वक कहनेका प्रयत्न कर रहे हैं।

अब इस पत्रको छोड़ता हूँ। मैं ही तुमपर बोझ लाद रहा हूँ। मैं जिसे स्वीकार नहीं करता ऐसी शिकायत भी तुम्हारे सामने रखनेमें मुझे सकोच नहीं होता। इस प्रकार तुम्हारा और आश्रमका समय खराब करता हूँ। किन्तु मुझे लगता है कि ऐसा करना आवश्यक था। अब काफी हुआ। इस पत्रका जवाब देनेकी कतई जरूरत नहीं। कई बातें तुम्हें समझानेके लिए लिखी हैं, तुम समझ गये हो तो उनका उत्तर एक-दो लकीरोंमें दे देना। इस पत्रमें कई अच्छी बातें लिखी हैं। इसलिए दूसरोंको पढ़नेके लिए जरूर देना। लेकिन यह न समझना कि किसीके साथ बैठकर उसपर विचार

करनेकी आवश्यकता है। तुम यथाशक्ति जो-कुछ कर सको, वह करते रहना। तुम्हारी इच्छाके अनुसार तुम्हारा अपना पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३७. पत्र : गंगाबहन बी० झवेरीको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० गंगाबहन झवेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें गौरीशंकरकी देख-रेखमें प्रयोग करना चाहिए। तुम्हारी तबीयत ठीक होनेमें बहुत समय लग रहा है। किसी जानकारकी सलाहके अनुसार चलते हुए प्रयोग करना तुम्हारे लिए उचित होगा। जरूरी नहीं कि गौरीशंकर ही हो; कोई अन्य व्यक्ति भी हो सकता है।

तुम पत्र न लिखो तो माफी नहीं मिल सकती। अनजानमें हुई भूलको माफ कर सकते हैं। परन्तु क्या लापरवाही या आलस्य माफ किया जा सकता है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५३) से।

३८. पत्र : मणिबहन पटेलको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० मणि,

तेरा पत्र दो-तीन दिन पहले ही मिला। तू कितना ही लम्बा पत्र क्यों न लिखे वह हमें लम्बा नहीं लगेगा। इतनी ही बात है कि यहाँसे और वह भी मुझसे बहुत लम्बे पत्रोंकी आशा तू रखती हो तो मैं उसे पूरा नहीं कर सकता। पर तेरा वैसी आशा रखना, मैं पूरी तरह समझ सकता हूँ। हमें यहाँ जो विविधता, सुविधाएँ, और वैभव प्राप्त हैं, वे तुझे बेलगाँवमें तो मिल ही कैसे सकते हैं? इन सारी सुविधाओंका उपयोग केवल सेवाके लिए न किया जाता हो अथवा हम उसीके विचारसे इन सुविधाओंकी माँग न करते हों, तो हम अयोग्य सेवक और उससे भी अधिक अयोग्य बुजुर्ग साबित होंगे। सैकड़ों बच्चोंके माँ-बाप होनेका दावा करके बैठ जाना और हवामें उड़ते रहना जरा भी शोभनीय नहीं माना जा सकता। इसलिए हम आरामसे इस वैभव इत्यादिका उपयोग कर रहे हैं। इसकी ईर्ष्या तुझे, मृदुला या जिस

किसीको करनी हो पेट-भर करते रहना। मीराबहनके बारेमे तूने उलाहना दिया भी है और फिर वापिस भी ले लिया है। बापका धर्म क्या है, जिन बच्चोंको जो चाहिए वह उन्हें दे या सब बच्चोंको एक-जैसा देकर घोर अन्याय करे? और संसारके सामने या नासमझ बालकके सामने न्यायपरायण साबित होनेके प्रयत्नमें किसी के प्राण भी ले ले? तेरी बीमारी मिटानेके लिए तुझे बाजरेकी रोटी और मक्खन निकाली हुई छाछ देनी पड़े तो क्या भारती[1] जैसी लड़कीको शहद, मक्खन और गेहूँकी चपाती देनेकी जरूरत होते हुए भी बाजरेकी रोटी और छाछ ही दी जाये? बापका धर्म प्रत्येक बालकके श्रेयके लिए जितना आवश्यक हो उतना देना है। श्रेयको हानि न पहुँचे इस हदतक अधिक देनेकी भी उसे छूट है। परन्तु ऐसा करना उसका फर्ज नहीं है। यह सब ज्ञान क्या तुझे आज देनेकी आवश्यकता है। परन्तु मुझे तो ज्यों-त्यों कागज-भर देना है, इसलिए इतना अनावश्यक सयानापन दिखा रहा हूँ। हमपर तुझे जरा भी गुस्सा नहीं आया तो फिर जी क्यों जला रही थी? इतनी कम श्रद्धा क्यों रखी? और तूने निश्चयपूर्वक क्यों नहीं मान लिया कि हम दोनोंमें से एकने तो पत्र जरूर लिखा ही होगा? मै अवश्य मानता हूँ कि लिखा जा सके तो हम दोनोंको लिखना चाहिए। परन्तु जहाँ पत्र मिलनेके बारेमें ही अनिश्चय हो वहाँ इस तरह लिखनेका बहुत उत्साह नहीं रहता। किसी भी तरह एक तो पहुँचेगा ही, यह समझकर एक तो नियमित रूपमें लिखा ही जाता है और आगे भी लिखा जाता रहेगा, यह तुझे विश्वास रखना चाहिए। तेरे पत्रका ब्यौरेवार उत्तर देनेकी जिम्मेदारी तो सरदारने ही ली है। इसलिए तेरे सन्देशों वगैरहका जवाब वे ही पहुँचायेंगे और ब्यौरेवार उत्तर भी वे ही देंगे। कुछका जवाब देना तो मुझे अच्छा लगता है, परन्तु अपने इस लोभका मै संवरण कर लेता हूँ।

आनन्दीका ऑपरेशन तो पुरानी बात हो गई है। वह आश्रममें कभीकी चली गई है और मजेमे है। बीचमे उसे सर्दी और बुखार हो गया था। परन्तु वह तो क्षणिक ही था। . . .[2] मिल गये। . . . के हाथ खम्भे-जैसे हो गये हैं। . . . उसे फूलकी तरह सम्भाल रहा है। वह पति है, मित्र है, शिक्षक है, सेवक भी है। उससे अधिक अच्छा पति विधाता भी नहीं ढूँढ़ सकता था, अभी तो ऐसा ही लगता है। . . . उसके योग्य है या नहीं, सो तो दैव जाने। परन्तु उसकी त्रुटियाँ मैंने स्वयं शादी करानेसे पहले . . .के सामने रख दी थीं, और यह लिख दिया था कि वह सम्बन्ध करना न चाहे तो निस्संकोच सगाई तोड़ सकता है। परन्तु . . . के मातहत तालीम पाया हुआ . . . एक बार किये हुए निश्चयसे कैसे डिगे? . . . विवाहके अवसरपर सबने उसे अपने प्रेमसे नहलाया था। सबने कुछ-न-कुछ भेंट दी थी। लम्बे समयतक उन लोगोंको साज-सामान और कपड़ोंपर कुछ भी खर्च करनेकी जरूरत नहीं रहेगी। इससे जितना सन्तोष मिले उतना ले लेना।

१. भारती साराभाई।

२. साधन-सूत्रमें छोड़ दिया गया है।

हमारे दारोगा अब मुझे मेरे बाड़ेमें ले जानेके लिए आकर खड़े हो गये हैं। अब ग्यारह बजेंगे, इसलिए अपने पिंजरेमें जा रहा हूँ। स्नान आदि करनेके बाद फिर १२ बजे मुझे हरिजन गृहमें ले जायेंगे।[1]

श्री मणिबहन पटेल
पी० आर० नं० १०२४९
बेलगाँव सैंट्रल जेल
डा० हिंदालगा

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृ० १००-२

३९. यरवदा-समझौता

[२७ अप्रैल, १९३३][2]

यद्यपि बंगालमें कुछ समयसे इस बातके लिए आन्दोलन हो रहा है कि यरवदा-समझौतेमें संशोधन किया जाये, तो भी मैंने इस विवादमें भाग लेनेकी जरूरत महसूस नहीं की, इसका कारण फिर चाहे इतना ही क्यों न रहा हो कि मैं बंगालके अपने मित्रोंको परेशान करना नहीं चाहता था। यह समझौता तबतक कायम रहेगा जब तक एक भी पक्ष इसमें फेरफार करनेके विरुद्ध है। साथ ही, अगर यह साबित किया जा सके कि अमुक परिवर्तन जरूरी है, तो उसका विरोध करना मूर्खता होगी। बंगालमें क्या स्थिति है, इसका मुझे ठीक-ठीक पता नहीं है। इसलिए मुझे लगा कि जबतक बंगालके इस विवादमें भाग लेना मेरे लिए नितान्त आवश्यक न हो जाये और इस विषयमें कोई निर्णय करनेके पूरे साधन मेरे पास न हों, तबतक इसमें भाग लेना मेरे लिए धृष्टता होगी। जिन हरिजन मित्रोंने मुझसे मेरी राय माँगी उन्हें मैंने यह विश्वास दिला दिया कि उनके साथ सलाह किये बिना मैं कुछ भी नहीं करूँगा, और कि अबतक अपनी राय बदलनेके लिए मुझे कोई कारण नजर नहीं आया है।

आम तौरपर मेरी हमेशा यह राय रही है कि यदि सीटें सुरक्षित रखनेका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया गया है, थोपा नहीं गया है, तो उन सीटोंकी संख्या कितनी हो —— यह निश्चित करनेका अधिकार भी उस पक्षको ही होना चाहिए जिसके लिए सीटें सुरक्षित रखनी हैं। हरिजनोंके विषयमें मेरी यह मान्यता है कि उनके लिए जितनी भी सीटें सुरक्षित रखी जायें थोड़ी हैं, खासकर इस हालतमें कि कसौटी सिर्फ अस्पृश्यता नहीं बल्कि पिछड़ापन भी है। यदि मेरा वश चले तो मैं अस्पृश्य निर्वाचकोंकी सूचीमें सभी पिछड़े वर्गोंके लोगोंको शामिल कर लूँ और जो भी हिन्दू उसमें अपना नाम लिखाना चाहे उसे ऐसा करनेकी स्वतन्त्रता दे दूँ। यदि ऐसा हो

१. पत्रका शेष भाग वल्लभभाईने लिखा था।
२. **बॉम्बे क्रॉनिकल**, २३-५-१९३३ से; देखिए "पत्र : बी० आर० अम्बेडकरको", २७-४-१९३३ भी।

तो वातावरण तुरन्त शुद्ध हो जाये और कम-से-कम राजनीतिक क्षेत्रसे तो अस्पृश्यताका अन्त हो ही जाये। इसपर शायद सनातनी भी कोई आपत्ति नहीं करेंगे। जहाँतक मुझे मालूम है, उन्होंने धारासभाओंमें हरिजनोंके प्रतिनिधित्वपर कभी कोई आपत्ति नहीं की है। कोई अपनेको हरिजनोंमें गिनाये तो इसपर भी उन्हे कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। पर जो बात मैं कहना चाहता हूँ, यह उसकी केवल भूमिका है।

डॉ० अम्बेडकरने अचानक मुझसे जो मुलाकात की, उससे यरवदा-समझौतेपर विचार करना जरूरी हो गया है। अपने मित्रोंके दबाव और उनकी माँगपर, उन्होंने यह सुझाव[1] रखा है कि यरवदा-समझौतेकी 'पैनल' व्यवस्थाकी जगह संयुक्त निर्बाचक मण्डल द्वारा एक ही चुनाव कर दिया जाये, जिसमें शर्त यह रहे कि हरिजन उम्मीदवारको हरिजनोंके निर्धारित न्यूनतम मत प्राप्त करने होंगे। डॉक्टर साहबसे मुलाकातके समय मैं उसपर अपनी कोई राय दे नहीं सकता था। इस प्रश्नपर तबतक मैंने विचार ही नहीं किया था। मैंने उनसे कहा कि पहले वे हरिजनोंके विभिन्न दलों तथा इस प्रश्नमें दिलचस्पी रखनेवाले सवर्ण हिन्दुओंकी राय ले लें, बादमें मेरी राय माँगें। उन्होने बताया कि यह वे करेंगे। पर यह वायदा भी उन्होंने मुझसे करा लिया कि उनके सुझावपर मैं स्वतन्त्र रूपसे विचार करूँगा और अपनी राय दूँगा। परन्तु यह प्रश्न इतना महत्त्वपूर्ण है कि इसपर निजी तौरपर विचार-विमर्श नहीं किया जा सकता। इसलिए मैं सार्वजनिक रूपसे अपनी राय व्यक्त करके ही अपना वायदा पूरा करना चाहता हूँ।

मेरे विचारमें इस नये प्रस्तावसे हरिजनोंका कोई हित सिद्ध नहीं होता। चुनावकी 'पैनल' व्यवस्थापर मैंने सिर्फ यही आपत्ति सुनी है कि वह अधिक खर्चीली है। 'पैनल'में आनेके लिए हर स्थानपर चुनाव होगा, यह पहलेसे ही मान लिया गया है। अगर 'पेनल' चारके बजाय दो ही उम्मीदवारोंका होता, तो ऐसा सम्भव था। हर स्थानके लिए चार उम्मीदवार चुनना जरूरी होनेसे प्रारम्भिक निर्वाचनकी ज्यादातर स्थानोंपर आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी। सिवाय उन जगहोंके जहाँ हरिजनोंके बहुत दल हैं और उनमें अत्यधिक मतभेद हैं, और कहीं एक जगहके लिए चारसे ज्यादा उम्मीदवार खड़े नहीं हो सकते। अभी कुछ समयतक तो सारी सुरक्षित सीटें भरनेके लिए काफी उम्मीदवार मिलना ही मुश्किल होगा; और अधिकांश स्थानोंके लिए कोई मुकाबला नहीं होगा। हरिजन संस्थाओंका यह कर्त्तव्य है कि वे अपने राजनीतिक जीवनके आरम्भ में ही आपसी कटुता पैदा न होने दें, और सवर्ण हिन्दुओंका यह कर्त्तव्य है कि वे हरिजनोंमें फूट न डालें। मुझे आशा है कि हरिजनों और दूसरे हिन्दुओंके हित कभी टकरायेंगे नहीं। अगर वैसा हो भी, तो पहले तो 'पैनल' व्यवस्थामें इसका काफी प्रबन्ध है कि सही — हरिजनोंकी दृष्टिसे सही — हरिजन उम्मीदवार चुना जाये। और जबतक हरिजनोंमें आपसी कटु संघर्ष न हो, प्राथमिक चुनावकी कभी जरूरत ही नहीं पड़ेगी, बल्कि यह भी सम्भव है कि अन्तिम संयुक्त चुनावकी भी जरूरत न पड़े।

१. देखिए पृ० १५-६।

पर यह विकल्प बड़ा खतरनाक मालूम होता है। प्रथम चयन ही सामान्य होनेसे, उचित-अनुचितका विचार न करनेवाले राजनीतिक दल अपने हरिजन उम्मीदवार खड़े करेंगे, और बड़ी आसानीसे हरिजनोंमें फूट डालकर उम्मीदवारों और हरिजन निर्वाचकोंका हौंसला पस्त कर देंगे। जहाँतक मैं समझा हूँ और जबतक सीटें सुरक्षित रखनेकी व्यवस्था कायम है, केवल ऐसे उम्मीदवारोंके चुनावके लिए जो हरिजनोंकी रायमें उनके विशेष हितोंकी रक्षा करनेके लिए सबसे योग्य हों, 'पैनल' व्यवस्था ही सर्वश्रेष्ठ है। पर इस वैकल्पिक सुझावमें मुझे कलह और कटुताके बीज दिखाई देते हैं।

मैंने यह बात यद्यपि निर्णायक रूपसे लिखी है, तो भी ठीक तौरसे कोई मुझे समझा दे तो मै अपनी राय बदलनेको तैयार हूँ। मैं समझता हूँ कि मैने यह सिद्ध कर दिया है कि 'पैनल' व्यवस्था सभी अनावश्यक खर्चोंको बचा सकती है। इसलिए अधिक खर्चकी दलील मुझे प्रभावित नही करती। मुझे यह पढ़कर आश्चर्य हुआ कि डॉक्टर अम्बेडकरने पत्र-प्रतिनिधियोंसे एक भेंटमे कहा है कि उनके सुझावसे समझौतेके सारमे कोई फर्क नहीं पड़ता। मेरा यहाँ मतभेद है। 'पेनल' व्यवस्थामे सवर्ण हिन्दुओंको हरिजन उम्मीदवारोंके निर्वाचनमे, कुछ हदतक, अपना मत देनेका अवसर मिलता है। पर डॉक्टर अम्बेडकरके सुझावसे हो सकता है सवर्ण हिन्दुओंको इसका कुछ भी मौका न मिले। इस प्रकार हरिजन हिन्दुओं और सवर्ण हिन्दुओके बीच एक दीवार खड़ी हो सकती है। इसी संकटको रोकनेके लिए मैंने अपनी सारी ताकत लगा दी थी, और अपने उस कार्यपर मुझे जरा भी पश्चात्ताप नही है। रविवारको मुलाकातमें मैंने डॉक्टर अम्बेडकरको अपनी कठिनाई बड़ी नम्रताके साथ बतला दी थी। जब मै इस कठिनाईपर विचार करता हूँ, तो मुझे यह अजेय मालूम होती है। कठिनाई यह है। प्रस्तावित व्यवस्थामे हरिजनोंके निर्धारित मत पानेवाले उम्मीदवारको सवर्ण हिन्दुओंके एक भी वोटकी जरूरत नही है, क्योंकि वह ऐसे उम्मीदवारको भी हरा सकेगा जिसे हरिजन और गैर-हरिजन सभी उम्मीदवारोंमे सबसे ज्यादा मत मिले हैं, पर जिसके हरिजन मतोंकी संख्या निर्धारित संख्यासे एक भी कम है। इससे यरवदा-समझौता धूलमें मिल जायेगा।

बंगालके मित्रों और किसी भी अन्य व्यक्तिकी तरह, डॉक्टर अम्बेडकर भी यह कह सकते है कि यरवदा-समझौता मेरे अनशनके दबावके कारण हुआ था। मुझे इसपर कोई शर्म नहीं है। मेरे प्राण बचानेके लिए ही अगर उन्होंने समझौता स्वीकार किया, तो यह निश्चय ही उनका अपना विचार था। एक बातको निश्चित रूपसे स्वीकार कर लेनेके बाद उससे पीछे हटना उन्हें शोभा नही देता। अगर वह गलती थी, तो वे अपनी गलतीका उपयोग इसी तरह कर सकते है कि भविष्यमें फिर वैसी गलती न करें; किसीकी प्राणरक्षाके लिए, चाहे वह उनका कितना ही प्रिय स्वजन क्यों न हो, कर्त्तव्य-पथसे न हटें। मैने अपने प्राणोंकी बाजी इसलिए नही लगायी थी कि किसीको कोई ऐसी बात स्वीकार करनेके लिए मजबूर करूँ जिसे वह असलमें अनुचित समझता हो। मैंने तो अपनी जान एक पवित्र और उत्तम उद्देश्यकी पूर्तिके

लिए ही खतरेमें डाली थी। इसलिए इस प्रश्नपर विचार करते समय मेरे अनशनको बहसमें नहीं घसीटना चाहिए, बल्कि सर्व-साधारणको शान्तिसे दलीलो द्वारा यह समझाना चाहिए कि यह समझौता नैतिक या सार्वजनिक हितकी दृष्टिसे बुरा है। यह सिद्ध कर दिया जाये तो समझौतेको बदलनेके प्रश्नपर गम्भीरतासे पुनर्विचार करनेके लिए काफी समय रहेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-४-१९३३

४०. तार : नारणदास गांधीको

[२७][1] अप्रैल, १९३३

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

तारसे खबर दो कि क्या मैं नी० और डॉक्टर स्पीगलको, जो पिछले साल वहाँ थे, भेज सकता हूँ।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

४१. पत्र : मीराबहनको

२७ अप्रैल, १९३३

चि० मीरा,

यह गुरुवारकी सुबह और प्रार्थनासे पहलेका समय है। तुम्हारा पत्र बा के पत्रके साथ कल मिला।

ज्योतिषपर एक पुस्तक तुम्हें भेजी जा रही है। इस महीनेके लिए एक नक्शा भी साथमें है। इसी पत्रके साथ तुम्हें डॉ० साँडर्स[2] का पत्र भी मिलेगा। सब बातोंको देखते हुए यह सन्तोषजनक है।

बा के लिए पत्र भी इसीके साथ है।

आश्रमके आचरणकी तुम जितनी चाहो चर्चा कर सकती हो। इससे मैं थकूँगा नहीं। इससे मुझे और सहायता ही मिलेगी। मेरा दृष्टिकोण इस तरह तुम ज्यादा अच्छी तरह समझ सकोगी। मेरी किसी बातको तुम तुरन्त न समझ सको या समझकर भी मुझसे सहमत न हो सको, तो इसीसे अपनेको तुम्हें यह दोष नहीं देना चाहिए कि

१. साधन-सूत्रमें "२८" है। किन्तु तारका मसविदा २७ तारीखको ही तैयार किया गया था; देखिए "पत्र : द० बा० कालेलकरको", पृ० ४६।

२. लन्दनके एक चिकित्सा-विशेषज्ञ, जिन्होंने १९०७ में मीराबहनके क्षय-रोगकी चिकित्सा की थी। देखिए खण्ड ५३, पृ० ५०६।

तुम्हारा मुझमें या मेरी बुद्धिमत्तामें विश्वास नहीं है। मैं सर्वथा निर्दोष प्राणी नहीं हूँ। मेरी भूलोंमें तुम्हें मुझसे सहमत भला क्यों होना चाहिए? वह तो अन्धश्रद्धा हुई। मुझपर श्रद्धा होनेसे तो तुममें यह क्षमता आनी चाहिए कि मेरी वास्तविक भूल तुम किसी भी अन्य दोषदर्शीसे कहीं जल्दी जान सको। तुम्हारी श्रद्धासे मैं बस इतनी ही आशा करूँगा कि जब तुम मुझे मेरी गलतीका अहसास न करा सको तो तुम्हें यह सोचना चाहिए कि जिन मामलोंमें मैंने तुमसे अधिक सोचा और अनुभव किया है, उनमें मेरी दृष्टि सम्भव है तुमसे अधिक स्पष्ट हो। इससे तुम्हें मनकी शान्ति मिलेगी। इसलिए, तुम्हें अपनी शंकाओंको दबाकर और कुछ खास बातोंपर मेरे विचारसे सहमत न होनेके कारण अपनेको पीड़ित करके अपनी विचारशक्ति निकम्मी नहीं कर देनी चाहिए। इसलिए, आश्रमकी चर्चा तुम्हें उस वक्ततक जारी रखनी चाहिए जबतक उसके बारेमें मेरे सारे आदर्श खूब अच्छी तरह तुम्हारी समझमें न आ जायें।

तुम्हें यह दलील देनेकी जरूरत नहीं थी कि दोनोंमें से पुरुष अधिक पापी है। इस मुद्देपर मेरे जिन पुरुष मित्रोंने अपनी राय जाहिर की है, उनमें से सबके नहीं तो अधिकांशके विपरीत मेरा यही मत रहा है। निश्चय ही मैं तुम्हारी इस बातसे भी सहमत हूँ कि मनुष्य यदि पशुसे श्रेष्ठ है, तो उसकी श्रेष्ठता ब्रह्मचर्य-पालनकी उसकी शक्तिमें है। इसलिए आश्रमका यह आदर्श होना चाहिए, जो यदि सम्भव हो तो तुरन्त पूरा किया जाये।

इसलिए जहाँतक बुनियादी चीजका सम्बन्ध है, हम दोनों पूरी तरह सहमत हैं। दिक्कत या मतभेद वहीं आता है जहाँ हम उस आदर्शको पूरा करनेके उपाय खोजने लगते हैं।

मेरा यह विचार उत्तरोत्तर दृढ़ होता जाता है कि आश्रम वैसे ही चलता रहना चाहिए जैसे अभी चल रहा है, और नये लोगोंकी भरती नियमित करनेकी व्यवस्थापकको काफी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। हमारा जीवन दिन-प्रतिदिन पेचीदा नहीं सादा बनना चाहिए। आत्मसंयममें हमारी उत्तरोत्तर प्रगति होनी चाहिए। मगर हमें अभीकी तरह ही एक संयुक्त परिवारके रूपमें रहना चाहिए।

मौजूदा गठन बाधा नहीं है। बाधा यह है कि हमारे यहाँ सच्चे पूर्ण ब्रह्मचारी बहुत थोड़े हैं। सभी टूटे बर्तन थे, सभीको अपने-अपने विकारोंको जीतना पड़ा। परन्तु मेरा मत है कि उनमें अधिकांश सच्चे साधक थे और हैं। इसलिए, हम अन्धोंके अन्धे नेता हैं और ठोकर खाकर गिरते रहते हैं। सतत प्रयत्न द्वारा जब हममें से कुछ इस प्रयासमें कम-से-कम पैर जमा लेंगे, तब हमारी स्थिति अवश्य बेहतर हो जायेगी। इसलिए, समस्याका सार यह निकलता है कि हममें से प्रत्येक आदर्शतक पहुँचनेकी अधिक-से-अधिक चेष्टा करे। ब्रह्मचर्यकी मेरी व्याख्या याद रखो। उसका अर्थ एक या अनेक इन्द्रियोंका दमन नहीं है, बल्कि उन सबपर पूर्ण विजय है। दोनों स्थितियोंमें मौलिक भेद है। मैं अपनी सारी इन्द्रियोंको दबा तो आज भी सकता हूँ, परन्तु उन्हें जीतनेमें मुझे कल्प लग सकते हैं। विजयका अर्थ यह है कि वे स्वेच्छापूर्वक दासोंकी तरह काम करें। मैं एक सादे कष्ट-रहित ऑपरे-शनसे कानके परदेमें छेद करवाके

श्रवणेन्द्रियका दमन कर सकता हूँ। पर यह बेकार है। मुझे कानको ऐसी शिक्षा देनी चाहिए कि वह गपशप, गन्दी चर्चा और निन्दा सुननेसे इनकार कर दे, दिव्य संगीतके लिए खुला रहे और हजारों मीलसे आनेवाली सहायताकी पुकारको भी सुन ले। कहते हैं, सन्त रामदासने ऐसा ही किया था। तो जननेन्द्रियको किस काममें लिया जाये? हमारे पास जो महती सृजनात्मक शक्ति है, उससे अपने-जैसी हाड़-माँसकी मूर्त्तियाँ पैदा करनेके बजाय, हम पूर्ण जीवनके लिए — यानी आत्माके लिए रचनात्मक कार्यकी सृष्टि करें। हमे पाशविक आवेगपर लगाम लगाकर उसे दिव्य आवेग बना देना होगा। यहाँ तुम 'गीता'के दूसरे अध्यायका ६४वाँ श्लोक पढ़ लो। भगवद्गीताका मूल स्वर 'युद्धसे भागना नहीं, बल्कि अनासक्त होकर उसका मुकाबला करना' है। इसलिए तुम्हें, मुझे और हम सभीको सब तरहके नर-नारियोंके बीच अडिग खड़े रहना है। शारीरिक एकान्त है ही नहीं; कुछ लोगोंको थोड़े समयके लिए वह मिल जाये, वह बात अलग है। आश्रम जहाँ है बिलकुल ठीक है, परन्तु हमें और अधिक विकासके लिए फैल जाना होगा। लेकिन वह विकास अपने समयपर कुदरती तौरपर होगा।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ६२६९) से; सौजन्य : मीराबहन।

४२. पत्र : हैरी बोमैनको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय मित्र,

आपके लम्बे पत्रके लिए धन्यवाद।[1]

मिस मेयो जब भारतमें थीं तो मुझसे एक बार मिली थी। उनकी पुस्तक मैंने पढ़ी है। उसपर मैंने एक समीक्षा भी लिखी थी जिसने उस समय काफी लोगोंका ध्यान आकर्षित किया था। मेरा यह पक्का विश्वास है कि वह पुस्तक अर्धसत्यों, वक्रोक्तियों और ऐसे अनुमानोंसे भरी है जो छिटपुट तथ्योंसे, उन्हें एक सार्वदेशिक परिस्थिति मानकर, निकाले गये हैं।

हृदयसे आपका,

हैरी बोमैन महोदय,
बीट्रिस, नेबरास्का (यू. एस. ए.)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९०५५) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल न० ८०० (४०) (३), भाग ४, पृ० ३७९ से भी।

१. १२ मार्च, १९३३ का (एस० एन० १९००९)। अपने इस पत्रमें लेखकने कैथरीन मेयोकी पुस्तक **मदर इंडिया** के खिलाफ नाराजी प्रकट की थी। उसने लिखा था: "... कृपया लिखिए कि इस निन्दनीय पुस्तकमें मिस मेयो जो-कुछ कह रही है, वह सत्य है या उसके पीछे केवल पुस्तककी बिक्रीसे होनेवाली आयके लोभको ही प्रेरणा है ...।"

४३. पत्र : युवान प्रिवाको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय भक्ति,

तुम्हारा पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। तुम इसे एक लम्बा पत्र मानती हो, पर हमारे लिए यह बहुत ही छोटा है। मै देख रहा हूँ कि अपने सुखमें तुम [दोनों] एक हो। अपने ह्रासमे भी तुम एक हो। तुमने मुझे बताया है कि तुम दोनोंको एक साथ 'फ्लू' हुआ था। तुम्हारा-जैसा विचित्र जोड़ा कोई और देखनेका मुझे कभी सौभाग्य नहीं मिला। ऐसे दम्पत्ति हमें फारसी कवितामें तो पढ़नेको मिलते हैं, पर हाड़-माँसके नही मिलते। ईश्वर तुम्हें सदा अभिन्न रखे।

हाँ, मैं यह जानता हूँ कि यूरोपमें तुम लोग, आर्थिक और आत्मिक रूपसे, बड़ी कठिन घड़ीमें से गुजर रहे हो। परन्तु 'बाइबिल'की इस उक्तिपर मेरा शब्दशः विश्वास है कि "जबतक सोडोम और गोमारामें एक भी भला आदमी है, ईश्वर उन्हें नष्ट नहीं करेगा।" मै यह जानता हूँ कि यूरोप महाद्वीपके सभी भागोंमे सच्चे स्त्री-पुरुष है। इसलिए मुझे यह लगता है कि अन्तमे सब शुभ होगा।

मेरी पुस्तिका 'गाइड टू हेल्थ' की एक प्रति तुम्हें मिल गई, इसकी मुझे खुशी है। यह एक तुच्छ अनुवाद है, और कुछ अध्याय ऐसे है जिन्हें मैं फिरसे लिखना चाहूँगा। यदि मुझे समय और अनुमति मिली तो मै अवश्य ऐसा करूँगा।

प्राकृतिक चिकित्सामे कुहनेके समयसे बहुत प्रगति हो चुकी है, और नये परीक्षणोंके परिणामोंको मै इसमें शामिल करना चाहूँगा। हम सब अच्छी तरह हैं और तुम्हें और आनन्द[1] को अपना प्रेम भेजते हैं। मीराका मुझे हर सप्ताह समाचार मिलता है और जवाबमे मैं भी उसे लिखता हूँ। हर सप्ताह मुझे पत्र लिखनेके लिए वह अन्य मित्रोसे पत्र-व्यवहार और भेटके सुखका त्याग करती है। तुम्हारा प्रेम मैं निश्चय ही उसतक पहुँचा दूंगा। एक पत्र उसके पास आज ही जानेवाला है।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

[पुनश्चः]

महादेव १९ मईको रिहा होनेवाले है और तुम्हें अपना प्रेम भेजते है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २३३६) से।

१. युवान प्रिवाके पति एडमण्ड प्रिवा।

४४. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय चि० रा०,

मैं चाहता हूँ कि रंगीन चार्टमें आप उन-उन जातियों और उप-जातियोंकी आबादीके अंक देते। चार्टको प्रकाशित करनेकी क्योंकि कोई बहुत जल्दी नहीं है, इसलिए मै चाहूँगा कि आप वह सूचना मुझे दे। मै खुद वह मालूम कर सकता था, पर आपके अपने अंक मुझे ज्ञात नहीं हैं। मै जो मालूम करूँ हो सकता है वे बिलकुल वही न हों।

अपने पत्रमें आपने नरसिहन[1] या पापाके[2] बारेमें कुछ नहीं लिखा। देवदाससे कल मुलाकात होनेकी आशा है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत च० राजगोपालाचारी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९०५२) से।

४५. पत्र : जी० आर० खाँको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[3] सलग्न पत्रों-सहित मिला। इस पत्रके साथ मै आपको एक पत्र अपने पुत्रके नाम भेज रहा हूँ। मै सीधे उसे भी लिख चुका हूँ। अपने पुत्रके नाम मेरे पत्रमें आप देखेंगे कि मैंने उससे आपका परिचय मैसर्स सोराबजी ऐंड पाठेरसे

१ और २. राजगोपालाचारीके पुत्र व पुत्री।

३. २५ अप्रैल, १९३३ का। उसमें लिखा था : "यदि आप अपने पुत्र श्री मणिलालको पत्र लिखने और उनके द्वारा मेरे स्वर्गीय पिताकी वसीयतपर कानूनी राय प्राप्त करनेकी कृपा करें तो मैं आपका आभारी होऊँगा। श्री गॉडफ्रेके नाम पत्रसे आप यह समझ जायेंगे कि जिस प्रश्नपर राय लेनी है वह यह है कि किसी मुसलमान द्वारा की गई वसीयत यदि शरीयतके खिलाफ हो, तो क्या वह डर्बनके सर्वोच्च न्यायायलमें वैध मानी जा सकती है। शरीयतके मुताबिक इस मामलेमें वारिस दो बेटे और एक विधवा हैं। वारिसकी हैसियतसे हम इस वसीयतके खिलाफ अपना विरोध पेश कर चुके हैं। शरीयतके मुताबिक यह वसीयत अवैध है, पर चैरिटी जागीरके एक तिहाई भागकी अधिकारी होगी, क्योंकि वसीयत करनेवाला शरीयतके मुताबिक इतना वसीयत द्वारा दे सकता है" (एस० एन० १९०३९)।

करानेको कहा है। इसीलिए मैं आपको अलगसे परिचय-पत्र नहीं भेज रहा हूँ। पुत्रके नाम अपने पत्रमें मैंने सेठ उमर झवेरीका भी उल्लेख कर दिया है।

हृदयसे आपका,

श्री जी० आर० खाँ
एच० एच० आगाखाँका बँगला
नेसबिट रोड, मझगाँव, बम्बई

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०५४) से।

४६. पत्र : हरकिशनदासको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय हरकिशनदास,

श्रीयुत शास्त्री, जिन्हें कार्यालयने आशुलिपि-सहायकके रूपमें मेरे पास भेजा था, इस महीनेके अन्ततक यहाँसे चले जायेंगे। एडवोकेट भुलाभाईके पुत्रसे मुझे उनका टाइपिस्ट मिल गया है, इसलिए मैं शास्त्रीको दो-तीन दिन पहले ही छुट्टी दे रहा हूँ, जिससे कि वे बम्बईमें अपने कुछ छोटे-मोटे काम निपटा सकें। परन्तु आप उन्हें उनका पूरे महीनेका ही वेतन देनेकी कृपा करें।

श्रीयुत धीरूभाईने अभीतक मुझे यह नहीं बताया है कि अपना टाइपिस्ट उन्होंने किन शर्तोंपर भेजा है। इसलिए नये आशुलिपिकको जिन शर्तोंपर काम करना है वे मैं आपको बादमें लिखूँगा। निस्सन्देह, किसी भी हालतमें बोर्डको उसपर शास्त्रीसे अधिक खर्च करना नहीं होगा, पर मुझे आशा है कि उसपर कम ही खर्च आयेगा।

शास्त्री मेरे पाससे केवल इसलिए जा रहे हैं कि उन्हें अपने वृद्ध पिता और पारिवारिक मामलोंकी देखभाल करनी है। कई सालसे वे वहाँ नहीं गये हैं। पिछले दिनों उनके बहनोईका भी देहान्त हो गया है। लेकिन यदि चारेक महीनोंमें उन्हें कोई बेहतर काम नहीं मिला तो वे खुशीसे वापस आ जायेंगे। उनकी जरूरतें सौ रुपयेसे निश्चय ही बहुत ज्यादा हैं, पर वे यह जानते हैं कि इस समय तो सौ रुपये भी एक खासी रकम है। यह केवल मैं आपकी जानकारीके लिए ही लिख रहा हूँ।

किसी भी कारण यदि चार महीने बाद या उससे पहले ही मैं इस टाइपिस्टको नहीं रख सका और यदि शास्त्री आनेको स्वतन्त्र हुए, तो स्वाभाविक रूपसे मैं उन्हें फिरसे रख लूँगा। उनसे मुझे पूर्ण सन्तोष मिला है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०५६) से।

४७. पत्र : जे० डी० जेनकिन्सको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय मित्र,

जीन्सकी पुस्तक "द स्टार्स इन देयर कोर्सेज' की टिप्पणियोंसे युक्त इस प्रतिके लिए धन्यवाद। इसपर मैं एक नजर पहले डाल चुका हूँ। पर आपकी भेजी यह पुस्तक मेरे लिए निस्सन्देह अमूल्य है। मैंने देखा है कि इसमें जहाँ-तहाँ हाशियेपर पैंसिलसे पँक्तियाँ लिखी हैं। पृष्ठ १५२ पर जो अंश आपने चिह्नित किया है, उसका मुझपर पहले-पहल जब मैंने पुस्तक पढ़ी, अच्छा प्रभाव पड़ा था।

इस पत्रको समाप्त करते-करते क्षण-भरको जब मैं पुस्तकको अलग रखने लगा तो मैंने देखा कि यह प्रति आपके अपने संग्रहकी है। इस जानकारीके बाद तो यह पुस्तक मेरे लिए और भी अमूल्य हो गई है।

हृदयसे आपका,

जे० डी० जेनकिन्स महोदय
हेमर्टन हाउस
२३, काहुन रोड,
पूना

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९०५७) से।

४८. पत्र : मु० रा० जयकरको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय श्री जयकर,

यरवदा-समझौतेकी 'पैनल' व्यवस्थामें सुधारके डॉ० अम्बेडकरके सुझावपर मेरी जो राय[1] है, वह मैं इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। आशा है, आप मेरी इस बातसे सहमत होंगे कि डॉ० अम्बेडकरका सुझाव 'पैनल' व्यवस्थाका कोई विकल्प नहीं है, और संयुक्त निर्वाचक-मण्डलकी आड़में यह एक प्रभावी पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी स्थापना करता है। यह सुझाव, मेरे विचारमें, स्वर्गीय मौलाना मुहम्मद अलीके फार्मूलेकी सभी खराब बातोंकी नकल करता है और उसकी सभी राहत देनेवाली बातोंको छोड़ देता है। मेरे विचारसे, हरिजनोंके मनमें जबतक सन्देह है, और अपने प्रति सवर्ण हिन्दुओंके व्यवहारके बारेमें सन्देहके उनके पास पर्याप्त कारण हैं, तबतक उम्मीदवारोंके चुनावमें

१. देखिए "यरवदा-समझौता", पृ० ३६-९।

सबसे पहले राय देनेका उन्हें पूर्ण अधिकार है। और इसके लिए, मेरे विचारमें, 'पैनल' व्यवस्थासे अच्छी कोई चीज नहीं हो सकती।

हृदयसे आपका,

संलग्न :
एक प्रति डॉ० सप्रूके लिए भी।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१०७२)से।

४९. पत्र : बी० आर० अम्बेडकरको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय डॉ० अम्बेडकर,

अपने वायदेके मुताबिक आपके सुझावपर मैं अपनी राय इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। इस विषयकी मैंने सार्वजनिक रूपसे[1] चर्चा की, आशा है, आप इसका कोई खयाल नहीं करेंगे। मैंने सोचा कि आपके द्वारा उठाया गया सवाल इतना महत्त्वपूर्ण है कि यदि मैं इसपर विचार करूँ तो वह मुझे सार्वजनिक रूपसे ही करना चाहिए।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१०७४)से।

५०. पत्र : द० बा० कालेलकरको

२७ अप्रैल, १९३३

चि० काका,

फिर चन्द्रशंकर[2] से वही बात मालूम हुई। तुम्हारी पढ़ाई भी बन्द है यह मुझे बहुत अच्छा लगा है। पढ़ना, बात करना और लिखना बन्द कर दें। इस बातपर डॉक्टर पोर्टरने खूब जोर दिया है और मुझे उनकी बातमें काफी सार लगा है।

नी० यही है, यह तो तुम्हें मालूम ही होगा। आज एक जर्मन महिला, डॉक्टर स्पीगल आ गई है। दोनोंको आश्रम भेजनेकी अनुमति माँगी है। आज आश्रम तार[3] भेजा है। चन्द्रशंकर ही तुम्हें जर्मन महिलाके बारेमें बतायेगा और नी० के बारेमें भी।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४७६)से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर।

१. देखिए यरवदा-समझौता, पृ० ३६-९।
२. चन्द्रशंकर प्राणशंकर शुक्ल, **हरिजनबन्धु** के सम्पादक।
३. देखिए पृ० ३९।

५१. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र अभी मिला है। नी० और उसका लड़का मेरे साथ खाना खा रहे हैं इसलिए तुम्हारे यहाँ पहुँचनेमें देर लगेगी। उसके लिए मुझे माफ करना। उनके साथ डॉ० स्पीगलको भी भेज रहा हूँ। तुम्हारे पत्रसे मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। मेरे साथ इसी तरह स्पष्ट व्यवहार रख सको तो मुझे संकोच नहीं होगा। मैं भिक्षुक ठहरा, इसलिए एक ओर मेरी भिक्षाकी कोई सीमा नहीं। दूसरी ओर, अमर्यादित भीख माँगते हुए दाताकी इच्छाको पूर्ण मान देनेकी इच्छा भी रहती है। इसीलिए जहाँ मैं भीखके लिए झोली फैलाता हूँ वहाँ दाताको निर्भय कर देनेका प्रयत्न भी करता हूँ।

भाई नायरको फिलहाल भारत सेवक समाजमें भेज रहा हूँ। उनसे मालूम करवाया है, वे रख सकें तो वहीं रखूँगा। क्योंकि वहाँसे मोटरको आना ही पड़ता है, एक चक्कर बढ़े तो उसमें कोई आपत्ति नहीं होगी, ऐसा मेरा विचार है। यदि कठिनाई हुई तो तुम्हारे सुझावका उपयोग अवश्य करूँगा।

आमोंके बारेमें मुझे कुछ मालूम नहीं था। मैं ज्यादातर आम नहीं लेता। मेरा आधार तो पपीता है। सरदारको पूछकर खबर दूँगा कि कैसे थे। लेकिन चाहता हूँ कि तुम ऐसी छोटी-छोटी बातोंकी चिन्ता न करो। स्वादकी ऐसी चिन्ता किसीको भी नहीं है। जो-कुछ मिलता है, वह ईश्वरका उपकार मानकर खा लेते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८२९) से; सौजन्य : प्रेमलीला ठाकरसी।

५२. पत्र : नारणदास गांधीको

२७ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

बड़ी डाक कल मिली। कल तुम्हें लम्बा पत्र लिखवाया था सो मिल गया होगा। बड़ी डाकके साथ भेजा गया तुम्हारा पत्र मुझे बहुत अच्छा लगा है। उसमें तुमने भाषामें मर्यादाका अच्छी तरह पालन किया है। कहीं-कहीं थोड़ा अधैर्य देख सकते हैं। किन्तु वह नहीके बराबर है। तुम्हारा जवाब अचूक है। मुझे तो उसकी जरूरत भी न थी। किन्तु तुमने लिख भेजा है इसलिए छगनलालको सन्तुष्ट

करनेमे मुझे उससे सहायता मिलेगी। अब मुझे उसकी शिकायत भी तुम्हें लिख भेजनेकी जरूरत नहीं रहेगी। मैं अपने ढंगसे उससे झगड़ा करता रहूँगा और उसका अज्ञान दूर करनेका प्रयत्न करता रहूँगा। बेकार ही तुम्हारा समय नहीं लूँगा। बहुत ले लिया है।

भाई राजभोज[1] का पत्र तुमने पढ़ लिया होगा। मुझे पत्र बहुत अच्छा लगा है। उसने लिखा है कि रामजीके[2] प्रति उदारतासे काम लेनेके बदले हमने बुद्धिबलसे ज्यादा काम लिया है। तुमने उसका सुझाव मान लिया है, इससे काम ठीक हो गया है। इसमें उसकी भूल हो सकती है। किन्तु हमारी भूल भी हो सकती है। हमने पूरी तरहसे उचित व्यवहार किया है, ऐसा किसी तटस्थ हरिजनके सामने सिद्ध करनेकी योग्यता हममें होनी चाहिए। मैं किसीके दोष बतानेके लिए यह नहीं लिख रहा हूँ; सिर्फ यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि हमारा व्यवहार कैसा होना चाहिए। सभी तथ्य जाने बिना मैं दोष कैसे निकाल सकता हूँ। राजभोजको मैं जो पत्र[3] लिख रहा हूँ सो देखना। उसने प्रार्थनाका समय बदलनेका सुझाव दिया है। वह भी विचार करने लायक है। उसका कहना है कि सभी उठनेवालोंको शौचके लिए समय मिलना चाहिए। इसके लिए उसने २० मिनटके बदले ४५ मिनटकी माँग की है। उसने यह लिखा है:

> शौचके बिना प्रार्थनामें एकाग्र चित्तसे बैठ पानेकी सम्भावना कम है। लोगोंको नींद ज्यादा सताती है। ४.४५ पर प्रार्थना करनेसे आलस्य, अस्वस्थता और शौच न कर पाना तीनों बातें दूर हो जायेंगी।

यह बात पहले भी उठाई गई है। पर राजभोजने उसे कुछ नये ढंगसे पेश किया है। फिर वह विचारशील मनुष्य लगता है। वह नया आया है, प्रयत्नशील है और मैं देखता हूँ कि उसमें परखनेकी शक्ति भी है और विवेक-शक्ति भी है। इसलिए पहले तो उसके साथ अच्छी तरह बात कर लेना। और उसमें कुछ सार दिखाई दे तो फेर-फार कर लेना। ४.२० का आग्रह तो मैंने ही किया था। और अब भी करता हूँ। परन्तु अनुभवका आग्रह सर्वोपरि मानना चाहिए। इतने सारे व्यक्तियोंको पहले शौचादिकी आवश्यकता हो तो ४५ मिनटका समय होना चाहिए। जिसे आवश्यकता न हो वह ४५ मिनटमें जो चाहे करे। यदि यह परिवर्तन करनेका निर्णय करो तो मैं प्रार्थना-सम्बन्धी कई सुझाव दूँगा। सबसे पहली बात तो यह है कि तुम राजभोजके साथ अच्छी तरह बात कर लेना।

उसकी दूसरी बात यह है:

> नये आये भाइयोंकी महीनेमें कम-से-कम दो बार सभा होनी चाहिए। इनमें सेवा किस प्रकार करनी है, भोजन किस प्रकार परोसना है, 'मंगल

१. पी० एन० राजभोज, एक हरिजन नेता।

२. आश्रमका एक हरिजन कतैया।

३. देखिए "पत्र: पी० एन० राजभोजको", २७-४-१९३३।

प्रभात' में क्या लिखा है, मौनका रहस्य क्या है, आदिके बारेमें चर्चा की जाये। मैंने कई बार देखा है कि परोसनेवाला भोजन परोसनेमें विवेक और शान्तिसे काम नहीं लेता, उतावलीमें दूध और शाक जमीनपर गिरा देता है। जरूरतसे ज्यादा परोस देता है, कई बार कम भी। धोनेवाला इतनी ज्यादा जल्दीमें रहता है कि धीरे खानेवालोंका ध्यान नही करता, इसलिए उनपर पानीके छींटे उड़ते रहते हैं। इस विभागके अध्यक्षका कर्त्तव्य है कि वह समय-समयपर समझाता रहे।

जल्दीके कारण हिन्दी वाक्यके बदले उसका गुजराती अनुवाद लिखवा दिया है। किन्तु उसके वाक्यका शब्दशः अनुवाद किया है। राजभोजने जो शिकायत की है वह उस समय तो बराबर मौजूद थी ही जब मैं वहाँ भोजन करता था। मेरा विचार था कि अब इसके लिए ज्यादा कारण नहीं रहा होगा। किन्तु ऐसा नहीं है। इसके कारणका अन्दाज मैं सहज ही लगा सकता हूँ। समय-समयपर आदमियोंको बदल दिया जाता है। बदलना आवश्यक भी है। किन्तु उतनी ही आवश्यक उन लोगोंकी देखरेख भी है। मैंने कम या ज्यादा शाक देते हुए देखा है। परोसनेवालेका अधैर्य भी देखा है। रोटी आदि ऐसे फेंकते देखा है मानों मनुष्यको परोस ही न रहे हों। दूध भी नीचे गिराते हुए देखा है। और जब काफी संख्यामें लोग अलग-अलग जगह भोजन कर रहे हों तब धोनेका काम शुरू करते भी देखा है।

इस विषयम जाँच करना और जो हो सके सो करना। . . .[1] का पत्र मुझे मिला है और मैंने उसका जवाब दिया है। जितना सोचा था उतनी जल्दी वह ठिकाने नहीं लग सकेगा। फिर . . .[2] के बारेमे परेशान है, इसीसे मैंने लिखा है कि ये सब अपने-आप आश्रम छोड़नेको तैयार हुए हैं। अभी भी आश्रमके नियमोंका पालन करके रहना हो तो रह सकते हैं। मैंने तो यह सलाह भी दी है कि . . . को तो आश्रममें आकर रहना चाहिए। तुम उसके साथ बात करना। पूरा इलाज उसके अपने हाथमें है। वह आये तो मै स्वयं निश्चिंत हो जाऊँगा। किन्तु अपनी जिम्मेदारी अच्छी तरह समझकर ही आये, यह मैं जरूर चाहता हूँ।

मै नी० के बारेमें तुम्हारे उत्तरकी प्रतीक्षा उत्सुकतापूर्वक कर रहा हूँ। यदि उसे आश्रममें जाना ही हो तो मै अब उसे यहाँ ज्यादा समय रोकना नहीं चाहता। इस पत्रके पहुँचनेतक तुमने जवाब न लिखा हो तो तारसे खबर देना।

नरहरिने पत्र लिखा है, ऐसा तुमने लिखा है। किन्तु इस डाकके साथ पत्र मिला नहीं। क्या अलगसे डाकमें डाला था? या वह लिखना चाहता था, किन्तु लिख नहीं पाया?

१ व २. नाम छोड़ दिये गये है।

इसके बाद आजकी डाक मिली, उसमें नरहरिका पत्र मिल गया है। नी० और डॉक्टर मार्गरेट स्पीगलके बारेमें तार[1] दे रहा हूँ।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

५३. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

[२७][2] अप्रैल, १९३३

चि० नरहरि,

मोहनको क्या हो गया है? उसके हाथोंमें क्या कष्ट है? खराब हो जानेका डॉक्टरने क्या कारण बताया है? मुझे उसके बारेमें पहले तनिक भी चिन्ता नहीं हुई थी; साधारण ज्वरको कारण माना था। किन्तु अब सोचमें पड़ गया हूँ। हाथमें क्या तकलीफ है, यह अच्छी तरह समझ लेना चाहता हूँ।

मैंने नारणदासको लिखा गया तुम्हारा पत्र पढ़ लिया है। तुम्हारे कई सुझाव मुझे पसन्द आये हैं। नारणदासके साथ बात कर लेना। सभा कर लेना ठीक हुआ। किन्तु जिनसे अमल कराना है, बात अच्छी तरह उनकी समझमें आ जानी चाहिए। मैं चाहता हूँ कि यदि सम्भव हो तो तुम्हारे हृदय एक हो जाये। देखता हूँ, अभी ऐसा नहीं है। पूरा प्रयत्न करना। निराश होकर प्रयत्न छोड़ न देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०५९) से।

५४. पत्र : पांडुरंग नाथूजी राजभोजको

२७ अप्रैल, १९३३

भाई राजभोज,

तुम्हारा पत्र मुझे बहुत ही अच्छा लगा है। मैंने आज उस बारेमें नारणदासको लिखा है[3] उनके साथ सब बातकी छानमीन करो और पीछे मुझको लिखो। यदि रामजीके साथ उदारतासे वर्तन नहीं हुआ है तो मुझको अवश्य कष्ट पहुँचेगा। मथुरादासको अच्छी तरहसे पहचान लो। मथुरादासमें उदारताकी मात्रा बहुत ही है। उसके दिलमें छूतछात तनीक भी नहीं है। यह सब होते हुए भी रामजीके साथके

१. देखिए पृ० ३९।

२. नरहरि परीखके नारणदास गांधीको लिखे पत्रसे; देखिए पिछला शीर्षक।

३. देखिए पृ० ४७-५०।

वर्तनमें अगर कुछ भी कमी रही है तो भूल अवश्य दुरुस्त हो जायगी। मथुरादास[1] सज्जन है, त्यागी है, और समजदार है। अपनी भूलोको देखनेकी उनमें काफी शक्ति है उनके साथ भी दिल खोलके बात करो।

अब रा०[2]का अनुभव मै दे दूं। उनको आश्रमम लानेमें बहुत-सा मेरा हाथ है। मुझको रा० और गगाबहन बहुत प्रिय है रा०ने आश्रममे से काफी कमाई की है। जहाँ तक मै जानता हूँ उनको पेट भरके पैसे दिये गये है। मैने हमेशा यह कह रखा है कि रा० के जैसे भाइओंको देनेमें किसी प्रकारकी कंजूसीका व्यवहार नही करो, परंतु रा० लोभी है, क्रोधी है, वहमी भी है। एक बात जब उसके दिलमें घुस जाती है निकालना बहुत कठिन हो जाता है। लक्ष्मीदास[3] हरिजन बन गया है ऐसा समजो। उनकी लड़की आनंदीको किसीने पूछा तुम कौन है उसने उत्तर दिया, "मैं हरिजन बाला हूँ।" यह थोड़े दिनोंकी ही बात है। मै जानता हूँ कि रा० ने लक्ष्मीदासको बहुत सताया। यह कोई रा० के दोष बतानेके लिये मै नहीं लिखता हूँ। मुझको तो रा० बिलकुल पुत्रवत है। लेकिन क्योकि तुमने आश्रमके श्रेयमे इतना रस लिया है और तुमको मैंने सरल पाये हैं इसलिए सब बात तुमको कहता हूं जिससे सच्चे निर्णयपर आ सकते है और मुझको दोर[4] सकते हैं।

तुम्हारे कई प्रश्नोंके उत्तर[5] मैंने "हरिजन" [सेवक] में दिये हैं, वह देखा होगा। अब बाकीके प्रश्नोंका उत्तर देता हूँ। आत्मोन्नति सतत परिश्रमसे ही सुलभ हो सकती है। परिश्रमको मदद देनेके लिए आध्यात्मिक ग्रंथोंका अध्ययन अच्छा है। मैं उसे आवश्यक नहीं मानता हूं। क्योकि आत्मोन्नति हृदयपर निर्भर है, बुद्धिपर नहीं। प्राचीन कालमें लोग बिलकुल निरक्षर थे। उस कालमें किसीकी आत्मोन्नति नहीं होती थी, ऐसा कोई मानते नहीं है। हमारे सैकड़ों संत हो गये वे सब विद्वान नही थे। जीसस, मुहम्मद आदि निरक्षर थे। इसका यह अर्थ कभी न किया जाय कि अध्ययनका मैं विरोध करना चाहता हूं। लेकिन आजकल अध्ययनको जो स्थान दिया जाता है वह योग्यतासे अधिक है। इस कारण जब अध्ययनके बारेमें मुझको प्रश्न किये जाते है तब मै अपने ख्यालको बता देता हूं।

मालवीजी महाराज और डॉ० मुंजे मंत्रोपदेश इ० का काम कर देते है उसका मतलब तो मेरे ख्यालसे वही है जो आर्यसमाजीके है। लेकिन अस्पृश्यताकी जड हिदु संसार इतनी जान गई है कि मंत्रोपदेश ही करनेसे हमारा निपटारा नहीं होता है। वह मंत्रोपदेश करें, दिलमें चाहे वह करें, लेकिन हिदु जनताको कौन मना सकेगा। अबतक यहाँतक हम नहीं पहुँच सके है जिससे अमुक क्रिया करनेका प्रभाव जनता पर पड जाय। आर्यसमाजमें जो शुद्धिकी क्रिया करते हैं उससे भी बहुत बडा फरक नहीं होता है, थोडा सा अवश्य होता है। अब तो हम देख रहे है कि हिन्दुस्तानके

१. मथुरादास पी० आसर।
२. नाम छोड़ दिया गया है।
३. लक्ष्मीदास पी० आसर।
४. अर्थात्, मेरा मार्ग-दर्शन कर सकते है।
५. देखिए खण्ड ५४, पृ० ४९७-९८।

ख्रिस्तीओमें भी अस्पृश्यताका जहर फैल गया है। ईश्वरकी कृपा होगी तो इसी व्यापक जहरको हम कठिन परिश्रम और कठिनतर तपश्चर्यासे दूर करेंगे। जो यज्ञका आरंभ सप्टेंबर मासमें हुआ वह समाप्त नहीं हुआ, चल रहा है। समाप्त तभी हो सकता है जब अस्पृश्यता नष्ट हो जायेगी, और कोई जन्मसे न स्पृश्य माना जायगा न कोई अस्पृश्य माना जायगा, न कोई उच्च न कोई नीच माना जायगा।

ठक्कर बापा और काका साहेबके पत्र आते रहते हैं वह अच्छा है। जो प्रश्न दिलमें उठे वह बिना संकोच पूछते रहो।

-बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७८५)से।

५५. 'आर्य' क्यों नहीं?

एक भाई लिखते हैं:

> **आपने अछूतोंका नया नाम 'हरिजन' रखा है। उनका नाम कुछ भी रख दिया जाये, वे अलग ही प्रतीत होंगे। अतः मेरी प्रार्थना है कि उन्हें आर्य ही कहा जाये, ताकि वे विशाल आर्य-जातिसे भिन्न प्रतीत न हों। गुरु नानकदेवजीने 'शिष्य' (सिख) नाम रखा। आज सिख अलग गिने जाने लगे। इसी तरह हरिजन भी अलग गिने जाने लगेंगे। इसलिए यदि आप उचित समझें, तो हरिजनके स्थानपर उनका नाम आर्य रख दें।**

यह भाई शायद 'हरिजन' नामकी उत्पत्ति नहीं जानते। 'हरिजन सेवक' का प्रथम अंक पढ़कर 'हरिजन' का तात्पर्य जान लें, उनसे मेरी यह प्रार्थना है। हरिजन नाम एक अछूत भाईने ही पसन्द किया और मैंने उसे अपनाया। हरिजन नाम अलगपन दूर करनेकी दृष्टिसे नहीं रखा गया है। अलगपन आज मौजूद है और उनका अलग नाम भी है। अस्पृश्य, अछूत आदि नाम घृणावाचक हैं। अस्पृश्यता हम मिटाना चाहते हैं, इसलिए अस्पृश्य नामसे पुकारना ठीक नहीं। लेकिन जहाँतक अस्पृश्य अलग माने जाते हैं, वहाँतक तो उन्हें पहचाननेका नाम अलग रहेगा ही। इस प्रकार एक अलग नामकी आवश्यकता साबित होनेपर नाम क्या रखा जाये, यही प्रश्न रह जाता है। मेरी दृष्टिमें 'हरिजन' से सुन्दर और उपयुक्त नाम हमें नहीं मिल सकता। आर्य नाम ठीक नहीं, क्योंकि वह नाम एक सम्प्रदायका माना जाता है। सर्वसाधारण नाम तो हिन्दू है ही। दुःख तो यह है कि अस्पृश्य कहे जानेवालोंकी अलग पहचान आज तो जरूरी है। सरकारी दफ्तरोंमें उनकी अलग फेहरिस्त है। हर जगह उनका अलगपन मौजूद है। हमें ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए कि हरिजनोंका यह अलगपन दूर हो जाये, जिससे हम सभी हरिके 'जन' बननेके लायक हो जायें। एक मित्रने ठीक ही कहा है कि आज तो सवर्ण हिन्दू, हिन्दूधर्मके अरिके जन बन बैठे हैं।

हरिजन सेवक, २८-४-१९३३

५६. एक नवयुवकके पाँच प्रश्न

एक नवयुवक निम्नलिखित पाँच प्रश्न पूछते हैं:

१. जबकि हमारा यह दावा है कि हिन्दू-धर्ममें कोई अछूत या अस्पृश्य कही जानेवाली जाति नहीं है, तो फिर हम इन शब्दोंको लेकर व्यर्थ क्यों लड़ें?

२. जबकि हमारा यह कहना है कि वर्ण कर्मणा होता है, तो हम कथित अस्पृश्योंके कर्मको ही पहले क्यों न सुधारें? जब उनके कर्म ही पतित हैं तो उच्च वर्णके लोगोंसे अछूतोंकी तरफसे लड़नेसे क्या फायदा?

३. अस्पृश्योंके साथ रोटी-बेटीका व्यवहार करनेसे भी जब अछूतोद्धार हो सकता है, तो वह भी हम क्यों न करें?

४. क्या अस्पृश्योंके मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न उनके लिए अलग मन्दिर स्थापित करके नहीं दूर किया जा सकता है?

५. क्या मन्दिर-प्रवेश बिलोंके पास हो जानेसे रूढ़िवादी अस्पृश्योंको मन्दिरोंमें जानेकी आज्ञा दे देंगे?

वह नवयुवक कहते हैं:

मैं ब्राह्मण हूँ। मेरे घरमें जाति-भेदका जरा-सा भी विचार नहीं है। परन्तु मेरे हृदयमें यह शंकाएँ अक्सर पैदा हुआ करती हैं। आशा है, आप मेरी शंकाओंका समाधान करनेमें सफल होंगे।

मैं सफल हूँगा या नहीं इसका मुझे पता नहीं। लेकिन उस नवयुवकको तथा ऐसे ही दूसरोंको सन्तुष्ट करनेकी चेष्टा करता हूँ। सफलता तो भगवानके हाथमें है।

१. सुधारकोंका दावा है, सनातनियोंका नहीं, कि जिसे अस्पृश्य कह सकें, ऐसी कोई जाति नहीं है। दुर्भाग्यवश सवर्ण हिन्दुओंने कई हिन्दू जातियोंको अलबत्ता अस्पृश्य मान रखा है। और आज वे जातियाँ सरकारी दफ्तरोंमें भी अस्पृश्य नामसे लिखी जाती हैं। इसलिए जबतक सनातनी भाइयोंको हम न समझा सकें, तबतक इस जाति-जनित अस्पृश्यताको दूर करनेके लिए लड़ना सुधारकोंका धर्म हो जाता है।

२. वर्ण कर्मणा ही है या कैसे, यह प्रश्न यहाँ नहीं है। इसलिए उसे मैं छोड़ देता हूँ। इस विषयमें जो मेरा अभिप्राय जानना चाहें वे 'हरिजन सेवक' का पिछला अंक[1] देख लें। रही बात अस्पृश्य कहे जानेवालोंके कर्मकी। इनके कर्मके सुधारका अर्थ यदि कर्म-त्याग है, तो यह बात अनावश्यक ही नहीं, हानिकर भी है; क्योंकि ये लोग जो कर्म करते हैं, वे सब-के-सब लोकोपकारक हैं। धोबी, हजाम, चमार, डोम,

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० ४९७-९।

मेहतर, ये लोग प्रजाके सच्चे सेवक है। अगर ये अपना कर्म छोड़ दें, तो प्रजाका ही नाश हो जाये। इन कर्मोंको नीच और ऐसे कर्म करनेवालोंको अस्पृश्य माननेमें सवर्ण हिन्दुओंने गलती की, पाप किया, ऐसा सुधारक मानते हैं। सुधारककी धारणा है कि मेहतर और डोमका कर्म पवित्र है। सवर्णोका कर्त्तव्य है कि इन कर्मोंमें यथासम्भव सुधार करें। माता मलादि उठाती और साफ करती है। डॉक्टर हाड़-मांस और चमड़ा काटता है। लेकिन माता और डॉक्टर अपना कर्म सफाईके साथ करते है और कर्म करनेके बाद स्वच्छ हो जाते हैं। कर्म करनेके समय वे अस्पृश्य बन जाते है। ठीक इसी तरह अपने मेहतरादिके प्रति भी हमे ऐसा ही बरताव करना चाहिए। जैसे माता एवं डॉक्टर जन्मसे अस्पृश्य नहीं है, इसी तरह मेहतरादि जन्मना अस्पृश्य नही हैं——कर्म करनेके समय अस्पृश्य भले ही हों। हम जब मेहतरादिको अपने ही समान मानेंगे, तब उन्हें अपनेसे अलग नही रखेंगे, बल्कि उन्हें प्रेमसे अपनायेगे, और उनके कर्म तथा उनकी स्थितिमे सुधार करेंगे। आज हम उनका बहिष्कार करके उनपर अत्याचार करते हैं, हिंसा करते है, समाजके प्रति द्रोह करते है और हिन्दू-धर्मके मूल सिद्धान्तोंका निरादर करते हैं। इसलिए मेहतरादि हरिजनोंकी तरफसे प्रयत्न करना हमारा परम कर्त्तव्य हो जाता है।

३. रोटी-बेटी व्यवहारसे किसीका उद्धार हो सकता है, ऐसा मैं नहीं मानता। रोटी-बेटी व्यवहार तो एक स्वतन्त्र प्रश्न है। उसका न तो वर्णसे सम्बन्ध है, न अस्पृश्यतासे ही। रोटी-बेटी व्यवहारकी तो स्वतन्त्र मर्यादा है, ऐसा मेरा अभिप्राय है। कुछ भी हो, हम आज जो अस्पृश्यता-निवारण करते हैं, उसमे रोटी-बेटी व्यवहारको स्थान नही दिया गया है।

४. जब हम अस्पृश्यता-निवारणको धर्म समझते हैं, तब हरिजनोके लिए अलग मन्दिर क्यों बनवायें। सर्व-सामान्य मन्दिरोंमें दर्शन करनेका उन्हें भी उतना ही अधिकार है, जितना कि दूसरोको।

५. बिल पास होनेसे ही रूढ़िवादी हरिजनोंको मन्दिरोंमें प्रवेश करने देंगे, ऐसा तो किसीने कभी नहीं कहा। लेकिन मौजूदा कानूनी हालत ऐसी है कि रूढ़िवादियोंमें से एक हिन्दूकी रोक-टोकसे भी कोई सार्वजनिक मन्दिर हरिजनोंके लिए नहीं खुल सकता। बिल पास होनेसे यह बाधा अवश्य दूर हो सकती है।

हरिजन सेवक, २८-४-१९३३

५७. पत्र : अमृतलाल वी० ठक्करको

२८ अप्रैल, १९३३

प्रिय ठक्कर बापा,

मुझे आर्थिक सहायताके लिए हरिजन छात्रोंके कई प्रार्थनापत्र मिले हैं। परन्तु जिस शिक्षाबोर्डकी स्थापनाका मैंने सुझाव रखा है, उसके बिना मैं अपनेको किंकर्त्तव्य-विमूढ़ पाता हूँ। क्या आप उसे यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र स्थापित करने और उसकी नियुक्ति, विधान और नियमोंकी घोषणा करनेकी कृपा करेंगे?

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०५९) से।

५८. पत्र : टी० टाइटसको

२८ अप्रैल, १९३३

प्रिय टाइटस,

मुझे याद नहीं आता कि आपके किसी पत्रका मैंने उत्तर न दिया हो। इसलिए आप अपने प्रश्न फिर लिखें, मैं उनका खुशीसे उत्तर दूँगा। वैसे मैं अपनी फाइलमें भी खोजूँगा, और यदि मुझे कोई पत्र मिल गया तो आपके पिछले प्रश्नोंकी नकलकी बाट देखे बिना ही आपको अपना उत्तर भेज दूँगा।

'ऐलोपैथिक' और 'होम्योपैथिक' के बारेमें मेरी बात आप समझ नहीं पाये हैं। व्यक्तिगत रूपसे मैं ऐलोपैथीसे होम्योपैथीको ही अधिक पसन्द करता हूँ। पर उसकी प्रभावकारिताका मुझे कोई निजी अनुभव नहीं है, और यह बात मैं आपको बता चुका हूँ। यदि आपमें आत्मविश्वास हो और आप होम्योपैथिक औषधियोंके अनुशीलनके लिए अपने दैनिक कार्यसे सचमुच समय निकाल सकें, तो जहाँतक मेरा सवाल है, आपका उन्हें आजमाना मुझे बुरा नहीं लगेगा। इस विषयपर आप नारणदासके साथ विचार-वमर्श कर सकते हैं। और यदि आपकी दिलचस्पी बीमारियोंके सरल उपचारमें हो, तो मैं चाहूँगा कि आप डॉ० शर्माकी पद्धतिको समझें। उन्हें अपनी पद्धतिमें बहुत विश्वास है और यदि उनके प्रयोग आश्रममें सफल रहते हैं, तो वह एक बड़ा लाभ होगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०६०) से।

५९. पत्र : ए० एस० चौधरीको[1]

२८ अप्रैल, १९३३

प्रिय बहन,

आपका पत्र मिला। आपने जो-कुछ छिटपुट सूचनाओंवाला पत्र मुझे भेजा है, उसके आधारपर मेरे लिए कुछ-भी कहना बहुत कठिन है। इसलिए मेरी सलाह आपको यह है कि आप वर्धाके सेठ जाजूजी से मिलें और उनकी सिफारिश प्राप्त करें। तब आपके कागजात मुझे केन्द्रीय बोर्डको भेजने होंगे और वह आपके प्रार्थनापत्र पर विचार करेगा। सेठ जाजूजी को आप अपने बारेमें जितनी भी सूचना दे सकें, दे दें।

हृदयसे आपका,

श्रीमती ए० एस० चौधरी
नवी बस्ती, नागपुर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०६१) से।

६०. पत्र : रामचन्द्रको

२८ अप्रैल, १९३३

प्रिय रामचन्द्र,

आपका इसी २५ तारीखका पत्र मिला।

आप मुझसे ऐसा काम करनेके लिए कह रहे हैं जो मैं अभी नहीं कर सकता। इसलिए मेरा कहना यह है कि आप 'हरिजन' के पृष्ठोंको ध्यानसे पढ़ें। उनसे, मेरा खयाल है, आप 'हिन्दू-धर्मके सुधार' के मेरे विचारको समझ जायेंगे। मेरा सदा ठोस कार्यक्रममें विश्वास रहा है, और वह अस्पृश्यता-सम्बन्धी महान कार्यके रुपमें हमारे पास है। यदि हम हिन्दू-धर्मकी सारी बुराईकी इस जड़को मिटा सकें, तो बाकी सब तो अप्रत्याशित रूपसे सहज और सरल हो जायेगा। हममें से बहुत लोग जैसे ही यह महसूस करने लगेंगे कि हमें अपनी सारी शक्ति इसी एक सुधारपर केन्द्रित करनी है, सुधारका कार्य तेजीसे आगे बढ़ने लगेगा। आदर्श मन्दिरके आपके प्रश्नपर मैंने किस ढँगसे विचार किया है,[2] यह अब आप देख सकेंगे।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०६२) से।

१. सम्भवतः उनके २५-४-१९३३ के पत्र (एस० एन० २१०६१) के उत्तरमें, जिसमें उन्होंने दिल्लीमें उच्च शिक्षा प्राप्त करनेको अनुदानके लिए प्रार्थना की थी।

२. देखिए पृ० ६२-४।

६१. पत्र : डंकन ग्रीनलीसको

२८ अप्रैल, १९३३

तुम्हारा पत्र मिला।

जो-कुछ तुमने कहा है, उसे मैं समझता हूँ और सराहता हूँ। मनपर पड़े प्रभावोंकी तुम्हारी रिपोर्टकी मैं उत्सुकतासे बाट देखूँगा। वह जितनी भी हो सके आलोचनात्मक और विस्तृत होनी चाहिए। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, तुम्हारे वहाँ रहनेपर समय की कोई सीमा नहीं है। वस्तुतः मुझे तुमसे जो काम लेना है, वह चाहे मेरे सीधे निर्देशनमें हो या मेरे सहयोगसे, उसके लिए तुम वहाँ जितना ज्यादा रहोगे उतना ही अच्छा रहेगा।

मदनपल्ली तुम शायद न जाओ, इसकी मुझे परवाह नहीं। अपनी जरूरतें घटाकर जब तुमने बिलकुल सादगी अपना ली है, तो अपने मनपसन्द कामकी तुम्हें कोई कमी नहीं हो सकती।

भगवानजी[1] के साथ तुम हरिजन घरोंमें गये, यह जानकर मुझे खुशी हुई। मैंने [उनके] बहुत घर देखें हैं। इसलिए [उनका] कैसा भी विवरण मुझे अब विचलित नहीं करता। मुझे मालूम है कि मेरे सामने भगीरथ कार्य है। पर मेरे पास एक बहाना भी है, क्योंकि मैं ईश्वरके लिए उसके अनेक साधनोंमें से एक हूँ। अतः मेरा कार्य यही है कि मैं अपनेको एक उपयुक्त यन्त्रके रूपमे रखूँ, जो प्रतिक्षण उसका आदेश पूरा करनेको तैयार हो। डॉ० शर्माका विचार सदा मेरा विचार रहा है और इसलिए मैंने बहुत साल पहले, अपने यहाँ आनेके[2] साल-भरके अन्दर ही, लक्ष्मी[3] की जिम्मेदारी ले ली थी। जितने भी हरिजन मुझे मिल सके, सबको मैं शिक्षा दे रहा हूँ। उनमें से कई जीवनमे अच्छी तरह जम भी गये हैं। पर यह भी एक बड़ा कार्य है। चाहे उनके माँ-बापोने ही उन्हें सौंपा हो, पर उन्हें रखना कितना कठिन है। इसलिए कई बार जो अनपेक्षित परिणाम निकलते हैं, उनपर मुझे कतई आश्चर्य नहीं होता। जैसाकि तुमने बिलकुल ठीक ही कहा है, यह सब सवर्ण हिन्दुओंके पापके कारण है।

बेशक, गन्दे लड़कोंको ढूँढ़ना ही काफी नहीं है। वे या उनके माँ-बाप इससे बेहतर स्थितिसे परिचित ही नहीं हैं। और जिनमें सफाई और स्वास्थ्य-विज्ञानकी कुछ धारणा है भी, उनके पास स्वास्थ्यके नियमोंके पालनकी सुविधाएँ नहीं हैं। डॉ० शर्माके वहाँ होनेके समय तुम वहीं हो, इसकी मुझे खुशी है। मै चाहूँगा कि तुम

१. भगवानजी पु० पण्ड्या।

२. अक्टूबर, १९२० में; देखिए खण्ड १८, पृ० ३५१।

३. दूधाभाई दाफड़ाकी पुत्री।

उन्हें और उनके सन्देशको समझ लो। यदि उसमें सार है तो सेवा करनेवाली सार्वजनिक संस्थाओंके लिए वह वरदान होगा। प्राकृतिक तरीकोंका मैं कट्टर विश्वासी रहा हूँ और उनका प्रशिक्षण लेनेका कोई भी मौका मैंने कभी खोया नहीं है। मैं जो-कुछ जानता हूँ वह पुस्तकोंसे चुना हुआ है। मैं उन्हें पूरा कभी नहीं पढ़ पाया, पर मैंने स्वयंपर और अपने साथियोंपर भरपूर प्रयोग किये हैं और उन तरीकोंसे बहुत लाभ उठाया है। मेरी सदा यह इच्छा रही है कि कोई ऐसा व्यक्ति मिले जो मेरे विचारका हो और गरीबोंके हितके लिए इस पद्धतिको विकसित करे। डॉ० शर्मा ऐसे ही व्यक्ति बताये गये हैं और इसीलिए वे आश्रममें हैं। इसलिए मैं चाहूँगा कि तुम उनसे इस पद्धतिका जहाँतक किया जा सके, अध्ययन करो।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१०७८)से।

६२. पत्र : नारणदास गांधीको

२८ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

अभी लम्बा पत्र लिखनेके लिए समय नहीं है। तुम्हारा पोस्टकार्ड मिल गया है। नी० के लड़केकी आयु पाँच वर्षसे ज्यादा है। शरारती है। शरारत न करे तो अपना काम स्वय कर सकता है। और यदि बालक है इस कारणसे तुम्हें संकोच हो रहा हो तो सकोचका कोई कारण नहीं। मुझे तो यही आशा है कि दोनो माँ-बेटे वहाँ बिलकुल ठीक निभा पायेंगे। इसलिए यदि नी०के पूर्व पापोंके कारण तुम्हें संकोच हो तो उसे लेनेमें कोई बुराई न समझना। तुम्हारे पोस्टकार्डका वल्लभभाईने तो यही अर्थ लगाया है कि तुम्हें उसे लेनेसे कोई इनकार नहीं है; तुमने सिर्फ चेतावनी देनेके विचारसे लिखा है। मैंने तुम्हारे पोस्टकार्डका अर्थ 'न' ही लगाया है। चाहे जो हो, मेरा कर्त्तव्य तो सावधान रहना है। इसलिए मेरे कलके तार[1]का साफ जवाब नहीं आया तो मैं इस पत्रके उत्तरकी राह देखूँगा। जवाब तारसे देना। साथके सभी पत्र पढ़कर दे देना।

बापू

[पुनश्च:]

इसके साथ कुसुम, परचुरे, डंकन और टाइटसके लिए पत्र हैं।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. देखिए पृ० ३९।

६३. टिप्पणियाँ

मुरदार मांस खाना

श्रीयुत हीरालाल शाहने विभिन्न सूत्रोंसे ऐसे उद्धरण एकत्रित किये हैं जो मुरदार मांस — मरे हुए पशुका मांस — खानेकी निन्दा करते है और यह दिखाते हैं कि मुरदार मांस खाना लोगोंकी दृष्टिमें कितना घृणित रहा है।

पहला उद्धरण उन्होंने 'भावप्रकाश' खण्ड २ के श्लोक ८८ का दिया है:

> स्वयंमृतस्य चाबल्यमतीसारकरं गुरु।
>
> अपने-आप मरे पशुका मांस शरीरको दुर्बल करनेवाला, भारी और दस्तावर होता है।

कौटिल्यसे उन्होंने बहुत-से नियम सविस्तार उद्धृत करके मुझे भेजे हैं, जिनमे से मै निम्नलिखित दे रहा हूँ:

> जो पशु बूचड़खानेके बाहर मारे गये हों . . . और जो पशु अचानक मर गये हों उनका मांस नहीं बेचा जायेगा।

'आईन-ए-अकबरी' से श्रीयुत शाहने कई ऐसे उद्धरण भेजे हैं जिनमें हिन्दुओंके दस विभाग किये गये हैं। अन्तिम विभाग नीची जातिके मुरदार मांस खानेवाले लोगोंका कहा गया है, जो चाण्डाल कहलाते थे।

अन्य उद्धरण जेम्स फोर्बेसकी पुस्तक, 'ओरिएण्टल मेमोइर्स' के हैं। उनमें से मैं निम्नलिखित दे रहा हूँ:

> ब्राह्मणोंकी धार्मिक श्रेणीसे मै अब नीचे चाण्डालों या पैरिया लोगोंकी जातिपर आता हूँ। ये लोग इतने अधम माने जाते है कि इन्हें सबसे निकृष्ट कामोंमे लगाया गया है। इन्हें इतना घृणित समझा जाता है कि कोई और जाति इन्हें छूती नहीं है, और जो हिन्दू घोर अपराध करते है उन्हें बहिष्कृत कर इस जातिमें रख दिया जाता है, और यह सजा मत्युदण्डसे भी बुरी मानी जाती है।

पूलिया लोगोंका वर्णन करते हुए लेखक कहता है:

> लगातार गरीबी और दुःखपर-दुःख सहते रहनेसे इन दुखियारोंका मानव-रूप बिलकुल बिगड़ गया है और ये देखनेमे घिनौने और जंगली लगते हैं। पूलिया यद्यपि तिरस्कृत और उत्पीड़ित हैं, फिर भी पूरे भारतमें पैरिया कहलानेवाली एक जाति है जो उनसे भी नीच और अभागी है। यदि किसी पूलियाका अचानक पैरियासे स्पर्श हो जाये, तो उसे उस अशुद्धिसे मुक्त होनेके लिए कई तरहके अनुष्ठान और स्नानादि करने पड़ते हैं। . . . वे उनके साथ

भोजन भी नहीं करते, यद्यपि उनके जिह्वालोलुप भोजोंमें केवल यही अन्तर है कि जहाँ पूलिया गोमांसको छोड़ बाकी सभी तरहका मांस खा लेते हैं, और कभी-कभी मुरदार मांस भी खा लेते हैं, वहाँ पैरिया न केवल मरे हुए ढोर, बल्कि गोमांस और हर तरहका मुरदार मांस भी खा लेते हैं।

विरोधाभास ?

एक भाई मेरे लेखोंको बड़े उत्साहसे पढते है। उन्हें अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाहपर मेरे हालके लेखों और कुछ वर्ष पहलेके लेखोंमें संगति दिखाई नहीं देती।

६ अक्तूबर, १९२१के 'यंग इंडिया' में 'हिन्दू-धर्म' पर मेरा एक लेख[1] निकला था। उसका उद्धरण उक्त भाईने दिया है। वही उद्धरण मैं, उनके छोड़े हुए अशोंको छोड़कर, यहाँ दे रहा हूँ :

> **इसलिए, अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाहसे यद्यपि वर्णाश्रम धर्मको कोई आघात नहीं पहुँचता, तो भी हिन्दू-धर्म विभिन्न वर्णोंके सहभोज और विवाहको बहुत आग्रहपूर्वक निरुत्साहित करता है। हिन्दू-धर्म आत्मसंयमके सर्वोच्च शिखरपर पहुँच गया था। निस्सन्देह यह आत्माकी मुक्तिके लिए त्याग और तपस्याका धर्म है। . . . एक विशेष वर्गमें से ही वधू चुनकर हिन्दू बहुत आत्म-संयमका परिचय देता है। . . . शीघ्रातिशीघ्र आत्मोन्नतिके लिए अन्तर्जातीय विवाह तथा अन्तर्जातीय सहभोजका निषेध आवश्यक है।**

गत वर्ष ४ नवम्बरको दिये गये मेरे वक्तव्य[2] का भी, जो समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हो चुका है, उन्होंने उद्धरण दिया है। उनके छोड़े हुए अंशोंको छोड़कर, मैं वह उद्धरण भी यहाँ दे रहा हूँ :

> **अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाहपर जो प्रतिबन्ध है, वह हिन्दू-धर्मका अंग नहीं है। यह एक सामाजिक प्रथा है जो शायद हिन्दू-धर्ममें उसके ह्रास-कालके समय घुस आई थी। . . . आज ये दोनों निषेध हिन्दू समाजको शक्तिहीन बना रहे हैं, और इनपर जोर रहनेसे जनसाधारणका ध्यान उन मूल तत्त्वोंपर से हट गया है जो जीवनके विकासके लिए आवश्यक हैं।**
>
> **. . . सहभोज और विवाह-सम्बन्धी प्रतिबन्ध हिन्दू-समाजको कुंठित कर रहे हैं।**

इन उद्धरणोंको निष्पक्ष भावसे पढते हुए, खासकर यदि इन्हें इनके सन्दर्भमें पढ़ा जाये तो, मुझे दोनों वक्तव्योंमें कोई विरोध नहीं लगता। १९२१के वक्तव्यमें, हिन्दू-धर्मपर लिखते हुए मैंने अत्यन्त संक्षेपमें उसकी रूपरेखा रखी थी। गत ४ नवम्बरको असंख्य जातियों और जातिगत प्रतिबन्धोंपर मुझे विचार करना था।

१. देखिए खण्ड २१, पृ० ३५६-६१।
२. देखिए खण्ड ५१, पृ० ३६१-५।

१९२१मे आश्रमका रहन-सहन बिलकुल आज जैसा ही था। इसलिए मेरे आचार-व्यवहारमें कोई अन्तर नही आया है। मै अब भी मानता हूँ कि अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाहके सम्बन्धमे अपने-आपपर लगाया गया प्रतिबन्ध आत्मसंयमका कार्य है। १९२१का लेख यदि मुझे आज लिखना पड़े, तो शायद मै उसमें केवल एक ही शब्द बदलूँ। 'निषेध' शब्दके बजाय मै पुनः वही लिखूँ जो उसी लेखमे कुछ पंक्तियाँ पहले लिखा गया है और कहूँ, 'अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाह पर स्वेच्छासे लगाया गया प्रतिबन्ध शीघ्रातिशीघ्र आत्मोन्नतिके लिए आवश्यक है।'

गत ४ नवम्बरका लेख मेरे सामने होते हुए भी, मैं कहता हूँ कि अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाह बन्धुत्वके प्रचार और अस्पृश्यता-निवारणके लिए कतई आवश्यक नहीं है। साथ ही इसमे सन्देह नहीं कि ऊपरसे थोपे गये प्रतिबन्धसे किसी भी समाजका विकास रुक जायेगा और इन प्रतिबन्धोंको वर्ण-धर्म अथवा जात-पाँतसे जोड़नेसे आत्माकी मुक्तिमें निश्चय ही विघ्न पड़ेगा और वर्ण इस तरह धर्मके लिए भारस्वरूप हो जायेगा। पर इतना सब-कुछ कहते हुए भी, अपने इस उत्साही पाठकको तथा मेरे लेखोंमें दिलचस्पी लेनेवाले दूसरे लोगोंको मै यह बता देना चाहता हूँ कि मेरे लेख सदा सुसंगत ही प्रतीत हों, इसकी मुझे तनिक भी चिन्ता नहीं है। सत्यकी खोजमें मैंने कई विचार त्याग दिये है और कई नई बातें सीखी हैं। वृद्ध हो जानेपर भी मुझे ऐसा नही लगता कि मेरा आन्तरिक विकास रुक गया है या देहके नाशके बाद मेरा विकास रुक जायेगा। प्रतिक्षण मैं सत्यरूपी नारायणकी आज्ञा माननेके लिए ही तैयार रहता हूँ। इसलिए मेरे किन्हीं भी दो लेखोंमे यदि किसीको कोई असंगति लगे और उसका मेरी विवेकशीलतामें विश्वास हो, तो उसके लिए एक ही विषयपर लिखे दो लेखोंमें से बादके लेखको चुनना ही अच्छा रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-४-१९३३

६४. कुछ और दान

सेठ घनश्यामदास बिड़लाने मुझे लिखा है कि उन्हें लाला कमलापतसे ३,००० रुपये और सेठ रामेश्वरप्रसाद बागलासे २,००० रुपयेका दान मिला है। दोनों ही सज्जन कानपुरके है। ये रकमें डेविड-योजना या आम शिक्षा-कार्यके लिए काममें लाई जा सकती है, शर्त केवल यही है कि ये उस प्रान्तके हरिजनोंके लिए खर्च होनी चाहिए।

रंगूनके सेठ सोनीराम पोद्दारसे २,५०० रुपयेकी रकम मिली है, जो हरिजनोंमें शिक्षा-कार्यके लिए मेरी इच्छानुसार खर्च होनी है। यह रकम भी डेविड योजना या हरिजनोंमें आम शिक्षा-कार्यके लिए मिल सकती है, फिर वह चाहे भारतके किसी भी भागमें क्यों न हो।

इस तरह योग्य हरिजनोंके लिए छात्रवृत्तियोंकी, कम-से-कम अभी तो, कोई कमी है नहीं। सेठ घनश्यामदास एक विशेष शिक्षाबोर्डकी स्थापना कर रहे हैं जो छात्रवृत्तियों, विशेषतः डेविड-योजनाके अन्तर्गत आनेवाली छात्रवृत्तियों, के लिए हरिजन उम्मीदवारोंकी जाँच और उनका चुनाव करेगा।

यूरोपसे उन्हीं मित्रने जिनका पत्र मैंने एक महीने पहले 'हरिजन' में प्रकाशित किया था, ८ पौंड भेजे हैं। नोटोंके साथ जो पत्र है उसमें वे कहते हैं:

> ईस्टरकी अपनी प्रेमपूर्ण कामनाओंके साथ मैं ८ पौंड भेज रहा हूँ। यह रकम मैंने हरिजनोंके लिए आपको ईस्टरपर भेजनेको बचाई थी। मैं इसे सीधे दिल्ली नहीं भेज रहा, क्योंकि यह इस लायक नहीं है। बल्कि मैं यह चाहूँगा कि आप इसे जिस तरह ठीक समझें काममें लायें। इतनी तुच्छ रकम आपको भेजनेका मैं शायद ही साहस करता, पर आप जानते हैं कि मैंने यह रकम उस पवित्र ध्येयके लिए, जिसे मैं अब अपना ध्येय बना चुका हूँ, हार्दिक प्रार्थनाओं और प्रेमके साथ बचाई है। आप अब यह जान लीजिए कि मेरी सारी प्रार्थनाओं और तपस्याओंका उद्देश्य आपको सहायता देनेकी कोशिश करना है, और आपको जिन कठिनाइयों और निराशाओंका सामना करना पड़ रहा है उन सबको मैं खूब अच्छी तरह महसूस कर सकता हूँ। पिछले सोमवारको १८ मार्चका 'हरिजन' पाकर मैं एक ऐसी भावनासे अभिभूत हो गया जिसे मैं समझा नहीं सकता। मैंने वह अंक आदिसे अन्ततक पढ़ा है और मैं उसके लिए आपका आभारी हूँ। अपने बचपनके रामजी मन्दिरके सम्बन्धमें आपने जो-कुछ कहा है वह बहुत ही सुन्दर है। उस भावनासे मैं स्वयं भली भाँति परिचित हूँ। वह मनुष्यको जीवनमें बराबर सहारा देती रहती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-४-१९३३

६५. आदर्श मन्दिर

हरिजन मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनके साथ-साथ मन्दिरोंके सुधारकी माँग न होती, यह सम्भव ही न था। आजका हिन्दू-मन्दिर अन्धविश्वासका अड्डा है, दूसरे "भगवान के घर" भी कमोबेश इसी तरह हैं। उस दिन मैंने एक अमेरिकी मित्रका पत्र प्रकाशित किया था,[1] जिसमें उन्होंने मुझे नम्रतासे यह समझानेकी कोशिश की थी कि मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनसे मुझे कोई सरोकार नहीं रखना चाहिए। इस्लामके निष्ठावान अनुयायी एक मित्रका मेरे साथ लम्बा पत्र-व्यवहार चला, जिसमें अपने ढँगसे उन्होंने भी वही कोशिश की जो अमेरिकी मित्रने अपने ढंगसे की थी। निस्सन्देह, जो-कुछ उन्होंने कहा उसमें काफी सार है। पर मैं उनके इस निष्कर्षसे सहमत नहीं हो सका हूँ कि मन्दिरोंके दुरुपयोगका इलाज उनके विनाशमें है।

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० ५४-६।

ज्यादातर लोग मन्दिरोंके विनाशमें नहीं, सुधारमें विश्वास रखते हैं। अभी उस दिन मैंने राजकोटमे एक आदर्श मन्दिर बनानेकी एक उत्साही योजनाका जिक्र किया था।[1] कई पत्र-लेखकोंने मेरी आलोचना इस बातके लिए की है कि मैं मन्दिर-सुधारकी आवश्यकतापर जोर दिये बिना हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशका प्रतिपादन कर रहा हूँ। निस्सन्देह, मन्दिर-सुधार आवश्यक है। पर इसमे भी सतर्कताकी आवश्यकता है। कुछ लोगोंका यह खयाल है कि नये मन्दिर सभी मौजूदा मन्दिरोंकी जगह ले सकते हैं। मैं इस विचारसे सहमत नहीं हूँ। सभी मन्दिर एक-जैसे कभी नहीं होंगे। मनुष्यकी विभिन्न आवश्यकताओंके अनुसार उनमे सदा भिन्नता रहेगी, जैसीकि अतीतमें रही है। सुधारकको बाह्य रूपसे अधिक आन्तरिक भावनामे आमूल परिवर्तन लानेकी बात सोचनी चाहिए। यदि आन्तरिक भावना बदल गई तो बाह्य रूप अपने-आप ठीक हो जायेगा। यदि वह नहीं बदलती है तो बाह्य रूपमे चाहे कितना भी आमूल परिवर्तन हो जाये, वह चूनेसे पुती समाधि-जैसा ही होगा। मकबरा कितना भी सुन्दर हो, मकबरा ही रहेगा, मस्जिद तो बनेगा नहीं, जबकि पवित्र हुई भूमि का खाली टुकड़ा भी भगवानका सच्चा मन्दिर बन सकता है।

इसलिए पहला प्रश्न पुजारीका है। मेरी दृष्टिमे आदर्श पुजारी ईश्वरका भक्त होना चाहिए। वह जनताका सच्चा सेवक हो। जो लोग उससे पूजा करवायें उनका पथप्रदर्शक, मित्र और दार्शनिक बननेकी उसमें योग्यता हो। वह पूरे समयके लिए नियुक्त हो और उसकी व्यक्तिगत जरूरतें और जिम्मेदारियाँ यथासम्भव कम-से-कम हों।

उसे शास्त्रोंका ज्ञान होना चाहिए। उसे केवल अपने लोगोंके कल्याणकी ही चिन्ता रहनी चाहिए। मैंने जो चित्र खींचा है यह काल्पनिक नहीं है। यह लगभग सजीव है। यह बचपनकी स्मृतिपर आधारित है। जिस पुजारीकी मुझे याद आ रही है उसका राजा और जन-साधारण सभी आदर करते थे। जरूरत पड़नेपर वे परामर्श और पथ-प्रदर्शनके लिए उसके पास पहुँचते थे।

शंकालु व्यक्ति यदि यह कहे कि आजकल इस तरहका पुजारी मिलना मुश्किल है, तो उसकी बात कुछ हदतक सही होगी। परन्तु मैं सुधारकसे कहूँगा कि जबतक उसे अपना पुजारी न मिल जाये, वह अपना आदर्श मन्दिर बनाना स्थगित रखे।

इस बीच, जो गुण वह अपनी कल्पनाके पुजारीमे चाहता है, वे उसे अपने-आपमें विकसित करने चाहिए। मौजूदा मन्दिरोंके पुजारियोसे उसे उनकी अपेक्षा रखनी चाहिए। दूसरे शब्दोमें, अपने सौजन्यपूर्ण और निर्दोष आचरणसे उसे अपने आसपासके परिवेशको समयकी आवश्यकतासे अनुप्राणित करना चाहिए, और यह आस्था रखनी चाहिए कि उसके अपने निर्दोष आचरणसे पूरित उसका विचार अधिक-से-अधिक शक्ति-शाली डाइनॅमो से भी ज्यादा ताकतसे काम करेगा। एक ही दिनमें मुझे उसका परि-णाम देखनेको उतावला नहीं होना चाहिए। विचारमें आवश्यक शक्ति पैदा होनेके लिए आचरणके कई वर्ष आवश्यक हो सकते हैं। एक बड़े सुधारमें वर्षों या पीढ़ियोंका क्या महत्त्व है?

२. देखिए पृ० ७३-४ भी।

आदर्श मन्दिरके मेरे विचारको पाठक अब शायद समझ सकेगा। इमारती नक्शा और विवरण तो मैं उसके आगे रख नहीं सकता। उसका अभी समय नहीं आया है। परन्तु इससे मुझे निराशा नहीं होती, और निस्सन्देह सुधारकको भी नहीं होनी चाहिए। वह अपने भावी मन्दिरके लिए स्थान चुन सकता है। वह, जितना भी सम्भव हो, विस्तृत होना चाहिए। वह गाँव या नगरके बीचोंबीच ही हो, यह आवश्यक नहीं है। वह ऐसी जगह होना चाहिए जहाँ हरिजन और अन्य गरीब लोग आसानीसे पहुँच सके, पर उसके आसपासका वातावरण गन्दा नहीं होना चाहिए। यदि सम्भव हो तो वह अपने इर्दगिर्दकी जगहोंसे ऊँचाईपर होना चाहिए। हर हालतमें मैं खास मन्दिरकी चौकी यथासम्भव ऊँची रखवाना चाहूँगा। उस स्थानपर दैनिक उपासनाके लिए मै अपना भूखण्ड चुन लूँगा। उसके गिर्द एक विद्यालय, एक औषधालय, एक पुस्तकालय, जिसमे धार्मिक और अन्य पुस्तकें रहेंगी, बन जायेगा। विद्यालय सभा और विचार-विमर्शके हॉल का भी काम दे सकता है। मैं एक धर्मशाला या अतिथि-शाला भी चाहूँगा जो मन्दिर से सम्बद्ध होगी। इनमें-से प्रत्येक एक पृथक् संस्था होगी, पर मन्दिरके अधीन होगी। इनका निर्माण, धन और परिस्थितियोंके अनुसार, एक साथ भी हो सकता है और एक-एक करके भी हो सकता है। इमारतें पक्की हो भी सकती है और नहीं भी। यदि श्रम स्वेच्छासे किया जाये, जैसाकि अच्छी तरह किया जा सकता है, तो गारे और भूसे से तुरन्त काम शुरू हो सकता है। मन्दिर अभी न बने, पर यदि स्थान मिल जाये, मन्दिरके लिए भूखण्ड चुन लिया जाये और वहाँ पहली प्रार्थना हो जाये, तो समझ लो नीव रखी गई। क्योंकि 'भागवत' में कहा गया है, जहाँ लोग एकत्रित होकर हृदयसे भगवानका नाम लेते हैं, वहाँ भगवान वास करते है, वहीं उनका मन्दिर है। इमारत, देवता, प्रतिष्ठा यह पुजारीका कार्य है। वह जब मिल जायेगा तो अपना काम शुरू करेगा। परन्तु मन्दिर पहली प्रार्थनासे ही अस्तित्वमें आ जाता है। और यदि वह प्रार्थना सच्चे नर-नारियों द्वारा की गई हो तो उस मन्दिरकी निरन्तर प्रगति सुनिश्चित है।

इतना भावी मन्दिरके बारेमें हुआ। पाठक यदि राजकोट-योजनाको पढ़ेंगे तो देखेंगे कि मेरे आदर्श मन्दिरका बाह्य रूप उस योजनाके मन्दिरसे मुख्यतया मिलता है। वस्तुतः मेरे विचार या राजकोट-योजनामे नया कुछ नहीं है। जो-जो संस्थाएँ मैंने सुझाई हैं प्राचीन कालके गाँवके मन्दिरोंके साथ वे प्रायः सब थी।

परन्तु हमें मौजूदा मन्दिरोंका भी कुछ करना चाहिए। यदि उपासक इस चीजपर जोर दे कि पुजारी मेरे बताये आदर्शके अनुरूप हों, तो वे मन्दिर आज वस्तुतः भगवानके घर बन सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-४-१९३३

६६. मनुष्य रचित – १

बंगाल जनगणना रिपोर्ट, भाग-१ मे दलित वर्गोके बारेमें जो अंश है, वह एक रोशनी डालनेवाला दस्तावेज है। फिलहाल मै उसका केवल दूसरा और तीसरा अनुच्छेद नीचे उद्धृत कर रहा हूँ, और अभी एक-दो सप्ताह पाठकका ध्यान मै रिपोर्टके इसी अंशपर रखना चाहता हूँ।

'दलित वर्ग' नामका अर्थ

'दलित वर्ग' नाम अपेक्षाकृत हालका गढ़ा हुआ है और अनेक दृष्टिसे दुर्भाग्यपूर्ण है। यह बंगालमें आम तौरपर प्रचलित किसी वास्तविक देसी नामका अनुवाद नहीं है और न यह किसी ऐसे वर्गका ही बोधक है जिसके सदस्योंकी ठीक-ठीक व्याख्या की जा सके। यह एक ऐसा पारिभाषिक शब्द है जो स्वयं अनिश्चित है। यूरोपीय देशोंमें यह आबादीके ऐसे अंशके लिए प्रयुक्त होता है जो चिरकालसे दरिद्र है, और यह एक आर्थिक स्थितिका द्योतक है। नृतत्त्वशास्त्रकी दृष्टिसे, मनोवैज्ञानिक अर्थमें, यह ऐसी मनःस्थितिका बोध करानेके लिए प्रयुक्त किया जा सकता है जो आदिवासी लोगोंमें तब पैदा होती है जब वे किसी ऐसे आधिपत्य जमानेवाले समाजके सम्पर्कमें आते हैं जो जनजातिके परम्परागत मान्य नियमोंसे सर्वथा भिन्न और उनकी उपेक्षा करनेवाले सिद्धान्तोंपर आधारित हो। इस मनःस्थितिको विश्वसनीय ढंगसे उन तत्त्वोंमें से कम-से-कम एक बताया गया है जिनके कारण मेलेनेशिया उजाड़ हो गया। और इसका एक आकर्षक प्रतिरूप श्री जॉर्ज बर्नार्ड शॉकी रचना "बैक टू मैथुसेलाह" के उस 'उत्साहभंग' में मिलता है जिसके कारण द्वीपपर आनेवाले लोग प्राचीन सभ्यताके सम्पर्कमें आनेपर तुरन्त मर जाते हैं। परन्तु, भारतमें यह शब्द विभिन्न भागोंके आबादीके बिलकुल ऐसे स्तरके लिए तो प्रयुक्त नहीं होता, पर आम तौरपर समाजके उन सदस्योंका बोध करानेके लिए प्रयुक्त होता है जो समाजकी आम रायमें तुच्छ, नीच, बहिष्कृत समझे जाते हैं, या जो किसी भी तरहसे स्वच्छ या उच्च जातियोंके लोगोंके साथ सामाजिक और धार्मिक संसर्गके अयोग्य माने जाते हैं। यह एक ऐसी समस्याका बोधक है जो केवल हिन्दू-समाजमें ही मिलती है, अर्थात् उन हिन्दू समूहोंकी समस्या जो अपने जन्मके कारण सामाजिक सम्मान या उन आध्यात्मिक सुविधाओंसे वंचित हैं और कैसी भी वैयक्तिक श्रेष्ठतासे उन्हें कदापि प्राप्त नहीं कर सकते जो उच्च जातियोंमें जनमे सभी लोगोंका, उनकी वैयक्तिक श्रेष्ठताका विचार किये बिना, समान रूपसे जन्माधिकार हैं।

दलित वर्गोंका मापदण्ड

परन्तु कोई ऐसा सन्तोषजनक मापदण्ड ढूँढ़ना जिससे दलित वर्गोंकी पहचान की जा सके, किसी भी तरह आसान काम नहीं है। समस्या स्वयं तत्त्वतः क्योंकि सामाजिक और धार्मिक है, इसलिए विभिन्न अवसरोंपर जो मापदण्ड सुझाये गये हैं वे खुद सामाजिक व्यवहार या सामाजिक पूर्वोदाहरणपर आधारित हैं। १९०१ की जनगणनामें बंगालकी जातियाँ, एक विस्तृत वर्गीकरणके आधार पर, सात समूहोंमें विभाजित की गई थीं। पहला समूह केवल ब्राह्मणोंका था, क्योंकि जाति-सोपानमें वे अन्य सभी जातियोंसे ऊपर माने जाते हैं। दूसरे समूहमें वे जातियाँ रखी गई थीं जिनकी प्रतिष्ठा कभी संदिग्ध नहीं रही है और जो या तो द्विज हैं या अन्य सभी शूद्र जातियोंसे श्रेष्ठ मानी जाती रही हैं। तीसरे समूहमें तथाकथित नवशाखा, अर्थात् नौ शाखाएँ थीं। इस समय निश्चय ही उनमें नौसे अधिक समूह शामिल है, पर उन सबकी विशेषता यह है कि वे जल दे सकते हैं और उसके पीनेसे उच्च जातियोंमें अशौच नहीं होता। इस तीसरे समूहसे नीचे चौथे समूहमें, पदच्युत ब्राह्मणों-सहित, स्वच्छ जातियाँ थीं। पाँचवें में चौथे समूहसे नीचेकी जातियाँ थीं जिनका जल आम तौरपर स्वीकार नहीं किया जाता है। छठेमें निचली जातियाँ थीं जो गोमांस, सूअरका मांस और मुर्गीके मांससे परहेज करती हैं। सातवें समहमें वे जातियाँ आती थीं जो निषिद्ध आहार खाती हैं और जो भंगी आदिका सबसे निकृष्ट काम करती हैं। १९११ में भारतके जनगणना आयुक्तने प्रान्तीय सुपरिंटेंडेंटोंको यह आदेश दिया कि वे रिपोर्टमें हिन्दू लिखी गई ऐसी जातियों और जनजातियोंकी गणना करें जो कुछ प्रतिमानोंके अनुरूप नहीं हैं या कुछ निर्योग्यताओंकी शिकार हैं, जिससे कि "पाठक स्वयं अपने निष्कर्ष निकाल सकें।" उनसे, केवल बहुत ही छोटी जातियोंको छोड़कर, ऐसी सभी जातियोंकी सूची तैयार करनेको कहा गया जो जातिके रूपमें:

१. ब्राह्मणोंकी श्रेष्ठता स्वीकार नहीं करतीं;

२. ब्राह्मण या अन्य मान्य हिन्दू गुरुसे मन्त्र नहीं लेतीं;

३. वेदोंको प्रमाण नहीं मानतीं;

४. बड़े-बड़े हिन्दू देवताओंकी पूजा नहीं करतीं;

५. अच्छे ब्राह्मणोंको पारिवारिक पुरोहितके रूपमें नहीं रखतीं;

६. ब्राह्मणको पुरोहित ही नहीं रखतीं;

७. हिन्दू मन्दिरके भीतरी भागमें जा नहीं सकतीं;

८. (क) अपने स्पर्शसे, (ख) एक निर्धारित दूरीमें अपनी उपस्थितिसे अशौच पैदा कर देती हैं;

९. अपने मुर्दोंको गाड़ती हैं; या

१०. गोमांस खाती है और गायका आदर नहीं करतीं।

इस पूछताछका उद्देश्य, यदि सम्भव हो तो, वह सामग्री प्रस्तुत करना था जिससे "हिन्दू कौन है?" इस कठिन प्रश्नका उत्तर दिया जा सके। १९१६ तक कम-से-कम बंगालमें 'दलित वर्ग' नामको कोई नहीं जानता था। परन्तु १९१६ में बंगाल सरकारसे दलित वर्गोकी सूची तैयार करनेको कहा गया और उसने एक सूची पेश की जिसमें कुछ जरायमपेशा जनजातियाँ और आदिवासी शामिल थे, और वे कुल मिलाकर ३१ समूह होते थे। इस सूचीका उपयोग शिक्षा आयुक्तने भारतमें शिक्षाकी प्रगतिपर १९१२–१७ की अपनी पंचवर्षीय रिपोर्टके लिखनेमें किया। इस तरह शुरू किया गया यह नाम कायम रहा और कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग (१९१७–१९) और १९२१ की जनगणना रिपोर्ट, दोनोंमें दलित वर्गोंकी सूचियाँ शामिल की गईं। परन्तु इन अन्तिम उदाहरणोंमें से किसीमें भी कोई ऐसा स्पष्ट मापदण्ड नहीं रखा गया जो यह बताये कि ये समूह किस आधारपर उनमें शामिल किये गये हैं। भारतीय वैधानिक आयोगने, कोई सुनिश्चित मापदण्ड दिये बिना ही, इनके लिए कहा कि ये "हिन्दू धार्मिक और सामाजिक व्यवस्थाके भीतर मानी जानेवाली सबसे निचली जातियाँ हैं।... इनकी मुख्य विशेषता यह है कि रूढ़िवादी हिन्दू-धर्मके विश्वासोंके अनुसार, य हिन्दू व्यवस्थाके भीतर होते हुए भी अस्पृश्य हैं, अर्थात्, ये अपने स्पर्शसे अन्य सभी हिन्दुओंके लिए अशौच पैदा करती है और भोजन तथा जलको दूषित कर देती हैं। किसी भी सामान्य हिन्दू मन्दिरके भीतरी भागमें इनका प्रवेश निषिद्ध है (यद्यपि यह बात कुछ ऐसी जातियोंके बारेमें भी सही है जिन्हें 'अस्पृश्य' जातियाँ नहीं कहा जाता है)। ये न केवल हिन्दू सामाजिक और धार्मिक व्यवस्थामें सबसे नीचे हैं, बल्कि, थोड़े-से व्यक्तियोंको छोड़कर, आर्थिक स्तरमें भी सबसे नीचे हैं और आम तौरपर बिलकुल अशिक्षित हैं। गाँवोंमें इन्हें सामान्यतः एक पृथक् क्षेत्रमें अलग रखा जाता है, और ये प्रायः ऐसी चीजें खाती हैं जिन्हें हिन्दू-समाजका कोई भी अंग छूता नहीं है।"

बादमे मताधिकार समितिने, सरल मापदण्ड निर्धारित करनेको बाध्य होनेपर, १९११ की जनगणना रिपोर्टमें दी गई ७ वीं और ८ वीं विशिष्टताएँ [मापदण्डके रूपमें] स्वीकार कर लीं। बंगालके लिए दलित वर्ग संघकी ओरसे ये विशिष्टताएँ इस प्रकार विस्तारसे रखी गई हैं:

(क) ऐसी जातियाँ जिनके हाथका जल तीन उच्च जातियों या नव-शाखाओं (अर्थात् सवर्ण हिन्दुओं) तकको स्वीकार नहीं होता है, और रसोईघर या जल व पका हुआ भोजन रखनेके स्थानमें जिनकी उपस्थितिसे वह, उनकी धारणाके अनुसार, दूषित हो जाता है;

(ख) ऐसी जातियाँ जिन्हें किसी सार्वजनिक मन्दिरमें जानेकी अनुमति नहीं है और जिनकी वहाँ उपस्थितिसे पूजाके पदार्थ अपवित्र हो जाते हैं;

(ग) ऐसी जातियाँ जिन्हें सवर्ण हिन्दुओं द्वारा संचालित किसी होटल या भोजनालयके भोजन-कक्षमें घुसने या भोजन करनेकी अनुमति नहीं है;

(घ) ऐसी जातियाँ जिनके सामाजिक-धार्मिक संस्कार श्रोत्रिय ब्राह्मण (अर्थात् पुरोहित) सम्पन्न नहीं कराते, जबकि सवर्ण हिन्दुओंके घरोंमें इस तरहके संस्कार वही सम्पन्न कराते हैं; और

(ङ) ऐसी जातियाँ जिनकी सेवा श्रोत्रिय नापित (अर्थात् नाई) नहीं करता, जबकि हिन्दुओंके विविध सामाजिक-धार्मिक संस्कारोंमें उसकी सेवाएँ आवश्यक होती हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-४-१९३३

६७. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

२९ अप्रैल, १९३३

भाई खम्भाता,

तुम्हारा पत्र मिला। अब तो तुम ठीक होगे। दूधपर ही रहो तो अच्छा है। फलोंका रस जरूर ले सकते हो। यदि ग्वाला अपना दुधारू पशु तुम्हारे घर लाकर सामने दुह दे, तो बगैर गर्म किया हुआ ताजा दूध लेना अच्छा होगा। मुझे खबर देते रहना।

उस एक रुपयेकी चिन्ता किसलिए? उसे लिखनेकी भूल चन्द्रशंकरने की है; परन्तु उसका विचार भी नहीं करना। उन ५०० रुपयोंका तो नाम भी नहीं लिया है न? एक रुपयेकी बातपर अगर कोई कहे कि खम्भाता अब कंजूस या भिखारी हो गया है तो कोई हानि नहीं। क्या यही ठीक नहीं है?

बापूके आशीर्वाद

डॉ० बहरामजी खभाता
केकुश्रू कॉटेज
लॉर्डविक पार्क, महाबलेश्वर

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६०४) से। सी० डब्ल्यू० ४३९४ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता।

६८. पत्र : नारणदास गांधीको

२९ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला। मणिलालके बिलके बारेमें देवदाससे पूछूँगा। पण्डितजी और लक्ष्मीबहन मिलकर गये हैं। नर्मदा भी थी। अमीनाके बारेमें सुनकर दु:ख हुआ। अमीनाको पत्र लिखूँगा। वह पत्र पढ़ना और तुम्हें ठीक लगे तो उसे दे देना। आज नहीं लिख पाया तो जब फुरसत मिलेगी तब लिखूँगा। इस बीच जैसे तुम्हें ठीक लगे वैसे काम चलाना। रमाबहनके बारेमें भी बताया। उसे भी लिखनेका[1] विचार तो है ही। जितना प्रेम दे सको उतना देना। किन्तु मनुष्यके प्रेमकी भी मर्यादा होती है, क्योंकि प्रेम कब मोहका रूप धारण कर लेगा, इसका हमें कहाँ पता चलता है। इसलिए हमारा प्रेम धर्मके विरुद्ध नहीं होना चाहिए, फिर चाहे उसका रूप निर्दयता दिखाई दे। अभी मैं . . .[2] के प्रति निर्दयतासे काम लेता हूँ, यह ऊपरसे देखनेवाला मान ले तो मैं उसका दोष नहीं मानूँगा। . . .[3] को तो शायद मेरी कठोरता ही दिखाई देती होगी। पर मैं क्या करूँ? कर्त्तव्यने मुझे लाचार बना दिया है। जैसा मेरे बारेमें है वैसा ही तुम्हारे बारेमें है। इसलिए निर्दयताका आरोप लगनेपर भी, मेरी डाँटकी सम्भावना होते हुए भी, तुम्हें जो धर्म लगे उसीका पालन करना।

नी०के बारेमें तुम्हारा पत्र कल मिला। उससे वल्लभभाईका अर्थ सही निकला इसलिए उसे वहाँ भेजनेकी तैयारी कर रहा हूँ। शायद सोमवारको भेज सकूँगा, ऐसा मानकर किसी व्यक्तिको छोटी बैलगाड़ीके साथ साबरमती स्टेशन भेज देना। शायद डॉ० मार्गरेट स्पीगल भी साथ ही हो। इस महिलाके बारेमें तुम्हारी राय भले ही नहीं मिली, फिर भी मैं मान लूँगा। जिस छोटी गाड़ीका गुजरात मेलके साथ समय मिलता है उसमें वे [अहमदाबाद] स्टेशन से बैठ जायेंगी। इस बातका ध्यान रखना कि दोनोंको हरिजन-सेवाके लिए तैयार करना। उन्हें या जिस किसी यूरोपीयको हम लें उसे सविनय अवज्ञासे कोई सम्बन्ध न रखने दें। इस नियमका पालन करना है। इन दोनों बहनोंके बारेमें तो मैं सरकारको खास तौरपर लिख रहा हूँ। इन दोनों बहनोंको, और जो भी व्यक्ति आये उसे, आश्रमके नियमोंका कड़ा पालन करना है और तुम्हें उनसे पालन करवाना है। जो कोई नियमोंका पालन न करे अथवा तुम्हारे लिए कष्टदायी हो, उसे आश्रममें रखनेका मेरा कतई कोई इरादा नहीं है। ऐसा हो तो मुझे फौरन लिखना। दोनोंकी खुराक सादी ही है। ज्वार-बाजरा पचेगा या नहीं, इस सम्बन्धमें मुझे शक ही है। दोनोंको काफी मात्रामें फल

१. देखिए पृ० ८१।

२ और ३. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिये गये है।

और दूध देना पड़ेगा। नहीं तो शरीरका निर्वाह नहीं होगा। आजकल नी० दूध और घी नहीं लेती। नौ इंच व्यासकी मोटे गेहूँकी दो बार सिकी हुई कड़ी रोटी दोनों बहनें बड़े शौकसे बिना घी मक्खनके खाती हैं। और उसे बिना किसी चीजके ही खाती हैं। नी० अभी दूध-घी नहीं लेती। उसकी खुराक है — ऐसी रोटी, पपीता, नारंगी और ककड़ी, टमाटर, गोभी, गाजर आदि कच्ची सब्जी। किन्तु वहाँ आवश्यकता दिखाई दी तो वह दूध लेगी। उसका बालक तीन रतल दूध लेता है। वह भी खाखरा[1] खाता है और फल लेता है। बहुत समझानेपर थोड़ा कच्चा शाक ले लेता है। मिठाईका बिलकुल शौकीन नही है। कच्चा दूध बहुत स्वादसे पीता है। हर वस्तु अलग-अलग खाता है। मुझे आशा है कि कोई भी इस बालकको चाय या कॉफी मिठाई या ऐसी कोई चीज देकर बिगाड़ेगा नहीं। उसके उत्साहकी कोई सीमा नहीं है। उसके जैसे ही शरारती बच्चे हमारे पास आश्रममें हैं। परन्तु वह माँ से चिपका रहनेवाला लड़का नहीं है। मुझे लगता है कि वह किसीके साथ भी रह सकता है। कोई भी भाई या बहन उसे झूठा स्नेह दिखाकर खाने न खानेके लिए लालच न दे, यह बहुत वांछनीय है। बाकी होना तो वही है जो उसके और हमारे भाग्यमें लिखा है। नी०को बहुत ज्यादा आशाके साथ वहाँ भेज रहा हूँ। उसे तीन या चार महीनेसे लड़कीकी तरह मानता हूँ। उसके बहुत-से पत्र सँभालकर रखे हैं। उसने संसारसे कोई बात छिपाई नही है। जो-जो व्यक्ति उसके पाशमें फँसे थे उन सबके नाम भूल जानेकी मैंने उसे सलाह दी है। किन्तु वह अपना एक भी दोष या विचारतक छिपाना नहीं चाहती। ऐसा उसने मुझे भरोसा दिलाया है और आरम्भमें मेरा विश्वास प्राप्त कर लिया है। उसकी जमानत देनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। किन्तु मैं स्वय उसपर पूर्ण विश्वास करके उससे व्यवहार कर रहा हूँ। उसे यथा-शक्ति काम देते रहना। उसमें बहुत शक्ति है। वह बहुत चंचल है। पर उसका इरादा शुभ है। यदि वह शून्यताका मन्त्र साध सकी तो बहुत-कुछ कर सकेगी। यदि उसे अपनी शक्तिका या अपने शुभ इरादेका या कामका गर्व होगा तो वह गिरेगी। अभी तो वह जितना श्रम कर सके उतना काम उसे देते रहना। ऐसा प्रबन्ध करना कि जल्दी ही हिन्दी सीख ले। उसकी ग्रहण-शक्ति अच्छी है। थोड़ी हिन्दी आती भी है।

मार्गरेट दूसरी तरहकी महिला है। वह ३५ वर्षकी है और कह सकते हैं कि उसके चरित्रका गठन हो चुका है। वह विदुषी है। उसकी स्मरण-शक्ति अच्छी है। किन्तु वह मंदबुद्धि और जिद्दी है। उसका हृदय शुद्ध है और मुझे लगता है कि उसने पवित्र जीवन व्यतीत किया है। आश्रमसे उसे बहुत प्रेम है। किन्तु उसे बात करनेका तनिक भी ढंग नहीं है। जबसे यहाँ आई है तबसे हर वक्त आश्रमकी ही बातें करती रहती है। जब जर्मनीमें यहूदियोंके विरुद्ध आन्दोलन शुरू हुआ तब सहज ही इधर चली आई। मैं नी० को जान-बूझकर बहुत उत्साहके साथ वहाँ भेज रहा हूँ। मार्गरेटको उत्साहसे नहीं भेज रहा हूँ। पर उसका तिरस्कार भी नहीं किया

१. खूब सिकी हुई करारी रोटी, जो गुजरातमें खाई जाती है।

जा सकता। सिर्फ आश्रममें रहनेकी खातिर आई है। उसे क्या कहा जा सकता है? जितना शरीरसे कर सकेगी उतना काम तो करेगी ही। कुछ वर्षोंतक शिक्षिका रही है, इसलिए उसे अंग्रेजी पढ़ानेका काम तो फौरन दे सकते हो। वह पढ़ाना भी चाहती है। शिक्षिकाके तौरपर भी नी०में पढ़ानेकी शक्ति ज्यादा है। किन्तु वह वहाँ प्रायश्चित्त करने आ रही है। इसलिए फौरन उससे काम लें या नहीं इस सम्बन्धमें मुझे शंका है। लेकिन तुम चाहो तो उससे यह काम ले सकते हो।

इससे ज्यादा सुझाव देनेकी आवश्यकता नहीं दिखाई देती।

कुसुम[1] के बारेमें पूरी तरह घबरा गया हूँ। इसके अलावा अब अंतड़ियोंके क्षयकी बात कही है। मुझे तो इन बुद्धुओंपर विश्वास नहीं है। यहाँ बैठा-बैठा तुम्हारा या कुसुमका मार्गदर्शन नहीं कर सकता। अभी तो हर तरहसे कुसुमके रक्षक तुम ही हो। काशी कोई निर्णय नहीं कर सकती। मुझे भय है कि कुसुम अपने लिए स्वयं निर्णय करने लायक नही रही। सम्बन्धी होनेके नाते तुम्हीं उसके पिता हो। आश्रम-वासी होनेके नाते तुमपर जिम्मेदारी है ही। मुझे तो लगता है कि आश्रमके आदर्श तथा व्यावहारिक दृष्टिसे भी कुसुमको कहीं ले जानेकी जरूरत नहीं, वहीं बैठे-बैठे जो-कुछ हो सके वह करो। कुसुम और काशीके साथ बात करनेपर तुम्हारा मन जो फैसला करे निडर होकर वही करना। मै यहाँसे इतना ही बता सकता हूँ। तलवलकरसे कहना कि उसको अब इलाजके लिए किसी दूसरे डॉक्टरकी सलाह लेनी चाहिए। हरिभाई[2] और कानूगाके साथ बात करे, और फिर तीनोंकी जो भी राय हो उसके अनुसार इलाज करे। यदि डॉ० तलवलकर ऐसा करनेके लिए तैयार न हो तो उसकी अनुमति लेकर इन दोनों डॉक्टरोंसे सलाह करना और वे जैसा कहें वैसा इलाज करना। डॉ० शर्माके बारेमें अनुभव हो जानेके कारण यदि तुम्हारा उससे इलाज करवानेका इरादा हो और यदि डॉक्टर शर्मा हिम्मत करे तो कुसुमको उसके हाथोंमें सौंप दो। यदि वह हिम्मत करे तो जबतक उसके इलाजसे फायदा न हो तबतक वह आश्रमसे हिले नहीं। मैंने पहले जो राय दी है वह व्यावहारिक है। दूसरी सलाह व्यावहारिक नहीं है परन्तु मेरी प्रकृतिके अनुकूल है। तुम्हें मालूम ही होगा कि मनु मरणोन्मुख थी और मैंने डॉक्टरोंकी परवाह न कर उसे उस वक्त 'आइस डॉक्टरके[3]' हाथमें सौंप दिया था। और बहुत-से लोगोंका भी इसी तरह व्यवहार-विरुद्ध उपचार किया है। इसलिए मुझे ऐसा करनेमें किसी प्रकारका संकोच नहीं होता। किन्तु मैं यहाँ हूँ इसलिए मेरी रायको पूरी तरह बेकार ही मानना चाहिए। तुम्हें स्वतन्त्र रूपसे निर्णय करना चाहिए। तुम जो निर्णय करोगे मैं उसे ही मान लूँगा। जैसा डॉक्टर तलवलकर कहे वैसा ही करनेका और जीवन-मरण उसीके हाथमें सौप देनेका निर्णय तुम करो, तो भी मुझे कोई आपत्ति नहीं है। डॉ० तलवलकरकी सज्जनताके विषयमें तो मुझे कोई सन्देह है ही नहीं। उसकी देखभालके बारेमें भी शंका नहीं है।

१. ब्रजलाल गांधीकी पुत्री।

२. डॉ० हरिभाई देसाई।

३. डॉ० एम० एस० केलकर।

अपने उपचारसे वह मुझे मोह नहीं सका। और दूसरे डॉक्टर उसकी तरह इलाज नहीं करते। किन्तु अन्तमें सब बात काँचके कंकण-जैसी कायाकी है न! उसकी डोरी किसी डॉक्टरके हाथमें नहीं है। उसकी डोरी तो उसी ईश्वरके हाथमें है, इसलिए हम आखिरकार डॉक्टरी इलाजको सिर्फ प्रयत्न ही मानें तो भी कोई हानि नही है। फिर हम हर सप्ताह यह गाते ही हैं:

पूछा लुकमाँसे जिया तू कितने रोज,
दस्ते हसरत मलके बोला चंद रोज।

और मुसलमान लोग मानते हैं कि लुकमान-जैसा हकीम इस संसारमें दूसरा हुआ ही नहीं। उस बेचारेको हार माननी पड़ी तो फिर तलवलकर आदिकी बात ही क्या है?

इतना अंश कुसुमके लिए कदापि नहीं है। सिर्फ तुम्हारे विचार करनेके लिए है। काशी आदिको भी मालूम होगा तो बेकार ही डर जायेंगी। और यह बिना मौतके मरने-जैसा हो जायेगा। तुम जरा भी नहीं घबराओगे, इस विश्वासके साथ डरा देनेवाला पत्र लिख दिया है।

पश्चिमकी इन बहनोंको शायद ही कोई पत्र लिखता हो। डॉक्टर स्पीगल अपनी माँको पोस्टकार्ड लिखेगी। नी०को तो कहीं पत्र नहीं लिखना चाहिए। किन्तु इसके बारेमें तुम देख लेना।

बापू

[पुनश्च:]

डॉ० शर्मा, केशु[1], पारनेरकरके पत्र साथ हैं।

गुजरातीकी माइक्रोफिलम (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६७ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

६९. एक पवित्र क्रिया

हरिजनोंके जिस सेवकके अनुभव मैं समय-समयपर दिया करता हूँ उसीका लिखा यह रसपूर्ण किन्तु हृदयद्रावक वर्णन नीचे दे रहा हूँ।[2]

ज्यादा लिखकर इस विवरणको बिगाड़ूँगा नही। बहुत पुरानी कुटेवके कारण सम्भव है, किसीको यह पढ़कर घिन भी आ जाये। वैद्यक-ग्रन्थोंमें ऐसे वर्णन भरे पड़े हैं। इसे सीखे बिना शरीर-विज्ञान नहीं आ सकता। फिर मैने इसे जो एक पवित्र क्रिया कहा है, इससे किसीके मनको चोट न पहुँचनी चाहिए। अपने-आपमें भले ही यह क्रिया गन्दी लगे, जैसे मलकी सफाई लगती है, पर जिस तरह मलकी

१. केशव गांधी, मगनलाल गांधीके पुत्र।

२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने चमड़ा कमानेकी क्रियाका वर्णन किया था।

सफाई शुद्धिके विचारसे की जाती है उसी तरह समाजको शुद्ध, पवित्र बनानेके लिए यह क्रिया है। भोले शहरी जानते नहीं कि ऐसी सैकड़ों क्रियाएँ, जिनका हम तिरस्कार करते हैं, ये सेवक करते हैं। यदि ये उन्हें न करें तो हम एक क्षण भी जीवित न रह सकें।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ३०-४-१९३३

७०. आदर्श मन्दिर

श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित जब हरिजन-सेवाके लिए काठियावाड़ गई थीं, तब राजकोटमें एक आदर्श मन्दिर बनानेकी चर्चा चल रही थी। इसका उल्लेख मैं पहले कर चुका हूँ। वहाँके नामी वकील श्री परशुराम गोपाल मसूरकरने इस योजनामें प्रमुख भाग लिया है। उन्हीके दस्तखतसे योजनाके सम्बन्धमें एक निवेदन-पत्र निकला है। उसकी नीचे लिखी बातें ध्यान देने योग्य हैं:[1]

निवेदन-पत्रमे लिखा है कि अस्पृश्यता माननेवाले कई सज्जनोंने भी यह योजना पसन्द की है और उन्होंने आर्थिक सहायता देना भी स्वीकार किया है।

इस योजनाके लिए श्री मसूरकर धन्यवादके पात्र हैं। मुझे आशा है कि योजना सिर्फ कागजपर ही न लिखी रहेगी, बल्कि वह कार्यरूपमें परिणत हो जायेगी।

जबतक इसके लिए पर्याप्त व्यक्ति तैयार न हो जायें तबतक कार्यका आरम्भ न किया जाये, यह ठीक नहीं है। मेरे विचारमें आदर्श मन्दिरका आदर्श पुजारी होना चाहिए। आदर्श मन्दिर ईंट-चूनेका नहीं होता। आदर्श पुजारीके होनेसे मिट्टी और घासकी कुटिया भी शोभा देने लगती है और वहाँ जाकर श्रद्धालु भक्तोंको शान्ति मिलती है। जहाँ आदर्श पुजारी नहीं होता, वहाँ संगमरमरकी मीनाकारीसे जड़ा हुआ मन्दिर भी खण्डहरके समान सूना लग सकता है। बहुत-से प्रख्यात खण्डहर आज भारतमें पड़े हैं। मैसूरमें कई प्राचीन स्थान पड़े हैं, जो किसी समय विशाल मन्दिर थे। कार्ला, अजन्ता और धारापुरीकी गुफाएँ कभी मन्दिर ही तो थीं। पुजारीके अभावमें उन मन्दिरोंसे भगवान लोप हो गये। और आज बहुधा यात्रियोंके बदले कला-रसिक ही कला-निरीक्षणके लिए वहाँ जाते हैं। मुझे आशा है कि राजकोटके भावी मन्दिरके लिए कोई धार्मिक पुजारी मिल जायेगा।

पर ऐसा पुजारी तुरन्त मिले या न मिले, मन्दिरको प्रारम्भ करनेकी योजनापर तो आजसे ही अमल किया जा सकता है। पहला काम, खुले मैदानमें एक विस्तृत

१. यहाँ नहीं दी गई हैं। निवेदन-पत्र में बिना किसी भेदभावके सभी जातिके लोगोंको मन्दिरमें आनेका अधिकार देने तथा उसमें किसी तरहकी चमक-दमक या सोने-चाँदीकी सजावटकी मनाहीकी बात कही गई थी। उसमें यह भी कहा गया गया था कि मन्दिरका पुजारी अस्पृश्यतामें विश्वास न रखता हो और मन्दिरका उद्देश्य प्रौढ़ोंके लिए रात्रिशाला, पुस्तकालय, धर्मार्थ औषधालय, तथा धार्मिक शाला, आदि सुविधाओंके विशेष प्रबन्ध द्वारा हरिजनोंकी सेवा करना है।

स्थान चुननेका है। अगर भूमि बस्तीसे कुछ दूर हो, तो मैं उसे अधिक पसन्द करूँगा। मन्दिरके लिए अच्छी भूमि पसन्द कर लेनेपर, उसके आसपास योजनामें बताई हुई अन्य संस्थाएँ स्थापित की जा सकती हैं। आदर्श मन्दिरके कार्यकर्त्ता अगर मन्दिरके चौकमें बैठकर नित्य भगवानका नाम लें, तो मेरे विचारमें तो मन्दिरकी स्थापना हो गई, क्योंकि 'भागवत' के अनुसार जहाँ पाँच जने प्रेमसे मिलकर भगवानका नाम स्मरण करते है वहीं भगवान बसते हैं, और जहाँ भगवानका वास है वहीं मन्दिर है।

राजकोटकी योजना चाहे सफल हो या न हो, सफल जल्दी हो या देरसे हो, पर इसमें सन्देह नहीं कि योजना उत्तम है। थोड़े-बहुत अंशोंमें सभी उसके अनुसार कार्य कर सकते है। जहाँ पुजारी और भक्त अनुकूल हैं, वहाँ चलनेवाले मन्दिर जीवित दशामें है। आज बहुत-से मन्दिर निःसत्व हैं उनके आसपास अन्य संस्थाएँ कायम की जा सकती हैं। गाँवोंमें जैसे मन्दिरोंका मैंने सुझाव दिया है वैसे नये मन्दिरोंकी स्थापना हो सकती है। जान पड़ता है कि प्राचीन मन्दिरोंकी प्रतिष्ठा भी इसी भाँति की गई थी। हर मन्दिर भक्तकी मूर्तिमान कल्पना है। जिसकी जैसी श्रद्धा हुई वैसा ही मन्दिर बनाया गया। मद्रासके कितने ही मन्दिरोंका इतिहास आज भी मिल सकता है। उन मन्दिरोंके अलग-अलग 'आगम' है जिनमें मन्दिरोंकी रचना, मूर्तिका आकार-प्रकार, पूजाकी विधि, शुद्धिके नियम आदि दिये गये हैं। ये ग्रन्थ या पुस्तिकाएँ ईश्वर-प्रणीत हैं, ऐसी हिन्दू संसारकी श्रद्धा है।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ३०-४-१९३३

७१. वक्तव्य : उपवासपर[1]

[३० अप्रैल, १९३३][2]

कुछ दिनोंसे मेरे अन्तरमें एक तूफान उठ रहा है। मैं उसके विरुद्ध संघर्ष करता रहा हूँ। 'हरिजन-दिवस' की पूर्व-संध्याको वह आवाज हठ पकड़ गई और कहने लगी: "तुम यह क्यों नहीं करते?" मैंने प्रतिरोध किया। पर प्रतिरोध बेकार था और इसलिए ८ मई सोमवारकी दोपहरसे २९ मई सोमवारकी दोपहरतक इक्कीस दिनका शर्तहीन और अटल उपवास करनेका संकल्प कर लिया गया।

जब मैं बिलकुल हालके अतीतपर दृष्टि डालता हूँ तो बहुत-से ऐसे कारण मिलते हैं जिन्होंने इस उपवासको उकसाया होगा। वे कारण इतने पवित्र हैं कि बताये नहीं जा सकते। पर वे सब महान हरिजन ध्येयसे जुड़े हैं। यह उपवास किसी खास व्यक्तिके विरुद्ध नहीं है, और हर उस व्यक्तिके विरुद्ध है जो इसके आनन्दमें

१. "शुद्धिके लिए उपवास" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२. **बॉम्बे क्रॉनिकल**, १-५-१९३३ से अ० भा० कां० कमेटी फाइल नं० ४२९ से भी।

भाग लेना चाहता है, यद्यपि फिलहाल उसे उपवास नहीं करना है। लेकिन, खास तौरपर यह मेरे अपने विरुद्ध है। यह आत्मशुद्धिके लिए हृदयसे की गई एक प्रार्थना है और तथा भी अधिक जागरूकता और सतर्कताके लिए संगठित करती है। परन्तु किसी भी ऐसे व्यक्तिको जो इस शीघ्र उठाये जानेवाले कदमको सराहता है, मेरे साथ उपवास नहीं करना है। इस तरहका कोई भी उपवास अपने-आपको और मुझे यन्त्रणा देना होगा।

फिर भी यह उपवास इस तरहके बहुत-से उपवासोंकी, जो मुझसे अधिक पवित्र और योग्य व्यक्तियों द्वारा शुरू किये जाने हैं, तैयारी होना चाहिए। पिछले सितम्बरसे अबतक, इन सब महीनोंमे, मैंने पत्रों और साहित्यका अध्ययन किया है, विद्वान और अबोध, हरिजन और गैर-हरिजन स्त्री-पुरुषोके साथ लम्बी बहसें की है। यह बुराई जितनी मैंने सोची थी उससे बहुत ज्यादा बड़ी है। यह हरिजनोको धन, बाह्य संगठन और राजनीतिक शक्ति देनेसे भी दूर नही होगी, यद्यपि ये तीनों चीजें आवश्यक हैं। परन्तु, कारगर होनेके लिए, ये आन्तरिक सम्पदा, आन्तरिक संगठन और आन्तरिक शक्ति, दूसरे शब्दोमें आत्मशुद्धि, के बाद या कम-से-कम साथ होनी चाहिए। वह उपवास और प्रार्थनासे ही हो सकती है। शक्तिके अहंकारसे हम सत्यरूपी परमेश्वरके पास पहुँच नहीं सकते, पर दुर्बल और असहायकी विनम्रतासे पहुँच सकते हैं।

किन्तु केवल शारीरिक उपवास, यदि उसके पीछे संकल्प न हो तो, कुछ नहीं है। उसमें आन्तरिक उपवासकी सच्ची स्वीकृति होनी चाहिए, सत्य और केवल सत्यको ही व्यक्त करनेकी अदम्य उत्कण्ठा होनी चाहिए। अतः सत्यके ध्येयके लिए उपवास करनेका विशेषाधिकार केवल उन्हें है जिन्होंने उसके लिए काम किया है, जिनमें विरोधियोंतकके लिए प्रेम है, जो पाशविक आवेशसे मुक्त हैं और जिन्होंने पार्थिव धन-वैभव और महत्त्वाकांक्षाका त्याग कर दिया है। इसलिए जिस उपवासकी मैंने पूर्व-सूचना दी है उसे पूर्व-तैयारी और अनुशासनके बिना कोई शुरू नहीं कर सकता।

शीघ्र ही आरम्भ होनेवाले इस उपवासके बारेमें कोई गलतफहमी नही रहनी चाहिए। मरनेकी मुझे कोई इच्छा नहीं है। इस ध्येयके लिए मै जीवित रहना चाहता हूँ, यद्यपि मुझे आशा है कि मैं इसके लिए उतना ही मरनेको भी तैयार हूँ। परन्तु मुझे अपनेमें और अपने साथी कार्यकर्त्ताओंमे और भी अधिक शुद्धि, और भी अधिक लगन और समर्पणकी जरूरत है। मुझे ऐसे कार्यकर्त्ता, जिनकी विशुद्धता असंदिग्ध हो, और भी अधिक चाहिए। भ्रष्टताके दिल दहलानेवाले मामले मेरी नजरमें आये हैं। मैं चाहूँगा कि मेरा उपवास इस तरहके लोगोंके लिए इस बातकी पुरजोर अपील सिद्ध हो कि वे इस ध्येयको उसके अपने हालपर छोड़ दें।

मैं जानता हूँ कि मेरे बहुत-से सनातनी मित्रों और अन्य लोगोंके खयालमें यह आन्दोलन एक गहरी राजनीतिक चाल है। मेरी बड़ी इच्छा है कि यह उपवास उन्हें यह विश्वास दिला दे कि यह विशुद्ध धार्मिक आन्दोलन है।

यदि ईश्वरको इस शरीरसे और सेवा लेनी होगी तो पार्थिव भोजनके अभावमें भी वह इसे कायम रखेगा। वह मुझे आध्यात्मिक भोजन भेजेगा। परन्तु ईश्वर अपना काम सांसारिक कारिन्दोंके जरिए करता है। इसलिए अस्पृश्यता-निवारणकी अनिवार्य आवश्यकतामें विश्वास रखनेवाला हर व्यक्ति सवर्ण हिन्दुओंकी ओरसे हरिजनोंको दिये गये वचनको सम्यक् और पूर्णतया पूरा करनेके लिए अपनी योग्यताके अनुसार अधिकसे-अधिक काम करेगा, और इस प्रकार मुझे वह भोजन देगा जिसकी मुझे जरूरत है।

साथी कार्यकर्त्ताओंको इस आनेवाले उपवाससे घबराना नहीं चाहिए। इससे तो उन्हें अपनेको और सशक्त अनुभव करना चाहिए। उन्हें अपनी कामकी जगहसे हटना नहीं चाहिए। जिन कार्यकर्त्ताओंने अत्यावश्यक आरामके लिए अस्थायी रूपसे कार्यसे अवकाश लिया है, या जो बीमार हैं और इलाज करवा रहे हैं, वे अपनी जगहोंपर काम करनेवाले स्वस्थ कार्यकर्त्ताओंकी तरह ही अपना कर्त्तव्य पूरा कर रहे हैं। आन्दोलनसे सम्बन्धित मामलोंपर परामर्श जबतक आवश्यक न हो जाये, तबतक किसीको भी यहाँ मेरे पास आना नहीं चाहिए।

मित्रोंसे यह प्रार्थना करना, मुझे आशा है, आवश्यक नहीं है कि वे मुझसे इस आनेवाले उपवासको स्थगित करने, छोड़ने या इसमें किसी तरहका कोई परिवर्तन करनेका आग्रह नहीं करेंगे। वे मेरी इस बातपर विश्वास करें कि यह उपवास, जैसा कि मैंने ऊपर बताया है, शब्दशः, स्वयं आया है। इसलिए, भारत और संसार-भरके मित्रोंसे मेरा यह कहना है कि वे मेरे साथ ईश्वरसे यह प्रार्थना करें कि मैं इस अग्नि-परीक्षामें पूरा उतरूँ, और मैं चाहे जिन्दा रहूँ या मर जाऊँ, पर जिस ध्येयके लिए उपवास किया जाना है वह फूले-फले।

अपने सनातनी मित्रोंसे मैं यह कहना चाहूँगा कि वे यह प्रार्थना करें कि इस उपवासका मेरे लिए चाहे कुछ भी परिणाम हो, पर सत्यपर जो स्वर्णिम आवरण पड़ा है वह हट जाये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-५-१९३३

७२. चर्चा: वल्लभभाई पटेलसे[1]

३० अप्रैल, १९३३

कुछ समयसे मेरे भीतर यह द्वन्द्व चलता रहा है कि उपवास २१ दिनका हो या ४० दिनका। क्या कोई अपने मनके सारे विचार किसीसे कहता है? या कह सकता है? तीन दिन हुए मेरी नींद ही उड़ गई। मुझे नींद न आये, यह बड़ी असामान्य बात है। लेकिन इन तीन दिनोंमे मुझे लगातार घंटोंतक नींद नहीं आती थी। रातमें दो बजे उठकर काम करने लगता, फिर भी प्रातःकाल लिखवाते समय नीदका छोटा-मोटा झोंकातक नहीं आता था। यहाँतक कि आलस्य दूर करनेके लिए अपने हाथ-पाँव फैलाने तककी इच्छा नही होती थी। मानो, इन तीन दिनोंमें किसी महा-प्रलयकी तैयारी होती रही हो। यह कहना कठिन है कि मेरे मनमें यह व्याकुलता कबसे चल रही थी। किन्तु अनेक बार, अनेक अवसरोंपर, अनशनका विचार मनमे आता और मैं उसे अपने मनसे दूर करनेकी कोशिश करता रहता। रातको जब मैं सोनेके लिए गया तब इसका कोई आभास नहीं था कि आज कुछ होनेवाला है। किन्तु रातको ११ बजे नींद खुल गई, आकाशमे तारे देखता रहा और रामनाम रटता रहा। पर मनमें बार-बार यही विचार आ रहा था कि इतना व्याकुल है तो उपवास क्यों नहीं करता? कर। यह मन्थन काफी देरतक चलता रहा। साढ़े बारह बजे बिल्कुल स्पष्ट आवाज आई: तुझे उपवास करना ही होगा। बस, निर्णय हो गया। बादमें जब यह निश्चय हुआ कि २१ दिनका करना होगा तब इस निष्कर्षपर पहुँचनेमें मुझे बिल्कुल भी वक्त नहीं लगा कि कैदी होनेके कारण मुझे अपना यह उपवास आठ दिनके बाद आरम्भ करना चाहिए। हरिजन-सेवाकार्य इसके बिना अशक्य है, इतना न करूँ तो हरिजन-कार्यमें घुन लग जायेगा और उसका नाश हो जायेगा। बस, मैं उठा और तुरन्त अपना निवेदन लिखने लगा।[2] जिस समय तुम प्रार्थनाके लिए आये उस समय मैंने अपने इस निवेदनका अन्तिम वाक्य पूरा किया था।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ७-५-१९३३

१. "ए अनेरूँ अग्निहोत्र" से उद्धृत।
२. देखिए पृ० ७४-६।

७३. तार : सचिव, गृह-विभाग, भारत सरकारको

३० अप्रैल, १९३३

सचिव
गृह-विभाग
शिमला

ऐसे कारणोंसे जिनका सरकारसे कोई सम्बन्ध नहीं है और केवल हरिजन आन्दोलनसे ही सम्बन्ध है, और अर्धरात्रिके लगभग प्राप्त अन्तर्यामीके अलंघनीय आह्वानका पालन करनेको, मुझे इक्कीस दिनका शर्त-रहित और अटल उपवास करना है। वह आगामी ८ मईकी दोपहरसे शुरू होगा और २९ मईकी दोपहरतक चलेगा, जिसमें मै केवल जल, सोडा और नमक ही लूँगा। यदि मैं बन्दी न होता और मुझे यह फिक्र न होती कि उपवासके दिनोंकी व्यवस्थाके लिए स्थानीय अधिकारियोंको आवश्यक आदेश प्राप्त करनेका अवसर देना चाहिए और सरकारको सभी सम्भव उलझनोंसे बचाना चाहिए, तो उपवास एकदम शुरू हो सकता था।

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट आई, जी. पी. फाइल सं० २०-एक्स

७४. तार : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

१ मई, १९३३

सतीश दासगुप्त
१५ कॉलेज स्क्वायर, कलकत्ता

आप और हेमप्रभा कार्यक्रम निर्विघ्न जारी रखें। उपवासमें ईश्वर मेरा साथी रहेगा।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (३), भाग ४, पृ० ३८७

७५. तार : उर्मिला देवीको

१ मई, १९३३

उर्मिला देवी
२४ रमेश मित्तर रोड, भवानीपुर
कलकत्ता

जल्दी ही शुरू होनेवाले उपवासकी तुम्हें चिन्ता नहीं करनी चाहिए। पत्र क्यों नहीं लिखा?

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (३), भाग ४, पृ० ३८९

७६. तार : सेठ जमनालाल बजाजको

१ मई, १९३३

सेठ जमनालालजी
शैल आश्रम, अल्मोड़ा

जल्दी ही शुरू होनेवाले उपवासके कारण तुम्हारे कार्यक्रम और विश्राममें विघ्न नहीं पड़ना चाहिए। आशा है, स्वास्थ्य सुधर रहा होगा।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (३), भाग ४, पृ० ३९१

७७. पत्र : रावजीभाई पटेलको

१ मई, १९३३

चि० रावजीभाई,

जो लोग व्रत लेनेके बाद अपनेको दुर्बल मानकर ही बैठे रहते हैं, उनके लिए भी सजाके तौरपर सोमवारसे उपवास शुरू करूँगा। उनकी निन्दा करनेके लिए नहीं बल्कि उनकी मदद करनेके लिए।

लक्ष्मीबहनने तुम्हारे विरुद्ध शिकायत की है कि तुम आश्रमकी निन्दा करते हो। इसमें कोई गलतफहमी होनी चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०००) से।

७८. पत्र : लीलावती आसरको

१ मई, १९३३

चि० लीलावती,

तुम्हारा पत्र मिला। उपवाससे दुःख माननेके बजाय, मनमें उत्साहका अनुभव करना। आश्रममें जो-कुछ भी करो यदि उसमें नारणदासकी अनुमति हो तो फिर चाहे कोई भी आलोचना करे उससे डरनेकी कुछ बात नहीं है। आलोचना सुनना ही नहीं। अनिच्छापूर्वक सुननी भी पड़े तो नारणदाससे कह देना; इसीसे तुम्हारा रोष दूर हो जायेगा। उपवासके दौरान जो दोष तुममें हों उन्हें निकाल देना। सभीको अपने दोष दूर करनेके प्रयत्नमें बल मिले, इसलिए उपवास किया जा रहा है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५७३) से। सी० डब्ल्यू० ६५४५ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर।

७९. पत्र : रमाबहन जोशीको

१ मई, १९३३

चि० रमा,

तुम्हारा पत्र मिला। डॉ० शर्माके उपचारसे हानि होती दिखाई दे तो उसे छोड़ देना है।

धीरूके बारेमें समझ गया।

पण्डितजी और लक्ष्मीबहनसे हुई बातसे देखता हूँ कि उनकी मान्यताके अनुसार तुम्हारा स्वभाव मिलनसार नहीं है। सरलता कम है और अभिमान काफी है। तुम्हें नारणदासको सताने और हो सके तो उसका अपमान करनेमे मजा आता है। यह भाषा मेरी है। उनके कहनेसे मुझे यही लगा है। इनमे जो बाते सच हैं, उन्हें दूर कर डालो। हड्डीका जो रोग है, सो तो सहन कर सकते है, किन्तु यह सहन नही कर सकते। हड्डीके रोगके लिए दूसरे डॉक्टरका इलाज चाहिए। परन्तु मनके रोगके लिए तो हम स्वयं ही डॉक्टर है। अर्थात्, हाथ कगनको आरसी क्या। आगामी उपवासका यह परिणाम मैं जरूर चाहता हूँ कि आश्रमकी सारी बुराइयाँ दूर हो जाये।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५०) से।

८०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१ मई, १९३३

चि० प्रेमा,

मेरा उपवास सब आश्रमवासियोंके लिए होगा। अतः तेरे लिए भी होगा, यह जानकर तू अपने सारे रोगोंको निकाल फेंकना।

तेरे प्रश्न[1] तेरे पास होंगे, यह मानकर उनके उत्तर ही संक्षेपमें दे रहा हूँ। मेरे पास आज समयकी बड़ी कमी है।

१. प्रश्न इस प्रकार थे: (१) यदि अपनेसे बड़ी, बराबरोकी या अपनेसे छोटी कोई बहन शोर करती हो या अशिष्ट व्यवहार करती हो, समझानेपर मानती न हो और दूसरोंपर इसका खराब असर पड़ता हो, समय नष्ट होता हो और काम बिगड़ता हो तो हमें क्या करना चाहिए? (२) यदि अपने कर्तव्यका पालन करते हुए कोई व्यक्ति अपनी निजी जरूरतके कारण आश्रमके नियम अथवा अनुशासनको

(१) बड़े या छोटे कोई भी हों, उन्हें नम्रतापूर्वक न समझाया जा सके, तब मौन धारण करके हृदयसे उनके लिए प्रार्थना की जाये। ऐसा करनेसे अधीरता मिट जायेगी।

(२) यहाँ जरूरतकी व्याख्या जाननी चाहिए। जब मैं श्लोकका पाठ करवा रहा होऊँ, उस समय मुझे कोई साँप दिख जाये और उसे पकड़ना जरूरी हो, तो मुझे श्लोक-पाठके नियमको भंग करना चाहिए। इसी तरह अगर मुझे पाखानेकी सख्त हाजत मालूम हो तो भी चाहिए कि मैं उस क्रमको [थोड़ी देरके लिए] तोड़ दूँ। लेकिन प्यास लग आये तो इस जरूरतको दबाकर मुझे श्लोक बुलवाना जारी रखना चाहिए। तुझे गलेमें कुछ हो जाये तो भी तू श्लोक चालू रखे, यह शायद मूर्खतासे भी कुछ अधिक बुरा कहा जायेगा।

(३) सत्यकी खोजमें जो लोकाचार रुकावट डाले उसे तोड़ा जाये।

(४) यदि तुझे मेरे प्रति अनन्य श्रद्धा हो तो तुझे मान लेना चाहिए कि जिसे तू अन्तःप्रेरणा मानती है उसमें भूल होनेकी सम्भावना है। परन्तु अन्तःप्रेरणा श्रद्धासे भी आगे जानेवाली प्रत्यक्ष वस्तु जान पड़े, तो कुछ भी संकट झेलकर उसीके अनुसार किया जाये।

(५) इसका एकांगी उत्तर हो ही नहीं सकता।

(६) यह प्रश्न समझमें नहीं आता।

(७) स्वयं किसीको बार-बार झूठा या आलसी पाया हो तो आगे भी उसके वैसा होनेका सन्देह तो सत्यार्थीको भी होगा। परन्तु सत्यार्थी सन्देह होनेपर भी आलसी या झूठेपर प्रेम रखेगा और उसे अवसर देता रहेगा।

तोड़े तो दूसरोंपर उसका क्या असर होगा? (३) सत्याग्रहके मार्गका अनुसरण करते हुए लोकाचारका पालन कहाँतक किया जाये? (४) आपके जैसे महात्मा और मेरे बीच किसी बातपर मतभेद हो और मुझे अपना मत अन्तःप्रेरणासे सत्य जान पड़ता हो और उसे कार्यान्वित करते हुए आपकी संस्थाके आचार-धर्मका उल्लंघन होता तो सत्याग्रहीके नाते मेरा क्या धर्म होगा? (५) संस्थाके कारण व्यक्ति प्रिय लगना चाहिए या व्यक्तिके कारण संस्था? (६) किसीके प्रति हमारे मनमें बुरे विचार हैं, इसे जाननेकी कसौटी क्या है? (७) यदि कोई व्यक्ति अनेक बार झूठा, आलसी और स्वार्थी पाया गया हो तो स्वभावतः जब भी उसकी शिकायत की जायेगी हमें उसके विषयमें सन्देह होगा। यह बात सत्याग्रहीके लिए ठीक होगी या नहीं? (८) सादे जीवनकी सीमाएँ क्या हैं? अपनी साड़ीपर कसीदाकारी करना, फैशनेबल ब्लाउज़ पहनना, हाथ या गलेमें फूलोंकी माला पहनना, सुन्दर चप्पलें पहनना, आदि बातोंमें कलारसिकता मानी जाये या आश्रमके सिद्धांतोंका उल्लंघन? (९) आश्रममें कोई किसी दूसरे व्यक्तिकी टीका करे और स्वयं उसी दोषका आचरण करे, ऐसी स्थितिमें यदि जिस व्यक्तिकी टीका की गई है वह पहले व्यक्तिको उलाहना दे या उसके दोष बताये तो क्या उसका वह आचरण निन्द्य या हिंसक माना जायेगा? (१०) आश्रममें आनेवाले लोग अपने मनमें भिन्न-भिन्न उद्देश्य लेकर आते हैं, अतः क्या हमें उनके जीवनको अलग-अलग ढंगसे देखना चाहिए?

(८) इसमें सबके लिए कोई एक नियम नहीं हो सकता। प्रत्येकके मनपर निर्भर है। परन्तु कलाके बहाने सादगीका त्याग नहीं किया जा सकता।

(९) एक-दूसरेको जवाब देना निन्द्य है। 'तू भी ऐसा ही है', यह कहनेमें हीनता है।

(१०) यह वस्तु अहिंसाके गर्भमें ही निहित है।

यह मानकर कि तेरे पास अपने प्रश्नोंकी नकल रखनेका समय न रहा हो, प्रश्न मैं साथमें भेज रहा हूँ।

दो बहनों[1] को भेज रहा हूँ। सकोच तो बहुत है, परन्तु भेजनेका धर्म समझकर भेज रहा हूँ। आशा है, वे तेरा काम बढ़ायेंगी नहीं, बल्कि तेरे काममें मददगार ही होंगी। उनके लिए हिन्दी सीखनेकी सुविधा कर देना।

मैं जरूर यह चाहता हूँ कि सुशीला[2] अपनी इस बारकी छुट्टी आश्रममें बितायें। तुम दोनोंको इससे आराम मिल सकता है। उद्यमका परिवर्तन ही आराम है, यह अंग्रेजी कहावत जानती है न? इसमें काफी सत्य है। इसे लिखते-लिखते मनमें उठ आनेवाला खयाल ही समझना। सुशीलाने कोई खास कार्यक्रम बना रखा हो तो मेरी इच्छाकी खातिर उसे रद करनेकी बिलकुल जरूरत नहीं है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४२) से। सी० डब्ल्यू० ६७८१ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

८१. पत्र : जमनाबहन गांधीको

१ मई, १९३३

चि० जमना,

तुम्हारे सुन्दर पत्रने मुझे निश्चिन्त कर दिया है। नारणदासको तुम्हारा प्रमाणपत्र मिल गया इसलिए अब मुझे दूसरेकी आवश्यकता ही नहीं। किन्तु प्रमाण-पत्र कौन दे सकता है, यह मालूम है न? जिसे खुद खाना बनाना न आता हो वह रसोइयेको क्या प्रमाणपत्र दे सकता है? इस दृष्टिसे जाँच करते हुए तुममें योग, समता और एकाग्रता नारणदाससे ज्यादा होनी चाहिए। यदि ऐसा हो तो मुझे एकके बदले दो स्थितप्रज्ञ मिल गये। ऐसा ही है क्या?

डॉक्टर पुरुषोत्तम चला गया तो क्या मैंने डॉक्टर शर्माको नहीं भेजा? उसने तुम्हें काफी रंगीन कर दिया लगता है।[3] इस इलाजसे फायदा न हो पर नुकसान भी

१. मार्गरेट स्पीगल और नी०; देखिए पृ० ६९-७१ भी।

२. सुशीला पै।

३. शायद रंगीन बोतलोंमें भरे पानीको धूपमें रखकर उससे इलाज किया जाता था।

है, तो नहीं होता। श्रद्धापूर्वक करते जाना। भोजनमें जो फेरफारका सुझाव दिया वह करके देखो। यदि परिणाम अच्छा नहीं होगा तो वही छुड़वा देगा। केशुको जीत सको तो जीतना।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८७८) से; सौजन्य: नारणदास गांधी।

८२. भेंट: पत्र-प्रतिनिधियोंको[1]

१ मई, १९३३

प्रतिनिधियोंका लगभग पहला ही प्रश्न यह था कि क्या किसी भी परिस्थितिमें उनके लिए अपना उपवास छोड़ना सम्भव हो सकता है। गांधीजी ने जवाब दिया:

जहाँतक मनुष्यके लिए सम्भव है, मैं यह कह सकता हूँ कि मेरे उपवास छोड़नेकी कोई सम्भावना नहीं है।

इसके बाद उनसे उनके वक्तव्यके बारेमें और प्रश्न किये गये। यह पूछनेपर कि उनके वक्तव्यमें[1] "भ्रष्टताके दिल दहलानेवाले मामलों" का जो उल्लेख है, क्या वे उसपर प्रकाश डाल सकते हैं, गांधीजी ने कहा कि ऐसा करना उनके लिए सम्भव नहीं है। पर उन्हें किसी खास व्यक्तिसे कोई शिकायत नहीं है। और यदि है भी तो वह अपने-आपसे ही है। गांधीजी ने आगे कहा:

उस रात मैं जब सोनेके लिए बिस्तरपर गया तो मेरे मनमें रत्ती-भर भी यह भाव नहीं था कि मैं इस तरहका कोई कदम उठाऊँगा। इस फैसलेके लिए किसी भी एक घटनाको जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। पर, निस्सन्देह, यह काफी लम्बे अरसेमें घटी बहुत-सारी घटनाओंके इकट्ठा हो जानेका परिणाम है। पहले मैं उनकी तरफसे अन्धा था, यह बात नहीं है। वे मेरे मनपर अपना मूक और अचेतन प्रभाव डाल रही थी।

एक और प्रश्नका उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा:

मुझे ऐसा लगता है कि मेरा यह उपवास इस तरहके बहुत-से उपवासोंका मात्र अग्रदूत है, और यदि मैं इसमें बच जाता हूँ तो मैं एक और उपवास शुरू करनेका आह्वान अनुभव कर सकता हूँ।[2]

१. साधन-सूत्रमें बताया गया था: "गांधीजी पत्रकारोंसे जेलकी उसी कोठरीमें मिले जहाँ पिछले कुछ दिनोंसे उनका दफ्तर बना हुआ था। आमका पेड़ वहाँ बढ़ती हुई गर्मीसे कोई खास बचाव नहीं कर पाता है।"

२. अगला अनुच्छेद **हरिजनबन्धु,** ७-५-१९३३ से लिया गया है, जिसमें लिखा था कि गांधीजी एक हरिजन द्वारा पूछे गये प्रश्नोंका उत्तर दे रहे थे।

इन पूरे इक्कीस दिनोंमें मैं रामरस[1] पीऊँगा। यदि वह मुझे जीवित नहीं रखता है, तो मोसम्बीका रस ही कैसे सहायता कर सकेगा? अस्पृश्यताके रावणको जो नष्ट करना चाहता है, उसे जब-तब रामरस लेते ही रहना चाहिए। यदि राममें मेरी भक्ति सच्ची है — और निश्चय ही है — तो वह मेरे शरीरको नष्ट नहीं होने देगा, क्योंकि मेरी अभी भी यह इच्छा है कि वह इस शरीरको, जो उसके लिए समर्पित है, कायम रखे। परन्तु आप हरिजनोंको एक बात याद रखनी चाहिए। मैंने जो अचूक इलाज अपनाया है वह आपको भी अपनाना चाहिए। यह बात समझ लीजिए कि आपके लिए भी कोई और रास्ता नहीं है। 'स्पृश्य' हिन्दुओंको जो उनकी इच्छा हो कहने और करने दीजिए। आपको अपनी ओरसे अपनी देह और आत्माको निर्मल करना है और सच्चे हरिजन बनना है।

आपका और मेरा रक्षक ईश्वर है।[2] मुझे अपना रक्षक मानना ईश्वरनिन्दा होगी। मैंने आपसे कहा था कि ईश्वर-प्रेम जीवनको बल प्रदान करता है। पर आप अगर इजाजत दें तो मैं यह कहना चाहूँगा कि शरीर नष्ट भी हो जाये, तो क्या है। क्या मृत व्यक्ति काम नहीं करते रहते हैं?

गांधीजी ने आगे कहा :

इस समय जन-साधारणके लिए यह समझना आवश्यक है कि सितम्बरके उपवास और इस आनेवाले उपवासमें बहुत ही महत्त्वपूर्ण अन्तर है। सितम्बरका उपवास शर्त-सहित था, वह एक खास उद्देश्यके लिए किया गया था। परन्तु यह किसी ठोस उद्देश्यके लिए कतई नही है।

अतः यह उपवास कभी भी किया जा सकता है और यह उस ढंगका है जैसा कि हिन्दू-धर्ममें आम है। जब भी कोई महान सुधार और पुनरुत्थान हो रहा होता है, तो लोग पवित्रताके लिए और अपने प्रयोजनको तेजीसे आगे बढ़ानेके लिए उपवास करते हैं। इस तरहका उपवास सर्वत्र अपने-आपमें एक अच्छी चीज माना जाता है। अपना औचित्य यह आप है, और इससे अधिक किसी गुणका यह दावा भी नहीं करता। जिस कशमकशमे मैं रहा हूँ उसके बिना भी मैं इसे कर सकता था। पर शायद मुझमें साहस नहीं था।

भारी जिम्मेदारीने अपने भारसे मुझे दबा रखा था। इसलिए कई बार प्रेरणा मिलनेपर भी मैं उसका प्रतिरोध करता रहा। धार्मिक आन्दोलनकी सफलता उसके प्रवर्तकोंके बौद्धिक और भौतिक साधनोंपर नहीं, बल्कि केवल आध्यात्मिक साधनों पर निर्भर होती है, और उपवास वह सुप्रसिद्ध पद्धति है जिससे इन साधनोंकी वृद्धि होती है। हर उपवास अभीष्ट परिणाम पैदा नहीं करता।

१. यह बात एक हरिजनके इस सुझावके उत्तरमें कही गई थी कि उपवासके दिनोंमें गांधीजी को रोज मोसम्बीका रस पीते रहना चाहिए।

२. यह एक हरिजनके इस कथनके सन्दर्भमें कहा गया था कि गांधीजी की मृत्युसे हरिजनोंका कोई रक्षक नहीं रहेगा।

अपने वक्तव्यमे मैंने कुछ शर्ते रखी है। मेरे वक्तव्यमे यह दावा किया गया है, और धार्मिक आन्दोलन जिन्होंने चलाये हैं उनका भी यह दावा रहा है कि बौद्धिक, भौतिक और अन्य चीजें आध्यात्मिक पूँजीकी अनुगामी हैं, वे कभी भी उससे स्वतन्त्र नही होनी चाहिए।

यह पूछनेपर कि क्या उन्हें इस २१ दिनके उपवासमें बचनेकी आशा है, गांधीजी ने पुनः विश्वास दिलाते हुए कहा:

अरे, दस वर्ष पहले २१ दिनका उपवास करके भी मैं बच गया था।[1] मुझसे भी दुर्बल लोगोंने इससे लम्बे उपवास किये है और वे जीवित रहे हैं। आध्यात्मिक भोजनमे बडी-बड़ी सम्भावनाएँ हैं।

इसपर गांधीजी को यह बात याद दिलाई गई कि सितम्बरके उपवासमें छः दिनके अनशनसे ही आपके शरीरका लगभग ढर हो गया था। परन्तु उन्होंने विनम्रतासे उत्तर दिया:

चमत्कारोका युग अभी समाप्त नही हुआ है।

इस अग्नि-परीक्षामें पूरा उतरनेकी अपनी क्षमताके बारेमें वे बहुत ही आशावान थे। यह पूछनेपर कि यदि सरकारने उन्हें रिहा कर दिया तो क्या वे पूनामें रहेंगे, गांधीजी ने जवाब दिया कि उनके लिए यह कहना बहुत ही कठिन है, क्योंकि रिहाईकी उन्हें आशा नहीं है।

यह सुझानेपर कि संयुक्त प्रवर समितिकी बैठकके समय किया गया उनका यह उपवास राजनैतिक उद्देश्योंसे प्रेरित समझा जाएगा, गांधीजी ने जवाब दिया कि उपवासका संकल्प उन्होंने स्वेच्छासे नहीं किया है। यह उनकी योजनामें नहीं था। यह उनकी अपनी सूझ नहीं है। उस रात भी उन्होंने इसका प्रतिरोध करनेकी कोशिश की, पर वे कर नहीं सके। फैसला करनेसे पहले तीन दिन वे ठीक से सो नहीं सके थे। उन्हें क्या हो रहा है, यह उन्हें पता नहीं था। निश्चय ही वह अजीर्ण नहीं था। लेकिन शनिवारकी रातको जब उन्होंने फैसला कर लिया, तो उन्हें अच्छी नींद आ गई।[2]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २-५-१९३३; **हरिजनबन्धु**, ७-५-१९३३ से भी।

१. सितम्बर-अक्टूबर १९२४ में; देखिए खण्ड २५।
२. **टाइम्स ऑफ इंडिया** के प्रतिनिधिसे बातचीतके लिए देखिए परिशिष्ट १।

८३. तार : मीराबहनको[1]

[२ मई, १९३३][2]

बा मे कहना कि उसके पिताने उसपर एक ऐसा साथी थोपा है कि कोई और स्त्री होती तो उसके भारसे मर गई होती। उसका प्रेम मेरे लिए अमूल्य है। उसे अन्ततक साहसी रहना चाहिए। तुमसे मुझे इसके सिवा कुछ नही कहना है कि ईश्वरने तुम्हें मुझे दिया, इसके लिए मैं उसका कृतज्ञ हूँ। मुझे ईश्वरने जो यह सबसे नया काम सौपा है, इसपर बराबर प्रसन्न रहकर तुम्हें अपनेको बहादुर सिद्ध करना चाहिए।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७१) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७३७ से भी।

८४. तार : नारणदास गांधीको

२ मई, १९३३

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

नी०, आशा है, पहुँच गई होगी। परशुराम बच्चों सहित अगली गाड़ीसे ही चल दे और मुझसे मिले। उसे पूनाका किराया और चार रुपये और दे देना। उपवाससे किसीको भी चिन्तित नही होना चाहिए, बल्कि आत्मशुद्धि, और ज्यादा त्याग और समर्पणके लिए शक्ति ग्रहण करनी चाहिए।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू/१) से; एस० एन० २११३२) से भी।

१. उनके २ मई, १९३३ के तारके उत्तरमें। उसमें लिखा था : "उपवासकी खबर आज ही मिली। बा मेरे द्वारा यह कहलाना चाहती हैं कि उन्हें गहरा धक्का लगा है, इस फैसलेको वे बहुत ही गलत समझती हैं, पर आपने जब किसी औरकी बात नहीं सुनी तो आप उनकी भी नहीं सुनेंगे। वे अपनी हार्दिक कामनाएं भेजती हैं। मै स्तम्भित रह गई हूँ। परन्तु जानती हूँ कि यह ईश्वरकी आवाज है, इसलिए वेदनाके बीच भी मै प्रसन्न हूँ। हार्दिक कामनाएँ और प्रेम। लिख रही हूँ।"

२. एस० एन० २१११० से; मूल प्रतिपर पहुँचकी तारीख ४ मई, १९३३ दर्ज है।

८५. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

[२ मई, १९३३][1]

घनश्यामदास बिड़ला
ग्वालियर

तुम्हारा तार[2] पाकर प्रसन्नता हुई। मेरी पुरजोर सलाह है कि तुम इलाजके लिए कलकत्ते चले जाओ। ठक्कर यदि आवश्यक समझें तो उन्हें आने दो।

बापू

अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७९३६) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला। एस० एन० २११११३ से भी।

८६. पत्र : नारणदास गांधीको

१/२ मई, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा एक पत्र आज भी मिला है। भाई डंकनके पत्रके साथ मिला है। डंकनको भी अनुमति प्राप्त कर लेनी चाहिए थी, परन्तु उसे इसकी खबर कैसे हो सकती थी। अच्छा यही है कि जो नये-नये आये हों उनको तथा पुराने लोगोंको दे सकनेके लिए नियमोंकी ब्यौरेवार सूची रहे। नियम गुजरातीमें लिख डालो तो यहींसे अंग्रेजी अनुवाद करके भेज दूँगा या डंकन खुद ही यह काम कर ले। वह कुशल तो है ही।

१. एस० एन० २११११३ से। मूल प्रतिपर पहुँचकी तारीख ३ मई, १९३३ दर्ज है।

२. घनश्यामदास बिड़लाके दिल्लीसे भेजे गये २ मईके तारके उत्तरमें। उसमें लिखा था : "समाचार अभी अभी मिला। मुझे पूर्ण विश्वास है कि ईश्वरकी कृपासे आप इस अग्नि-परीक्षाको निश्चय ही सफलता-पूर्वक पार कर जायेंगे। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि सितम्बरके उपवासके बाद सब तरफ आश्चर्य-जनक जागृति आ गई है, जिससे आपको अत्यन्त सन्तोष मिलना चाहिए था। फिर भी मुझे लगता है कि इस उपवाससे केवल विशुद्ध कल्याण ही होना है, यद्यपि व्यक्तिगत रूपसे मुझे थोड़ी घबराहट जरूर है। आशा है, यदि कोई विशेष सूचना हुई तो आप मुझे लिखेंगे। कलकत्तेका कार्यक्रम रद करने और लगभग ८ तक पूना पहुँचनेकी सोच रहा हूँ। ठक्कर बापा यहाँ हैं।"

इतने सारे लोग एक आदमीके पीछे पड़ जायें, यह तो बहुत खराब बात मानी जायेगी। तुमने इस सम्बन्धमें कह ही दिया है इसलिए ज्यादा नही लिखता। तो भी डकनको लिखा पत्र देखना। उसका सार सबको सुनाना।

टाइटसकी रिपोर्ट पढ़ ली है। उसके सुझाव मुझे पसन्द आये हैं। उसका पूरा हिसाब भी तुम्हारी देखरेखमें अलग रहे तो सचमुच अच्छा रहेगा।

उसे कोई सहायक दिया जाना चाहिए।

दूध ले जानेके लिए एक खच्चर या टट्टू ले लिया जाये तो कोई बुराई नही। मुझे तो लगता है कि मोटरसे ही लाना पड़ेगा।

उसने दो मशीने लेनेको कहा है, वह भी मुझे ठीक लगता है।

बीडजका व्यापार तो मेरी समझमें ही नहीं आया था। इसलिए उसका सुझाव मुझे अच्छा लगा है।

क्या अब गोमूत्रका उपयोग किया जाता है? दूधके लिए जो झोपड़ी बनानेको कहा है वह तो अवश्य बननी चाहिए। इन सबपर विचार कर लेना और जो-कुछ करने लायक हो उसपर अमल करना। जेकीबहनके लड़के नहीं आयेंगे। वे वहाँ पढ़ रहे हैं। महालक्ष्मीका पोस्टकार्ड आज आया है। उसने लिखा है कि वह स्वयं दो महीनेके अन्दर छूट जायेगी; उसके बाद प्रबन्ध करेगी।

इतना लिखनेके बाद ही हाथ थक गया है इसलिए अब बाकी सब संक्षेपमे निबटाना होगा।

पण्डितजी और लक्ष्मीबहनके साथ लम्बी बात हुई। उसमें जो काम न हो रहा हो तो तुरन्त करना। यदि आम तौरपर रोटी कच्ची ही रहती हो तो बेकरी बन्द कर देनी चाहिए। उसमे काम करनेवालोंको बदलना नहीं चाहिए। भट्ठीमे से आँच निकलती हो तो उसमें कुछ कमी है। आँच निकलनी तो नही चाहिए। आलू या कंदका उपयोग तरकारीके रूपमें बन्द कर देना चाहिए। और उन्हें रोटीके बदले लें।

आवश्यक सब्जी आश्रममें घाटा उठाकर भी पैदा करनी ही चाहिए। टमाटर और कुछ अन्य सब्जियाँ बारह महीने उगानी चाहिए। आखिरमें इससे कोई घाटा नहीं होगा। बीमारोंके सिवा और किसीके लिए भी बाजारसे सब्जी नहीं आनी चाहिए। मैं कच्चे दूध और गेहूँको पूर्ण खुराक मानता हूँ। और कुछ भी न हो तो गुजारा चलेगा। सभी चीजें रोज मिलनी ही चाहिए, यह कोई पक्की बात नहीं हो सकती। कभी-कभी सिर्फ दूध भी काफी है और कभी-कभी सिर्फ रोटी ही। फिर किसी-किसी दिन एक ही पदार्थ लेना शरीर और आत्माके आरोग्यकी दृष्टिसे आवश्यक है। मै इनके लिए दिन तय नहीं करूँगा। जैसी स्थिति हो वैसा कर लें। जिस दिन दूध काफी ज्यादा पड़ा हो उस दिन दूध ही परोसकर रसोई बन्द रखें। जिस दिन आलू आदि ज्यादा पड़े हों, उस दिन रोटी बन्द कर दें।

मैं तो जिस दिन सब्जी न हो उस दिन पेड़से इमली तोड़कर उसे नमकके साथ मिलाकर चटनीकी तरह परोस दूँ। रोज इमली खानेसे नुकसान हो सकता है।

कभी-कभी खानेसे फायदा ही होता है। किन्तु स्वादके लिए कोई उसका एक टुकड़ा भी न तोड़े।

प्रार्थनाके सम्बन्धमें तुम्हारी राय मिल जानेपर ज्यादा लिखूँगा।

रसोईमें व्यक्ति अपने-अपने भोजनके हिसाबसे बैठें तो अच्छा है। भात खानेवाले एक पंक्तिमें, साधारण खुराक खानेवाले दूसरी पंक्तिमें और मेहमानोंको पहले ही पूछ लें तो चलेगा। जितनी चीजें बनी हों उन्हें खानेके समय पास रख दें। जो पसन्द आयें वे दे दें। मैं जानता हूँ, यह कुछ अटपटा है।

आठ तारीखसे मेरा २१ दिनका उपवास शुरू होगा। यह बात पत्रके वहाँ पहुँचनेतक पुरानी हो चुकी होगी। इससे कोई दुखी न हो; बल्कि सब अधिक जागृत हो जायें।

आश्रमसे मुझे बहुत बड़ी आशाएँ हैं। आश्रममें बहुत बुराइयाँ हैं। उनको दूर कर ही देना चाहिए। यह उपवास सिर्फ साथियोंके लिए होगा; इसलिए उसमें आश्रम तो आ ही गया। हमें जितनी तपश्चर्या करनेकी जरूरत है उतनी आश्रममें हो तो मैं नाच उठूँ और जान लूँ कि समय आनेपर सभी नदीके तटपर योगारूढ़ होकर अनशन करेंगे। यह उपवास दूसरे ऐसे उपवासोंकी तैयारी ही है।

इतना सब करें:

प्रार्थनामें आकर या तो लीन हो जायें या न आयें अर्थात्, जो शरीर-मात्र वहाँ लाये और मन दूसरी जगह रखे वह सत्य-भंग करता है। ऐसा करनेसे तो यही अच्छा है कि उसे जो करना है करे या ज्यादा अच्छा है कि वह व्यक्ति आश्रम छोड़ दे। कोई किसीकी निन्दा पीठ पीछे न करे। मनमें विकार उदित हों तो दूसरोंको नहीं तो तुम्हें बता दे या चिट्ठी लिखे। विकारोंको वशमें न कर सकें तो आश्रमसे चले जायें। जिन्हें आश्रमके सभी नियम पसन्द न हों उन्हें आश्रम छोड़ ही देना चाहिए। इस शुद्धिकालमें एक मर्यादा निर्धारित की जा सकती हो तो कर देनी चाहिए। बीमारीका जो इलाज आश्रममें हो सके उससे ही सन्तोष करें। इतना न किया जा सके तो ज्यादा-से-ज्यादा यही करें कि बीमार आश्रमकी दूसरी शाखाओंमें चला जाये।

कोई किसी कामसे जी न चुराये, किसी चीजकी चोरी न करे, कुछ छिपाये नहीं। जो-कुछ खानेको मिले उसीसे सन्तोष करे। जो-कुछ खाये उसे औषधिके रूपमें। इतना याद रखे कि दाल, भात या कद किसीकी आवश्यकता नहीं है। मसाले, चीनी, मिठाई अनावश्यक हैं। गेहूँ, ज्वार या बाजरा और कच्चा दूध सम्पूर्ण खुराक है। उसके साथ समय-समयपर कोई सब्जी अथवा कोई फल मिलता रहे तो काफी है।

एक-दूसरेसे द्वेष या बुराईको पाप समझना चाहिए। सभी लोग हरिजनोंकी कुछ सेवा करें। सक्षेपमें, इसी आशासे यह उपवास करूँगा कि उसके दौरान आश्रम सभी आध्यात्मिक रोगोंसे मुक्त हो जायेगा। यदि आश्रम इतना न कर सके तो किसी औरसे मुझे कुछ भी आशा करनेका अधिकार नहीं है। यह सबको पढ़ाना। नी० और मार्गरेटको भेजनेका निर्णय किया है। यदि कल तुम्हारे पत्रमें इसके विरुद्ध कुछ हुआ तो देखूँगा। इन बहनोंको जो कपड़े या बर्तन जरूरी हों, वे दे देना। उनके

लिए पाखानेकी सुविधाका भी खयाल रखना। भोजनके लिए जो विशेष प्रबन्ध करना पड़ेगा उसके अतिरिक्त और कुछ विशेष करनेकी जरूरत नही। बाकी सब बातें लिख चुका हूँ। लड़का, बच्चोमें मिल जायेगा। बुरी आदते न सीखे इतना ही काफी है।

जमनाने ही तुम्हें प्रमाणपत्र दिया है, इसलिए मै सोचता हूँ कि तुम चिन्ता नही करोगे। किसीको यहाँ दौड़ने न देना।

बापू

[पुनश्च :]

डंकनको दोनों बहनोका इतिहास बताना और इस सम्बन्धमे उससे जैसी मददकी आवश्यकता हो वैसी लेना।

२ मई, १९३३

इतना तो कल लिखा था, लेकिन कामकी धमाचौकड़ीमे भेज नही सका। नी० पहुँच गई होगी। तुम्हारी डाक कल भी मिली थी। इसे प्रार्थनासे पहले शुरू किया है। सवा बजेसे उठा हुआ हूँ।

तुम्हारा पत्र हृदयद्रावक है। मेरी निर्दयताकी सीमा नही। आज तार[१] भेजा है सो मिला होगा। परशुरामको लौटती डाकसे रवाना कर देनेकी बात है। उसे रवाना कर दिया होगा। लड़कोंको भी बुलाया है। उसे पूनाके लिए गाडीका किराया और चार रुपये देनेके लिए लिखा है। ऐसे लोगोंको अपने पास रखनेकी कोई जरूरत नही, क्योंकि उन्हे सुधारना हमारी शक्तिसे बाहर है। मेरे समक्ष ऐसे व्यक्तिसे शायद कुछ काम भी लिया जा सके। परन्तु वह किसी कामका नही है। ऐसा ही कोई और व्यक्ति हो तो उसे भी छुट्टी दे दो। पूरी सफाई कर सकते हो। फिलहाल जो ज्ञानपूर्वक नियमोंका पालन करते है वही रहे। मुझे तो यही आशा है कि जो वहाँ पूर्णतया योग्य बन जायेंगे वे अवसर आनेपर अनशन करने बैठेंगे, ऐसा समय पास आता दिखाई दे रहा है। यह उपवास इसी प्रकारका है। गन्दगी दूर करना इस उपवासका आरम्भ है। सबसे पहले यह गन्दगी आश्रम ही नहीं दूर करेगा तो कौन करेगा? नमकके पीछे दौड़-धूप करनेसे यह ज्यादा कठिन है। किन्तु जो अपनेको बलिदान करनेकी योग्यता प्राप्त करनेको उत्सुक है वे ही वहाँ रहें।

वहाँ जो पुराने परिवार हैं वे इसमें सहयोग देनेके लिए तैयार न हों तो उनके लिए तुम्हें विचार कर लेना होगा। नये परिवारोको लेना बन्द कर सकते हो। जो हैं उनमें से सिर्फ कुछ सीखनेकी खातिर आये हुए लोगोंको, यदि वे निराधार न हों तो, छुट्टी दे सकते हो। जो निराधार हैं इसलिए आश्रममें रह रहे हैं, उनको रहने दें। यहाँ बैठे-बैठे जो विचार मनमें आते है उनमें से इन्हें भी समझना। करना वही जो तुम्हारा मन माने, जिसे तुम समझ सको और जितनी तुममें शक्ति हो। मैंने तो तुम्हें छूट दे ही दी है। आगामी २१ दिनोंमें तुमपर व्यवस्थाका असह्य बोझ नहीं

१. देखिए पृ० ८७।

होना चाहिए। किसीको खुश करनेकी आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। जो पुराने परिवार वहाँ रहते हैं और जो इसमें साथ न दे सकें उन्हें अलग खाना पकानेकी छूट दे देना। सोच-समझकर उनका वेतन बाँध दिया हो तो उसके अनुसार काम चलायें और इसीमें से खर्च करें। और ज्यादा खर्च करें तो अगले वेतनसे काटें। जो विभाग अब चलाना ही है और उसके लिए पूरा समय काम करनेको कोई व्यक्ति न मिले तो नौकर रखकर काम चलायें अथवा उनका काम उतना कम कर दें। मुझे लगता है कि ऐसा करनेकी जरूरत न ही होनी चाहिए। किन्तु इस सम्बन्धमें मैं निर्णय नहीं कर सकता। सबको बैठाकर सारी बातपर विचार कर लेना। इसमें जोर-जबर्दस्तीकी तनिक भी गंध न आनी चाहिए। आश्रमकी स्थापनाके मूलमें ही इस तरह अपने-आपको मिटा देनेकी बात रही है। मैंने कितनी बार समझाया है यह कितने लोगोंको याद होगा। इसलिए मैंने कोई नई बात नहीं कही है। जो सहमत हों उन्हें समझाना चाहिए कि सब-कुछ त्यागकर बैठनेकी तैयारी होते हुए भी मानो अनन्त कालतक काम करना है यह मानकर उन्हें अपने-अपने काममें लीन रहना है। जिस तरह यमका बुलावा आना है यह जानते हुए भी हम उसका विचार किये बिना काम करते जाते हैं वैसा ही यहाँ भी है। यहाँ सिर्फ इतना ही ज्यादा है कि हमारी तैयारी इच्छापूर्वककी जानी चाहिए।

डंकन मेहमान है इसलिए उसे छूट है। किन्तु उसका अर्थ मेरे साथ स्वतन्त्र रूपसे व्यवहार तो नहीं है। तिलकम दुखी मनुष्य है, उसपर भी हरिजन है और अन्य दृष्टियोंसे योग्य है। मुझे तो दोनों व्यक्ति बहुत योग्य प्रतीत हुए हैं। तुम्हारा अनुभव ऐसा न हो तो लिखना।

. . .[1]के सम्बन्धमें मैं उलझनमें पड़ गया हूँ। मुझे उसका उद्यम पसन्द नहीं है। उसमें उसकी प्रतिज्ञाका भंग तो है ही। उसे जो पूँजी चाहिए वह चाहे तुमसे ले तो भी इसे निजी उधार ही मानना चाहिए न? यह शोभा नहीं देता। वह अपने काममें सफल होगा ही, ऐसा सोचना सही नहीं है। उसमें विनम्रता आती दिखाई नहीं देती। यदि विनम्रता आ गई हो तो उसे चाहे किसी भी जगह नौकरी करनी चाहिए। अम्बालालभाई[2] उसे फिटरकी नौकरी तो दे ही देंगे। हमारे यहाँ जो सामान है उसे इस्तेमाल करनेवाला कोई न हो तो रणछोड़भाई या अम्बालालभाई उसे अपने कारखानेमें ले सकते हैं। यदि खरीदते नहीं तब भी रख तो सकते ही हैं। किन्तु ऐसा सोचना शायद मेरी भूल हो। यह सिर्फ तुम्हारी जानकारी-भरके लिए है। तुम सब उठाकर फेंक सकते हो। तुम . . . को ज्यादा समझ पाये हो और मोह दूर हो जानेके कारण मैंने उससे अन्याय किया हो, यह सम्भव है। किन्तु मैं जो लिख रहा हूँ यदि वह सही हो तो . . . पूरे कुटुम्बका भरण-पोषण करने लायक शायद तुरन्त न कमा पाये। यदि ऐसा हो तो खर्चके लिए जितने पैसे कम होते हैं उतने आश्रमको देने चाहिए। उसे भटकने नहीं दिया जा सकता। मैं तो सिर्फ कर्त्तव्यका

१. नाम नहीं दिया जा रहा है।

२. अम्बालाल साराभाई।

विचार कर रहा हूँ। इस कुटुम्बका अर्थ क्या है? . . .[1] ही है न? . . . नहीं है इसलिए उसे त्याग दूँ ऐसा नहीं है। किन्तु उनसे ज्यादा-से-ज्यादा सहन करनेको जरूर कहूँगा।

क्या मैं जोशीके बारेमें भूल ही गया था? कभी-कभी मृत्युके किनारे पहुँचे हुए व्यक्तिकी ऐसी स्थिति हो जाती है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६९ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

८७. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

२ मई, १९३३

प्रिय गुरुदेव,

अभी रातके १.४५ बजे हैं और मुझे आपका और कुछ अन्य मित्रोंका खयाल आ रहा है। यदि आपका हृदय संकल्पित उपवासका अनुमोदन करता हो तो मैं फिर आपका आशीर्वाद चाहूँगा।[2]

सप्रेम और सादर,

आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६३८) से।

८८. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

२ मई, १९३३

प्रिय बन्धु,

आगामी यज्ञके[3] लिए क्या मैं आपके आशीर्वादकी याचना कर सकता हूँ? इस समय रात्रिके २ बजे हैं। अन्य चीजोंके अलावा, याचनाका यह पत्र लिखनेके

१. नाम नहीं दिया जा रहा है।

२. रवीन्द्रनाथ ठाकुरने अपने उत्तरमें लिखा था: "अपनी वर्तमान प्रतिज्ञाको आपका नितान्त आवश्यक मानना गलत भी हो सकता है। और जब हम इसकी घातक परिणतिके जबर्दस्त खतरेको देखते हैं, तो यह सोचकर काँप उठते हैं कि हो सकता है, इस भारी गलतीको सुधारनेका कभी मौका ही न मिले। मैं आपसे यह विनती किये बिना नहीं रह सकता कि आप ईश्वरीय व्यवस्थाको आत्म-यन्त्रणाकी इस तरहकी चुनौती न दें और जीवनके वरदानको, उसकी समस्त सम्भावनाओं-सहित, स्वीकार करें और अन्तिम क्षण तक उसे पूर्णताके आदर्शपर ले जानेका प्रयत्न करें जैसाकि मनुष्यके लिए उचित है। हो सकता है, मेरी ये आशंकाएँ अज्ञान-जनित भीरुताका परिणाम हों।" (**महात्मा**, भाग-३, पृ० २४७-८)।

३. प्रस्तावित २१ दिनका उपवास।

लिए भी मैंने बिस्तर छोड़ा है। आप सच्चे बन्धु हैं, इसलिए मैं यह जानता हूँ कि यदि आप इस उपवाससे सहमत न हुए तो केवल मुझे खुश करनेके लिए मेरी प्रार्थना स्वीकार नहीं करेंगे[१]।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २५२

८९. पत्र : मदनमोहन मालवीयको

२ मई, १९३३

भाई साहेब,

रात्रीके दो बज रहे है। मेरे आगामी यज्ञको यदि आप आशीर्वाद भेज सकते हैं तो भेज दिजीये। बचपनसे मातापिताके पास पाया वही करनेकी कुछ चेष्छा कर रहा हुँ। माताने प्रायः आधा आयु उपवासोमे व्यतीत किया। क्या करूं? हरिजन सेवा बुद्धि बलसे नहि हो पाती।[२]

आपका कनिष्ट भ्राता,
मोहनदास

पत्र (सी० डब्ल्यू० ९६६८) से।

१. श्रीनिवास शास्त्रीके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट २।

२. मदनमोहन मालवीयने इसके उत्तरमें यह तार भेजा था: “आपको भगवानका आशीर्वाद प्राप्त है। जैसाकि मैंने उपवासके आरम्भिक दिनके अपने सार्वजनिक भाषणमें कहा है, मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि अपने इस निर्णयमें आप भगवानके आदेशसे ही प्रेरित हुए हैं। मैं निरन्तर यह प्रार्थना करता रहा हूँ कि वह आपको यह व्रत सफलतापूर्वक पूरा करनेकी शक्ति दे और मेरा विश्वास है कि वह आपको ऐसी शक्ति अवश्य देगा। आप बिलकुल ‘अनन्यभाव’ हो जायें। अपने मनसे उसके सिवा, जो कि हमारा एकमात्र सहारा और शरण है, अन्य सब विचारोंको दूर कर दीजिए। जपके अथवा द्वादशाक्षर मन्त्रके साथ-साथ दिनमें कुछ समय प्रत्येक श्वास-प्रश्वासके साथ ‘सोऽहम’ का अभ्यास कीजिए। इससे प्राणधारणामें सहायता मिलेगी। कुछ महान तपस्वी आपकी ओर बहुत स्नेह और चिन्ताकी दृष्टिसे निहार रहे हैं और लाखों देशवासी आपके लिए प्रार्थना कर रहे हैं। अपने आसपासके वायुमण्डलको यहाँ-वहाँकी बातचीतके द्वारा विक्षुब्ध न होने दीजिए। जहाँतक सम्भव हो केवल उस वासुदेवकी चर्चा होने दीजिए जिसका निवास प्राणीमात्रके हृदयमें है। उसकी यह आज्ञा और उसका यह वचन याद रखिए कि मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात् तरिष्यसि। ज्योंही स्वास्थ्य अनुकूल होगा आपसे भेंट करूँगा।” (**हिन्दू**, ११-५-१९३३)

९०. पत्र : राधा गांधीको[1]

रात १–४ बजेके बीच, २ मई, १९३३

मेरे उपवासकी बात सुनकर कोई न घबराये। इसीमे आश्रमकी शक्ति है और इसीमें धर्मकी रक्षा है। उपवास हिन्दू-धर्मके मूलमें है। इस महान हरिजन-यज्ञमें मेरे-जैसे हजारों बलिदान हो जायें तो भी मुझे आश्चर्य नहीं होगा। अब मैं न भी लिख सकूँ तो भी यह समझ लेना कि मुझे हर वक्त तुम लोगोका ध्यान बना हुआ है।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५३५)से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

९१. पत्र : नानीबहन बी० झवेरीको

रात १–४ बजेके बीच, २ मई, १९३३

जीवन और मृत्युमें न्यूनाधिक कोई नही है। जो-कुछ होगा उससे भला ही होगा। तू अधिक जागृत हो जा।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५३६)से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

९२. पत्र : कुसुमबहन देसाईको

रात १–४ बजेके बीच, २ मई, १९३३

उपवास समाप्त कर पाया तो फिर पत्र लिखने लगूँगा। उपवासकी बातसे घबराना मत। जीवन-मरण ईश्वरके हाथमें हैं। मुझसे मेरे इस शरीरके माध्यमसे उसे और काम नहीं लेना होगा तो वह नहीं लेगा और शरीर मिट जायेगा। ग्यारहवाँ अध्याय समझमें आया है? भगवान किस प्रकार मनुष्यको चबाकर चूर्ण कर देता है। एक दिन हम सबका वैसा ही हाल होगा। हरिजनोंके लिए मेरा भी वही हाल होता है तो ठीक ही है।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५३७)से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

१. मगनलाल गांधीकी पुत्री, दीपकदत्त चौधरीकी पत्नी।

९३. पत्र : रामजीको

रात १–४ बजे के बीच, २ मई, १९३३

पत्रोंका सार पढ़कर बहुत दुःख हुआ। उसमें लिखी बात मानने लायक नहीं है। मेरी इतने वर्षोंकी मेहनतका यह फल? इसमें पूरा या आधा भी सच हो तो यह दुःख है कि मथुरादा[1] या नारणदास[2] जैसे लोग भी एक कौड़ीके नहीं है और यदि सब आरोप झूठ हों तो दुःख यह है कि रामजी इतनी सेवाके बाद भी कोमल नहीं हुआ। किन्तु तुम्हारे हृदयमें कोमलता नहीं आई तो इसमें दोष तुम्हारा नहीं मेरा है। मैंने भी तो उसी जातिमें जन्म लिया है न, जिसने हरिजनोंको कुचला। जो मैं खाते-पीते नही कर सका वही मेरा उपवास करे।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५३८)से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

९४. पत्र : प्रभुदास गांधीको

रात १–४ बजेके बीच, २ मई, १९३३

स०[2] से सगाई पक्की है तो शादी जरूर कर लेना। उपवासके दौरान विवाह कर लो तब भी ठीक होगा। तुम्हें तो शादी करके सेवा ही करनी है। शादीके बाद जितने संयमका पालन कर सको, करना। मुझे लिखते रहना। मैं मर भी जाऊँ तो दुखी नहीं होना। 'मैं' तो नहीं मरूँगा, शरीर नही रहा तो क्या?

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४०)से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

९५. पत्र : जमनादास गांधीको

रात १–४ बजेके बीच, २ मई, १९३३

मेरे उपवासका मर्म तुमने पूरी तरह समझ लिया होगा। अपना काम निश्चित होकर करते रहना। माताजी और पिताजी से कहना, मुझे आशीर्वाद भेजें।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४१)से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

१. मथुरादास पी० आसर।
२. नाम छोड़ दिया गया है।

९६. पत्र : नी०को

२ मई, १९३३

ईश्वर करे इस उपवाससे तुम्हें शक्ति प्राप्त हो। बुरा विचार यदि मनमें आये तो उसे भी ना[रणदास]को सौंप दो। लेकिन यदि तुम अपने-आपको सत्य और उसके कार्यमें, जैसाकि ना[रणदास] तुम्हें बताये, लीन कर दो, तो वह आयेगा ही नहीं।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९७६७)से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

९७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२ मई, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

जब मैं आनेवाले उपवाससे जूझ रहा था, तब मानो तुम सशरीर मेरे सामने थे। पर कोई लाभ नहीं हुआ। काश, मैं यह अनुभव कर सकता कि तुमने उपवासकी नितान्त आवश्यकता समझ ली है। हरिजन आन्दोलन निरे बौद्धिक प्रयत्नके लिए बहुत बड़ा काम है। सारे संसारमें इतनी बुरी चीज और कोई नहीं है। फिर भी मैं धर्मको और इसलिए हिन्दुत्वको छोड़ नहीं सकता। हिन्दू-धर्मसे यदि मैं निराश हो जाऊँ, तो मेरा जीवन मेरे लिए भार बन जायेगा। हिन्दुत्वके द्वारा मैं ईसाई, इस्लाम और कई दूसरे धर्मोंसे प्रेम करता हूँ। यह छीन लिया जाये तो मेरे पास रह ही क्या जाता है? लेकिन मैं इसे छुआछूत और ऊँच-नीचकी मान्यताके रहते सहन नहीं कर सकता। सौभाग्यसे हिन्दू-धर्ममें इस बुराईका रामबाण इलाज भी है। मैंने उसी इलाजका प्रयोग किया है। सम्भव हो तो मैं तुम्हे यह महसूस कराना चाहता हूँ कि यदि मैं उपवासके बाद बच रहूँ तो अच्छा ही है, और यदि जीवित रहनेकी कोशिशके बावजूद यह शरीर नष्ट हो जाता है तो भी क्या बुराई है? आखिर यह है ही क्या—एक झटकेसे टूट जानेवाली चिमनीसे भी अधिक नाशवान। काँचके उस गोलेको फिर भी दस हजार वर्षतक ज्यों-का-त्यों रखा जा सकता है, परन्तु इस शरीरको एक मिनटके लिए भी हम जैसे-का-तैसा नहीं रख सकते। मृत्युसे निश्चय ही सारे प्रयत्नोंका अन्त नहीं हो जाता। ठीक ढंगसे सामना किया जाये तो मृत्यु उदात्त प्रयत्नका आरम्भ भी हो सकती है। परन्तु, यह सत्य तुम्हें स्वयं अन्तः प्रेरणासे दिखाई न देता हो तो मैं दलीलोंसे तुम्हें कायल करना नहीं चाहता। मैं

जानता हूँ कि तुम्हारी स्वीकृति मेरे साथ न भी हुई तो भी अग्निपरीक्षाके इस पूरे दौरमें तुम्हारा बहुमूल्य स्नेह तो मेरे साथ रहेगा ही।

तुम्हारा पत्र मिल गया था, जिसका उत्तर, मैंने सोचा था, फुरसतसे दूँगा। परन्तु ईश्वरकी इच्छा और ही कुछ थी। कृष्णासे मेरी बातें हुई थीं। मेरा खयाल है कि सरूपके काठियावाड़के कामके बारेमें मैंने तुम्हें लिखा था। कमलाने तो मुझे अपना पतातक नहीं भेजा। बहुत दिनोंसे उसका कोई पत्र नहीं आया है। जब तुम उससे मिलो, तो उसे और इन्दुको मेरा प्यार देना। कमलाको उपवासकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। हो सके तो मुझे तार[1] देना।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लैटर्स, पृ० ११०-१।

९८. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

२ मई, १९३३

चि० गंगाबहन,

आज तुम्हें लम्बा पत्र नहीं लिख सकता। तुम्हारे पत्रका उत्तर देनेकी आवश्यकता नही है। उपवासकी खबर सुनकर खुश हुई होगी। तुम्हारी बारी भी आयेगी। अभी देर है। यह उपवास पहले किये गये उपवासोंसे अलग है। बुराइयाँ दूर करनेके लिए या शुद्धिके लिए हमारे पूर्वज चलते-फिरते ऐसे उपवास किया करते थे। बिलकुल वैसा ही यह भी है। और लोग एकके-बाद-एक उपवास करने आगे आते जाये तो मैं उन्हें उपवास करने दूँगा, अभी तो मनमें यही विचार है। इस समय तुम मुझसे मिलने जरूर आ सकती हो। जब इच्छा हो आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८८०३)से; सौजन्य : गंगाबहन वैद्य।

१. जवाहरलाल नेहरूने ५ मईके अपने तारमें लिखा था: "आपका पत्र मिला। जो बातें मेरी समझमें ही नहीं आतीं, उनके बारेमें मैं क्या कह सकता हूँ? ऐसा लगता है कि एक अजनबी देशमें मैं अपनी राह भूल गया हूँ। परिचित मार्ग-चिह्न केवल आप ही हैं। मैं अंधेरेमें अपना रास्ता टटोलनेकी कोशिश करता हूँ, पर लड़खड़ा जाता हूँ। कुछ भी हो, मेरी प्रीति और भावनाएँ आपके साथ होंगी।" (गांधी-नेहरू कागजात, १९३३)। जवाहरलाल नेहरूके उसी तारीखके पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

९९. पत्र : शारदा चि० शाहको

२ मई, १९३३

चि० शारदा,

तेरा पत्र मिला। तू बहुत समझदार है इसलिए उपवासकी खबर पढ़कर खुश हुई होगी। यदि कोई व्यक्ति धर्मका काम करे तो उससे खुशी होती है न? यह तेरी शुद्धिके लिए भी है, ऐसा मानना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गजराती (सी० डब्ल्यू० ९९६६) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

१००. पत्र : पांडुरंग नाथूजी राजभोजको

२ मई, १९३३

भाई राजभोज,

मेरे उपवाससे तुमारे गभराहटमें नहि पडना। वहीं रहो और ज्ञानमय सेवाके लिये तैयार होलो। मैं झिदा रहा तो इसी शरीरसे ओर सेवा करनेका प्रयत्न करूँगा, मर गया तो भी भगवानकी दया ही समझुंगा। देह पडनेसे मेरी सेवा खतम नहिं होगी। हरिजन सेवा सत्रका जो आरंभ हुआ है वह कभी बंध नहिं हो सकता है। अनशन करते हुए हजारों सवर्ण हिंदुका प्राण त्याग हो जाय तो भी मैं उसे अधिक नहि समझुंगा। मै तो शायद ही लिख सकुं। तुमारे लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७८०)से।

१०१. पत्र : हीरालाल शर्माको

२ मई, १९३३

भाई हीरालाल शर्मा,

तुम्हारा हिन्दी-पत्र पाकर मुझको बहुत ही आनन्द हुआ। हिन्दीमें यह पहिला पत्र और ऐसे स्वच्छ अक्षर आश्चर्यजनक बात है। हिन्दी भी अच्छी ही है। यह कैसे? मैंने पत्र और प्रेसक्रिप्शन सब ध्यानसे पढ़ लिये हैं।

प्राकृतिक चिकित्सासे गांधी कुटुम्ब अनभिज्ञ नहीं है। यह तो विनयकी भाषा हुई। उनका विश्वास कम है लेकिन यह भी सबके लिये नहीं कहा जा सकता है। वे और दूसरे भी बेचारे क्या करें? जो कुछ प्राकृतिक चिकित्साका ज्ञान और प्रेम हो सकता था वह मेरी ही वजहसे। लेकिन मेरा ज्ञान इतना अधूरा कि जिससे जल्द रोगोंमें निकम्मा बन जाता हूँ। कभी व्यवस्थित तौरपर इस शास्त्रका अभ्यास करनेका मुझको समय ही नहीं मिला। मेरे शौखकी यह वस्तु होनेके कारण थोड़ा बहुत मैं जान सका हूँ। मेरे अधूरापनके कारण हमेशा प्राकृतिक चिकित्सा विशारदको मैं ढूँढ़ रहा हूँ। ऐसे उपचारक एक भक्त और बड़ा सज्जन हनमन्तराय था। अपने उपचारोंका बलि होकर यह मर गया। उसका ज्ञान कम था। उसकी श्रद्धा अपूर्व थी। पीछे आया था गोपालराव। वह एक अस्पताल रखकर राजमन्द्रीमें बैठ गया है। उसी पर विश्वास करके मैंने एक मूर्ख प्रयोग किया। उसका वर्णन मैंने अखबारमें भी दिया था।[1] गोपालरावके परिचयसे मुझको निराशा पैदा हुई। गोपालराव श्रद्धालु है लेकिन उसका ज्ञान बहुत अधूरा है और दुख यह है कि अपने अधूरापनका उसको पूरा ख्याल नहीं है। अब तुम मिल गये हो। मैं तो चाहता हूँ कि मुझे मत छोड़ो। आश्रममें और भी रहो नम्रतापूर्वक अपने ज्ञानकी मर्यादाको पहचान लो। आश्रमके लोगोंका विश्वास सम्पादन करो और पीछे ऐसे उपचारके लिए जगतको निमन्त्रण भेजो। अगर आश्रम शीघ्र लौट जानेकी आवश्यकता नहीं है तो कमसे-कम थोड़े दर्दिओंको तो अच्छे करके जाओ। अगर आश्रम तुमको अच्छा लगे और नारायणदासजी को तुम अच्छे लगो तो आश्रममें अवश्य रह जाओ। प्राकृतिक चिकित्साका तुम्हारा ज्ञान पूरा हो अथवा अपूर्ण हो उसकी मुझे दरकार नहीं है। मुझे दरकार है सत्यकी, जहाँ तक हम जा सकें वहीं तक जाकर संतुष्ट रहें तो कोई हानि नहीं हो सकती। मगर पत्नी भी आश्रमके नियमोंका पालन करनेको तैयार है तो कोई कारण नहीं है वह भी आश्रममें आकर क्यों नहीं रहे। तुम्हारी धर्मपत्नीको मैं खत लिखता हूँ। इसीके साथ रखूँगा।

१. देखिए खण्ड ४१।

भगवानजीके साथ हरिजनोंके पास गया सो अच्छा हुआ। यदि सम्भव है तो आश्रम छोड़नेके पहिले ही और जितना जल्दी हो सके इतना जल्दी मेरे पास आ जाओ। तब हरिजनोंमें आरोग्यके बारेमें क्या करना चाहिए उस बारेमें हम कुछ वार्तालाप कर लें। इतवार छोड़कर जब दिल चाहे तब आ सकते हो। दोपहरको मिलनेका हो सकता है।

आश्रममें खुराकके बारेमें तुम्हारी सूचनाकी प्रतीक्षा करूँगा। आरोग्यकी दृष्टिसे आश्रमकी खुराकको मैं सम्पूर्ण बनाना चाहता हूँ। हरिजन बालकोंको आश्रममें रखनेका इरादा तो हमेशा रहा ही है लेकिन ऐसे बालक बहुत नहीं मिल सकते हैं। आश्रममें जो लोग अपना रोग छिपाते हैं उनको सलाह दे दो कि वे उसे प्रगट कर दें और जो अपने विकारोंको शांत नहीं कर सकते हैं वे भाग जायें।

कुसुमके बारेमें मैं सोच रहा हूँ क्या किया जाय। रमा बहनके बारेमें तो अगर उनके रोगका निदानके बारेमें और चिकित्साके बारेमें तुमको कुछ भी शंका नहीं है तो वही उपचार किये जायं जो तुम्हें पसंद हो। इसी तरह जमनाबहनके लिए। आमीना[1] से अगर भात और दूसरे स्टार्चके पदार्थ और तम्बाकू छोड़वा दोगे तो बहुत अच्छा होगा। प्रातःकाल दांतोंपर तमाकू घिसती है। बम्बईके अखबारोंमें जो तुम्हारे आनेका उल्लेख था उस बारेमें जो तुमने किया वह अच्छा ही हुआ और योग्य हुआ।

बापूके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ३९-४१

१०२. पत्र : रैहाना तैयबजीको

२ मई, १९३३

भली बेटी,

दूसरे फाकेके लिये तुमने नया भजन तो दिया है लेकिन वह तो नहीं गाया जा सकता है। तुमको तो मालूम है कि जबतक ऐसे भजन ठीक नहीं गाये जायें मेरे दिलपर असर नहीं करते। मैं तो वही[2] फिर गाऊँगा। अच्छा अब अब्बाजानकी अम्माजानकी और तुम सब लड़कियोंकी दुआ भेजो।

बापू

मूल उर्दूमें, सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। पत्रकी फोटो-नकल एस० एन० ९६५७ से भी।

१. अमीना जी० कुरेशी।

२. "उठ जाग मुसाफिर भोर भई" से प्रारम्भ होनेवाला भजन।

१०३. पत्र : अमतुस्सलामको

[२ मई, १९३३ या उसके पश्चात्][1]

बेटी अमतुस्सलाम,

तुम्हारा ख़त मिला। तुम्हारे फ़ाक़ाकी बात सुनकर घबराहटमें नहीं पड़ना। अब मै खत नहीं लिख सकूँगा। लेकिन मेरा दिल तो तुम्हारे साथ ही रहेगा। मुझको लिखा करो। खुदा तुमको अच्छी करे। तुम्हारे हाथसे बहुत सेवा लेनी है। लेकिन सब हाल खुदा बेहतर जानता है। वह जो करेगा सो अच्छा ही होगा।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २८३) से।

१०४. पत्र : के० नटराजनको

३ मई, १९३३

प्रिय श्री नटराजन,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद।

उपवास एक ऐसा आह्वान था जिसका मैं प्रतिरोध नहीं कर सकता था भौतिक कारणोंपर अत्यधिक जोर न देनेकी आपकी चेतावनी मुझे याद है।[2] अमेरिका रवाना होनेसे पहले, जहाँ मुझे आशा है, आपको भारी सफलता मिलेगी, कृपया कामकोटिके साथ यहाँ आयें। कामकोटि आपके साथ रहते है, इसकी मुझे खुशी है। यह हर तरहसे अच्छा रहेगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत के० नटराजन
कामाक्षी हाउस
बान्द्रा, बम्बई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९०७३) से।

१. २ मईको लिखे गये अन्य पत्रों और इस पत्रकी विषयवस्तुकी समानतासे जान पड़ता है कि यह पत्र २ और ८ मईके बीच लिखा गया होगा।

२. के० नटराजनने बम्बईकी सभामें कहा था कि अस्पृश्यता-निवारणमें रत कार्यकर्त्ता हरिजनोंको अपने घर बुलायें और उनसे सम्मानपूर्वक मिलें-जुलें तो हरिजन-कार्यके लिए चंदा देने या इकट्ठा करनेकी अपेक्षा उसके ज्यादा लाभकारी परिणाम होंगे। उन्होंने यह बात मदनमोहन मालवीयकी इस घोषणाके बाद कही थी कि अस्पृश्यता-निवारण कार्यके लिए पच्चीस लाखकी निधि इकट्ठी की जायेगी।

१०५. पत्र : जे० डी० जेनकिन्सको[1]

३ मई, १९३३

प्रिय श्री जैनकिन्स,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद।

आपने जिस कदमकी सलाह दी है वह मै क्यों उठा नहीं सकता, यह समझानेके लिए राजनैतिक बहसकी जरूरत है और राजनैतिक बहसमे मै कैदी होनेके कारण पड़ नही सकता। इसलिए कृपया मुझे क्षमा करे।

आशा है, मेरा पिछला पत्र आपको मिल गया होगा।[2]

जो पुस्तक आपने मुझे भेजी है उसके लिए धन्यवाद।

हृदयसे आपका,

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९०७४) से।

१०६. पत्र : पी० आर० लेलेको

३ मई, १९३३

प्रिय लेले,

आपके पोस्टकार्ड और शुभ कामनाओंके लिए धन्यवाद। मै जानता हूँ कि आप इस दानवके विरुद्ध अभियानमें तन-मनसे अपनेको झोक देंगे।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत पी० आर० लेले
वाडेकर बिल्डिग, बम्बई–४

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०७५) से।

१. श्री जेनकिन्सके दिनांक ३० अप्रैल, १९३३ के पत्र (एस० एन० २१०८८) के उत्तरमें, जिसमें उनसे अपील की गई थी कि वे सविनय अवज्ञा आन्दोलन छोड़ दें और सरकारको सहयोग दें।

२. देखिए पृ० ४५।

१०७. पत्र : महावीर गिरिको

२ मई, १९३३

चि० महावीर,

तुम्हारा पत्र मिला; बहुत खुशी हुई। इसी तरह लिखते रहो तो अच्छा है।

सामानके बारेमें जाँच-पड़ताल कर रहा हूँ। वह क्यों नहीं मिला, सो समझ नही आता। आज ही आश्रम पत्र लिख रहा हूँ।

तुम ईमानदारीसे काम करोगे तो जरूर प्रगति करोगे।

दूध-घी नहीं मिलता तो क्या तुम सब दूध-घीके बिना ही काम चलाते हो? भोजनमें क्या ले रहे हो?

धर्मकुमार कुछ करता है? क्या वह बहुत शरारत करता है?

बा काम करती है यह तो बहुत अच्छी बात है।

नियमोंका पालन करोगे तो सुखी रहोगे।

मैत्री और दुर्गाके पत्र आते होंगे। मुझे तो मिलते रहते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२३९) से।

१०८. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२ मई, १९३३

चि० प्रेमा,

तेरा हृदयद्रावक पत्र मिला। तुझे मैं किस प्रकार सन्तोष दूं? तुझे जाने देना मेरे लिए बहुत कठिन है। मैंने तो तुझपर आशाका मेरु बाँधा है। परन्तु जिसका श्रेय आश्रममें रहनेसे सिद्ध न हो उसके आश्रममें रहनेका आग्रह करूँ, तो मैं स्वार्थी बनता हूँ और आश्रमका पतन होता है। आश्रममें रहनेवाले सभी लोगोंके अधिक-से-अधिक श्रेयका सूचक और उसे साधनेका स्थान आश्रम है। इसलिए तेरा श्रेय और आश्रमका श्रेय परस्पर विरोधी हो ही नहीं सकते। परन्तु तुझे मेरी यह बात सही न लगे तो तुझे भाग जाना चाहिए, इसमें मुझे बिलकुल शंका नहीं है। अगर अभीतक तेरे उपवास चल रहे हों तो मेरा अनुरोध है कि अब छोड़ दे। तू जो निर्णय करेगी उसे मैं स्वीकार करूँगा। अन्तिम निर्णय मैं नहीं करूँगा, वह तो तुझे करना है।

जैसे मैंने नारणदासपर बहुत बड़ी जिम्मेदारी लादी है, वैसे ही नारणदासने तुझपर लादी है। नारणदास तो टूटा नहीं। तू टूट गई तो मुझे दुःख होगा। तेरे टूटनेमें मेरा भी पूरा भाग जरूर माना जायेगा। नारणदास क्या करे?

तू रहनेका निर्णय करे तब भी अपने ऊपरका बोझ तू अवश्य कम कर लेना। शक्तिसे अधिक भार लेना ही अधर्म है, उसमे अभिमान भी है। जितना दोष शक्तिसे अधिक खानेमें है, उससे ज्यादा दोष शक्तिसे अधिक भार लेनेमें है। यह फर्क जरूर है: सौमें से निन्यानबे आदमी शक्तिसे अधिक खाते हैं। सौमें से साढ़े निन्यानबे शक्तिसे कम ही बोझ उठाते हैं। इसलिए हमें सदा इस बातका पता नहीं रहता कि कब अधिक बोझ उठाया और कब कम। इतनेपर भी परिणाम तो वही होता है जो मैंने बताया। मैं अधिक खाऊँ तो उसका परिणाम मुझीको भुगतना पड़ेगा। मैं शक्तिसे अधिक हरिजन-कार्य अपने सिर ले लूँ तो उसका परिणाम चार करोड़ हरिजनोंको तो भुगतना पड़े ही, शायद सारी दुनियाको भी भुगतना पड़े।

ईश्वर तुझे शान्ति प्रदान करे और सही रास्ता दिखाये।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४३) से। सी० डब्ल्यू० ६७८२ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१०९. पत्र : नारणदास गांधीको

३ मई, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। कल डाकका जो बड़ा लिफाफा भेजा है, वह फौरन मिल गया हो तो अच्छा है।

प्रेमाको पत्र लिखा है, उसे देख लेना। यहाँ उसके बारेमें ज्यादा नहीं लिखता।

अभी तो मैं, कलके पत्रमें जिन परिवर्तनोंका सुझाव दिया था[1] उनपर विचार कर रहा हूँ। पण्डितजी से उनकी चर्चा की है। आश्रममें उपवासकी शृंखला चलानेकी शक्ति या योग्यता है या नहीं, इस विचारको एक ओर छोड़कर भी मेरी कलकी राय बदली नहीं है। तुमपर जो बोझ है, वह कम होना ही चाहिए। ऐसा न हो सका तो जितनी तैयारीकी हम आशा करते हैं उतनी भी नहीं हो सकेगी। इसलिए नये व्यक्तियोंको लेना बन्द करें और जिनसे नियमोंका पालन न हो सके उन नये व्यक्तियोंसे आश्रम छोड़नेका अनुरोध करें और अगर वे आश्रमवासी पुराने हैं तो अलग रसोई करें। अलग रसोई मुझे तनिक भी प्रिय नहीं है। किन्तु देखता हूँ कि जितने पुराने कुटुम्ब हैं उन्हें निभाये बिना छुटकारा नहीं है।

केशुके बारेमें भी जो विचार लिखा है उसीपर कायम हूँ। यदि पिताके रूपमें तुम अपनी गाँठसे पैसा देकर मदद करना अपना धर्म समझो तो करो; परन्तु इसे

१. देखिए पृ० ८८-९३।

आश्रमके पैसेमें नहीं गिना जा सकता। ऐसा मेरा विचार है। फिर मुझे यह भी लगता है कि तुम्हारे पास जो पैसा है उसे एक ही कामके लिए अमानतकी तरह माना जा सकता है; और वह काम है माता-पिताकी मदद। उनके चले जानेपर वह सब आश्रमको अर्पित माना जायेगा। उसपर न जमनाका न पुरुषोत्तम आदिका ही अधिकार हो सकता है। यदि यह सकल्प आजतक न किया हो तो इस शुद्धि-कालके आरम्भमें कर ही डालना चाहिए। उसके लिए तुम्हें जमनाके साथ सलाह कर लेनी चाहिए। पुरुषोत्तमसे पूछना भी उचित लगे तो उससे भी पूछ लो। किन्तु सबसे पहली बात तो यही है कि खुद तुम्हारा यही विचार बने। तुम्हारा किसी भी सम्बन्धीको निजी सहायता देनेकी स्थितिमें होना आश्रमके लिए, तुम्हारे लिए और जिसकी मदद करोगे उसके लिए हानिकर है। तुम्हारे सिवा मुझे आश्रममे कोई ऐसा व्यक्ति नहीं दिखाई देता जिसमें दूसरे सभी गुण आवश्यक मात्रामें हों। तुम्हारे पास धन होते हुए भी तुमने उसका दुरुपयोग नहीं किया और तुम उससे अलिप्त रह पाये हो। इससे तुम्हारी सूक्ष्म न्यायदर्शिता और तटस्थता सिद्ध होती है। किन्तु यदि भगवान स्वयं परिग्रह करने लगे तो वह भी गिरेगा। अपरिग्रह और अस्तेय व्रत देखनेमे छोटे लगते हैं। किन्तु ये दूसरे तीन व्रतोंके समान ही कठिन हैं। मुझे तो पूरे [पातंजलि] योगदर्शनकी रचना ही विस्मित करती है। उसका अन्तिम भाग मेरी समझमे नहीं आता। किन्तु हो सकता है कि उसका एक-एक सूत्र काफी अनु-भवके आधारपर रचा गया हो। यदि भगवान ने मेरे लिए दूसरा काम तय न कर दिया होता तो हिन्दू-धर्मकी ऐसी पुस्तकें मुझे जबानी याद होती। किन्तु मेरे लिए क्या ज्यादा अच्छा होता, कौन जाने? यह विचार करना भी नास्तिकता है। मुझे जो-कुछ सम्पदा ईश्वरने दी है उसीसे मुझे पूर्ण सन्तोष कर लेना चाहिए। किन्तु यह तो विषयान्तर हुआ। आश्रमकी मददसे अलग कारखाना बनानेमे आज केशुकी भलाई कदापि नहीं है।

कुसुमका क्या करे? उसे अपने पास किस तरह बुला सकता हूँ? उसे जाना ही हो तो वह अलमोड़ा चली जाये। मैं अपनी राय लिख चुका हूँ। उसीपर दृढ़ हूँ। डॉ० स्पीगल शायद वहाँ आये। उसे परख रहा हूँ। बहुत सरल है, पर राग-द्वेषसे भरी हुई। तो भी जबतक वह नियमोंका पालन करे तबतक उसे रखना ही चाहिए। सफल हो गई तो अच्छा ही होगा। मेरे उपवास करनेमे इन दोनों बहनोंका हाथ अवश्य है। और उसमे भी शायद नी० का हिस्सा ज्यादा। किन्तु यह सब तो मेरी कल्पना है। ईश्वर या राक्षसकी कृतिकी पूरी पहचान किसे हो सकती है। घटित घटनाका अनुमान मात्र दे रहा हूँ।

परशुरामके आज ही यहाँ पहुँच जानेकी आशा कर रहा हूँ।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७० से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

११०. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

३ मई, १९३३

मैं इस उपवासकी अत्यन्त प्रसन्न मनसे प्रतीक्षा कर रहा हूँ और यह आवश्यक है, यह मेरा पक्का विश्वास है।

यह पूछनेपर कि उनके खयालमें उनके सहयोगियोंको उपवासके दौरान क्या करना चाहिए, गांधीजी ने कहा :

उन्हें केवल अस्पृश्यताके विरुद्ध यथासम्भव अधिक-से-अधिक सौम्य ढंगसे अभियान चलाना चाहिए, जिससे कि सनातनियोंका हृदय जीता जा सके।

यह पूछनेपर कि उपवासके दौरान डॉक्टरी व अन्य सहायताके लिए क्या वे स्वयं अपनी व्यवस्था कर रहे हैं, उन्होंने कहा कि सब-कुछ अधिकारियोंपर निर्भर है। उन्हें यदि रिहा कर दिया गया तो वे क्या व्यवस्था करेंगे, उन्होंने इस बारेमें भी कुछ नहीं सोचा था।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-५-१९३३

१११. तार : डॉ० मु० अ० अन्सारीको[1]

[४ मई, १९३३][2]

डॉ० अन्सारी
दिल्ली

आप धार्मिक व्यक्ति हैं। मैं जब यह कहता हूँ कि यह उपवास मेरी इच्छासे नहीं है, तो मैं चाहता हूँ कि आप मुझपर विश्वास करें। यह ईश्वरका अलंघनीय आदेश है। इसलिए वही मेरा अदृश्य डॉक्टरी

१. उनके तारके उत्तरमें। उसमें लिखा था : "एक पुराना मित्र, साथी कार्यकर्त्ता और चिकित्सक होनेके नाते मुझे आपके इस गम्भीर निर्णयसे गहरा धक्का लगा है। वक्तव्य पढ़ लेनेके बाद भी, नैतिक प्रश्नपर आपसे मेरा मतभेद बरकरार है। पर इस विषयमें सबसे अच्छे निर्णायक आप ही हो सकते हैं। मैं आपसे अपना संकल्प छोड़नेके लिए तो नहीं कहता, पर यह जरूर समझता हूँ कि आप इस तनावको सहनेके योग्य नहीं हैं। आपके वक्तव्यमें मरना न चाहनेकी आपकी इच्छाका उल्लेख है। उसके निहितार्थके आधारपर ही मैं आपसे यह वचन चाहता हूँ कि डॉक्टरी उपचार यदि कभी भी आपके जीवनको खतरेमें समझे, तो आप तभी अपना उपवास तोड़ देंगे।"

२. **महादेवभाईनी डायरी**, भाग-३ पृ० २८४ से।

परिचारक होगा। और यदि उसकी परिचर्या ही मुझे नहीं बचाती है, तो आप जैसा अच्छा चिकित्सक और पैगम्बरकी आड़े वक्तमें सहायता करनेवालोंका वंशज[1] ही क्या कर सकेगा? सप्रेम।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २११२८ ए) से।

११२. पत्र : मीराबहनको

४ मई, १९३३

चि० मीरा,

तो तुम्हें मुझे वह प्रेमपूर्ण तार[2] भेजनेकी अनुमति मिल गई। मैंने तो प्रयत्न भी नहीं किया। मैंने सोचा कि तुम्हारे पास शान्तिदायक सन्देश भेजनेके लिए विशेष अनुमति लेनेकी अपेक्षा, यह अच्छा है कि तुम चुपचाप कष्ट सह लो। बादमें, मुझे आशा है, तुम्हें और कुछ दूसरे लोगोंको रोज सन्देश भेजनेकी अनुमति मिल जायेगी।

इस कार्यकी पवित्र आवश्यकता तुमने समझ ली है। बाकी प्रतिक्रिया शानदार रही। उसके साहससे मुझे बहुत बल मिला है।

तुम्हारा पत्र मेरे सामने है। यद्यपि यह इस कदमकी तुम्हें कुछ भी जानकारी होनेसे पहले लिखा गया था, फिर भी इसमें मुझे एक शोकपूर्ण मनःस्थिति दिखाई देती है। तुम्हें उसपर विजय पानी है। किसी जीते-जागते ईश्वरमें यदि तुम्हारी जीती-जागती श्रद्धा है, तो तुम्हें महसूस होगा कि तुम्हारी रक्षाके लिए वह सदा तुम्हारे पास है। जबतक वह स्थिति नहीं हो जाती तबतक हाड़-माँसवाले किसी व्यक्तिमें श्रद्धा होनेसे भी कोई लाभ नहीं। वह तो किसी अविश्वसनीय व्यक्तिपर भरोसा रखने-जैसा है। तुम्हें पहले इसपर स्पष्ट विचार कर लेना चाहिए और फिर हृदयका बुद्धिसे सहयोग होना चाहिए।

जब मौका आये तो तुम निश्चय ही तन-मन और प्राणसे इस आन्दोलनमें कूद पड़ना। मैं तुम्हें ईसाई कहता हूँ, पर तुम इतनी हिन्दू हो कि हरिजनोंकी पूरी तरह सेवा करनेका अधिकार रखती हो। तुम्हें इस विषयमें कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

काश मेरे पास इतना समय होता कि मैं तुम्हें नी० और मार्गरेट स्पीगलके बारेमें कुछ बता सकता। पर मुझे अपने समय और शक्ति, दोनोंकी बचत करनी है। यह स्वाभाविक है कि आश्रमकी शुद्धि करनी होगी। मैंने अपने सुझाव[3] नारणदासको भेज दिये हैं।

१. अन्सारी लोग शेख होते हैं। इन्होंने पैगम्बरकी मक्कासे उनके भागनेके बाद मदद की थी।

२. देखिए पाद-टिप्पणी १, पृ० ८७।

३. देखिए पृ० ८८-९३ और १७५-६।

बा से कह दो कि मेरे बारेमें कतई चिन्ता न करे। वह, मैं और हम सब ईश्वरके हाथोंमें हैं। हम जीते रहें तो भी अच्छा और मर जायें तो भी अच्छा। हम मरनेके लिए ही पैदा होते हैं और फिर पैदा होनेके लिए ही मरते हैं। यह सब पुराना तर्क है। फिर भी इसे हृदयंगम कर लेनेकी आवश्यकता है। चाहे कोई भी कारण हो, पर हम जन्मकी तरह मृत्युका स्वागत नहीं करते। हमें स्वयं अपनी इन्द्रियोंके इस साक्ष्यपर भरोसा नहीं होता कि आत्माके बिना शरीरसे कोई आसक्ति रखी ही नहीं जा सकती और इस बातका कोई भी प्रमाण नहीं है कि आत्मा शरीरके साथ नष्ट हो जाती है।

अब और अधिक नहीं। मुलाकाती अन्दर आ गये हैं।

आशा है, ज्योतिषकी किताब तुम्हें मिल गई होगी।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७३६ से भी।

११३. पत्र : मनु गांधीको

४ मई, १९३३

चि० मनुड़ी,

अच्छा हुआ कि तूने पाठशाला छोड़ दी। तू तो मौतके मुँहसे बची है, इसलिए तेरी स्मरणशक्ति जाती रही। मुझे तुझे पढ़ानेकी कोई जरूरत नहीं है। तू अच्छी बने, मन पवित्र रहे और शरीर स्वस्थ रहे, इतना ही काफी है।

मेरे उपवासको लेकर कोई चिन्ता न करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५२१) से; सौजन्य: मनुबहन मशरूवाला।

११४. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

[४ मई, १९३३][1]

भाई श्री खम्भाता,

मेरे उपवासका सूत्रधार ईश्वर है, इसलिए कोई उसे लेकर चिन्ता न करे। यदि वहाँ गायका प्रबन्ध हो सके तो अपने सामने थन धुलवाकर साफ बर्तनमें दुहा हुआ दूध पीना बहुत अच्छा होगा। दूध और फलके रसके अतिरिक्त और कुछ न लेना। तुम्हें और तहमीनाको आशीर्वाद।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६०५) से।

११५. पत्र : बलीबहन एम० अडालजाको

४ मई, १९३३

चि० बली,

तुम्हारा पत्र मिला। यह तो सिर्फ इतना जाहिर करनेके लिए लिख रहा हूँ कि मैं तुम्हें भूल नहीं सकता। तनिक भी फुरसत नहीं है। कुमीको बम्बई पत्र लिखा है। तू बहादुर है; बहादुर रहना। तू स्वस्थ हो जायेगी। फिलहाल मनुके विवाहकी बात नहीं हो सकती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०५६) से; सौजन्य : सुरेन्द्र मशरुवाला।

१. डाकको मुहरसे।

११६. एक हरिजनके प्रश्न

१. हरिजनोंमें जो विविध जातियाँ विद्यमान हैं, उन्हें एक करनेके लिए क्या करना चाहिए?

२. बड़े-बड़े शहरोंमें जहाँ सीवरेज लगता जाता है, वहाँ हरिजन भाइयोंकी जीविकापर आघात होता जाता है। ऐसी स्थितिमें वे क्या करें?

३. किसी-किसी कस्बेमें विवाहादिके अवसरपर हरिजनोंको सवर्ण हिन्दू सवारीपर नहीं चढ़ने देते। सवर्ण हिन्दुओंको क्या करना चाहिए, वह तो आपने लिखा है, पर हरिजन ऐसी अवस्थामें क्या करें, सो कृपा कर लिखियेगा।

ऊपरके ये तीन प्रश्न एक हरिजन भाईने भेजे हैं। प्रश्न तीनों ही कठिन हैं।

जबतक सवर्णोंमें सैकड़ों विविध जातियाँ मौजूद हैं, तबतक हरिजनोंमें जो अनेक जातियाँ हैं, उनका मिटना बहुत ही मुश्किल है। हाँ, इतना सही है कि अगर हरिजनोंमें महाजागृति पैदा हो जाये, तो वे एकदम आगे बढ़ जायें। ऐसा समय मैं तो देखना चाहता हूँ और ऐसा समय आनेपर हरिजन वस्तुतः सवर्ण हिन्दुओंसे आगे बढ़ जायेंगे। लेकिन यहाँ तो प्रश्न वर्तमान स्थितिका है।

मौजूदा हालतमें इतना ही कहा जा सकता है कि हरिजनोंमें जो उच्च जातियाँ मानी जाती हैं, उन्हें नीच मानी जानेवाली जातियोंसे मिलनेकी चेष्टा करनी चाहिए। जैसे, महारको चाहिए कि वह माँगसे मिले, उसके साथ रोटी-बेटी व्यवहार रखने लगे। इस तरह माँगके साथ मिलनेवाले महारको निर्भय रहना चाहिए और जो भी मुसीबत आये उसे बर्दाश्त करना चाहिए।

दूसरा प्रश्न सार्वजनिक है। इस 'संधि-युग' में कई धन्धे छूट जायेंगे और कई नये पैदा होंगे। यह तो हमेशा होता रहा है। सीवरेजका सवाल देहातोंमें तो पैदा ही नहीं हो सकता। शहरोंमें ही सीवरेज हो सकता है। शहरोंमें भंगी भाइयोंकी संख्या देखनेमें आती है। मेरा विश्वास है कि जहाँ सीवरेज आता है, वहाँ भंगियोंके लिए कुछ-न-कुछ नौकरी निकल आती है। बेकार भंगियोंको काममें लगानेका म्युनिसिपैलिटीका कर्त्तव्य हो जाता है। मेरी सलाह यह भी है, कि भंगियोंको बुननेका अथवा ऐसा ही कोई दूसरा धन्धा सीख लेना चाहिए। गुजरातमें मैंने देखा है कि भंगियोंने भंगीका काम बन्द होनेपर बुनाईका काम ले लिया है। इस प्रश्नके सम्बन्धमें सबके लिए कोई एक मार्ग नहीं हो सकता। यह तो व्यक्तिपर निर्भर करता है।

तीसरा प्रश्न बहुत कठिन है। प्रश्नके भीतर ही यह मान्यता है कि हरिजन बिलकुल पराधीन और भयभीत हैं। ऐसी स्थितिमें तो यही कहा जा सकता है कि वे पुलिसकी मदद लें। डॉक्टर अम्बेडकरने मुझसे कहा है कि पुलिस भी सवर्ण

हिन्दुओंमे से होनेके कारण सहायता नहीं देती, और सम्भव भी यही है। इसलिए इतना ही कहा जा सकता है कि जहाँ पुलिस विरुद्ध अथवा तटस्थ हो और सवर्णोंमें से भी जहाँ कोई अपना मददगार न निकले, साथ ही हरिजनोंमें काफी शक्ति पैदा न हुई हो, वहाँ तो सब्र रखना ही ठीक है। आश्वासन इतना ही दिया जा सकता है कि प्रत्येक व्यक्ति और समाजके लिए ऐसा समय आ जाता है जब उसके सामने सिवा सब्रके और कोई चारा नहीं रहता। ऐसा न हो तो मनुष्य नास्तिक बन जाये, ईश्वरको भूल जाये। इसलिए जब हरिजनको किसी कष्टसे मुक्ति पानेका उपयुक्त अहिंसक उपाय न सूझे, तब वह हरिकी सहायता माँगे।

हरिजन-सेवक, ५-५-१९३३

११७. तार : नारणदास गांधीको

५ मई, १९३३

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

शर्माका बयान बिलकुल सन्तोषजनक है। उपवासके दौरान उन्हें आश्रममें ठहरनेकी सलाह देता हूँ। आशा है कि प्रेमाका उपवास पूरा हो गया होगा। नी०की हालत लिखो।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

११८. पत्र : ई० ई० डॉयलको

५ मई, १९३३

प्रिय कर्नल डॉयल,

यदि आप आज अनुमति दे सकते हों, तो मैं श्रीमती गांधी, श्रीमती मीराबहन (स्लेड, साबरमती), श्रीमती मणिबहन पटेल (बेलगाँव), श्रीमती वसुमतीबहन पण्डित (थाना), श्रीयुत प्यारेलाल[1] (नासिक) और श्रीयुत सुरेन्द्रजी (वीसापुर)को रोज पत्र लिखना और उनसे रोज पत्र पाना चाहता हूँ। सितम्बरके उपवासके दौरान ऐसा

१. प्यारेलाल नैयर।

ही होता था। मैने अभीतक अपनेको रोक रखा है। लेकिन मैं जानता हूँ कि सोमवार जैसे-जैसे करीब आता जा रहा है, मित्र कितने उत्सुक हो रहे होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल सं० १०, १९३३

११९. पत्र : च० राजगोपालाचारीको[1]

५ मई, १९३३

प्रिय च० रा०,

तुम मुझे अपने प्राणसे भी ज्यादा प्यारे हो। मैंने कल तुम्हें और शंकरलालको बहुत मर्माहत[2] किया। मेरा यह कहना निरर्थक है कि 'मुझे क्षमा करो।' तुम्हारी क्षमा तो मुझे माँगनेसे पहले ही प्राप्त है। लेकिन अब मैं वह काम अवश्य करूँगा जिसका मैंने मूर्खकी तरह विरोध किया। यदि सरकार अनुमति दे दे तो मैं तत्काल या जब आप चाहें किसी भी डॉक्टरसे परीक्षा करवा लूँगा। मेरा खयाल है कि परीक्षाका परिणाम प्रकाशित नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि इसका राजनैतिक उपयोग किये जानेकी आशंका है। मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि डॉक्टरी जाँच हो तो भी उसका उपवासके शुरू होनेपर कोई असर नहीं पड़नेवाला है।

अधिक मिलनेपर। इतना तो मनको विकारके उस बोझसे हल्का करनेके लिए लिखा है जो कल मनमें आ गया था।

तुम्हें व शंकरलालको प्यार।

बापू[3]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-५-१९३३

१. यह "स्पार्क्स फ्रॉम द सेक्रेड फायर–२" (महादेव देसाईसे एक और भेंट) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२. च० राजगोपालाचारीसे बातचीतके लिए देखिए परिशिष्ट–४।

३. **हरिजन** में प्रकाशित रिपोर्टके अनुसार "दूसरे दिन च० राजगोपालाचारी हंसते हुए आये और बोले 'क्षमा-याचनाका तो कोई कारण ही नहीं है, नाराजी आपकी अपेक्षा हम लोगोंके व्यवहारमें ज्यादा थी और अब हम लोगोंने डॉक्टरी परीक्षा न करानेका निर्णय ही ले लिया है'।"

१२०. पत्र : जमनाबहन गांधीको

५ मई, १९३३

चि० जमना,

मेरा पत्र पानेके लिए तुम्हारी उतावली मुझे बहुत अच्छी लगती है। प्रभुकी इच्छा हुई तो उपवासके बाद तुम्हें सन्तुष्ट करूँगा। लगातार डॉक्टरका इलाज करके बीमारी दूर कर लो। मेरे उपवासके कारण उसे निःशेष करनेका दुगुना प्रयत्न करना। मै जिऊँ या मरूँ तुम्हें तो अभी और भी सेवा करनी ही है। पुरुषोत्तमके पत्र मिलते रहते होंगे।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८८०) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१२१. पत्र : नारणदास गांधीको

[५ मई, १९३३][1]

चि० नारणदास,

कल तुम्हें पत्र लिख ही नही पाया। छगनलालसे सम्बन्धित टीकाके बारेमे तुम्हारा कहना समझ गया। जवाब तो मेरी इच्छाके अनुसार ही लिखकर भेजे हैं, फिर भी पत्रके कई वाक्य मनको अखरे। उनमे ताना था और क्रोध था। किन्तु तुम्हें या किसी औरको मै क्या सीख दे सकता हूँ? मुझे क्या अधिकार है? कल राजाजी-जैसे प्रियजनके साथ बात करते हुए मै धैर्य खो बैठा और उनके तथा शंकर लालके सामने क्रोधित हो उठा। अब देखता हूँ कि बात कितनी मामूली थी। मेरी ही मूर्खता थी। उन्होंने जो कहा, जो सुझाव दिये, वे मुझसे स्नेह होनेके कारण। मेरी भलाईके सिवा उनके मनमें कोई दूसरा विचार न था। यदि उनके ऊपर मैं क्रोध करता हूँ और फिर भी छगनलालके विवेकहीन आरोपोंसे तुम्हें क्रोध आनेपर मै तुमसे कुछ कहूँ, तो उसका असर तुमपर किस प्रकार हो सकता है? मुझमें [क्रोध का] यह साँप सोया पड़ा है और छेड़नेसे तुरन्त जाग उठता है, यह कल सिद्ध हो गया है। इसीलिए तुम मेरे कहनेपर भी अपने वचनोंमें क्रोध नही देख पाये हो।[2] मैंने कहा है इसलिए क्रोध होगा, ऐसा तुमने श्रद्धापूर्वक मान लिया है। यह तुम्हारी भक्तिको शोभा देता है। किन्तु इससे मेरी अयोग्यता भी सिद्ध होती है। मै हार

१. **बापुना पत्रो–९ : श्री नारणदास गांधीने,** भाग–२ से। इस पत्रमें च० राजगोपालाचारी व शंकरलालसे ४ मई, १९३३ की गांधीजी की बातचीतके जिक्रसे भी।

२. देखिए पृ० ११२।

नही मानूँगा। साथियोकी भक्तिके योग्य होनेका प्रयत्न करूँगा। आगामी यज्ञ इस प्रयत्नका भाग है। मेरे लिए भी यह यज्ञ बहुत आवश्यक है, यह बात मुझे कदम-कदमपर दिखाई दे रही है। आश्रमकी अपूर्णता मेरी अपूर्णताका ही हू-ब-हू चित्र है, यह मै कभी भूल नही पाया हूँ। आश्रमको आगे न बढा सका तो यह जीवन व्यर्थ ही समझो। आश्रमको छोड़कर या बन्द करके बैठ जाना तो कायरता होगी। आश्रमका विकास करते जानेकी कला साधनी होगी। यह शक्ति मै इस यज्ञ द्वारा प्राप्त करनेकी आशा किए हूँ। यह हो जाये तो दूसरी बातोकी आशा की जा सकती है। यह न हो तो मै कोई आशा नहीं कर सकता। यह यज्ञ इसलिए करना है। इसमें तुम पूरी तरहसे भाग लेना। तुम्हें अभी उपवास नही करना है; उसकी योग्यता प्राप्त करनी है। सो तुम प्राप्त कर रहे हो। जहाँ-जहाँ तुम्हे अपनी अपूर्णता दिखाई दे वहाँ उसपर हमला करके उसे दूर करो। मेरी चिन्ता न करना। यदि वहाँकी खबर मुझे रोज मिलती रहेगी तो उससे मनको बहुत शान्ति मिलेगी। उन दिनो यही मेरा भोजन होगा।

ऐसा लगता है कि डंकन और शर्मा कुछ कहना चाहते है। उनके साथ बात करना।

मार्गरेट स्पीगल शायद सोमवारको आश्रमके लिए रवाना होगी। अच्छी महिला है। किन्तु समझती कम है। हठ बहुत है। उसके पास पर्याप्त खादी नही है। उसे जितनी खादीकी जरूरत हो उतनी देना। पोशाक कैसी पहने यह प्रश्न खड़ा होगा। अभी साड़ी ही पहनती है। उसे जल्दी खादी पहननेका आग्रह न हो तो तुम भी न करना। मुझे तो नी० की पोशाक प्रिय है। मैने ही उसे वह पोशाक सुझाई थी। उसे सिलाई अच्छी आती है। वह मन लगाये तो बहुत-कुछ कर सकती है।

मार्गरेटको वह पोशाक पसन्द नही आई। फिलहाल चाहे तो किसी बहनकी मोटी साड़ी पहनकर देखे। मोटी साड़ीके नीचे पेटीकोट-जैसी किसी चीजकी जरूरत नही है। मोटी साड़ीके नीचे मेरी तरह चड्डी भी पहने तो काफी है। या मीराबहनकी तरह स्कर्ट, चोली और मोटी ओढ़नी काममे लाये। मीराबहनने खादीकी ठीक बचत की है। स्कर्ट सम्पूर्ण पोशाक तो नही ही है। उसके नीचे चड्डी पहननी ही चाहिए। अब तुम मार्गरेटका मार्गदर्शन कर सकोगे।

उसके पास थोड़ा-सा पैसा था, सो मैंने ले लिया है। एक जजीर थी वह भी ले ली है। यह सब मैने 'हरिजन' शास्त्री[1] को सौप दिया है। यदि वह आई तो उसी गाड़ीसे आयेगी जिससे नी० आई थी। रामजी जाये तो जाने देना। रहता हो तो अच्छी तरह रहे। बालोके बारेमे कुसुमसे तनिक भी आग्रह न करना। लाभ तभी होगा जब ठीक समझ कर कटायेगी।

शान्ति अब ठीक होगी।

बापू

१. आर० वी० शास्त्री, **हरिजन** के सम्पादक।

[पुनश्च :]

परशुराम कल आ पहुँचा है। उसके बोलनेमे कोई ढंग नही है। मै उससे बात कर रहा हूँ। कुछ लिखने लायक हुआ तो लिखूंगा।

आज शर्मा आदिके बारेमें तार भेज रहा हूँ। नी० के बारेमे जो अनुभव हो, लिखना।

हिन्दी पढ़ानेके लिए क्या विचार किया है? वहाँ हिन्दी पढ़ानेका प्रबन्ध होना ही चाहिए। नी० को हिन्दी सिखानी चाहिए।

जमनाबहन, डॉ० शर्मा, नी० (२) और शान्तिके पत्र साथ है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१२२. पत्र : हीरालाल शर्माको

५ मई, १९३३

भाई शर्मा,

तुमारा खत मिला है। आज तार दे रहा हू।

मेरी सलाह यह है कि उपवास दरम्यान आश्रममे ही रहो और आलस्य निकालो। उसे निकालनेका औषध उद्यम ही है। आश्रममें उद्यम जितना चाहिये इतना मिल सकता है।

आश्रमकी जो बातें देखनेमें आवे उसे नारणदाससे कहो।

तुमारे उपवासका[1] मैंने सुना था। ठीक ही था। ऐसी बातोंमे मंत्रीकी सम्मति लेनेकी शिस्त है।

नैसर्गिक उपचारपर तो मेरे विश्वास चालीस वर्षका है। मेरा मतलब यह था कि तुम्हारी आश्रममें सफलता होनेसे तुमारे उपचारोंपर मेरा विश्वास जमेगा। आश्रमके लिए पेम्फलेट अवश्य लिखो।

बापूके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ४४

१. डॉ. हीरालाल शर्मा दिल्ली वापस जानेकी योजना बना रहे थे और उपवासपर थे। ऐसी यात्रासे पहले, जिससे आबहवा बदलती हो, वे एक या दो दिनका उपवास रखा करते थे।

१२३. पत्र : पांडुरंग नाथूजी राजभोजको

[५ मई, १९३३][1]

भाई राजभोज,

तुमारा पत्र[2] मिला है। तुम अच्छा कार्य कर रहे हो।

पूना पेकटके बारेमे यदि प्रश्न आगे बढ़ा तो अवश्य मैं दूसरे हरिजन नेताका अभिप्राय लुंगा।

खुले हुए मंदिरोंके बारेमे तुमारी सूचना मुझे अच्छी लगती है इसका उल्लेख मै ह[रिजन] से[वक]में करूँगा।

शारदा एकटकी बात हरिजनोंमें फैलानेमे इस समय कोई सार नही है। थोड़ा और काम कर लेंगे तब यह कार्य कर सकेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरे उपवासमे चिंता न की जाय। कर्तव्यमे ही तन्मय रहो।

बापू

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९४) से।

१२४. सन्देश : आर्य समाज सम्मेलनको[3]

[६ मई, १९३३ या उससे पूर्व][4]

मै हृदयमे कामना करता हूं कि भारतसे अस्पृश्यता मिटानेके तरीके निकालनेमें परमेश्वर आपके सम्मेलनका मार्गदर्शन करे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ८-५-१९३३

१. पत्रके अन्तमें किसीने यह तारीख लिखी है।

२. इस पत्रमें पां० ना० राजभोजने गांधीजीसे पूना-समझौतेके विषयमें अम्बेडकरके प्रस्तावोंपर विचार करनेके लिए हरिजन नेताओंकी एक बैठक बुलानेकी प्रार्थना की थी, और यह सुझाव दिया था कि हरिजनोंके लिए जो मन्दिर खोले जायें वहाँ सवर्ण हिन्दुओं और हरिजनोंकी संयुक्त सभाएँ हों तथा भजन आदिके कार्यक्रम हों।

३. दिल्लीमें डॉ० बी० एस० मुंजेकी अध्यक्षतामें हुआ। सम्मेलनने अन्य प्रस्तावोंके साथ गांधीजीके प्रस्तावित उपवासपर चिन्ता व्यक्त करते हुए प्रस्ताव पास किया और हर व्यक्तिसे अस्पृश्यता उन्मूलन करनेकी अपील की।

४. यह "नई दिल्ली, ६ मई, १९३३" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

१२५. मनुष्य-रचित – २

श्री ए० ई० पोर्टर, आई० सी० एम० द्वारा प्रस्तुत बंगाल एवं सिक्किम जनगणना रिपोर्टमे 'दलित वर्गो' पर जो सशक्त प्रबन्ध है, जिससे गत सप्ताह मैंने दो अनुच्छेद उद्धृत किये थे[1], मुझे खेद है कि मै उसका जैसा पूर्ण विश्लेषण करना चाहता था वैसा नही कर सकूँगा। अनुच्छेद ४ मे लेखक उन मापदण्डोंके दोष बताता है जो विभिन्न अवसरोपर विभिन्न जनगणना आयुक्तों और अन्य लोगो द्वारा सुझाये गये हैं। श्री पोर्टर कहते है :

> **स्वभावतः वे मात्र धार्मिक या सामाजिक निर्योग्यताएँ रह जाती है, और एक भी बार कोई ऐसा मापदण्ड नहीं रखा गया है जो पहली दृष्टिमें ही प्रशासनका ध्यान आर्काषित कर सके।**

क्योंकि वे "पूर्णतया सामाजिक और धार्मिक विवेचनके विषय हैं", इसलिए "वे दलित वर्गोकी समस्यापर सरकारके विचार-विमर्शके लिए बिलकुल अप्रासंगिक होंगे।" इसके बाद वे कुछ मापदण्डोंपर विचार करते है। मन्दिर-प्रवेशका [उनमे] पहले नम्बर आता है। पूरा अनुच्छेद दिलचस्प है। वह इस महत्वपूर्ण निष्कर्षके साथ समाप्त होता है :

> **मन्दिरोंमें पूजा या प्रवेशके अधिकारके बारेमें जो निर्योग्यताएँ है वे अधिकतर प्रथानुसारी है या परिवर्तन से अप्रभावित रहनेवाली नहीं हैं और हर हालतमे, जबतक वे समाजके केवल सामाजिक और धार्मिक जीवनतक ही सीमित हैं, तबतक समुचित रूपसे उनसे यह दावा नहीं बनता कि राज्य संस्थामें उनपर विशेष रूपसे विचार होना चाहिए।**

ब्राह्मणो और नाइयोंकी सेवाके बारेमे जो अनुच्छेद है, वह मुझे छोड़ना होगा। उसमे भी लेखक यह दिखाता है कि चलन अनिश्चित है, किसी भी अर्थमें सर्वव्यापी नही है और बराबर बदलता रहता है।

उसके बाद स्पर्शसे अशौचके विचारके बारेमे अनुच्छेद है। लेखकका कहना है :

> **अस्वच्छता और अशौचके विचारके बारेमे भी इसी तरहका प्रथानुसरण और लचकीलापन है।**

उच्च वर्णके लोग एक ही समूहके बारेमें विभिन्न स्थानोंपर विभिन्न प्रकारका अशौच मानते हैं। यही बात खान-पानके प्रतिबन्धोंपर भी लागू होती है।

१. देखिए पृ० ६५-८।

यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि श्री पोर्टरने इस प्रश्नपर केवल इस दृष्टिसे विचार किया है कि 'दलित वर्गों' में किनको शामिल करना है, इस कठिन प्रश्नकी छानबीन की जाये। इसीलिए वे कहते हैं:

अतः सामाजिक प्रश्नके रूपमें दलित वर्गोंकी समस्या मुख्यतया ऐसी समस्या है जिसे हिन्दू-समाजको खुद सुलझाना है। सरकारी हस्तक्षेपकी अपेक्षा रखनेवाली एक प्रशासकीय समस्याके रूपमें, सामाजिक और धार्मिक निर्योग्यताएँ [दलित वर्गोंमें] शामिल किये जानेवाले वर्गोंके लिए सन्तोषजनक कसौटी नहीं है। उधर, प्रशासन द्वारा संचालित सुविधाओंमें दलित वर्गोंके भाग लेनेपर प्रतिबन्ध इतना कम है कि वह नगण्य है। वस्तुतः, प्रशासनके लिए बंगालके दलित वर्गोंकी समस्या एक तरहसे है ही नहीं, जो है वह इतनी ही है कि उनकी आर्थिक स्थिति और शिक्षाके स्तरको सुधारनेके लिए विशेष उपाय आवश्यक हैं। इसे जो प्रसिद्धि मिल रही है उसका कारण अधिकतर यह है कि पिछले कुछ सालोंमें इन वर्गोंके सदस्योंके लिए धारासभाओंमें पृथक् प्रतिनिधित्वके सवाल उठाये गये हैं। इसलिए, कम-से-कम बंगालमें, किसी सामाजिक प्रथा या किसी नागरिक निर्योग्यताको दलित वर्गोंकी पहचानके लिए एक स्पष्ट कसौटीकी तरह प्रयुक्त करनेकी कोशिश विफल हुए बिना नहीं रह सकती। अतः इसके लिए कोई अन्य पहचान ढूँढ़नी चाहिए। अस्पृश्योंको रखना आवश्यक है, क्योंकि जनगणना आयुक्तने दलित वर्गोंकी व्याख्या करते हुए कहा है कि ये वे जातियाँ हैं "जिनका स्पर्श होनेपर उच्च वर्णोंके हिन्दू शुद्ध होना आवश्यक मानते हैं।"

उन्होंने आगे कहा है:

आशय यह नहीं है कि इस नामका सम्बन्ध धन्धेसे होना चाहिए, बल्कि उन जातियोंसे होना चाहिए जिन्हें हिन्दू-समाजमें उनकी परम्परागत स्थितिके कारण, उदाहरणार्थ, मन्दिरोंमें प्रवेश नहीं करने दिया जाता है, या अलग कुँओंका प्रयोग करना होता है, या स्कूलोंके अन्दर बैठने नहीं दिया जाता है बल्कि उनके बाहर रहना होता है, या इसी तरहकी सामाजिक निर्योग्यताएँ भोगनी होती हैं।

प्रत्येक प्रान्तके लिए दलित वर्गोंकी एक सूची तैयार करनेके प्रश्नपर जनवरी १९३१ में जनगणना कार्योंके सुपरिटेंडेंटोंकी एक सभामें विचार-विमर्श हुआ। इस विचार-विमर्शके फलस्वरूप जनगणना आयुक्तने घोषणा की:

"मेरा यह सुझाव है कि 'दलित वर्ग' नामको अभी भारतकी जनगणनाके प्रयोजनार्थ अस्पृश्योंका निर्देश करनेके लिए कायम रखा जाये, अस्पृश्यताकी मात्रा चाहे हल्की हो या तीव्र।"

यह भी निश्चय किया गया कि मुसलमानों और ईसाइयोंको उनमें शामिल न किया जाये, और आम तौरपर उन पहाड़ी और जंगली जन-जातियोंको भी

जो हिन्दू नहीं बनी हैं बल्कि जिनका धर्म 'जनजातीय' लिखा गया है, उनमें शामिल न किया जाये।

वे फिर आगे यह बताते हैं कि 'दलित वर्ग' इस अभिव्यक्तिमें न केवल हरिजन, जो उनके द्वारा परीक्षित विभिन्न सामाजिक और धार्मिक कसौटियोंपर ठीक उतरते है, शामिल किये जाने चाहिए, बल्कि वे सब लोग भी शामिल किये जाने चाहिए जिनके बारेमें,

प्रान्तीय गवर्नरके नाम सम्राटके आदेशपत्रके अर्थोमें, अभी भी यह कहना सच होगा कि शैक्षणिक और भौतिक सुविधाओंके अभावके कारण, वे विशेष रूपसे सरकारकी सुरक्षापर निर्भर है और अपने कल्याणके लिए अभी संयुक्त राजनीतिक कार्रवाईपर पूरी तरह निर्भर नहीं रह सकते।

अनुच्छेद १७ में १९२१ और १९३१ की दलित वर्गोंकी सूचियोंकी जो तुलना है, वह बहुत ही ज्ञानवर्धक है। केवल बगालके ब्रिटिश जिलोंमें १८,०१,७१२ व्यक्तियोंको, जो १९२१ की सूचीमें शामिल किये गये थे, १९३१ की सूचीसे निकाल दिया गया है और ये लोग आठ जातियोंके है जिनमे सबसे ज्यादा राजवंशी है। इसी तरह कुछ समूह ऐसे हैं जिन्हें पहली बार १९३१ की सूचीमें शामिल किया गया है। 'दलित वर्गो' के अकेले 'क' समूहमें ही, जिससे फिलहाल हमे मतलब है, १९३१ की जनगणना रिपोर्टमें ४८ जातियाँ है, जबकि १९२१ की रिपोर्टमें केवल १९ ही थीं। तुलना अन्य रिपोर्टोंकी भी की गई है, पर मैने अपनेको केवल जनगणना-रिपोर्टोतक ही सीमित रखा है। अध्यवसायी विद्यार्थीके लिए दलित वर्गोसे सम्बन्धित इस पूरी रिपोर्टका सावधानीसे अध्ययन आवश्यक है। अपने परिश्रमसे उसे पर्याप्त लाभ होगा।

परन्तु जितना-कुछ मैने यहाँ दिया है वह, मुझे आशा है, यह दिखानेके लिए काफी है कि अस्पृश्य मनुष्य-रचित है। यही नहीं, वे उन जनगणना-निर्देशको द्वारा रचित हैं जिन्हें धार्मिक अस्पृश्यतासे कुछ लेना-देना नहीं है, और उन आदेशोंके अनुसार रचित हैं जो उन्हें उनके उच्चाधिकारियोंसे मिलते रहे है और समय-समय पर बदलते रहे हैं। इस तरह कलकी जनगणनाका अस्पृश्य आज अस्पृश्य नहीं रहता और जो कल अस्पृश्य नहीं था वह जनगणनाकी इन कार्रवाइयों द्वारा आज अपने-आपको अस्पृश्य पाता है। इस सूचनाको मै ईमानदार सनातनियोंके सम्मुख रखता हूँ और उनसे यह पूछता हूँ कि क्या वे इस तरहकी स्थितिसे सन्तुष्ट हैं, या वे अस्पृश्यताकी विभिन्न परिभाषाओं या इस तथ्यसे सन्तुष्ट है कि, एक विशेष परिभाषाके अनुसार, एक ही व्यक्तिके बारेमे अस्पृश्यता स्थान-स्थानपर बदलती है। क्या यह सब शास्त्रों द्वारा आदिष्ट हो सकता है? इस सांकेतिक और कठिन प्रश्नको बढ़ाते जाना सम्भव है, पर मै यहीं रुकता हूँ।

एक चीज जिसपर प्रत्येक विचारशील पाठकका ध्यान जाना चाहिए, यह है कि राज्य या कानूनको अस्पृश्यतासे कोई वास्ता नही रखना चाहिए और, इसलिए, अस्पृश्यता-निवारण विधेयक सबसे पहले आवश्यक है। जो प्रथा मानवजातिके नैतिक बोधके प्रतिकूल है, जिसका व्यक्तियोंपर प्रभाव और प्रयोग समय-समयपर और

स्थान-स्थानपर बदल जाता है, उसे एक धर्मनिरपेक्ष राज्यके, ऐसे राज्यके कानूनकी स्वीकृति नही मिल सकती और न मिलनी चाहिए जो एक ओर उन लोगोंका प्रतिनिधित्व करता है जो चाहे कितने भी अस्थिर मनसे करते हो पर अस्पृश्यतामें विश्वास करते हैं, और दूसरी ओर उन लोगोंका प्रतिनिधित्व करता है जो उसे अधर्म मानते है। इस तरहकी प्रथाको राज्यकी मान्यता रोकनेसे किसी भी व्यक्तिके व्यक्तिगत विश्वास या उसके सामाजिक चलनमे किसी भी तरहका हस्तक्षेप नहीं होता। किसी व्यक्तिके लिए अपने बन्धु-मानवको धार्मिक और सामाजिक समारोहोंमें अस्पृश्य माननेकी तब भी स्वतन्त्रता रहेगी और कानून उसमें कोई हस्तक्षेप नही करेगा। इससे कट्टर रूढ़िवादी लोगोंको भी सन्तोष हो जाना चाहिए, और सुधारक यदि इससे अधिककी मांग करेगा तो वह न्यायकी सीमाओंका उल्लंघन होगा।

एक और बात जो श्री पोर्टरके प्रबन्धसे स्पष्ट हो जाती है, यह है कि 'दलित वर्ग' – इस नामके अन्तर्गत लानेके लिए जो निर्योग्यताएँ हैं, अस्पृश्यताको उनमें शामिल नही करना चाहिए। वे नागरिक, राजनैतिक, आर्थिक और धर्मनिरपेक्ष प्रकारकी निर्योग्यताएँ होनी चाहिए, जिनपर राज्य ध्यान दे सकता है और उसे देना चाहिए, और जिनका कोई इलाज ढूँढ़ना राज्यके लिए केवल सम्भव ही नहीं बल्कि उसका कर्त्तव्य भी है। उससे 'दलित वर्गों' की सूची अस्पृश्यतासे मुक्त हो जायेगी और अस्पृश्योंके अलावा अन्य लोगोंके साथ अस्पृश्यताके जो बरताव हैं, राज्य उनसे निपट भी सकेगा।

यदि जनगणनाकी कार्रवाइयोंमें अस्पृश्यताकी उपेक्षा की जाये, जैसीकि की जानी चाहिए, तो सनातनियोंके विरोधका सारा जोर निकल जायेगा। उनके लिए और मानवजातिके लिए यह खुशीकी बात है कि प्रकृतिने ऐसा कोई अमिट चिह्न नहीं रखा है जिससे अस्पृश्य अपने बाकी बन्धुओंसे अलग पहचाने जा सकें। विभिन्न जनगणना-रिपोर्टों और देशके आम कानूनके अध्ययनसे जहाँतक मैं समझ सकता हूँ, इस लक्ष्यकी प्राप्तिमें, जो लेखकने इस विचाराधीन प्रबन्धमें इतनी योग्यतासे रखा है, कोई कानूनी कठिनाई नहीं है। यह बात भी याद रखनी चाहिए कि यरवदा-समझौतेमें दलित वर्गोंकी परिभाषा निश्चित करनेकी बात सोची गई थी, पर वह अभी निश्चित नहीं हो पाई है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-५-१९३३

१२६. प्रभुकी इच्छा पूर्ण हो

खबर है कि जनरल स्मट्सने निजी तौरपर मुझसे अनशन न करनेके लिए बड़ी मर्मस्पर्शी अपील की है। कुँवर महाराजसिंहने उस अपीलका समर्थन किया है। मुझे अभीतक तार[१] नहीं मिला है। लेकिन इस खबरकी सचाईमें कोई सन्देह दिखाई नही देता।

डॉक्टर अन्सारीने मुझे प्रेमके ऐसे मजबूत धागेसे बाँध रखा है जो कड़े-से-कड़े झटकेसे भी टूटनेका नहीं।[२] जब ऐसा लगता था कि जिस 'श्यामी युग्म'[३] के जरिये मैं महान और नेक हकीम साहब अजमल खाँ और फिर डॉ० अन्सारीसे मिला था, उसने मुझे छोड दिया है, तब भी डॉ० साहबका यह विश्वास कभी नही विचलित हुआ कि मेरे मनमे भारतके मुसलमानोंके प्रति ऐसा प्रेम है मानो वे मेरे सगे भाई हों। बात सचमुच ही ऐसी है क्योंकि हम एक ही 'मादरे हिन्दकी औलाद' है। मेरे पुराने दोस्त, सहयोगी और चिकित्सकके नाते वे हृदयद्रावक शब्दोंमे मुझसे उपवासके विषयमे पुन:विचार करनेपर जोर दे रहे है।

उधर मेरे अन्तरकी बात जाननेवाले चक्रवर्ती राजगोपालाचारीने एक लम्बा तार भेजकर मेरे अनशनके आधारपर ही आघात किया है।

मेरे सबसे छोटे पुत्र और योग्य सहयोगी देवदासकी अविरल अश्रुधारासे भरा, व्यक्तिगत अनुरोध भी इन्हींमे जोड़ लें।

जब इस तरहकी ये अपीले भी मुझे मेरे निश्चयसे न डिगा सकी, तब पाठकोंको यह आसानीसे समझ लेना चाहिए कि अवश्य कोई ऐसी शक्ति मौजूद है जिसने मेरे ऊपर बेतरह कब्जा जमा रखा है और जो मुझे इन अपीलों और अनुरोधोंपर कान देनेसे रोक रही है।

इन अपीलोंका यह मतलब तो है ही कि मेरे मित्र मेरे इस दावेपर विश्वास नहीं करते कि मेरा यह अनशन 'ईश्वर-प्रेरित' है।[४] मेरा यह आशय नहीं है कि वे मेरे शब्दोंपर विश्वास नही करते। वे यह मानते हैं कि मै इस समय भ्रममे हूँ, शायद मेरी कल्पना जेलकी चारदीवारीके अन्दर बन्द रहते-रहते गरम होकर भड़क उठी है और उस उत्तेजित कल्पनाके कारण ही मैं अपने अनशनको ईश्वर-प्रेरित मान बैठा हूँ। मैं यह दावा नहीं करता कि मेरे विषयमें ऐसी बात नहीं हो सकती। पर जबतक मेरी भ्रान्ति भ्रान्तिके रूपमें मेरे सामने स्पष्ट न हो जाये, तबतक मुझपर

१. दक्षिण आफ्रिका में भारत के एजेंट जनरल कुँवर महाराजसिंहके तारके लिए देखिए पृ० १२४।

२. देखिए पृ० १०७-८।

३. शौकत अली और मुहम्मद अली।

४. देखिए पृ० ७४-६ भी।

उसका कोई असर नही होनेका। जेलमें रहनेका तो मै आदी हो गया हूँ। जेलकी चार-दीवारीने कभी मेरी विवेचना-शक्तिपर कोई प्रभाव नहीं डाला और न उसके कारण किसी बातको लेकर उधेड़-बुन करनेकी लत ही मुझे लग सकी है। अपने विभिन्न कारावासोंकी अवधिमे मै बहुत अधिक कार्यव्यस्त रहा हूँ और कोरी उधेड़-बुनकी मुझे फुरसत ही नहीं रही। निस्सन्देह, हरिजनोंपर होनेवाले जुल्मोके बारेमे मैंने बहुत सोचा है, पर उस निरन्तर चिन्तनके परिणामस्वरूप मैंने कोई-न-कोई निश्चित कार्य ही किया है। जिस रातको उक्त महत्त्वपूर्ण निर्णय लिया गया उसके एक दिन पहले मै जो कदम उठानेके सम्बन्धमे विचार कर रहा था, निश्चय ही वह कदम अनशन तो कदापि नहीं था।

मेरा ईश्वरकी आवाज सुन सकनेका दावा कोई नया दावा नही है। पर दुर्भाग्यसे प्राप्त परिणामोंको छोड़कर और किसी तरह उसकी सचाई साबित करनेका कोई मार्ग मेरे सामने नही है। यदि ईश्वर अपने रचे हुए प्राणियोंको यह शक्ति दे दे कि वे उसके अस्तित्वको सिद्ध-असिद्ध करनेका विषय बना ले, तो ईश्वर, ईश्वर ही न रहे। किन्तु वह उसकी शरणमें अपने-आपको सर्वतोभावेन अर्पित कर देनेवाले, आत्म-निवेदक दासको अवश्य यह शक्ति दे देता है कि वह कठिन-से-कठिन अग्निपरीक्षासे उत्तीर्ण हो जाये। मै प्राय: पचास वर्षसे भी अधिक समयसे इस सबसे बड़े न्यायप्रिय स्वामीका सर्वतोभावेन दास रहा हूँ। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, उसका अन्तर्नाद मेरे लिए अधिकाधिक स्पष्ट होता गया। मेरे जीवनकी अँधेरी-से-अँधेरी घड़ियोंमे भी उसने मेरा हाथ नहीं छोड़ा। कितनी ही बार तो उसने मेरे ही संकल्पोंके विरुद्ध मेरी रक्षा की और स्वतन्त्रताका लेश भी मुझमें शेष नही छोड़ा। मैं जितना ही अधिक अपनेको उसकी शरणमें अर्पित करता गया, मैंने उतना ही अधिक आनन्द पाया।

इसलिए मुझे पूरा भरोसा है कि मेरे अतिशय कृपालु मित्र मेरे अनशनके औचित्यको मान लेंगे। मै उसके बाद जीवित रहूँ या मर जाऊँ, हर हालतमे वे मेरे अनशनको उचित ही मानें। प्रभुकी मरजी जानी नही जा सकती, उसकी लीला अपरम्पार है। और कौन जाने अनशन-कालमें उसे मेरी मृत्यु इष्ट हो, ताकि उससे मेरे जीवनकी अपेक्षा अधिक शुभ परिणाम प्राप्त हो सके? निश्चय ही हमारा यह विचार कि क्षणभंगुर शरीरसे व्यक्तिकी आत्माके अलग होते ही उसकी सेवा करनेकी शक्ति नष्ट हो जाती है, एक अपकर्षकारी विचार है। रामकृष्ण और दयानन्द, विवेका-नन्द और रामतीर्थकी आत्माएँ हम लोगोंके बीचमें क्या आज भी अपना-अपना काम नहीं कर रही है? हो तो यह भी सकता है कि वे आत्माएँ जब पार्थिव शरीरमे आबद्ध थी, तबसे वे आज कहीं अधिक शक्तिशालिनी हों। यह कहना गलत है कि बहुधा मनुष्यके सत्कर्म उसकी मृत्युके साथ ही विलीन हो जाते है। हम उसकी बुराइयोंको उसके नश्वर शरीरके साथ जला देते हैं। पर उसके सत्कर्मोंकी यादको हम सुरक्षित रखते हैं। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता है, उस स्मृतिका मूल्य बढ़ता जाता है।

और फिर किसी खास व्यक्तिकी सेवाओंको, चाहे वह कितना ही नेक और योग्य क्यों न हो, इतना अधिक महत्त्व क्यों दिया जाये? हरिजनोंका कार्य हरिका

कार्य है। जब भगवानको जरूरत होगी, तब वह अपनी इच्छा पूरी करनेके लिए अनेक उपयुक्त लोग उत्पन्न कर देगा।

इसलिए जनरल स्मट्स और अपने दूसरे मित्रोंसे मैं इस बातपर विश्वास कर लेनेके लिए अनुरोध करता हूँ कि मैं यह काम किसी भ्रममें पड़कर नहीं कर रहा हूँ। उनसे मेरी विनय है कि वे परमात्मासे प्रार्थना करें कि वह मुझे अग्निपरीक्षासे सकुशल पार हो जानेकी शक्ति प्रदान करे। मुझे विश्वास है कि, चाहे जिस सेवाके लिए हो, यदि अभी इस पृथ्वीपर थोड़े दिनोंतक मेरे जीवित रहनेकी आवश्यकता है, तो डॉक्टरोंके डरको असत्य ठहराकर भगवान मुझे बचा लेगा।

उपर्युक्त लेखका टंकन ही हो रहा था कि सर कुँवर महाराजसिंहका तार मिला। समाचारपत्रोंके पाठमें कुछ शब्द छोड़ दिये गये हैं। तार इस प्रकार है:

> निम्नलिखित तार जनरल स्मट्सने निजी तौरपर मुझे भेजा है ताकि मैं इसे आपतक पहुँचा दूँ:
>
> "मैं आपसे हार्दिक अपील करना चाहता हूँ कि आप अपना घोषित उपवास शुरू न करें। अस्पृश्यता-निवारण-सम्बन्धी आपके कार्यको अधिक-से-अधिक जितनी आशा की जा सकती थी, उससे भी अधिक सफलता मिली है। हमारे युगके इस सबसे बड़े सुधारको आप धैर्यपूर्वक पूर्णतः सम्पन्न करनेकी दिशामें अब भी कार्य जारी रख सकते हैं। इसके अलावा भारतमें एक नये युगका आरम्भ हो रहा है, जिसमें आपके विवेकयुक्त निर्देशनकी आवश्यकता पहलेसे कहीं ज्यादा है। आपके अपने जीवनको जोखिममें डालनेसे भयानक विपत्तिका सामना करना पड़ सकता है। इस बहुत ही नाजुक समयमें वह एक कभी पूरी न हो सकनेवाली क्षति होगी। मैं पुरानी मैत्रीके नाते और उन महान उद्देश्योंके लिए जिनको आपने इतनी सफलतापूर्वक आगे बढ़ाया है, आपसे यह अपील करता हूँ।"
>
> इस तारको आपके पास भेजते हुए मैं अपनी ओरसे जनरल स्मट्स द्वारा व्यक्त किये गये विचारोंका अनुमोदन करना चाहता हूँ। मुझे विश्वास है कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजकी भी यही भावना है।

महाराजसिंह
एजेंट, भारत सरकार

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-५-१९३३

१२७. आत्मस्वीकृति और चेतावनी

अखबारोंमे मैंने यह बात पढ़ी अवश्य थी कि हिन्दुस्तानमे यह महिला[1] आई और उसने हिन्दू-धर्म स्वीकार कर लिया। मुझे यह भी मालूम था कि वह साबरमती आश्रममें जानेको बड़ी अधीर है। पर सितम्बर मासके मेरे अनशन-व्रतसे पहले उसने मुझसे पत्र-व्यवहार नही किया था। गत दूसरी जनवरीको, जब दूसरे उपवासकी सम्भावना प्रकट की गई, तब उसने एक लम्बा पत्र मुझे लिखा कि मेरे साथ वह भी उपवास करना चाहती है। मैंने उसे इस मार्गसे हट जानेके लिए एक बहुत जोरदार पत्र लिखा, और यह भी कहा कि अगर इसपर भी उसे विश्वास न हो तो मुझसे आकर मिल ले। इसके बाद एक पत्रमें मैंने उसे यह भी लिखा कि हो सके तो अपने गत जीवनका कुछ हाल मुझे लिख भेजे। उत्तरमें उसने एक लम्बा पत्र भेजा। इस बीच कुछ युवकोंकी सहायतासे उस बहनने बंगलोरमे हरिजन-सेवा-कार्य आरम्भ कर दिया। इस बारेमें भी उसने मुझे लिखा। इससे मेरी दिलचस्पी बढ़ी और उसके कामकी प्रशंसा करते हुए मैंने पुनः उसे पत्र लिखा। इस भाँति हमारा पत्र-व्यवहार बढ़ता गया।

एकाएक, हाल ही मे मैसूरसे लौटे मित्रने मुझे चेतावनी दी कि नी० तो आपके पत्रोंका दुरुपयोग कर रही है। उन्होंने यह भी कहा कि वह एक मनचली युवती है। उसका चरित्र भी संदिग्ध है। उसे एक फौरी पत्र लिखकर मैंने इस बातका इशारा कर दिया और लिखा कि एकदम पूना चली आओ। मेरे पत्रके उत्तरमें वह फौरन ही पूना आ गई। मुझे लगा था कि यदि यह आरोप सत्य हो, तो उसके सम्पर्कसे हरिजन-सेवाको हानि पहुँचनेकी सम्भावना है। आनेपर उसका आचरण मुझे विचित्र तो मालूम हुआ। किन्तु जब मैंने उसके चरित्रके बारेमें जो कुछ सुना था वह उसे बताया तो उसने उन सारे दोषारोपणोंसे इनकार कर दिया। मैंने समझा कि बात खत्म हो गई और मैं उससे कार्य-सम्बन्धी अन्य बातें पूछने लगा। ज्यों-ज्यों बातचीत आगे बढ़ी, मेरा सन्देह भी बढ़ता गया, और मैंने उससे यह बात साफ-साफ कही। अब तो एकके बाद एक अत्यन्त दुःखदायक बातें सामने आई। उसका जीवन कामुक, असत्यपूर्ण तथा खर्चीला था। ऐसा लगता था कि कामुकताके प्रति उसे अरुचि नहीं थी। वह एक बोहेमियन परिवारमे पली-बढ़ी थी, जहाँ ईसामसीहका नामतक निषिद्ध था। (नी० अभी केवल २४ वर्षकी हैं; उसका विवाह सत्रह वर्षकी आयुमें ग्रीसमें हुआ था और उसके साथ उसका एक बेटा है।) उसके जीवनमें जो आश्चर्यजनक विरोधी प्रवृत्तियाँ है उन्हें अब वह महसूस करती

१. गांधीजी की इस टिप्पणीसे पहले समाचारपत्रोंमें प्रकाशनार्थ नी० का एक पत्र आया था।

दिखाई देती है। मैंने उसे बताया कि वह उस धर्मको, जिसे उसने अपना लिया है, जबर्दस्त क्षति पहुँचा रही है और इससे हरिजन-कार्यको हानि पहुँच रही है तथा वह अपने इर्द-गिर्द एकत्रित युवकोंका चरित्र भी दूषित कर रही है। मै समझता हूँ कि मेरे कथनमें कितना बल है, इसे वह समझ गई। उसने तत्काल अपने पूर्व जीवनसे एकदम सम्बन्ध त्याग देने और लेनदार दावा कर दे तो उसकी भी जोखिम उठानेका निश्चय कर लिया। उसने यह भी तय कर लिया कि हरिजनोंकी सेवाके लिए वह उनके बीचमें ही जाकर रहेगी और इसी कार्यके लिए अपने बच्चेका लालन-पालन करेगी। वह बंगलोर वापस चली गई। अपने दोषोंको स्वीकार करते हुए उसने एक छोटा-सा पत्र अखबारोंको भेजा, पर वे छापनेको तैयार न हुए। वह बंगलोरकी हरिजन-बस्तीमें चली गई, पर वहाँ एक लम्पट पुरुषके संसर्गमे आनेके कारण उसका पुनः पतन हुआ। तब भयभीत होकर चितलदुर्गके पास वह एक हरिजन-ग्राममे गई। जो व्यक्ति उसे वहाँ ले गया था, वह अब उसके प्रति बेपरवाह हो गया था। इससे उसे बड़ा आघात पहुँचा। इस बीच वह मेरे साथ नियमित रूपसे पत्र-व्यवहार कर रही थी। वह समझ गई थी कि समुचित पथ-प्रदर्शनके बिना हरिजनोंकी सेवा करना ओर अपना चरित्र ठीक रखना असम्भव है। मुझे लगा कि अपनी दी हुई सलाहको हर तरहसे पूरी करना मेरा स्पष्ट धर्म है। अगर दीन-से-दीन और दलित-से-दलित लोगोमे सेवा करते हुए उसे जीवन बिताना है, तो उसे आश्रममें ही रहना चाहिए, जहाँ बहुत दिन पहले आनेका वह स्वप्न देखती थी। किसी मित्र या अन्य संस्थासे मै यह नहीं कह सकता था कि वह एक ऐसी विदेशी विकारग्रस्त युवतीको अपने यहाँ रखनेकी जोखिम उठाये जिसके पूर्व-जीवनकी मलिनता अब भी कुछ अंशोंमे मौजूद हो। अतः आश्रमके व्यवस्थापककी अनुमतिसे, हिचकिचाहटके साथ, मैंने उसे आश्रम भेज दिया है। जनताके सामने मैं उसका पत्र रख रहा हूँ। ऐसा नही है कि मुझे इसमे कुछ संकोच न हुआ हो। उसका भयानक भूतकाल पूरी तरह मर गया है, यह विश्वास करना कठिन है। पर मानव-जीवनमे अकस्मात् परिवर्तन हुए हैं। हम आशा करते हैं कि नी० का जीवन भी ऐसा ही साबित होगा। जो बात पामर मनुष्यके लिए अशक्य है, वही परमात्माके लिए शक्य है।

यह कहना तो व्यर्थ ही है कि आश्रममें यह बहन सविनय-अवज्ञा आन्दोलनमें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे तनिक भी भाग न लेनेकी इच्छासे जा रही है।

जो युवक नी०के मोहपाशमें फँस चुके हैं, उनसे भी दो शब्द कहे देता हूँ। अपने पूर्व जीवनका नग्न चित्र वह मेरे आगे रख चुकी है। सारी दुनियामें युवक-युवती भावुक होते है। अतः अध्ययन-कालमे अर्थात्, २५ वर्षतक ज्ञान और निश्चयपूर्वक ब्रह्मचर्यका पालन अत्यन्त आवश्यक है। देशके युवक जान ले कि तमाम सेवाकार्योंमें हरिजन-सेवाकार्य अत्यन्त कठिन है। सवर्ण हिन्दुओंकी घोर निद्रासे उनका कितना नैतिक पतन हुआ है, इस सम्बन्धमें मुझे जो-कुछ पता चला है उसका दसवाँ हिस्सा भी मैं प्रकाशित नहीं करता। अतः हरिजन-सेवाके लिए सेवकोंमें अत्यधिक पवित्रता और सादगीकी जरूरत है। जो युवक और युवतियाँ

हरिजन-सेवाका कार्य कर रही है, उन्हें नी० के उदाहरणसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-५-१९३३

१२८. हृदय-जागृतिके लिए

यह लेख मैं शनिवारको[1] प्रात:काल लिख रहा हूँ। बहुत मित्रोंकी बाते सुनी। उनका मोह किंवा प्रेम मुझे आगामी महायज्ञसे रोकना चाहता है। अन्तरात्मा कहती है—"रुकना पाप है। सत्यनारायणके नामसे संकल्प किया है, वही अपनी इच्छाके अनुकूल सब पूर्ण करेगा।"

बाह्य दृष्टिसे जितना म देखता हूँ, वह मुझे बताता है कि चाहे जो हो, उपवास तो मुझे करना ही चाहिए। पंडित सतानमने मुझे पंजाबके कार्यका एक विवरण दिया है। उसमे लाला मोहनलालजीने तीन प्रश्न पूछे है। संक्षेपमे वे प्रश्न ये है:

१. पंजाबमे आर्यसमाज, सनातनधर्म, सिख, मुसलमान और ईसाई, सभी हरिजनोंको अपनी ओर खीचना चाहते हैं।

२. हरिजनोमे ऐसे नेता पैदा हो गये हैं, जिनका लोभ इतना बढ़ता जाता है कि उन्हें सन्तुष्ट करना असम्भव है।

३. इसी हेतुसे कार्य करनेवाले प्रतिस्पर्धी संघ पंजाबमें है।

पाठकोंको पढ़कर आश्चर्य होगा कि इन प्रश्नोंका उत्तर मेरा उपवास है। अर्थात् हरिजन-सेवा-संघके सेवकको समझना चाहिए कि यह कार्य केवल धार्मिक है और धार्मिक दृष्टिसे होना चाहिए। इतना स्पष्ट हो जानेसे ये तीनो प्रश्न आप ही हल हो जाते है। अन्य धर्म और सम्प्रदायोके लोग जो कार्य कर रहे हैं, उसे मैं धार्मिक नहीं मानता। हरिजन-सेवक अगर धार्मिक मनोवृत्तिसे कार्य करेंगे तो उन्हें यह आत्मविश्वास होगा कि उनकी सेवा ही सेवाका फल है। सेवक अपनेको न्याय पर ही तोल सकते है। इसलिए हरिजन-नेता या कोई भी अनुचित दबाव डालेंगे, तो वे उससे प्रभावित नही होंगे। प्रतिस्पर्धी संघोंपर धार्मिक दृष्टिसे किये हुए कार्यका प्रभाव अवश्य ही पड़ेगा।

ऐसे चमत्कारी धर्मकी व्याख्या क्या है? धर्म वह, जो आत्माको शुद्ध करता है, जो कर्म-फलकी आकांक्षा नही रखता, जिसमें अटूट विश्वास है, जिसमें स्वार्थका लेश भी होना असम्भव है। जो कार्य इस धर्मके अनुकूल है, वही धार्मिक कहा जाना चाहिए। इस अर्थकी धार्मिक प्रवृत्तिमें हरिजन-सेवा सवर्ण हिन्दुओंकी शुद्धिका रूप लेती है, उनका प्रायश्चित बनती है। यदि यह बात अच्छी तरह समझमे आ जाये तो फिर पूछनेका कोई प्रश्न रहता ही नहीं। प्रत्येक स्त्री-पुरुष अथवा संघ यथाशक्ति

१. ६ मई, १९३३ को।

हरिजन-सेवा करके शुद्ध हो जाये, किसीकी निन्दा न करे, न किसीके साथ द्वेष करे। इसमें राजनीतिक लाभको कोई स्थान नहीं है।

किन्तु ऐसा कहना आसान है, करना कठिन है। इसका अर्थ यह हुआ कि धर्म बुद्धिगम्य नहीं, हृदयगम्य है। हृदयकी जागृतिके लिए सिवा तपके कोई अन्य साधन नहीं है। तप त्यागकी पराकाष्ठा है। तपका आरम्भ उपवाससे होता है। तापका सहना तप है। उपवासका ताप उपवासी जानते हैं। दलीलोंसे जो मैं नहीं समझा सकता, उसे उपवास-रूपी तपसे समझानेकी आशा रखता हूँ।

पर ऐसा हो या न हो, इस तपके सिवाय मुझे अन्यत्र शान्ति नहीं मिल सकती। क्योंकि मुझे विश्वास है कि ईश्वर मुझसे यही चाहता है। इस तपको करते हुए देह छूट जाये, तो मैं समझूँगा — लोग भी समझें — कि इससे मेरा कार्य खतम हुआ, मेरा सम्बन्ध समाप्त हुआ। यहाँ खेद अथवा दुःखको स्थान नहीं। और हरिजन-सेवाके हितार्थ तप करते हुए यदि देहका अन्त हो जाये, तो मेरे लिए अथवा हरिजन-कार्यके लिए उससे अधिक अच्छा और क्या हो सकता है? यदि तप निर्विघ्न समाप्त हो गया, तो मेरा आत्मविश्वास अधिक दृढ़ होगा और मेरी सेवा-शक्ति बढ़ेगी। हर हालतमें, यह स्पष्ट हो जायेगा कि हरिजन सेवक संघका कार्य केवल धार्मिक है, सवर्ण हिन्दुओंके लिए प्रायश्चित्त-स्वरूप है और इस कार्यमें जो लोग पवित्र नहीं है, उनके लिए स्थान नहीं है।

कोई ऐसा न समझ बैठे कि केवल दैहिक उपवासमें कोई शक्ति भरी हुई है। ऐसे उपवासमें मन और वचनका साथ होना चाहिए। मनसा-वाचा-कर्मणा किया हुआ उपवास ही आत्मशुद्धिका एक आवश्यक साधन है। इसी कारण मैंने अपने अन्य लेखोंमें स्पष्ट कर दिया है कि हर किसीको उपवास करनेका अधिकार नहीं हो सकता।

हरिजन-सेवक, १२-५-१९३३

१२९. पत्र : नारणदास गांधीको

५/६ मई, १९३३

चि० नारणदास,

परशुरामके साथ अच्छी तरह बात की है। उसके परिणामस्वरूप मैं जिस निर्णयपर पहुँचा हूँ उसे लिखनेसे पहले एक चौंका देनेवाली बात जो उसने कही है, तुम्हारे सामने रखता हूँ। मैंने उससे कह दिया है कि मुझे उसकी बातमें जरा भी विश्वास नहीं है, तो भी यदि वह कुछ लिखकर दे सके तो लिखकर दे। वह अपना कहना लिखकर ले आया। उसका कहना है कि डॉक्टर शर्मा दवा करनेके बजाय आश्रमकी आलोचनाका काम अधिक करता है और आलोचना भी गन्दी। उसका कहना है कि डॉ० शर्माके मनमें आश्रमके सम्बन्धमें कुछ विशेष पूर्वग्रह रहे हैं। किसीको भड़काकर, किसीको फुसलाकर, किसीको मजबूर करके वह लोगोंसे यह

कहलवाता है कि आश्रमके लोगोंकी मनोदशा गुलामो की-सी है। वे सभी मेरे-जैसे 'ओल्ड फूल'[1] की जी-हजूरी करनेवाले है। उसका कहना है कि तुम प्रेमाके वशमे हो और उसकी हर बात मानते हो। उसने प्रेमाका नाम 'हर एक्सेलेन्सी'[2] रखा है और उसके पीठ पीछे बात करते समय उसे इसी नामसे सम्बोधित करता है। मुझे ज्यादा बात करनेकी तो फुरसत नहीं थी। किन्तु जो उसने कहा है, यहाँ उसका सार लिख दिया है।

इसका मुझपर कुछ असर नही पड़ा। लेकिन तुम्हें बताना ही चाहिए इसलिए इतना लिख रहा हूँ। मुझपर डॉक्टर शर्माकी ऐसी छाप बिलकुल नही पड़ी। उसके दिल्लीसे आये हुए पत्रोंमें मैंने उसकी नम्रता और निष्कपटता देखी है। और मैंने यही माना है कि वह सेवाभावसे ही आया है। परशुराम जो कहता है वह बात सच हो तो मुझे बहुत दु:ख होगा, हालाँकि अब दु:ख पहुँचाने लायक ज्यादा कुछ नहीं रहा। सोमवारसे तो मेरा मन परम शान्तिका अनुभव करेगा।

तुम्हारे बारेमें और प्रेमाके बारेमे परशुरामको तुम्हारे स्वभावोंके परस्पर प्रतिकूल होनेके अतिरिक्त और कुछ नही कहना है। अभी तो वह ऐसा ही कहता है। उसकी दैनन्दिनीमें 'राक्षसी' शब्द नही 'राजसी' शब्द है। इसलिए लगता है कि शायद तुमने पढ़नेमें भूल की है। उसी तरह उसने तुमपर दुष्टताका आरोप नही लगाया। प्रेमाके क्रोधसे त्रस्त है, ऐसा वह कहता रहता है। चाहे जो हो मैंने तो उससे कहा है कि वह अपनी जबान और कलमपर पूर्ण रूपसे अंकुश लगाये। ऐसी सड़ी हुई डायरी लिखना बन्द करे, वहाँ जाकर तुम्हारी शरण ले और तुम्हारे साथ पूर्ण मानसिक सहयोगकी प्रतिज्ञा करे, तो आश्रममे वापस रह सकता है। मैंने तुम्हें पत्र लिखनेकी उसे सलाह भी दी है। अभी वह पत्र मेरे पास नहीं आया है।

६ मई, १९३३

परशुरामका कहना है कि उसे आश्रमसे असफल होकर नही जाना है। वह अब तो बिलकुल ठीक रास्तेपर आता दिख रहा है। फिर इस अवधिमे उपवास शुरू हो जायेगा, इसलिए वह तुम्हारे पाससे प्रमाणपत्र लेकर [जल्दी] आश्रम वापस आना चाहता है। यह तो मै सुबह-सुबह लिख रहा हूँ, वह अभी बादमें आकर मिलेगा। यदि वह मुझे तुम्हारे पास वापस भेजने लायक लगा तो उसे वहाँ भेजूँगा। उसके साथ बात करना और तुम्हें सन्तुष्ट कर सके तो उसे वापस रख लेना। उसे वापस लेनेका तुमपर कोई बन्धन नहीं है। उसे तभी लेना जब तुम्हें लगे कि उसका मन साफ हो गया है। फिर उसने जो-कुछ डॉक्टर शर्माके विषयमें कहा है उसमे झूठ हो या भारी नासमझी हो तो ऐसे अव्यवस्थित व्यक्तिको दूसरी बार लेनेका साहस करे या नही इसपर विचार कर लेना।

किन्तु जो-कुछ डॉक्टर शर्माके बारेमें उसने कहा है वह सच निकले तो तुम्हें बहुत सोचना पड़ेगा। परशुरामको वापस रखो या न रखो, उसकी सारी बात समय

१ व २. मूल पत्रमें दोनों शब्द अंग्रेजीके है।

देकर सुन लेना। यदि वह अच्छा व्यक्ति हो तो हम भी उसे न छोड़े। मैं यह भी मानता हूँ कि अच्छा हो और स्वभावसे इतना अव्यवस्थित हो तो भी नहीं रख सकते, इसलिए उसे न रखनेके बारेमे तुम्हें पूरी छूट है। मैं परशुरामके आग्रहका तिरस्कार नही करना चाहता, इसलिए उसे तुम्हारे पास आने दे रहा हूँ। किन्तु मेरी शर्त एकदम स्पष्ट है। वह तुम्हें खुश रखकर ही रह सकता है।

डॉ० शर्माके जो पत्र मेरे पास आये हैं उनसे देखता हूँ कि बहुत-से लोगोंने उससे बहुत-सी बातें तो की ही हैं। डॉ० शर्माका कहना है कि उसने बीमारोंमें गुप्त रोगवाले लोग भी पाये हैं। उसे उनके नाम तुम्हें बताने चाहिए। मुझे तो मालूम करने ही थे। परन्तु इस बीच उपवास आ पड़ा है, इसलिए यह काम तुमपर छोड़ता हूँ। उसे पत्र लिख रहा हूँ सो देख लेना।

पण्डितजी वहाँ आ रहे हैं। नर्मदाको तो वापस नहीं आना है। लक्ष्मीबहन एक वर्ष बाहर रहनेका व्रत लेकर निकली है। वह इस अवधिमें वापस नही आयेगी।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१३०. तार : हरिलाल गांधीको[1]

६ मई, १९३३

हरिलाल
निजामिया होटल
२२५/२६ हारबर बिल्डिंग, फ्रेर रोड, बम्बई

तुम्हारा पत्र हृदयस्पर्शी है। यदि इस उपवासके परिणामस्वरूप तुम फिर पवित्र जीवन बिताने लगो तो उपवासकी सफलता दुगनी हो गई समझो। मुझसे मिलो। मै तुम्हारे मार्गदर्शन की कोशिश करूँगा। ईश्वर तुम्हारा भला करे।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१२००) से।

१. हरिलालके तारीख ५-५-१९३३ के पत्र (एस० एन० २११७५) के जवाबमें। पत्रमें लिखा था: "आपके उपवाससे सबके सामने यह प्रश्न उपस्थित हुआ है, 'मेरा धर्म क्या है।' आप जो भी कुछ मुझे करनेके लिए कहेंगे मैं करूँगा। परन्तु कृपा करके आप उपवास छोड़ दें।"

१३१. तार: नारणदास गांधीको

पूना,
६ मई, १९३३

श्री राजभोज तथा दूसरे लोगोको उपवास करनेसे आग्रहपूर्वक मना करता हूँ। उन्हें तथा सब लोगोंको वाचा कर्मणा शुद्ध बनना चाहिए। जब उनकी बारी आये, वे उपवास करे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ८-५-१९३३

१३२. पत्र: सुरेन्द्रजीको

६ मई, १९३३

प्रिय सुरेन्द्रजी,

रामदास कहता था कि जब उसने तुम्हे मेरा सन्देश सुनाया तो सुनकर तुम्हारी आँखोंमे आँसू आ गये। मै ऐसा मानता हूँ कि जो आँसू आये वे हर्षके ही होगे, दु:खके कदापि नही। उपवासके सिवा कोई चारा ही न था और उसके लिए यही शुभ मुहूर्त था। मुझे लग रहा है कि अस्पृश्यता-जैसे भयानक राक्षसका नाश अन्य किसी प्रकारसे अशक्य है। रावणके केवल दस सिर थे। इस राक्षसके हजार है। ये सिर कैसे हैं, सो तुम्हें समझानेकी जरूरत नही। इस राक्षसका मूलसे नाश सामान्य परम्परागत साधनोसे नही हो सकेगा। इसलिए मजबूरन प्राचीन परन्तु अमोघ साधन अपनाने होगे। यह बात मेरे सामने गणितके सिद्धान्तकी तरह साफ है। करोड़ रुपये चन्दा एकत्रित कर लें तो भी क्या सनातनियोंका हृदय-परिवर्तन किया जा सकेगा? सच्चा अनुयायी ही यह सुधार कर सकता है, नाम-मात्रके सैकड़ों अनुयायी नही। जिस आश्रमके द्वारा मैं यह बुराई दूर करानेकी आशा कर रहा हूँ, उस आश्रममे तो इस प्रश्नपर मतभेद रहना ही नही चाहिए। हरिजन आजकल बहुत भयभीत हैं। और जिन्होंने भय छोड़ दिया है, वे उद्दण्ड बन गये हैं। उनका क्रोध भीषण रूप धारण कर ले, इसमें आश्चर्य ही क्या? इन सब अनिष्टोका नाश करनेके लिए हम अपनी आध्यात्मिक पूँजीका उपयोग कितनी ही दृढ़तासे और कितनी ही बार क्यों न करें, वह कम ही होगा। यदि ईश्वरकी इच्छासे मैं अकेले ही यह काम कर सकूँ तो इस यज्ञमें अपनी आहुति देते हुए मेरे हर्षकी सीमा नहीं होगी। परन्तु मुझे अपने अन्दर इतनी अधिक पवित्रताका पूरा भरोसा नही है। जब मेरे-जैसे सैकड़ो, हजारों लोग उपवास करेगे, तभी हजारों वर्षोंका सचित यह

पाप धुलेगा। तुमसे और तुम्हारे ही जैसे दूसरोंसे मै बड़ी आशा रखता हूँ। परन्तु मै एक बात साफ कह दूँ कि मेरे इस उपवासके दौरान कोई मेरा अनुकरण न करे। तुम्हारा कर्त्तव्य है कि शान्त रहकर मन, वचन, कर्मसे जितनी शुद्धता साध्य हो, साधो। यह पत्र महादेवने लिखा है। वह रोजाना इसी प्रकार लिखता रहेगा और जबतक शक्य होगा मेरे दस्तखत लेता रहेगा। सरकारकी आज्ञा मिल गई है कि मैं रोजाना तुमको इस प्रकारसे पत्र लिख सकूँगा और तुम भी मुझे लिख सकोगे।

सभीको मेरा आशीर्वाद।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल सं० १०, १९३३

१३३. पत्र : मीराबहनको

६ मई, १९३३

मीराबहनके लिए विशेष पत्र

चि० मीरा,

यह पत्र महादेव मेरी तरफसे लिख रहा है। अब वह रोज लिखा करेगा और जब-कभी सम्भव होगा, मेरे हस्ताक्षर करा लेगा। तुम और बा भी रोज लिख सकती हो। साथमें बा के लिए एक पत्र है।

तुम्हें मेरी किसी दलीलकी जरूरत नहीं है। जरूरत हो तो सारी बात[1] आजके 'हरिजन' में पढ़ लेना। मेरे लिए यह सूर्यके प्रकाशकी भाँति स्पष्ट है कि उपवास होना ही चाहिए था। मुझे यही आश्चर्य है कि मैंने यह निर्णय और भी पहले क्यों नही किया। इन तमाम दिनोंमें मेरे भीतर द्वन्द्व चलता रहा है। पिछले तीन दिनोंमें कशमकश तीव्र हो गई और आधी रातके कुछ देर बाद मुझे साफ आवाज आई कि मुझे यह जोखिम उठानी ही चाहिए। मै समझ सकता हूँ कि तुम्हें कैसी पीड़ा हो रही होगी। मैं जानता था कि बा दृढ़ बनी रहेगी। परन्तु तुम दोनोंके सम्मिलित तार और तुम्हारे पत्रोंसे मुझे इस यात्राके लिए अभीसे आध्यात्मिक खुराक मिलने लगी है। अगर तुम चाहती हो कि मैं शरीरके खिलाफ आत्माके संग्राममें विजयी रहूँ, तो तुम्हें भी संग्राममें शरीक होना पड़ेगा। मैं जानता हूँ कि तुम्हारे लिए यह प्रयत्न कितना पीड़ाजनक होगा, परन्तु मैं यह भी जानता हूँ कि तुम्हारी विजय होगी और तुम मेरे भी विजयी होनेमें सहायक बनोगी। परन्तु हमारी विजय क्या है? तुमने अपने पत्रके आरम्भमें सत्य ही कहा है—और शायद जिस समय

१. देखिए पृ० ७४-६ और १२२-४।

वहाँ तुमने ये शब्द लिखे होंगे, ठीक उसी समय मैंने अपने लेखका यह शीर्षक लिखा था — हमारी नही, प्रभुकी इच्छा पूरी हो।

तुम दोनों रोज मुझे पत्र लिख दिया करो।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७२) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७३८ से भी।

१३४. पत्र : गोमतीबहन मशरूवालाको

[६ मई, १९३३][1]

आशा है, उपवासका रहस्य तुम्हारी समझमे आ गया होगा। नाथजी[2] क्या कहते हैं? पिछली बारके उपवासमे उन्होंने अपनी सहमति नही दी थी; बादमें सहमत हो गये हों तो उसकी मुझे खबर नही है। इस बारका उपवास भिन्न प्रकारका है। यदि तुम किशोरलालकी राय जानती हो तो वह भी लिखना।

तुम्हें घबराना नही चाहिए। हो सके तो अपने अन्तरको शुद्ध करना चाहिए। सेवा-कार्य करना चाहिए। तनिक भी विचलित नही होना चाहिए। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना। यदि मेरा शरीर छूट जाये तो यह यज्ञ तुम्हें पूरा करना होगा। तुम किस प्रकार इसे पूरा करोगी यह तो मैं स्वयं भी नही जानता। मैंने काकाको समझा दिया है। आश्रमको भी लिख दिया है। जितना मैं समझ पाया हूँ उतना महादेव और छगनलालको समझा दिया है। अधिक लिखनेका समय नही है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५३०) से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

१३५. पत्र : रामजी जी० बधियाको

[६ मई, १९३३]

तुम्हारे उपवाससे न तो तुम्हें लाभ होगा और न अन्य किसीको। मुझे तो कष्ट ही होगा। उपवासकी भी एक विधि होती है। यदि मेरी मानो तो उपवासका विचार छोड़ दो और मैंने जो कहा है सो करो। अपने मनसे वहम और गुस्सा निकाल दो और मथुरादास आदिको समझो। जो अपने हितेच्छुको नही समझता वह सुखी नहीं हो सकता। यदि तुम्हारा मुझपर इतना विश्वास है तो फिर नारणदास, मथुरादास आदि पर विश्वास न होनेसे कैसे बात बनेगी? तुम्हारा भाई राजभोजपर तो

१. इस पत्रकी तथा अगले तीन पत्रोंकी तिथिका निश्चय पत्रोंकी विषयवस्तुके आधारपर किया गया है।

२. केदारनाथ कुलकर्णी, किशोरलाल मशरूवालाके गुरु।

विश्वास है न? यदि है तो जैसा वे कहें वैसा तुम्हें करना चाहिए। यदि तुम्हारा मन शान्त हो जाये तो इससे मुझे अपने उपवासमें शक्ति अवश्य मिलेगी।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५३३) से, सौजन्य: छगनलाल जोशी।

१३६. पत्र: अनसूयाबहन साराभाईको

[६ मई, १९३३]

तुम्हारे संतापको मै समझता हूँ। मेरा साथ कष्टदायक है। मै स्वय निपट पराधीन हूँ। मै नहीं जानता कि अगले क्षण क्या होगा। मुझे अपनी स्वतन्त्रता ही परतन्त्रता जैसी लगती है, और सत्यनारायणकी सेवा स्वतन्त्रताके समान जान पड़ती है। उपवास करनेकी तनिक भी इच्छा न होनेके बावजूद, मुझे उपवास करना पड़ा है। किन्तु उपवास करनेके बाद मेरे सिरसे जो बोझ उतर गया उसका वर्णन नही किया जा सकता। अतः तुम्हें इस उपवाससे प्रसन्न होना जाहिए। मुझे विश्वास है कि मेरे शरीरका कुछ नही बिगड़ेगा। किन्तु यदि मेरी गणना गलत सिद्ध हो तो भी क्या हुआ? यदि ऐसा हो तो तुम यह मानना कि इस शरीरसे सेवा लेने लायक कुछ नहीं रह गया था। अतः तुम घबराना नहीं। यह शरीर काँचकी चूड़ीसे भी कही ज्यादा नाजुक है और इसमे रहनेवाली आत्मा ही सच्ची वस्तु है। इसपर मनन किया करो और यथासम्भव जितनी सेवा कर सको, किया करो। अब तुम्हें और शंकरलालको आराम करना चाहिए। आखिरी दिनोमे आना।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५३१) से; सौजन्य: छगनलाल जोशी।

१३७. पत्र: लक्ष्मीबहन एम० शर्माको

[६ मई, १९३३]

चि० लक्ष्मी,

तेरे बारेमें मुझे बहुत-सी शिकायतें मिली हैं। तूने ४० रुपये साड़ियोपर खर्च दिये और तूने इतनी चूड़ियाँ खरीदी हैं जिन्हें तू अपनी पूरी जिन्दगीमें नही पहन पायेगी। तू जानती नहीं कि एक गरीब व्यक्तिसे तेरा विवाह हुआ है और गरीब बापकी बेटी है। मैं तो दूधाभाईसे भी गरीब हूँ। तुझे यह जान लेना चाहिए कि मेरा उपवास तेरे लिए भी है। जिनका मुझसे सम्बन्ध है, उनके लिए है। फिर तू तो हरिजन कन्या है। तुझे अपना कर्त्तव्य समझना चाहिए। यदि तू झूठ बोलना या उड़ाऊ-पन सीखेगी तो उससे मुझे बहुत दुःख होगा। अतः तू चेत जा। मुझे पत्र लिखना।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५३२) से; सौजन्य: छगनलाल जोशी।

१३८. पत्र : नारणदास गांधीको

६ मई, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला।

नी० ने पत्र ही नहीं लिखा, इससे चिन्ता हो रही है। उसके रोज पत्र लिखनेकी बात थी। वह आश्रमके नियमानुसार चल निकले तो अच्छा है। उसपर नजर रखना। उपवासके दौरान भी उसकी खबर भेजना और मैं यह भी चाहूँगा कि वह खुद पत्र लिखती रहे। यदि तुम्हें उसका व्यवहार ठीक न लगे तो मुझे फौरन लिखना। उसकी छुट्टी कर देना ठीक लगे तो कर सकते हो। उसे कल जो पत्र लिखा है, वह तुमने पढ़ा होगा। उसे स्याही, कलम, कागज, आदि जरूरतकी चीजें दे दी होंगी।

उपवासके दौरान मैं क्या चाहता हूँ, ऐसा तुमने पूछा है। बाह्य व्यवहार तो जैसा चलता है वैसा ही चलता रह सकता है; किन्तु अन्तर्शुद्धिकी आवश्यकता दिखाई देती है। हमारे सभी कार्योंका उद्देश्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे हरिजन-सेवा तो है ही। किन्तु यदि कोई विशेष सेवाका विचार कर सको तो उसे हाथमें लिया जाये।

किन्तु मुख्य रूपमे तो मैं यह चाहता हूँ कि आश्रममें वे सुधार लागू किये जायें जिनका मैंने सुझाव दिया है। जो व्यक्ति नियम-पालन नहीं करते वे चले जायें। ऐसी और बातें जो मैंने लिखी है उनपर विचार कर लेना और जो ठीक हो सो करना। उस सिलसिलेमें यदि आश्रमकी बाह्य प्रवृत्तियाँ कुछ कम होती हों तो भले ही हो जाये। किन्तु शान्तिपूर्वक और चर्चा करके आश्रमको पवित्रताकी दृष्टिसे सुरक्षित बना डालो। राजभोजके सुझावों[1] पर विचार करो और आश्रमको उपवास द्वारा आहुति देनेके लिए तैयार करो।

इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझता।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. देखिए पृ० ४८-५०।

१३९. पत्र : मणिबहन पटेलको

६ मई, १९३३

चि० मणि,

पिछली बारकी तरह इस बार भी तुझे रोज पत्र लिखा जा सकेगा और तू भी रोज लिख सकेगी। मै चाहे रोज न लिख सकूँ या लिखवा सकूँ, परन्तु महादेव तो लिखेंगे ही। और सम्भव हुआ तो मेरे हस्ताक्षर करा लेंगे। यह पत्र तेरे और मृदुला[1] दोनोंके लिए है। यह भी महादेव ही लिख रहे हैं।

तुम दोनों वीर लड़कियाँ हो। मै मानता हूँ कि तुम कभी नही घबराओगी। मेरी जरा भी चिन्ता न करना। मै समझता हूँ कि मेरा शरीर पिछले उपवासकी तुलनामे इस समय अधिक ताजा और समर्थ है। राजाजी ने बहुत झगड़ा किया। आज शान्त होकर वापस जा रहे है। थोड़े दिनमें लौटेंगे। वल्लभभाई बड़ी शान्तिसे सब सहन कर रहे हैं और महादेवसे उन्होंने प्रतिज्ञा की है कि मुझसे जरा भी बहस न करके पूर्ण सहयोग -- भले ही मौनसे -- देंगे। यह वृत्ति मुझे प्रिय है। थोड़े दिन तो वे इस मौनको जरा कड़ी हदतक ले गये, उनका विनोद सूख गया। परन्तु अब फिर फूटने लगा है।

यह उपवास अनिवार्य था। इसका यही मुहूर्त था, इसमें भी कोई शक नहीं। गणितके सवालकी तरह मैंने इसका हिसाब लगा लिया है। यह उपवास किसीके विरुद्ध नहीं है। मुझे पता नहीं कि किस चीजसे आघात पाकर मैंने यह प्रतिज्ञा की। बहुत-सी बातोंका जाने-अनजाने जरूर असर हो रहा था। परन्तु बात यह है कि मुझमें कहीं-न-कहीं अपवित्रता होगी, तभी तो मेरे साथ सम्बन्ध रखनेवाले हरिजन-सेवक कुन्दन-जैसे नहीं है। और अस्पृश्यतारूपी राक्षस रावणसे भी बुरा है। रावणके दस मस्तक थे, इसके सैकड़ों है। इन सबका नाश संघोंसे नहीं होगा, करोड़ों रुपयोंसे नहीं होगा, हरिजनोंको अधिकार दिलानेसे नही होगा। सवर्ण हिन्दुओं और हरिजनोंको भाईकी तरह मिलानेके लिए उनके हृदय बदलने चाहिए। ऐसा विशाल आध्यात्मिक कार्य हमारे पास जितनी भी आध्यात्मिक पूँजी हो, उसे इसमे लगा देनेपर ही हो सकता है। यह मार्ग तो पुराना है। राजमार्ग है। आजतक नही सूझा, यही आश्चर्य है।

१. मृदुला साराभाई।

दोनों शान्त रहना, और समय आनेपर सहयोग देना। तुम मेरे साथ उपवास हरगिज नहीं कर सकती।

तुम दोनोंको
बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृ० १०५-७

१४०. सन्देश : उपवासके निर्णयपर[1]

६ मई, १९३३

मै मरनेको उत्सुक नहीं हूँ। मरूंगा नही। मेरे लिए आप परेशान न हो।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ७-५-१९३३

१४१. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको[2]

[६ मई, १९३३][3]

यह मेरा दुर्भाग्य है कि ईश्वर या सत्यकी ओरसे इस व्रतकी प्रेरणा मुझे जब मिलनी चाहिए थी, उससे बहुत देरमे मिली। परन्तु चूँकि ईश्वरीय कार्यके विषयमें कुछ कहना मेरे अधिकारकी बात नहीं है, इसलिए मैंने उसकी अटल आज्ञा शिरोधार्य कर ली है। मेरे विचारमे तो यरवदा-समझौतेपर हस्ताक्षर करनेके बाद हरिजन आन्दोलन प्रारम्भ करते समय ही मुझे इस तरहका उपवास करना चाहिए था। परन्तु तब वैसी ईश्वरकी इच्छा नही थी। यह निस्सन्देह घटना घट जानेके उपरान्त यज्ञका प्रारम्भ है। यह शुद्धिकारक यज्ञ भी है। चूँकि इसकी आवश्यकता पहलेसे ही थी, इस यज्ञका ऐसा ही होना जरूरी था। आपको समझ लेना चाहिए कि यह तर्क मुझे घटनाके घट चुकनेके उपरान्त सूझ रहा है। जब मुझे महसूस हुआ कि मुझे ईश्वरीय

१. उन असंख्य मित्रों और प्रशंसकोंके लिए जो सुबहके आठसे लेकर सूर्यास्ततक उनसे मिलने पहुँचे थे।

२. यह "स्पार्क्स फ्रॉम द सेक्रिड फायर–२" (महादेव देसाईसे दूसरी भेंट) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। महादेवभाईने पत्र-प्रतिनिधियोंके प्रश्नके उत्तरमें गांधीजी के शब्दोंको ही दोहरा दिया था। प्रश्न यह था कि क्या उस बातपर विस्तारसे चर्चा की जा सकती है जो गांधीजी ने कही थी और जिसका आशय यह था कि इस उपवाससे सामाजिक और धार्मिक आन्दोलनके नये युगका सूत्रपात होगा।

३. **महादेवभाईनी डायरी**, भाग–३, पृ० २९३-४ से।

आज्ञा प्राप्त हुई है, तो मेरे आगे और कोई तर्क नहीं रहा। आवाज आई और मैं विवश हो गया। आप पूछ सकते हैं कि "क्या यह वेदनाकी तीव्र अभिव्यक्ति तो नहीं है?" उत्तर बिलकुल सहज और साधारण है। मै जोरदार शब्दोंमें कह सकता हूँ कि यह वेदनाकी तीव्र अभिव्यक्ति नहीं है। अलबत्ता यह प्रायश्चित्त अवश्य है। मैं जिन्हें अपवित्र मानता हूँ, आप जिन्हे अनुचित मानते हैं, उन सब बातोंकी शुद्धिको इस यज्ञके एक अंशके रूपमें लिया जा सकता है। चूँकि आरम्भमे उपवास नहीं किया जा सका इसलिए यह अब और भी अनिवार्य था। आपका अन्तिम प्रश्न यह है कि अपने वक्तव्यमें जिन दिल दहला देनेवाले मामलोका मैंने जिक्र किया है, मै कहीं उनके कारण तो यह उपवास नहीं कर रहा हूँ। मैं आपसे कह सकता हूँ कि यह बात बिलकुल गलत है, क्योंकि मै आपको वे तारीखें भी बता सकता हूँ जब इन दिल दहला देनेवाली घटनाओंकी सूचना मुझे मिली। उस वक्त मैंने महसूस किया कि उन व्यक्तिगत मामलोंके कारण उपवास करनेका मेरे लिए कोई औचित्य नहीं है। इस बातके निर्णायक कारण हैं कि कैदीके रूपमे मुझे व्यक्तिगत मामलोंकी वजहसे उपवास करनेकी – जैसाकि मैंने इससे पहले किया है – कोई जरूरत नहीं है। हरिजन-आन्दोलन-जैसे महान् आन्दोलनमे किसी भी मनुष्यके लिए अकेले हर अलग-अलग मामलेमें उपवास करके उन्हें निबटा पाना शक्तिसे बाहरकी बात होगी। इसलिए मेरे मनमें कोई सन्देह नहीं है कि भले ही इन मामलोंने अनजाने मुझे उपवास करनेके लिए प्रेरित किया हो, फिर भी मै उनमें से किसी एक विशेष घटनाकी ओर ऊँगली उठाकर यह नहीं कह सकता कि पूरी तरहसे या मुख्य रूपसे इस घटनाने मुझे इस यज्ञकी प्रेरणा दी है। मुख्य रूपसे यह ऐसा उपवास है जो कोई और कार्य आरम्भ करनेसे पूर्व आजसे बहुत पहले किया जाना चाहिए था। गौण रूपसे आतम-शुद्धि और अपने साथियोंकी शुद्धिके लिए भी यह उपवास बहुत पहले किया जाना चाहिए था। यदि मैं सोमवारतक बना रहा तो सोमवार दोपहर १२ बजे यह उपवास शुरू कर दूँगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-५-१९३३

१. यह वाक्य महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे लिया गया है।

१४२. यज्ञका प्रारम्भ

मुझे बचपनसे ही यह सिखाया गया है कि अच्छे कामो, धार्मिक कामोंका प्रारम्भ देह-शुद्धि और आत्म-शुद्धिसे किया जाना चाहिए। सितम्बरके महीनेमें जो उपवास किया गया था उसे इस प्रकारका यज्ञ नही कहा जा सकता। उस उपवासके पीछे उद्देश्य सरकारकी योजनामें फेरफार कराना ही था। हरिजन-सेवाका अतिरिक्त फल तो सहज रूपसे ही निकला। उक्त उपवास अनिवार्य हो गया था। किन्तु उससे सम्बन्धित सकल्प-बल योजनामे परिवर्तन होनेके साथ-साथ समाप्त हो गया और उपवास भी पूरा हो गया। उस उपवासके साथ एक शर्त लगी हुई थी और इसलिए तुलनामे वह इस उपवाससे घटकर था।

हरिजन-सेवाका कार्य बादमें आरम्भ हुआ। अब मुझे ऐसा लगता है कि वह एक दुर्बल प्रारम्भ था, शुद्धि-यज्ञका बल उसके पीछे नही था। सम्भव है कि इस प्रकारके यज्ञके अभावके कारण ही अस्पृश्यता-निवारणके हमारे युद्धने धार्मिक स्वरूप धारण नही किया।

जब मेरे मनमे इस उपवासकी प्रेरणा हुई तब मनमे इस प्रकारकी बात नही थी। यह कहना तो मुश्किल है कि किस विशिष्ट कारणसे इस उपवासका निश्चय हुआ, फिर भी यह उपवास मेरे अन्य उपवासोंकी अपेक्षा अलग है। इसमे हेतु केवल शुद्धिका है। इसलिए यह उपवास करते हुए यदि देह छूट जाये, तो मैं इसे अप्रत्याशित किन्तु शुभ परिणाम गिनूँगा। मै यह भी चाहता हूँ कि सब लोग ऐसा ही मानें। मै हरिजनोंका चिन्तन करते-करते उनकी शुद्ध सेवा करनेकी भावना रखता हुआ देह छोड़ूँ, तो इसे सेवाका उत्तम प्रारम्भ गिना जाये। तथापि, इस यज्ञमे मेरी इच्छा मरकर सेवा करनेकी नही, जीकर सेवा करनेकी है। यदि ईश्वरने कुछ और सोचा हो तो उसे कौन मिटा सकता है? जिस तरह जीवित रहकर सेवा करनेका उत्साह है, उसी प्रकार मेरे मनमे मरकर भी सेवा करनेका साहस है। इसलिए हमे जीवन-मरण दोनोंको एक ही वस्तु समझना चाहिए।

जो लोग इस उपवासकी बात सोचकर थर-थर काँप रहे हैं, उन्हें देह-सम्बन्धी मोह छोड़ देना चाहिए। देह छोड़नेसे मनुष्यका काम भी छूट जाता है, ऐसी बात नही है। यदि बात ऐसी होती तब तो जीनेसे भी क्या होना था। शरीर नष्ट हो जाता है, आत्मा नष्ट नही होती। कर्त्ता, अकर्त्ता आत्मा है, वह चिरजीवी है, अमर है। हम इस बातको जानते हो चाहे न जानते हों, इस बातकी इच्छा करते हों चाहे न करते हों, किन्तु प्रयत्न-मात्रका सम्बन्ध आत्मासे है — फिर वह हमें उठानेवाला हो चाहे गिरानेवाला।

इस समय मेरी एक ही प्रबल इच्छा है और वह यह कि हम सब लोग इस बातको समझ लें कि अस्पृश्यता-निवारणका यह कार्य धार्मिक है और यह धार्मिक

साधनोंके बिना सिद्ध नहीं हो सकता। अन्य सारे हिन्दुओंकी शुद्धि हरिजन-सेवामें ही निहित है। यदि दूसरे हिन्दू शुद्ध न हों और हरिजनोंकी आर्थिक अथवा राजनीतिक स्थिति सुधर जाये, तो इससे हिन्दू-धर्म शुद्ध नहीं होता। अस्पृश्यतारूपी मैल ऐसा है कि यदि यह नहीं कटा तो हिन्दू-धर्मको खा जायेगा। इस मैलको निकाल फेंकनेके लिए असंख्य हिन्दुओंका हृदय-परिवर्तन आवश्यक है।

यह बात हमारे सामने दीपककी तरह स्पष्ट हो जानी चाहिए कि यह मैल आत्मशुद्धिके अतिरिक्त अन्य किसी साधनसे दूर नहीं होगा; और यह बात स्पष्ट करनेके लिए सर्वोत्तम साधन मनसा, वाचा, कर्मणा उपवास-रूपी यज्ञ करना है। केवल शरीरका उपवास करना तो एक निरर्थक कष्ट है, यह पाखण्ड भी हो सकता है। जिसका मन अन्न-फल आदि माँगना बन्द कर देता है, उसका शरीर अनायास ही खानेके लिए कुछ नहीं चाहता। जो शरीरसे तो अन्न-फलादि नहीं लेता किन्तु जिसका मन उन्हींके विषयमें सोचता रहता है, वह शरीरसे उपवास करता हुआ भी भोजन करता रहता है। ज्यादातर उपवास ऐसे ही होते है। किसी भी धर्मदृष्टिसे देखें, वे निरर्थक ही हैं और बहुत सम्भव है कि हानिकारकतक हो। इसलिए धार्मिक उपवासमें मनकी पूरी तैयारी अत्यन्त आवश्यक है। मेरी आत्मा कह रही है कि मेरी ऐसी तैयारी है। सम्भव है कि इस प्रकारके यज्ञ करते हुए अनेक लोगोंको देह छोड़नी पड़े। ऐसा हो जाये तो भी इस प्रकारके अनेक यज्ञोंको किये बिना समस्याका हल नहीं मिलेगा। जो मैल शताब्दियोंसे हमारे भीतर जमा हुआ है, वह सहज ही नहीं निकलेगा। यह तो बिलकुल ठीक बात है कि ऐसे यज्ञका प्रारम्भ मुझसे होना चाहिए।

यदि २१ दिनोंके उपवासके अन्तमें मेरा शरीर छूट जाये, तो पाठक यह मान लें कि यह शरीर अन्य किसी सेवाके लिए निकम्मा हो चुका था। ऐसे अवसरपर श्रद्धाकी अत्यन्त आवश्यकता होती है। अंधश्रद्धा तो हम चारों तरफ देखते हैं। इसी कारण श्रद्धाकी भी लोग निन्दा करने लगे हैं। किन्तु जिस प्रकार नेत्रहीनोंके समाजमें किसी एक नेत्रवानको निकम्मा नहीं कहा जा सकता, बल्कि वह उनका मार्गदर्शक बन जाता है, उसी प्रकार असंख्य लोगोंकी अंधश्रद्धाके निवारणका काम एककी दृष्टिमती श्रद्धा द्वारा सम्भव है। मैं ऐसी श्रद्धा प्राप्त करना चाहता हूँ। दूसरे स्त्री-पुरुष भी यही प्रयत्न करें। मैं इसे प्राप्त करनेके लिए मनसा, वाचा, कर्मणा किये गये एक अथवा अनेक उपवासोंकी कामना करता हूँ।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ७-५-१९३३

१४३. पत्र : एफ० मेरी बारको

७ मई, १९३३

चि० मेरी,[१]

तुम लम्बा पत्र नहीं चाहती हो और न उसकी अपेक्षा ही करती हो। मेरे इस पत्रको चार या कम-से-कम तीन सप्ताहतकके लिए अन्तिम मानना। उपवासकी चिन्ता करके मुश्किलसे जो आराम मिला है उसमें खलल न पड़ने देना। मैं तुमसे आशा करता हूँ कि तुम ताजा होकर आश्रम लौटोगी। तबतक तुम्हारे लिए काफी काम इकट्ठा हो जायेगा।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३३२९) से; सौजन्य : एफ० मेरी बार। जी० एन० ६००३ से भी।

१४४. राजकुमारी एफी अरिस्टार्चीको लिखे पत्रका अंश

७ मई, १९३३

. . . तो आप स्वयं अपनी मदद नहीं कर सकी। लेकिन मैं उस लम्बे समुद्री तारकी बात छोड़ता हूँ। बेचारे हरिजन! वे कहते हैं कि आपका प्रेम उनके प्रति उतना नहीं है जितना कि उनके अनेकों सेवकोंमें से एकके प्रति है। क्या उनकी शिकायत उचित नहीं है? मैं उन्हें आश्वस्त कर दूँगा कि आप आगेसे उन्हें अधिक प्रेम करेंगी।

मैं जानता हूँ कि आपकी दुआएँ मेरे साथ हैं। ऐसी दुआएँ मुझे बल देंगी। जबतक यह पत्र आपके पास पहुँचेगा, यदि ईश्वरकी वैसी इच्छा हुई तो मैं आधा रास्ता तय कर चुका होऊँगा। यदि उसकी इच्छा कुछ और हुई तो वह भी ठीक है। तब शरीर काम करना बन्द कर देगा; आत्मा नहीं। यह उपवास ईश्वरकी इच्छा और देन है। मैं चाहता हूँ कि आप इसके आनन्दकी भागी हों। ईश्वरकी शान्ति आपके साथ हो।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखत डायरी, सौजन्य : नारायण देसाई।

१. साधन-सूत्रमें सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

१४५. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

७ मई, १९३३

आपके स्नेहपूर्ण सन्देश[1] की मैं कद्र करता हूँ। लगता है कि इस परीक्षाके दौरान जितनी चाहिए, उससे ज्यादा खुराक मेरे पास है। मनुष्य केवल रोटीके ही सहारे जीवित नहीं रहता।

[अंग्रेजीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई।

१४६. पत्र : एस्थर मेननको

७ मई, १९३३

रानी बिटिया,

मैं जानता हूँ कि तुमपर क्या गुजर रही है। मैं आसन्न उपवासको ईश्वरके अबतकके उपहारोंमें सबसे ज्यादा मूल्यवान मानता हूँ। मुझे और ज्यादा नहीं लिखना चाहिए। तुम्हें विश्वास रखना चाहिए कि परिणाम कुछ भी हो, अच्छा ही होगा।

तुम दोनोंको प्यार और बच्चोंको चुम्बन।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० १२२) से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड**, पृ० १०१ से भी।

१. श्री पोलक व उनकी पत्नीने गांधीजी को अपनी शुभ कामनाएँ भेजी थीं।

१४७. पत्र : म्यूरियल लेस्टरको

७ मई, १९३३

प्रिय म्यूरियल,

तुम्हें यह बतानेके खयालसे पत्र लिख रहा हूँ कि तुम आगामी अग्निपरीक्षामें मेरा उत्साह बनाये रखनेके लिए भावनात्मक रूपमें मेरे साथ रहो। यह पत्र तुम्हें उस वक्त मिलेगा जबकि मेरी अग्निपरीक्षाकी अवधि आधी बीत चुकी होगी। यो जब हम दोनोकी भावनाएँ एक है तो उस बातसे कोई फर्क नही पड़ेगा। ऐसी स्थितिमें मनोवांछित परिणाम तो कहते ही प्राप्त हो जाता है। तुम सबको मेरा प्यार।

बापू

कुमारी म्यूरियल लेस्टर
किंग्सले हॉल, बोव
लन्दन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१६) से।

१४८. पत्र : होरेस जी० अलैक्जेंडरको

७ मई, १९३३

प्रिय होरेस,

मैं जानता हूँ कि आगामी परीक्षामें तुम सबकी शुभ कामनाएँ मेरे साथ हैं मैं इस उपवासको ईश्वरका महान उपहार समझता हूँ।

तुम सबको मेरा प्यार। होलैंडको अलगसे पत्र लिखनेकी कोशिश नहीं करूँगा।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४२१) से।

१४९. पत्र : अगाथा हैरिसनको

७ मई, १९३३

प्रिय अगाथा,

तुम मुझसे लम्बे पत्रकी अपेक्षा मत करो। मैं जानता हूँ कि आगामी परीक्षामें मुझे तुम्हारा भावनात्मक सहयोग मिलेगा।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४६५)से।

१५०. पत्र : वेरियर एल्विनको

७ मई, १९३३

प्रिय वेरियर,

तुमसे बात किये बिना मैं परीक्षामें नही उतर सकता। मेरे लिए यह अत्यन्त हर्षकी बात है कि अनेकों सच्चे मित्रोंकी ऐसी शुभ कामनाएँ मेरे साथ हैं जो मुझे इस पथपर आगे बढ़ाती हैं — सत्य ही ईश्वर है और वह उपवासके दौरान वह सारी खुराक देगा जिसकी मुझे जरूरत होगी। अच्छा होता कि मेरे पास तुमसे और बात करनेका समय होता।

मुझे मेरीको तो अलगसे पत्र नहीं ही लिखना चाहिए।

आशा है कि तुम सब ठीक होगे।

तुम सबको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८९२९) से। **दि ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एलविन,** पृ० ८३ से भी।

१५१. पत्र : भुजंगीलाल छायाको

७ मई, १९३३

चि० भुजंगीलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरी चिन्ता न करना। ज्यादा-से-ज्यादा शुद्ध होकर सच्चे सेवक बनना।

बापूके आशीर्वाद

श्री भुजंगीलाल छाया
पोरबन्दर राज्यके वकील
राजकोट
काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६०१)से।

१५२. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

७ मई, १९३३

'गीता' के एक नहीं अनक श्लोकोंका भाव यह है कि जो काम ईश्वरके नाम पर उसकी प्रेरणासे किया जाता है, उसे वही पूरा कराता है। कर्त्ता-धर्ता तो वही है, इसलिए हम तो कोरे-के-कोरे हैं।

जैसे कोई लकड़ीसे दूसरेको मारे तो वह काम लकडीका नहीं, परन्तु लकड़ीके मालिकका है। इसी तरह अगर हम अपना शरीर ईश्वरको सौंप दें और उस शरीरसे कोई काम लें, तो वह काम शरीरका नहीं बल्कि ईश्वरका है। यश-अपयश उसीका है।

इसलिए समझ लेना कि जिसने उपवास कराया है, वह जरूर पार लगायेगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृ० २९५

१५३. पत्र : निर्मलाबहन बी० मशरूवालाको

७ मई, १९३३

मैं जानता हूँ कि असंख्य भाई-बहनोंको दुःख हो रहा है। पर [प्रसवकी] महाव्यथाके बिना कभी जन्म हुआ है? हम नये जन्मके लिए तड़पते हैं, इसलिए मैं तो इस महाव्यथासे शुभकी ही आशा रखता हूँ। धीरज रखकर जो सेवा हो सके सो करना।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग – ३, पृ० २९४-५

१५४. पत्र : जमनालाल बजाजको

७ मई, १९३३

चि० जमनालाल,

तुम्हारे दो पत्र एकसाथ मिले। तार भी मिला। तुम वहाँ बने हुए हो, यह मुझे बहुत अच्छा लगा है। इसी तरह निश्चिंत होकर रहना। मैं मानता हूँ कि उपवास निर्विघ्न समाप्त हो जायेगा।

तुम्हारे दर्दके लिए किसी वैद्य या हकीमसे सलाह लेना भी उचित मालूम होता है। बहुतोंको कानसे पीप निकलकर बन्द भी हो जाती है। इससे डरनेकी कोई वजह नहीं; खान-पानका ध्यान रखो तो काफी है। गाय सामने ले आये और उसके थन साफ करके साफ हाथसे दुहा जाये, तो वह दूध ताजा ही पियो। खानेमें ध्यान रखो। अटशंट कुछ न खाओ, दाल नहीं, मसाले नहीं, कच्ची सब्जी कुछ-न-कुछ चाहिए। टमाटर, सलाद अच्छी वस्तु है। कच्चे प्याज खानेका डॉ० देशमुखका खास आग्रह है।

जानकीबहन[1] का समय किस तरह बीतता है? घूमती-फिरती हैं? ओम[2] कुछ पढ रही है? प्रभुदास क्या करता है?

शान्ति रुइयाको समवेदनाका पत्र लिखा है। राधाकृष्णने खबर दी थी।

तुमको पत्र भेजे जाते रहेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९१५)से।

१ और २. जमनालाल बजाजकी पत्नी एवं पुत्री।

१५५. पत्र : गंगाबहन बी० झवेरीको

७ मई, १९३३

चि० गंगाबहन झवेरी,

तुम्हारा पत्र मिला।

भोजन-सम्बन्धी नियमोंका पालन करते हुए मन शान्त रखोगी तो स्वास्थ्य सुधरना ही चाहिए।

जो भी इलाज शुरू करो उसे चलाते रहना जरूरी है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५४) से।

१५६. पत्र : नानाभाई आई० मशरूवालाको

७ मई, १९३३

भाई नानाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। उपवासको लेकर कोई परेशान न हो। जितनी अधिक हो सके उतनी अधिक सेवा करना।

ईश्वरके उपहारको ठुकरा दूँ, क्या स्नेही इससे प्रसन्न होंगे? या उसका स्वागत करूँ तो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६८७) से।

१५७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

७ मई, १९३३

चि० प्रेमा,

मेरे पत्र तुझे मिले होंगे। तूने उपवास समाप्त कर दिया होगा और तेरा चित्त शान्त हो गया होगा। तेरे उपवासका परिणाम इससे अधिक आये, ऐसा मैं चाहता हूँ। यह तू जानती है।

नी० से खूब परिचय करना। मैं मानता हूँ कि पूर्ण प्रेम उसे शुद्ध कर देगा और शुद्ध रखेगा। उसके पापकी सीमा नहीं थी। उसकी शुभ भावनाओंकी भी सीमा नहीं है। परन्तु व्यभिचारमें उसने सब-कुछ खो दिया है। वह मनपर काबू खो बैठी है। उसके जीवनमें एक क्षणमें महान परिवर्तन करानेकी जिम्मेदारी मेरी है। इसलिए इच्छा बनी रहती है कि उन परिवर्तनोंको वह आत्मसात् कर सके तो अच्छा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४४)से। सी० डब्ल्यू० ६७८३से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१५८. पत्र : जमनाबहन गांधीको

७ मई, १९३३

चि० जमना,

जो समझदारको शोभा दे तुम ऐसे पत्र लिखती हो। उनसे मुझे बहुत प्रसन्नता होती है। तुम दृढ़तापूर्वक अपना स्वास्थ्य सुधार डालो तो मैं तुमसे खूब सेवा लूँगा। तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा हो सकता है, इस विषयमें मुझे कोई शंका नहीं है।

केशुको तुमने बिलकुल ठीक समझाया है। मैंने कभी नहीं सोचा था कि वह इतनी कच्ची बुद्धिका है। उससे मैंने शादीकी बात की थी। वह कहता है कि मैंने नहीं की; इससे आश्चर्य होता है। मैंने तो उसे सरदारकी राय भी बताई थी। किन्तु उसने इनकार ही किया।

उपवासके दिनोंमें भी तुम मुझे पत्र लिखती रहना।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८७९)से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१५९. पत्र : विनोबा भावेको

७ मई, १९३३

मुझे अपने उपवासके औचित्यके प्रमाण प्रतिक्षण मिल रहे हैं। मेरे लेख[1] में ऐसे ही दूसरे उपवासकी आवश्यकताकी ओर तो इशारा है ही। मेरा विचार दृढ़ होता जा रहा है। ऐसा लगता है कि जबतक इस अस्पृश्यताका नाश न हो जाये तबतक उपवासका क्रम चलाते रहना चाहिए। एकके-बाद-एक भाई या बहन उपवास करे तो यह क्रम चलता रहे। इसके बारेमें तुम्हें कुछ सूझे तो मुझे लिखना। देखता हूँ, धार्मिक आन्दोलनको धार्मिक रीतिसे चलानेके लिए इस ज्वलन्त दीपको जगाये रखना आवश्यक है। इस लौ को प्रज्वलित रखनेका भार आश्रमवासी नहीं उठायेंगे तो कौन उठायेगा? इसमें हमें पहल करनी ही चाहिए। यदि मैं उपवास समाप्त कर पाया तो इस सम्बन्धमें मैं भी तुम्हारे साथ विचार करूँगा। किन्तु यदि यह देह जाये तो तुम्हें, काकाको या जो भी बाहर होगा, उसे इसपर विचार करना होगा। मुझसे मिलना आवश्यक दिखाई दे, तो मिल जाना।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४३)से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

१६०. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

७ मई, १९३३

चि० नर्मदा,

देख, उपवासके दौरान ठीकसे काम करना और मनमें बुरे विचार कदापि न आने देना।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० २७७७)से; सौजन्य : रामनारायण एन० पाठक।

१. देखिए पृ० १३९-४०।

१६१. पत्र : माधवदास और कृष्णा कापड़ियाको[1]

७ मई, १९३३

उपवासके बिना भी किसी दिन देहको नष्ट होना ही है न? वह उपवासमें समाप्त हो जायेगी ऐसा क्यों मान लो? विश्वास रखो कि देह रहे या जाये, भलाई दोनों ही में होगी। रोगी होकर मरनेसे यज्ञ करते हुए मरनेमे क्या बुराई है? हिम्मत बाँधकर अपना जीवन शुद्ध रखते हुए जितनी हो सके उतनी सेवा करते रहना।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५४९)से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

१६२. पत्र : शामल आर० रावलको

७ मई, १९३३

चि० शामल,

तेरा पत्र मिला।

तू मेरी चिन्ता न करना। तू स्वयं अच्छा बन और सेवा कर। उससे हरिजनोंका भला ही होगा। यदि ईश्वर मुझे जिन्दा रखना चाहता है तो कौन मेरे प्राण ले सकता है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१४७)से।

१६३. पत्र : राधा गांधीको

७ मई, १९३३

इस बार उपवासके दौरान बाहरकी कम-से-कम चिन्ता करनी है। किन्तु बीमारोंका हाल तो मालूम करता ही रहूँगा।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४८) से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

१. कस्तूरबा गांधीके भाई और भाभी।

१६४. पत्र : छगनलाल और काशी गांधीको

७ मई, १९३३

चि० छगनलाल और काशी,

मैं समय न होनेके कारण तुम्हें पत्र नहीं लिख सका। किन्तु याद दिलानेके लिए तुम्हारा पत्र आ पहुँचा। मेरा आशीर्वाद तो तुम्हें प्राप्त है ही। इस समय तुम्हारा काम यही है कि अपने कर्त्तव्यमें लीन रहो। नारणदासके साथ और योजना बना रहा हूँ। उसे लिखूँगा कि तुम्हें सब बातें लिख भेजे।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९२२३)से; सौजन्य : छगनलाल गांधी।

१६५. पत्र : डी० बी० परचुरेको

७ मई, १९३३

मेरे बदले तुम अनशन नहीं कर सकते। जिसने यज्ञ शुरू किया हो उसे ही शुद्धि करनी है। अस्पृश्यता-यज्ञका श्रीगणेश मैंने किया है, इसलिए अनशन आदि द्वारा उसकी योग्यता मुझे ही प्राप्त करनी है।

वह समय भी आयेगा जब तुम्हारा अनशन करना मुझे अच्छा लगेगा। अपने मनको और अच्छी तरह परख लो, आश्रममें थोड़े दिन और टिक जाओ, तब बादमें उपवास अवश्य करना। इस उपवासमें बच गया तो मैं ही निर्णय करनेमें तुम्हारी सहायता करूँगा। और यदि न बचा तो काका, विनोबा, आदि तो है ही। इन सबके साथ मिलकर निर्णय करना। ना[रणदास]को तो मैंने लिखा ही है। आश्रममें निरन्तर कोई-न-कोई अनशन करे तो मुझे अच्छा लगेगा। अभी तो तुम अपना मन तैयार करना।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४७) से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

१६६. पत्र : आनन्दी एल० आसरको

७ मई, १९३३

उपवास तेरे लिए तो है ही; वह मेरे लिए भी है। तू मरकर किस काम आयेगी? जीवित रहकर अपनी पवित्रता, दृढ़ता, आदि सिद्ध कर। और मुझे तो यही आशा है कि तू ऐसा करेगी। तू उपवासके लायक बन। बादमें तुझे भी उपवास करना होगा। हमारा काम क्या मुझ अकेलेके उपवाससे ही पूरा हो जायेगा? इसलिए काम तू स्वस्थ हो जानेके बाद हाथमें लेना।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४६) से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

१६७. पत्र : बी० एल० फड़केको

७ मई, १९३३

जितनी हो सके उतनी सेवा करते रहो। सभी साथियोंको अनशन-यज्ञमें बैठानेकी योजना बना रहा हूँ।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४४) से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

१६८. पत्र : सुलोचना ए० शाहको

७ मई, १९३३

चि० सुलोचना,

तेरा पत्र मिला। खूब सेवा और नियमोंका अच्छी तरहसे पालन करती रह।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० २३३६९) से।

१६९. पत्र : पांडुरंग नाथूजी राजभोजको

७ मई, १९३३

भाई राजभोज,

रामजी ने कहा तुमारे दोनोको देहातोंमे हरिजनोमे घूमना। मुझे यह बात नहिं जचती है। मेरा ख्याल है कि तुमारे आश्रममें ही रहकर जो सीखनेका है वह सीखना और आश्रम जीवनमें और ओतप्रोत बनना। रामजी बहुत अस्वस्थ है किसी पर विश्वास नहि है। शिस्तका पालन करना नहि चाहता है। इनके घूमनेसे क्या लाभ हो सकता है?

इसलिए उनको समझाओ और आश्रममें शांत होकर जो बन सके वह करता रहे। इसमें जो हो सके वह करो।

इतना कहते हुए भी यदि तुमारा दिल घूमनेका ही पसंद करे तो अपने नामसे घूमो, आश्रमके नामसे नहिं। आश्रम कार्य इस वख्त व्याख्यानोंका नहि है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९३) से।

१७०. पत्र : नारणदास गांधीको

७ मई, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हें कल पत्र लिखा था। उसके बाद रामजी, डॉ० शर्मा मिले। अमतुस्सलाम और डंकन बम्बईमें है।

रामजी हठ कर रहा है कि उपवासकी नही तो गाँवोंमे घूमनेकी अनुमति दे दूं। राजभोज भी साथ हो यह उसकी इच्छा है। मैने कहा है, तुमसे अनुमति लें, तुम्हें उचित लगे तो बेशक दोनों चले जाये। आश्रमके नामसे कोई न जाये। आश्रमकी ओरसे तो जो व्यवस्था वहाँ तुम करोगे उसीके अनुसार काम होना चाहिए। किन्तु मैं अपनी बुद्धिसे तुम्हारे अनुभवको ज्यादा गिनूँगा। इसलिए तुम्हें जैसा ठीक लगे वैसा करना। इसके साथके पत्रोंको पढ़कर, वे जिन-जिनके है, उन्हें भेज देना। तार तो देना ही होगा।

नी० का बंगलोरमे पतन हुआ था, यह मुझे मालूम था। उसने लिखा भी था, पर उसका अर्थ ठीक जिस दिन [उसे आश्रम] भेजा उससे एक दिन पहले ही समझ

सका। यदि गर्भ रहा ही हो तो मुझे अच्छा लगेगा। इससे उसकी परीक्षा होगी और हमारी भी। यदि उसका मन साफ हो गया हो तो उसे आश्रय देना हमारा कर्त्तव्य है। उसको लिखा पत्र पढ़ना। उसके नाम जो भी पत्र आये उसे खोल लेना और पढ़कर ही उसे देना। वह जो लिखे वह जरूरी ही हो तो उसे जाँच कर डाकमें डालना। दूसरे काम कम करके हरिजन बस्तीमें नियमसे काम करना।

डॉ० शर्मासे मुलाकात सुखकर नहीं हुई। मुझे उसकी बातें आदि अच्छी नहीं लगी। परशुरामकी बातोंमें बहुत सत्य दिखाई दिया है।[1] वह मनमें आश्रमके प्रति तिरस्कार लेकर आया था, यह मैं देख रहा हूँ। बहुत ज्यादा बात नहीं कर सका। कल थोड़ी और करूँगा। वह अब लौटकर नहीं आयेगा। भगवानजी ने अपने पत्रोंमें उसके कामकी प्रशंसा की है। उसके वहाँसे आनेवाले पत्र अच्छे लगे थे। तुम परीक्षा नहीं कर पाये। क्या वह तुम्हारी अनुमति लेकर आया था? [अब] यह सब पूछना निरर्थक लगता है। उपवासके दौरान मुझे आश्रमकी चिन्ता नहीं करनी है। वह तो तुम्हें करनी है। तुम्हे जो ठीक लगे सो करना। तुम्हें मददकी जरूरत हो तो काका या विनोबाको बुला सकते हो। अपनी मर्जीके माफिक परिवर्तन कर लेना। विचार करनेके लिए कम फुरसत मिलती हो तो समय निकालना। कुसुम, आनन्दी और नी० की खबर जानना चाहूँगा। औरोंके बारेमें लिखते रहना। कुछ लिखने लायक होगा तो महादेव लिख देगा। [सभी-कुछ] अपनी इच्छाके अनुसार करना। मुझे क्या चाहिए यह तुम जानते हो।

परशुराम आये और तब भी तुम्हारी इच्छा उसे न रखनेकी हो तो तुम उसकी छुट्टी कर सकते हो। शायद वह वहाँ नहीं आयेगा। यहाँ तो विचित्र घटनाएँ होती रहती हैं। इसलिए दो घंटेके बाद क्या होगा, यह नहीं कहा जा सकता। वह स्पीगल तो एकदम मद्रास जा पहुँची है। ईश्वर तुम्हें स्थितप्रज्ञता और आवश्यक शक्ति दे। जिनमें स्थितप्रज्ञता है उन्हें शक्ति प्राप्त होती है, ऐसी भगवानकी प्रतिज्ञा है। मेरे अक्षरोंमें अभी एक और पत्रकी आशा करना। इसके बाद प्रभुकी इच्छा हुई तो २९ के बाद।

बापू

[पुनश्च:]

नी० लिखती है कि वह तीन बजे उठती है तो पाखाने नहीं जा सकती। छात्रालयका दरवाजा बन्द रहता हो तो इसका प्रबन्ध अन्दर ही होना चाहिए। जिसे उठा सकें ऐसा कोई पात्र मैदानके कोनेमें रख दें या उसकी व्यवस्था कोठरीमें करें।

जो लोग कच्ची खाई जानेवाली सब्जियाँ माँगें उन्हें कच्ची ही देना अच्छा है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७४ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

1. देखिए पृ० १२८-३०।

१७१. तार : नारणदास गांधीको

८ मई, १९३३

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

राजभोज, रामजीको प्रचार दौरेपर जानेसे जोर देकर मना करो। रामजीको अपनी शंकाका समाधान कर लेना चाहिए।[1]

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१७२. तार : 'इंडियन ओपिनियन' को

[८ मई, १९३३][2]

'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स (नेटाल)

आनन्द मनाओ। कर्त्तव्यका पालन करो।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९०८४) से।

१७३. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

[८][3] मई, १९३३

प्रिय चार्ली,

सोमवारकी सुबह है। अभी ३ नहीं बजे हैं। तुम्हारा पत्र पहला पत्र है जिसे मैं शुरू कर रहा हूँ। यह अपने-आप हाथमें आ गया है और इससे मुझे खुशी हुई है। तुमने मुझे जो तार भेजा[4] उसे मैं बहुमूल्य मानता हूँ। मैं सोच रहा था

१. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", और पा० ना० राजभोजको, ७-५-१९३३।

२. साधन-सूत्रमें यह और इससे पहलेवाला तार एक ही कागजपर लिखे गये हैं।

३. साधन-सूत्रमें "७" तारीख है किन्तु पत्र सोमवारको लिखा गया था जो ८ मई, १९३३ को पड़ता है। देखिए अगला शीर्षक भी।

४. लन्दनसे प्राप्त तार इस प्रकार था : "आपके निर्णयसे सहमत हूँ। समझा, स्नेह। चार्ली।"

कि मेरे निर्णयपर तुम्हारी जाने क्या प्रतिक्रिया होगी। तुम उसका मर्म समझ गये, इसे भगवानकी कृपा मानता हूँ। मुझे इसका केवल आभास ही था कि मुझे उपवास क्यों करना पड़ रहा है। लेकिन जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा है, मुझे उसके औचित्यके अधिकाधिक प्रमाण मिलते जा रहे हैं। मै ऐसी घटनाओंके बीच शान्त खड़ा हूँ, या लगता है कि शान्त हूँ जो, यदि उपवास पास आ रहा न होता, तो मेरे टुकड़े-टुकड़े कर देती। अब मै पहलेसे अधिक आश्वस्त भावसे उन्हें उस परमपिताके चरणोंमे डाल सकता हूँ।

मै जानता हूँ कि तुम तथा हमारे अनेक मित्र मेरे लिए प्रार्थना कर रहे हो। उपवासके दिनोंमें ये प्रार्थनाएँ मेरी खुराक होगी।

आशा है कि तुम्हारा भाई अब पहलेसे अच्छा होगा। वह न हो तो भी तुम्हारे परिवारके सदस्योंको इस बातसे बड़ी राहत मिलेगी कि तुम इतने करीब हो।

तुमको तथा उन सब मित्रोंको जिन्हें मै लिख नहीं सकता, मेरा प्यार।

तुम्हारा,
मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९८५) से।

१७४. पत्र : मीराबहनको

८ मई, १९३३

चि० मीरा,

इस समय प्रातःकालके ३.१० हुए हैं। मैने अपना पहला पत्र पूरा किया है। वह एन्ड्रयूजके नाम है। मै ही नही, हम सब तुम्हें याद कर रहे हैं। लोग मुझे तुम्हारे बारेमें लिखते या कहते हैं और यह सुझाते है कि मुझे तुम्हारी खातिर उपवास छोड देना चाहिए। यह मेरे प्रति तुम्हारे प्रेमकी जबर्दस्त सराहना हुई; परन्तु यह उसकी अनुद्दिष्ट टीका भी है। मै चाहता हूँ कि मैं खुद और तुम्हें जाननेवाला हर शख्स यह अनुभव करे कि तुम्हारा प्रेम इतना गहरा, सच्चा और ज्ञानपूर्ण है कि शरीरसे चाहे जितने अरसेतक वियोग हो जाये, वह उसका भार सहन कर लेगा। मैं जानता हूँ कि वह स्थिति आयेगी, आ रही है। वह बुद्धिसे नही आ सकती। हृदयसे आयेगी। असली प्रेमका आधार सर्वथा उसका आध्यात्मिक अंश होता है, यद्यपि पहले वह उत्पन्न इन्द्रिय-बोधसे होता है। मैं चाहता हूँ, तुम भी मेरी तरह महसूस करो कि यह उपवास ईश्वरकी आजतककी किसी भी देनसे बड़ी देन है। यदि मैं इसे भयभीत होकर काँपते हुए कर रहा हूँ, तो यह मेरी दुर्बल श्रद्धाका चिह्न है। परन्तु इस बार मेरे भीतर जैसी खुशी है, वैसी मैंने पहले कभी महसूस नहीं की। मै चाहता हूँ तुम मेरी इस खुशीमें भागीदार बनो।

इसलिए तुम भोजन करना मत छोड़ना। ईश्वरको धन्यवाद देकर भोजन करो और अपने-आपको सेवाके लिए स्वस्थ रखो। वह समय आ सकता है जब तुम्हें

ऐसा ही उपवास करना पड़े। कुछ परिस्थितियोंमे यही एक हथियार होता है; यह ईश्वरने हमें बिलकुल ही लाचारीके समय काममे लानेको दिया है। हमे इसका उपयोग करना नहीं आता या हम समझ लेते है कि इसका आदि और अन्त केवल शरीरको आहार न देना ही है। यह ऐसी चीज नहीं है। भोजन न करना अनिवार्य तो है, परन्तु वह इसका सबसे बड़ा अंग नहीं है। सबसे बड़ा अंग तो है प्रार्थना, ईश्वरसे लौ लगाना। यह शारीरिक भोजनकी कमी पर्याप्तिसे भी अधिक मात्रामे पूरी करता है।

यथासम्भव महादेव तुम्हें रोज एकाध पंक्ति लिख दिया करेंगे।

ईश्वर तुम्हें शक्ति दे।

स्नेह।

बापू

[पुनश्चः]

बा के लिए पत्र[1] साथमें है।

[पुनश्चः]

आशा है, तुम्हें मेरा शनिवारका पत्र[2] मिल गया होगा। एक पत्र बा के नाम भी भेजा गया था।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६९०) से; सौजन्य : मीराबहन।

१७५. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

८ मई, १९३३

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। उससे तुम्हारा प्रेम छलकता है। ऐसा समय आये तो अभी मेरी नजरमे तुम्हारा घर ही है। वैसे, जैसाकि मैं कह चुका हूँ, मुझे उस समय हरिजनोंके पास रहना सबसे अधिक प्रिय होगा।[3] किन्तु उसमें बहुत कठिनाइयाँ देखता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७८) से। सी० डब्ल्यू० ४८३० से भी; सौजन्य : प्रेमलीला ठाकरसी।

१. देखिए पृ० १४५।

२. देखिए पृ० १३२।

३. प्रेमलीला ठाकरसीने गांधीजी को जेलसे छूटनेपर अपने बंगलेमें आकर ठहरनेका निमन्त्रण दिया था। देखिए पृ० १६३ भी।

१७६. पत्र : मणिबहन पटेलको

[८ मई, १९३३][१]

चि० मणि,

तुझे शनिवार[२] को पत्र लिखा है। तू जवाब भी रोज लिख सकती है और इसमें मृदुका भी भाग हो सकता है। कोई बहन दुखी न हो। परन्तु सब अपनेमें जहाँ-जहाँ विकार भरा हो उसे निकालनेका प्रयत्न करें। कोई-न-कोई यथासम्भव रोज लिखा करेगा। मैं खूब शान्त हूँ। हम सब आनन्द कर रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृ० १०७

१७७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

८ मई, १९३३

चि० प्रेमा,

क्या तुझसे अभीतक कुछ कहना बाकी है? जिसमें तू अपना कल्याण समझे उसे सारे जगतके विरुद्ध जाकर भी करना। मेरी दृष्टिसे ऐसा करना आश्रममें कठिन नहीं होगा। परन्तु तेरे लिए वही चीज सही है जो तुझे सूझे।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४५) से। सी० डब्ल्यू० ६७८४ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।
२. देखिए पृ० १३६-७।

१७८. पत्र : नारणदास गांधीको

८ मई, १९३३

चि० नारणदास,

मेरे महत्त्वपूर्ण पत्रोंका सार या नकल छगनलाल आदिको न भेजते हो तो भेज दिया करो। मै देखता हूँ कि छगनलालको कुछ खबर नही मिलती। विनोबाके साथ भी ऐसा ही होगा। प्रतियाँ तैयार करवानेका कुछ प्रबन्ध करना।

इसके साथ मेरी बारका पत्र है। वह वहाँ लौट आये तो उसका स्वागत करना।

दूसरा पत्र धीरूके बारेमें नन्दलाल बोसका है। इस पत्रके अनुसार धीरू जुलाईसे पहले नहीं जा सकेगा। जुलाईमे मजेसे जा सकता है। जो पन्द्रह रुपये लिखे है वे भोजनके लिए है। सो किस प्रकार, यह मैं ठीकसे समझा नही। किन्तु फिलहाल कुछ-भी करनेकी जरूरत नही। यदि मै उपवासमें बच गया और आवश्यकता दिखाई दी तो स्पष्टीकरणके लिए लिखूँगा। या बादमें तुम पूछ लेना। पत्र धीरूको आश्वासन देनेके लिए है। इस बीच जितना वहाँ बैठे-बैठे हो सके उतना करे। तीन सप्ताहकी इस अवधिमे अपने-आपको शुद्ध करे।

नी० को तुम्हें ज्यादा समय देना पड़ेगा। उसके मनमे क्या है यह जान लेना। उसके पत्र आते हों तो उन्हे खोलकर पढ़ लेना। वह जान-बूझकर कुछ छिपाये ऐसा नहीं है। किन्तु उसका अपने मनपर ज्यादा काबू नही है। देखता हूँ कि मेरे इस उपवासमे उसका काफी हाथ है। मुझे यह मालूम न था। यदि कोई चीज नी० को सहारा दे सकती है तो यही उपवास दे सकता है। और यदि उसे वहाँ भेजकर मैंने भूल की है तो मेरी भूलको भी यही उपवास धोकर साफ कर सकता है। मैं मानता हूँ कि बहुत-से जवान बच जायेंगे। यदि वह गर्भवती है तो उसका कारण . . .[1] नामक एक हरिजन पुरोहित है। इसने उसको फँसाया या उसने इसको, यह कहना मुश्किल है। मेरे विचारसे यदि गर्भ रहा भी हो और नी० इस स्थितिको स्वीकार कर ले तो उसके द्वारा उसका उद्धार हो सकेगा। जितना स्नेह दे सको उतना देकर इस वृक्षको बढ़ाना।

मार्गरेट मद्रास चली गई है। वहाँ रहकर उपवास करनेकी धमकी दे रही है। उपवास करेगी तो उसके शरीरको लाभ होगा। काफी चर्बी चढ़ी हुई है; वह कम हो जायेगी।

डंकनका विचार भारी भूलसे भरा हुआ है। उसे समझाऊँगा।

रसोई और दुग्धालय-सम्बन्धी सुझाव पसन्द आयें तो उनपर अमल करना।

१. नाम छोड़ दिया गया है।

प्रार्थनामे फेरफार न करो, तो भी उसके तीन भाग करना। अर्थात्, पहले 'गीता' पाठ, उसके बाद संस्कृत श्लोक, उसके बाद भजन। जो लोग 'गीता' पाठमे भाग ले सकते है, वही उस समय आयें। दूसरोंके आनेके लिए कोई नैतिक बन्धन न माना जाये। जो उस समय आनेका विचार करे वह अपना नाम दे दे। उसके बाद संस्कृत श्लोक। उनमें भी जो आना चाहें और जिन्हें ये श्लोक आते हों वही लोग आयें। उसके बाद भजन और रामधुन। तीनों ठीक प्रकारसे किये जाये तो दस-दस मिनट लगेंगे। इस प्रकार जिसमें सबको आना चाहिए वह भाग अन्तमें है। जो लोग जिस किसी भागमे आना चाहते हैं उसके लिए नाम लिखवा दें, तो कौन अपनी प्रतिज्ञाका पालन कर रहा है, इसका ध्यान रखा जा सकेगा। दरवाजेके सामने बत्ती, ऊँचा डेस्क और रजिस्टर हो तो आते समय सभी अपने नामके सामने कोष्ठकमें चिह्न लगा दे या हस्ताक्षर करना ठीक लगे तो हस्ताक्षर कर दे, अन्तिम भागमें आने लायक आस्था भी जिसमे न हो उसके लिए आश्रममें रहनेका आग्रह छोड़ देना ही ठीक है। जिसे आश्रमके इस अभिन्न अगमें विश्वास न हो वह न तो आश्रमसे कुछ ले सकता है और न ही आश्रमको कुछ दे सकता है।

आश्रमके काम आ सकनेके उद्देश्यसे कोई वहाँ न रहे। 'माँके काम आऊँ', जो सन्तान ऐसा सोच लेती है, वह माँकी सेवा नही करती। जो आश्रमको माँ या सर्वस्व ही समझे, वही वहाँ रहे। सभी सच्चे मनसे ऐसा विचार करके रहें तो तीन सप्ताहकी यह अवधि आश्रमका नाम उज्ज्वल करेगी। इस समयका सबसे अच्छा उपयोग आश्रम ही कर सकता है और उसे करना चाहिए। मैं यही चाहता हूँ कि सभी सत्यका पालन करें। आश्रमका कार्य चलानेके लिए व्यक्तियोंकी जरूरत पड़े तो मजदूर रखें और उन्हें भाई-बहन समझकर उनके जीवनको अपना समझें और उसमें भाग लें। यह सम्बन्ध शायद अधिक स्वाभाविक होगा। जिस प्रवृत्तिके बिना काम चलता हो उसे छोड़ दें। फल या सब्जीकी खेती तथा दुग्धालय और उससे सम्बन्धित खेती नहीं छोड़ सकते। कताई-सम्बन्धी सभी क्रियाएँ यज्ञका भाग है। बच्चोंको लेना बन्द करे। पूरा आश्रम विद्यालय है। इसलिए मैंने जो पहले लिखा है उसीपर दृढ़ हूँ। मजदूरकी तरह रहनेके लिए आवश्यक जानकारी सिखानेकी शक्ति हममे होनी चाहिए और है। इतनी सुविधा रखें तो काफी है। हम इस बातका रहस्य समझ नही पाये, इसीलिए असन्तुष्ट रहते हैं और सब काम बिगड़ता है। हमारे बालक मजदूर है और हम उन्हे मजदूर ही रखना चाहते हैं, इतना समझमे आ जाये तो हम अनेक रोगोंसे बच सकते हैं, ऐसा मेरा विचार है। इस दृष्टिसे दी गई शिक्षा सामान्य शिक्षासे अलग ही होगी। इस वक्त तो इतना ही लिखता हूँ। इसमें से जितना पसन्द हो उतना ही लेना। जो पसन्द न हो उसे छोड़ देना।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१७९. पत्र : अमृतलाल वी० ठक्करको

८ मई, १९३३

भाई ठक्कर बापा,

घनश्यामदासके पत्र और तारमें कहा गया था कि आप आ रहे हैं।[1] इसीलिए मैंने नही लिखा। अब आपका पत्र मिला है। आप समाचारपत्रोंसे सार संग्रह करेंगे — लेकिन उनसे ज्यादा कुछ नहीं मिल सकता। समाचारपत्रोंमें जो-कुछ छपता है उसका कम-से-कम ७५ प्रतिशत तो छोड़ ही देना चाहिए। समाचारपत्रोंके समाचारोंको तबतक प्रामाणिक नहीं माना जा सकता जबतक कि उनके पक्षमें स्थानीय निरीक्षकका प्रमाणपत्र न हो। हमारे अपने विश्वसनीय संवाददाता जगह-जगह हों और वे समाचार भेजें, तो यह बात मुझे अच्छी लगेगी कि आप उनका सार मुझे भेजें। तथापि, आप अपना प्रयोग कर देखें। आपको ही यह समझमें आ जायेगा कि उन प्रयोगोंसे कुछ फल निकलनेवाला नहीं है। आप वहाँ हैं इसलिए मैं निश्चिन्त हूँ। राम राम राम।

बापू

श्री अ० वि० ठक्कर
हरिजन सेवक संघ
बिड़ला मिल्स
दिल्ली

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०४४९) से; सौजन्य : हरिजन सेवक संघ। अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२१) से भी।

१. देखिए पृ० ८८।

१८०. वक्तव्य : अनशनके उद्देश्यपर[1]

८ मई, १९३३

प्रभुने, सत्यने जो अग्निपरीक्षा मेरे लिए भेजी है, मेरे सामने उसका औचित्य प्रति दिन स्पष्ट होता जा रहा है। अगर मै उपवास न करता तो जो नई बातें मुझे मालूम हो रही हैं, वे मुझे निष्प्राण करके ही छोड़ती। हरिजन-आन्दोलनके लिए इस उपवासका चाहे जो मूल्य हो, पर यह निश्चय है कि यह मेरी रक्षा करेगा। इस उपवासके बाद मैं जिन्दा रहता हूँ या नही, यह तो कोई महत्त्वकी बात नहीं है। पर अगर मैं यह उपवास न करता तो, बहुत सम्भव है, मै हरिजन-सेवा या किसी अन्य सेवाके लिए किसी कामका न रह जाता।

मेरे जिन मित्रोंने मुझे अनशनसे विमुख करनेके लिए जरूरी तार दिये, मुझे उम्मीद है कि वे अब इस बातको समझ लेंगे कि मेरे-जैसे मनुष्यके लिए ऐसे अनशन अनिवार्य हैं। ईश्वरीय आदेशसे प्रेरित होकर यह व्रत ठाना गया है, अपने इस दावेके अलावा मैं ऐसा कह रहा हूँ।

मै तार भेजनेवाले मित्रोंको उनकी पहुँचकी अलग-अलग सूचना देनेमें असमर्थ था। इसके लिए वे मुझे क्षमा करें। अत्यधिक कार्य-भारके कारण समय इतना थोड़ा था कि मेरे लिए उन निरन्तर चले आनेवाले सारे तारोंका अलग-अलग जवाब देना असम्भव था।

अब चूँकि यह लिखनेके दो घंटे बाद मेरा अनशन आरम्भ हो जायेगा, इस समय मैं अपने तमाम मित्रों और हितचिन्तकोंसे अनुरोध करता हूँ कि वे परमेश्वरसे मुझे ऐसी शक्ति देनेकी प्रार्थना करें कि मैं निर्बल हुए बिना यह अग्निपरीक्षा पार कर जाऊँ। मैं स्वीकार करता हूँ कि मेरे पास सिवाय उसके जो ईश्वर मुझे दे दे, अपनी कोई ताकत नहीं है। उसने मुझे आजतक सहायता देनेमे उपेक्षा नही की, मुझे विश्वास है, वही अब भी मेरी सहायता करेगा।

एक हरिजन-सघका मुझे इस आशयका तार मिला है कि यह अनशन अनावश्यक है, क्योंकि हरिजनोंको सवर्ण हिन्दुओंकी सहायताकी कोई जरूरत नही है। अपनी विचार-दृष्टिसे संघको ऐसा कहनेका अधिकार है। पर यह साफ हो जाना चाहिए कि यह उपवास हरिजनोंपर कोई अहसान लादनेकी नीयतसे नही किया जा रहा है, यह तो मैंने अपनी और अपने सहयोगियोंकी आत्मशुद्धिके लिए ही किया है।

हरिजन-सेवा एक ऐसा कर्त्तव्य है जो सवर्ण हिन्दुओंपर कर्जकी तरह चढ़ा हुआ है। अपने ही सगोके प्रति किये गये अत्याचारोंके लिए उन्हें अब प्रायश्चित्त करना होगा। हरिजन-सेवा उसी प्रायश्चित्तका अंग है। कुछ हरिजन भाइयोंने गुस्सेमें

१. गांधीजी के उपवास शुरू करनेके तुरन्त बाद दोपहरके १२ बने यह वक्तव्य जारी किया गया था।

आकर विरोध किया है, उसे मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ। फिर भी मुझे आशा है कि सवर्ण हिन्दुओंके उदारतापूर्वक प्रायश्चित्त करनेका समय अभी भी निकल नहीं गया है। वह प्रायश्चित्त अब भी किया जा सकता है। उनकी ओरसे जो अगणित सन्देश आये हैं, निस्सन्देह उनसे मालूम होता है कि प्रायश्चित्त करना उन्हें स्वीकार है।

सनातनियोंको तो मेरे इस उपवासमें भी दबावकी गन्ध आई है, जबकि वे यह जानते हैं कि हरएक मन्दिर खोल दिया जाये और अस्पृश्यता जड़से उखाड़कर फेंक दी जाये तो भी यह अनशन अपनी अवधिके पहले भंग नहीं किया जा सकता। दिलसे तो शायद वे भी अनुभव करेंगे कि इस अनशनमें दबाव डालने-जैसी कोई भी बात नहीं है। यह अनशन तो कटुता हटाने, हृदय शुद्ध करने और यह स्पष्ट कर देनेके लिए किया गया है कि हरिजन-आन्दोलन एक बिलकुल धार्मिक आन्दोलन है और उसका संचालन सर्वथा धार्मिक लोगों द्वारा ही किया जाना चाहिए। ईश्वर इस अग्निपरीक्षाको सफल करे और इसका उद्देश्य पूर्ण करे।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-५-१९३३

१८१. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

८ मई, १९३३

मुझे यह अचानक ही मालूम हुआ, इसलिए मैं तैयार नहीं था।

कल 'वीकली टाइम्स' देखनेके बाद मैंने और सरदार वल्लभभाई पटेलने इस विषयपर थोड़ी बातचीत की कि यदि मैं अचानक रिहा कर दिया जाऊँ तो मुझे कहाँ ठहरना चाहिए। सबसे पहले तो साबरमती जाने और आश्रमके पास रहनेका विचार आया। यदि वैसा न हो सके या उचित न लगे तो लेडी ठाकरसीका निमन्त्रण स्वीकार करनेकी बात सोची। निश्चय ही सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीका निमन्त्रण भी है, दलितवर्ग मिशनका भी है। लेकिन जब कर्नल डॉयलने मुझे सूचना दी तो मुझे लगा कि लेडी ठाकरसीके पास जाना ही सबसे ज्यादा अच्छा होगा, और मैं यहाँ आ गया हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १०-५-१९३३

१. साधन-सूत्रके अनुसार, एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाका प्रतिनिधि जब गांधीजी से लेडी ठाकरसीके घरपर मिला तो उन्होंने उससे कहा कि जेलसे रिहा होनेकी सूचना उन्हें जेलोंके महा-निरीक्षक कर्नल डॉयलने ६-४५ पर दी थी। जब उनसे पूछा गया कि क्या वे उपवासके अन्ततक लेडी विठ्ठलदास ठाकरसीके घरमें ही ठहरेंगे, तो उन्होंने उत्तर दिया कि इस विषयमें अभी कुछ पक्का नहीं कहा जा सकता।

१८२. वक्तव्य: सविनय अवज्ञा आन्दोलन मुल्तवी करनेपर

८ मई, १९३३

इस रिहाईसे मुझे जरा भी आनन्द नहीं हो सकता। सरदार वल्लभभाई पटेलने कल ठीक ही कहा कि इस रिहाईका फायदा मै सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाने या उसका मार्गदर्शन करनेके लिए कैसे उठा सकता हूँ? इस प्रकार सत्यके एक शोधकके नाते और स्वाभिमानी मनुष्यके नाते मुझपर इस रिहाईसे बड़ा बोझ और तनाव आ पड़ा है। मेरा उपवास तो जारी रहेगा ही। मैंने आशा रखी थी और अब भी रखता हूँ कि उपवासके दिनोंमें किसी भी तरहकी चर्चामें भाग न लूँगा और किसी भी बातसे क्षुब्ध नहीं होऊँगा। यदि मैंने अपने मनको हरिजन-कार्यके सिवाय बाहरकी और किसी भी बातमें लगने दिया तो उपवासका सारा उद्देश्य ही विफल हो जायेगा। इसके साथ ही जब मैं छूट गया हूँ, तो अपनी थोड़ी शक्ति सविनय अवज्ञा आन्दोलनका अध्ययन करनेमें लगानेके लिए भी मै बँधा हुआ हूँ।

अलबत्ता, अभी तो मैं इतना ही कहूँगा कि सविनय अवज्ञा-सम्बन्धी मेरे विचारोंमें तिल-भर भी फर्क नहीं पड़ा है। सविनय अवज्ञा करनेवाले अनेक लोगोंने जो बहादुरी दिखाई है और कुर्बानियाँ की हैं, उनके लिए मेरे दिलमें प्रशंसाके सिवाय और कोई भावना नहीं है। पर इसके बाद भी मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि इस आन्दोलनमें जो गोपनीयता घुस आई है, वह इसकी सफलताके लिए घातक है। इसलिए आन्दोलन चलाना ही हो, तो देशके अलग-अलग भागोंमे जो लोग इस आन्दोलनका संचालन कर रहे हैं, उनसे मै आग्रहपूर्वक कहूँगा कि वे छुपाकर कुछ भी न करें। यदि ऐसा करनेसे उन्हें एक भी सविनय अवज्ञा करनेवाला मिलना मुश्किल हो जाये, तो इसकी मुझे परवाह नहीं।

इसमें शक नहीं कि इस समय आम जनतापर आतंक छा गया है। अध्यादेशोंने लोगोंको दबा दिया है। मैं यह मानता हूँ कि अधिकांशमें लोगोंकी इस भयभीत दशाके लिए आन्दोलनके गुप्त तरीके जिम्मेदार हैं। सविनय अवज्ञा आन्दोलन उसमें भाग लेनेवाले पुरुषों और स्त्रियोंकी संख्यापर नहीं, बल्कि उनके गुणोंपर निर्भर करता है। अगर मैं आन्दोलनका संचालन करता होऊँ, तो संख्याका नहीं, गुणोंका ही आग्रह रखूँ। यदि यह हो जाये तो तुरन्त ही आन्दोलनका स्तर उठ जाये।

वास्तविक आन्दोलनके बारेमें मैं और कुछ नहीं कह सकता। ऊपर मैंने जो विचार रखे हैं, वे पिछले कई महीनोंसे मेरे मनमें भरे हुए थे। मैं कह सकता हूँ कि मैंने जो-कुछ कहा है सरदार वल्लभभाई भी उससे सहमत हैं। मुझे यह पसन्द हो या न हो, परन्तु इन तीन हफ्तोंके दरम्यान तमाम सविनय अवज्ञा करनेवालोंका

मन भयानक असमंजसमें पड़ा रहेगा। इसलिए कांग्रेसके अध्यक्ष बापूजी माधव राव अणे एक या डेढ़ महीनेतक इस आन्दोलनको मुल्तवी रखें, तो अच्छा हो।[1]

अब मैं सरकारसे एक अपील करूँगा। अगर वह चाहती है कि देशमें सच्ची शान्ति स्थापित हो, और यदि उसे ऐसा लगता है कि आज देशमें सच्ची शान्ति नहीं है, और यदि वह यह मानती है कि अध्यादेशोंसे शासन करना कोई शासन करना नहीं कहलाता, तो आन्दोलन स्थगित होनेका उसे लाभ उठाना चाहिए और सविनय अवज्ञा करनेवाले तमाम कैदियोंको बिना शर्त्त छोड़ देना चाहिए। अगर मैं इस परीक्षासे पार हो गया, तो मुझे परिस्थितिकी जाँच करने तथा कांग्रेसके नेताओंको और सरकारको भी सलाह देनेका मौका मिलेगा। इंग्लैंडसे लौटनेके बाद जिस मंजिलपर मुझे नजरबन्द कर दिया गया था, उसी मंजिलसे मैं फिर बातचीत शुरू करना पसन्द करूँगा।

मेरे प्रयत्नसे सरकार और कांग्रेसके बीच कोई समझौता न हो सके और सविनय अवज्ञा फिर शुरू हो जाये, और उस समय सरकारकी इच्छा हो, तो वह फिर अध्यादेशोंका शासन शुरू कर सकती है।

पर सरकारकी दृढ़ इच्छा हो, तो मुझे इस बारेमें कोई शक नहीं कि कोई कार्य-पद्धति निकाली जा सकती है। अपनी ओरसे तो इस बारेमें मेरे मनमें जरा भी शंका नहीं है कि जबतक इतने ज्यादा सत्याग्रही जेलोंमें बन्द हैं, तबतक सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द नहीं किया जा सकता। जबतक सरदार वल्लभभाई, खान साहब, अब्दुल गफ्फारखाँ, पंडित जवाहरलाल नेहरू और दूसरे लोगोंको जिन्दा गाड़ रखा गया है, तबतक कोई समझौता नहीं हो सकता। सच तो यह है कि जेलके बाहरके किसी भी आदमीको सविनय अवज्ञा वापस लेनेका अधिकार नहीं है। मुझे जिस समय गिरफ्तार किया गया, उस समय कांग्रेसकी जो कार्य-समिति अस्तित्वमें थी उसीको यह अधिकार है।

सविनय अवज्ञा आन्दोलनके बारेमें मैं और कुछ नहीं कह सकता। शायद मैं जरूरतसे ज्यादा कह चुका। लेकिन यदि मुझे और कुछ कहना भी हो तो वह तभी कह सकता हूँ जब मुझमें कुछ कहनेकी ताकत शेष हो। मैं अखबारवालोंसे प्रार्थना करूँगा कि वे मुझे अब जरा भी तकलीफ न दें। मुझसे मिलने आने की इच्छा रखनेवालोंसे भी मैं आग्रह करता हूँ कि वे अपनेपर अंकुश रखें। वे यही समझें कि मैं अभीतक कैद हूँ। मैं उपवासके दिनोंमें राजनैतिक या दूसरी चर्चाएँ करने योग्य नहीं रहूँगा।

मैं चाहूँगा कि मुझे पूरी तरह शान्तिसे रहने दिया जाये। सरकारको भी मैं इतना बता देता हूँ कि अपनी इस मुक्तिका मैं दुरुपयोग नहीं करूँगा। इस परीक्षासे मैं कुशलतापूर्वक पार हो जाऊँ और मुझे मालूम हो जाये कि राजनैतिक वातावरण पहलेकी तरह ही क्षुब्ध बना है, तो सविनय अवज्ञाको आगे बढ़ानेके लिए खुले

१. सुझावको मानकर ९-५-१९३३ से आन्दोलन ६ हफ्तोंके लिए स्थगित कर दिया गया था।

या छिपे तौरपर एक भी कदम उठाये बिना मै सरकारसे कह दूँगा कि यरवदामें जिन साथियोंको मै लगभग छोड़ आया हूँ, मुझे वह उनके पास ले जाये।

यह मेरा बड़ा सौभाग्य था कि मै सरदार वल्लभभाईके साथ रहा। मै उनकी अद्‌भुत बहादुरी और उत्कट देशप्रेमको अच्छी तरह जानता था, लेकिन मैं कभी उनके साथ नहीं रहा था। पिछले सोलह महीने मुझे वह सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन्होंने जो स्नेह मुझपर ऊँड़ेला उससे मुझे माँ का स्नेह याद आ जाता है। मै नही जानता था कि उनमे माताके गुण हैं। मुझे यदि जरा-सा भी कुछ हो जाता था तो वह अपने बिस्तरसे बाहर निकल आते। मेरे आरामसे सम्बन्धित हर छोटी-से-छोटी बात की वह देखरेख रखते थे। उन्होंने और मेरे दूसरे सहयोगियोंने मुझे कुछ न करने देनेकी आपसमे सलाह कर रखी थी, और मै आशा करता हूँ कि सरकार मेरे कहेपर विश्वास करेगी कि हम जब-जब राजनैतिक समस्याओंपर चर्चा करते थे तब-तब यह दिखता था कि सरदारको सरकारकी मुश्किलोंका बहुत खयाल रहता है। बारडोली और खेड़ाके किसानोंके प्रति उनकी चिन्ता मै कभी नहीं भूल सकता।[1]

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० का० क० फाइल सं० ४२९, १९३३; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१८३. तार: विजयलक्ष्मी पंडितको[2]

[९ मई, १९३३][3]

मुझे आपकी दुआओं और आशीर्वादकी जरूरत है। मै चाहूँगा कि अभी घोषित [आन्दोलनके] स्थगनके दौरान आप और रणजीत वहीं रहें और हरिजनोंके लिए काम करें।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१२२८) से।

१. गांधीजी की इच्छाके अनुसार, यह वक्तव्य कांग्रेसके कार्यकारी अध्यक्ष श्री अणेकी स्वीकृतिके बाद रातके ११-३० बजे जारी किया गया था। सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्थगित करते हुए अणेने जो वक्तव्य दिया था, उसके लिए देखिए परिशिष्ट ५।

२. यह श्रीमती पंडितके ८-५-१९३३ को प्राप्त तारके जवाबमें दिया गया था। उनका तार इस प्रकार था: "आपके साथ होनेकी इच्छा रखती हूँ। आपके सन्देशकी प्रतीक्षा करूँगी। मेरा व रणजीतका प्यार।"

३. सविनय अवज्ञाके स्थगनकी घोषणाके सन्दर्भ से।

१८४. पत्र : डंकन ग्रीनलीजको

९ मई, १९३३

मुझे खेद हुआ कि मै आपसे और देरतक बातचीत नहीं कर सका।

आज सुबह मैंने आपकी रिपोर्ट ध्यानपूर्वक पढ़ी। मैंने उसका कुछ भी बुरा नही माना है। उसमें जो स्पष्टवादिता है, उसे मै पसन्द करता हूँ। आपके कुछ सुझाव महत्त्वपूर्ण भी हैं; लेकिन क्या आप वहाँ रह कर विकास कर सकते है? आश्रमके बारेमें जो-कुछ भी अच्छी बाते कही जा सकती हैं, उन सबके बावजूद, मुझे ऐसा लगता है कि यदि आपके द्वारा बताई गई बुराई वहाँ इतनी फैली हुई है जितनी कि आप बताते हैं, तब तो आप वहाँ केवल ठिठुरकर रह जायेंगे। यदि नारणदास कोरे व्यापारी-भर हैं या अधिकांशमें व्यापारी है तो वे उस नमककी तरह हैं जिसमें खार ही नहीं है। यदि उनमें वह तत्त्व नही है तो निस्सन्देह आश्रम मृत है। पर मेरा उनके बारेमें आपसे सर्वथा भिन्न विचार है। उनमें व्यापारको अध्यात्मके साथ मिलाकर चलनेकी अनोखी प्रतिभा है। अस्तु, यह उन अनेकमें से एक उदाहरण है जिनके कारण आपकी प्रतिक्रिया इतनी विरोधपूर्ण हुई है कि आपकी रायमें यह एक ऐसी संस्था है जहाँ व्यक्तिके मस्तिष्कपर कुल मिलाकर ऐसा असर पड़ता है कि उसका विकास अवरुद्ध हो जाता है। लेकिन अपनी रिपोर्टके बावजूद अपनी भावना आप स्वयं ही सबसे ज्यादा अच्छी तरह जान सकते हैं। इसलिए यदि आपको ऐसा लगता है कि आप आश्रममे रहकर अपना विकास कर सकते हैं तो यह हर तरहसे अच्छी बात है। अपनी पूरी रिपोर्टपर नारणदाससे चर्चा कीजिए और आप उनसे जो भी परिवर्तन करवा सकें, करवा लें। मेरा उनमें विश्वास अब भी असंदिग्ध है। लेकिन यदि आप वहाँ रहते है तो आपको अपने स्वास्थ्यपर ध्यान रखनेके साथ-साथ अनुशासनका पालन जरूर करना चाहिए। इसके बाद ही आपको परिवर्तनकी माँग करनेका हक होगा। आज तो आप सिर्फ अपने पहले-पहलके असर और दूसरी जगहके अनुभवके ही फलस्वरूप परिवर्तनकी सिफारिश कर सकते हैं। अच्छा होता कि मेरे पास समय होता। तब मैं आपकी कही हुई उन कई बातोंमें जो वास्तवमें सच नहीं हैं, सुधार कर सकता था। अभी वैसा करनेसे मुझपर बड़ा जोर पड़ेगा। यदि आपको नारणदासकी नेकनीयतीमें विश्वास है तो आपको उन सब मुद्दोंपर जिनके बारेमें आप बात करना चाहते है, उनसे बातचीत करनी चाहिए।

स्नेह।

बापू

श्री डंकन

अंग्रेजीकी माइक्रोफिलम (एस० एन० २१२६०) से।

१८५. पत्र : नारणदास गांधीको

मार्फत-लेडी विट्ठलदास ठाकरसी
'पर्णकुटी', पूना,
९ मई, १९३३

चि० नारणदास,

मुझे अचानक ही रिहा कर दिया गया है। नहीं तो महादेव ही पत्र लिखता और लम्बा पत्र लिखता। अब तो मुझे खुद ही लिखवाना पड़ेगा। तुम्हारा पत्र मिला। रोज लिखते रहना। जिसे कुछ खास लिखना हो वह भी लिखे। जिन परिवर्तनोंके कर दिये जानेके बारेमें तुमने लिखा है वे मुझे अच्छे तो लगे हैं, किन्तु उनमें भय भी है। यह बहनोंको लिखे पत्रसे देखना। सबने सोच-समझकर स्वीकार किया हो तो तनिक भी हानि नहीं है, और उनका स्वास्थ्य भी जल्दी ही सुधर जायेगा। पूरा भोजन औषधि समझकर ही लिया जाये। जो-कुछ और जितना मिले उससे ही पूर्ण सन्तोष करें। जो अच्छा न लगे वह न खायें। दूध, गेहूँ, फल और कच्ची सब्जी, इनमें से जिसे कुछ भी अच्छा न लगे, ऐसा शायद ही कोई व्यक्ति होगा। कोई ऐसा हो तो उसका इलाज उपवास ही हो सकता है। किन्तु जिसे फल अच्छा न लगे ऐसा कोई उदाहरण मेरी निगाहमें नहीं है। सभी निर्भय होकर ताजा कच्चा दूध लेने लगें। पकानेवालेको सभी वस्तुएँ ठीकसे पकानी चाहिए। जो कच्ची रह जाये उसे काममें न लें। जो सब्जी आश्रममें ही मिले उसीको खानेका आग्रह करें। तोतारामजी[1] को समझना चाहिए कि उन्हें टमाटर, सलाद, आदि पूरे वर्ष बराबर देते रहना है। इसमें अभी खर्च ज्यादा लगे तो उसकी मैं परवाह नहीं करूँगा। टमाटर, सलाद, आदिके साथ-साथ फलके वृक्ष भी लगाये जाने चाहिए। एक ओर संयमवृत्ति बढ़ानेकी आवश्यकता समझनी चाहिए और दूसरी ओर इसका ध्यान रखे कि उन पर अनुचित आक्रमण न हो।

परशुरामके बारेमें तुम्हें तार भेजा है। उसने बहुत आग्रह किया था इसलिए उसे आने दिया है। यदि तुम्हारी शर्तोंके अनुसार न रहे और तुम्हें तनिक भी कष्ट दे तो उसे अवश्य छुट्टी दे देना। अब उसे मेरे पास आनेकी आवश्यकता नहीं है। दिल्ली, कानपुर या जहाँ भी जाना हो वहाँका भाड़ा दे देना। कष्ट देकर कोई नहीं रह सकता। खुशामद करके किसीको रखनेका बोझ तुमपर इस समय डाला ही नहीं जा सकता। सबके प्रति प्रेम और विनयका व्यवहार होता है या नहीं, यह जानना तुम्हारा कर्त्तव्य है। ऐसा होते हुए भी जिसे खुश न कर सकें उसे जाने देना। यह नियम डॉ० शर्मापर और भाई डंकनपर भी लागू होता है। शर्मासे मुझे सन्तोष

१. तोताराम सनाढ्य, एक आश्रमवासी।

नहीं हुआ। उसमें सत्य या विनय है, ऐसी छाप मुझपर नहीं पड़ी। मैंने तो उसे दिल्ली चले जानेके लिए चिट्ठी लिखी थी। किन्तु वह पहुँच गया लगता है। मैंने अपने पत्रमें असन्तोष व्यक्त किया है। वह रहे तो भी नी०की दवा न करे, उसका स्पर्श न करे, उसके साथ बात न करे। मुझे समय मिलेगा तो यही बात स्पष्ट रीतिसे डॉक्टर शर्माके भी पत्र[1] में लिखूँगा। वह तुम देख लेना। नी०के पत्र[2] में भी लिखूँगा।

डंकन भला आदमी ही लगता है किन्तु वह ज्यादा समझदार नहीं है, यह मैंने देख लिया है। मुझे डर सिर्फ शर्माका ही है। गोसेवा की रिपोर्ट आज रजिस्टर करके वापस भेज रहा हूँ। किसीको दूध, घी न छोड़ने देना। बात यह है कि जिन परिवर्तनोंका मैंने सुझाव दिया है उनको कर पानेवालोंको कुछ भी छोड़नेकी आवश्यकता नहीं रहती। कोई विशेष वस्तु छोड़ दी इससे कोई बड़ा काम नहीं हो जाता। मूल वस्तु तो यही है कि खाना ही औषधिके रूपमें हो। देहको भाड़ा देने लायक ही खाना खायें, यही मनमें बांध लेना है। और जब सभी अनावश्यक वस्तुओंका त्याग कर दें तो उसके बाद और कुछ त्यागनेकी जरूरत ही नहीं है। मैं इस समय आश्रमसे जो माँग रहा हूँ, वह बहुत बड़ी वस्तु है। मुझे जरूरत है अन्तःशुद्धिकी, मनोनिग्रहकी। तीसरे अध्यायका छठा श्लोक सबको अच्छी तरह समझाना।

जो कर्मेन्द्रियोंका दमन करके मनसे विषयका सेवन करता है, वह मूर्ख मिथ्याचारी है। इसके विपरीत सातवाँ श्लोक है। जो मनको काबूमें रखकर अनासक्तिपूर्वक कर्मेन्द्रियोंसे शरीर-व्यापार चलाता है, उसका मान कर्मयोगीके रूपमें किया जाता है। इन दोनों श्लोकोंमें हमारे व्यवहारकी कुंजी है। यदि उपवास करते हुए भी मैं मनसे अनेक प्रकारके स्वादोंका भोग करूँ, २१ दिन कब पूरे होंगे इसीकी प्रतीक्षा आतुरतापूर्वक करूँ, तो मेरा यह उपवास मूर्ख व्यक्तिका मिथ्याचार है। इससे संसारको कोई लाभ नहीं होगा और यह मुझे पापयोनिकी ओर ले जायेगा।

जो मोटे तौरपर मेरे उपवासके विषयमें लागू है, वह कम मात्रामें इस समय आश्रममें किये जा रहे त्यागके विषयमें भी लागू है। शरीरसे जो दाल-भातका त्याग करे और मनसे उसका सेवन करे, उसके द्वारा किया गया दाल-भातका त्याग संयम नहीं है। शारीरिक अर्थात् वैद्यकीय दृष्टिसे उसका लाभ हो सकता है। किन्तु इस समय वहाँ जो त्याग किये जा रहे हैं वे तो अनशनकी योग्यता प्राप्त करनेके लिए हैं। इसलिए जो इसमें साथ न दे सकें, उन्हें रसोईमें शामिल करनेकी आवश्यकता नहीं है। रसोईमें शामिल न होकर खाना पकाते हुए भी, जो जिन दूसरे संयमोंपर दृढ रह सके उनपर दृढ़ रहें तो वे आश्रमको सुशोभित करेंगे — ऐसा मैं मानता हूँ। क्योंकि सत्य इसीमें है और इसमें कृत्रिमता नहीं है। इसमें विनम्रतासे अपनी मर्यादाकी स्वीकृति है। याद रहे, जिस त्यागकी बात मैंने लिखी है, वह बीमार लोगोंपर लागू नहीं होता।

१ और २. देखिए अगले दो शीर्षक।

यह सब बहनोंको मेरी ओरसे बार-बार समझाना। कोई भी बहन अपनी शक्तिसे ज्यादा कुछ न करे। बहनें समझ ले और दूसरे सब लोग भी समझ लें कि इस समय यह प्रयत्न आश्रममें अनशनकी अखण्ड शृंखलाकी तैयारीके लिए है। मेरी खातिर थोड़ी देरके लिए त्याग करेंगे और फिर जब किसी दूसरेका अनशन आश्रममें ही चलता होगा उस समय त्याग नही करेंगे, तो कितना बुरा लगेगा। मैं तो दूर पड़ा हुआ हूँ। किन्तु मेरे बादके अनशन आश्रममे ही चालू होंगे। इसलिए सभी वही त्याग करें जिसे वे बराबर झेल सकें। इसके आगे जानेकी तनिक भी आवश्यकता नही है। मैं अधिककी आशा नहीं करता, थोड़ा-बहुत आगे बढ़ें तो फिर हटें नहीं। चाहे एक-एक कदम बढ़ें। पुराने कुटुम्बोंके लिए संयुक्त रसोईके अपने सभी आग्रह मैंने वापस ले लिये हैं। मेरा उपवास किसीके लिए भी किसी भी प्रकारकी जबरदस्ती नहीं होना चाहिए। इसके लिए तुम मेरी ओरसे जिम्मेदारी लो। रामदाससे कहना कि इस उपवासका पूर्ण औचित्य वह धीरे-धीरे समझ जायेगा। यदि यह पिस्तौल है तो भी चलाने लायक है। इसके बिना धर्मका पालन नहीं हो सकता, ऐसी मेरी मान्यता है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८३७९ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१८६. पत्र: नी० को

९ मई, १९३३

प्रिय नी०,

मै तुम्हें भूल नहीं पाता। अपने पिछले पत्रोंमें मैंने जो कहा है, उसे मैं नही दुहराना चाहता।

डॉ० शर्मा वहाँ है। मैंने नारणदाससे कहा है[1] कि वे उससे तुम्हारा इलाज करनेको कतई न कहें। यदि डॉक्टरी सलाह लेना जरूरी हो जाता है तो डॉक्टर बुलाया जायेगा। लेकिन तुम यह बताओ कि क्या उसकी उपस्थितिसे और उसे देखकर तुममे वही भावनाएँ जागती हैं जिनका तुमने बयान किया है। यदि जागती हैं तो मुझे देखना होगा कि क्या किया जा सकता है। लेकिन मैं उसे इस भावनाके बारेमें लिख रहा हूँ ताकि वह सावधान रह सके। आशा है कि तुम इस बातका बुरा नहीं मानोगी। मैं तुम्हारी बातका शाब्दिक अर्थ ही निकाल रहा हूँ। तुम्हारे दिमागमें एक भी ऐसा विचार नही है जिसे तुम न केवल मुझसे, बल्कि सारे संसारसे तथा उससे भी जिसके प्रति तुम्हारा वह विचार हो, छिपाना चाहती हो। यह चाहे

१. देखिए पिछला शीर्षक।

जितना अरुचिकर क्यों न हो, मैं जानता हूँ कि एक सत्यनिष्ठ व्यक्तिके लिए यही एक रास्ता है।[1]

स्याहीमें लिखा तुम्हारा पत्र आ गया है। बेचारी माँ के साथ कम-से-कम उतना अच्छा बरताव तो करना ही चाहिए जितना कि तुम अजनबी लोगोंके साथ करती हो। लेकिन निश्चय ही कभी-कभी बच्चे अपने माता-पिताको अपनी अँगुलियों द्वारा, स्याहीकी जगह अपने खूनसे लिखते हैं।

ईश्वर तुम्हारे साथ रहे।

तुम्हें स्नेह तथा सि० को चुम्बन।

बापू

श्रीमती नी०
सत्याग्रह आश्रम, साबरमती

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१२५७) से।

१८७ पत्र : हीरालाल शर्माको

९ मई, १९३३

भाई शर्मा,[2]

जब देवदासने बताया कि आप आश्रम गये थे[3] तो मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने देवदासको आपके लिए एक पत्र दिया था। वह उसे आपको डाकसे भेजनेवाला था। आशा है कि आपको वह पत्र मिल गया होगा। उस पत्रमें मैंने आपको बताया था कि मैंने जान-बूझकर एक बात नहीं कही थी। अब मेरा यह कर्त्तव्य हो गया है कि वह बात आपसे कहूँ।

आप नी०की जीवनी जानते हैं। मैंने उसे आश्रम भेजा है कि यदि सम्भव हो सके तो उसे उसकी कुटेवोंसे बचाया जा सके। उसने मुझे बताया कि जब वह आपसे मिली तो उसकी पाशविक वासना जाग उठी। इसका यह अर्थ मानना जरूरी नहीं है कि इसमें मैंने आपका कोई दोष देखा है। यदि किसी औरतके मनमें किसी मर्दको देखकर कामुकता जाग जाये तो वह कर ही क्या सकता है? ऐसी सहज पवित्रता बहुत कम लोगोंको ही सुलभ है कि उनके साथ कभी कोई ऐसा मौका न आये कि उन्हें देखकर कोई नितान्त पतित औरत भी कामवश न हो। इसलिए मैं आपपर कोई दोष डालनेके लिए यह नहीं लिख रहा हूँ, बल्कि यह चेतावनी देनेके लिए लिख रहा हूँ कि आप उससे कुछ भी प्रयोजन न रखें।

१. साधन-सूत्रमें आगेका पत्र गांधीजी के स्वाक्षरोंमें है।

२. साधन-सूत्रमें सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

३. गांधीजी ने उन्हें एक नोट भेजते हुए यह सलाह दी थी कि वे दिल्ली लौट जायें; देखिए पृ० १५४।

आशा है कि देवदासने मेरा जो पत्र आपको डाकसे भेजा है, उसे आप सही अर्थोंमें लेंगे। आपका वह पत्र भी जो आपने मुझे दिये जानेके लिए सौंपा था, उसी रायकी पुष्टि करता है जो मैंने आपके बारेमें आपसे मिलनेके बाद[1] बनाई थी। मैं यह भी कह दूँ कि आप यहाँ जिस-किसीसे मिले हैं उसपर आपने एक बुरी छाप डाली है। फिर भी यह हो सकता है कि आपके प्रति वह सब कहना तबतक अनुचित हो जबतक कि नारणदास सचाईसे आपका मार्गदर्शन करता है और आप उसका तथा सारे आश्रमका करते हैं। यदि बात इसके विपरीत हो, वह आपको पसन्द न करता हो और आप उसे या सामान्य तौरपर आश्रमको पसन्द न करते हों तो आपको वहाँसे हट जाना चाहिए, भले ही आप वहाँ कुछ मरीजोंका इलाज क्यों न कर रहे हों। यदि आश्रमके प्रति आपमें एक अरुचि पैदा हो गई है तो आपके वहाँ रहनेका उद्देश्य ही पूरी तरह विफल हो गया। मरीजोंके लिए आपको वहाँ रखना तो मेरा बहुत ही स्वार्थी होना होगा।

हिन्दीमें लिखनेका समय नहि था।[2]

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१२५८) से।

१८८. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

९ मई, १९३३

सरदारजी,

रात अच्छी बीती है। यरवदासे यहाँ हवा और सर्दी बहुत ज्यादा है। बिलकुल खुलेमें ही सोया था। काम जरूर बढ़ा है। दो-एक दिन काम करना पड़ेगा। फिर तो काम न करनेका ही निश्चय किया है। अभी कोई खास कमजोरी नहीं लगती।

फिक्र बिलकुल न करें।

आपसे मुझे माताका-सा प्यार मिला है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७

१. ६ मईको; देखिए पृ० १५३-४।

२. साधन-सूत्रमें यह वाक्य हिन्दीमें है।

१८९. तार : कस्तूरबा गांधीको[1]

[१० मई, १९३३]

एक्सप्रेस

तुम्हारा तार पढ़ा। पचास वर्षसे ज्यादा मेरे साथ रह चुकनेके बाद तुम्हें बहादुर होना चाहिए और अर्जी नहीं देनी चाहिए। मैं बिलकुल ठीक और खुश हूँ। ईश्वर तुम्हें साहस, विश्वास और शान्ति दे। खुशी हुई कि मीरा खुश है। स्नेह।[2]

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१२६९) से।

१९०. पत्र : मीराबहनको[3]

१० मई, १९३३

तुम्हें और बा को ऐसी सूचना रोज मिलती रहेगी। आशा है, स्वास्थ्य ठीक चल रहा होगा।

बापू

कुमारी स्लेड
साबरमती जेल

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७४) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७४० से भी।

१. यह तार इस तारीखको मिले साबरमती जेलसे कस्तूरबाके तारके जवाबमें दिया गया था और सम्भवत: उसी दिन भेजा गया था। कस्तूरबाका तार इस प्रकार था:

"समाचारपत्रोंसे ऐसा प्रतीत होता है कि कैदी रिहा नहीं होनेवाले है। इसलिए मैं सरकारको दो महीनेकी छुट्टीकी अर्जी देनेकी इजाजत आपसे माँगती हूँ, ताकि मैं आपके पास आ सकूँ। बहुत व्यग्र हूँ। तारसे जवाब दीजिए। मीरा प्यार भेजती है। उसे प्रार्थनासे साहस और शान्ति मिल रही है।"

२. साधन-सूत्रमें, जिस कागजपर गांधीजी के तारका मसविदा है, उसमें इस तरहकी गुजरातीमें टिप्पणी है:

"जिस मुखसे हमेशा पान खाती रही हो उससे अब कोयला चबानेको आमादा न होओ। ईश्वरमें विश्वास रखो। इस गलतफहमीको दूर करो कि हम शरीर हैं। रामनाम जपो। बापू"

३. **बापूज लेटर्स टू मीरा** में मीराबहनने स्पष्ट किया है कि यह "बापूने स्वयं उन पत्रोंपर लिखा था जिनमें उनके उपवासकी प्रगतिका ब्योरा था।" यह "'पर्णकुटी', पूना" से लिखे गये मथुरादास

१९१. पत्र : नी०को

१० मई, १९३३

देखता हूँ कि लिखनेकी अपेक्षा बोलकर लिखवानेमें ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है। जैसे-जैसे दिन निकलते जायेंगे, मैं शायद न लिख सकूँगा और न बोलकर लिखवा सकूँगा। तब तुम समझना कि मेरे विचार तुमसे बात कर रहे हैं।

लेकिन तुम्हें रोज विस्तारसे एक पत्र लिखना है जिसमे अपनी शारीरिक और मानसिक अवस्थाका, अपने और सि०के खानेका हाल लिखना होगा।

आशा है कि तुम गर्भपात न करवानेकी नैतिक आवश्यकता समझ गई होगी।

अपने सोनेके कमरेके छज्जेपर रोज सूर्यस्नान करो। वहाँ आश्रमके लिए सिलाईका काम कर सकती हो। तकली भी कातो।

मेरी कामना है कि तुम पाइथागोरस, बैकस और 'महाभारत'को भूल जाओ। जब आश्रममे तुम्हें फिर 'महाभारत'को दुहराना है, तो फिर विगतके बारेमें क्यों सोचती रहती हो? सामने जो काम पड़ा है उसमें मन लगाओ। दूसरे लोग कैसे है इसे बिना सोचे, आश्रमकी एक योग्य सदस्या बनना ही तुम्हारा काम है।

तुमको व सि०को प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२) से।

त्रिकमजीके उसी तारीखके पत्रमें जोड़ा गया था। उस पत्रमें लिखा था: "बापूके उपवासका आज तीसरा दिन है। अपनी रिहाईके बाद पहले दिन रातको बापूने वस्तुस्थितिपर अपना वक्तव्य बोलकर लिखवाया। उसमें उनकी काफी शक्ति खर्च हुई, पर वह अनिवार्य था। कल उन्होंने कम काम किया और आज मुझे आशा है कि वे और भी कम श्रम करेंगे। सन्तोषकी बात यह है कि उन्होंने खुद यह निश्चय कर लिया है कि जहाँ तक सम्भव हो अपनी शक्ति बचाई जाये। उन्हें नींद अच्छी आ जाती हैं और वे बिस्तरपर ही लेटे रहते हैं। देवदास, ब्रजकृष्ण, मै और अन्य मित्र उनके कष्टको यथासम्भव ज्यादा-से-ज्यादा हल्का करनेकी भरसक कोशिश कर रहे है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि वे इस अग्निपरीक्षाको सफलतापूर्वक पार कर लेंगे।

१९२. पत्र : नारणदास गांधीको

१० मई, १९३३

चि० नारणदास,

डंकनकी आलोचना-सम्बन्धी मेरा पत्र[1] मिल गया होगा। उसकी टीकामें बहुत अज्ञान है, पर जहर नहीं है। अज्ञानसे भरपूर होनेपर भी उसमें कई बातें अच्छी हैं। उसकी रिपोर्ट तुम्हें भेजूंगा। उसके पास हो तो ले लेना और शान्तिपूर्वक चर्चा करना। अपना कुछ समय ऐसी बातचीतमें लगाना।

मैं रोज लिख या लिखवा नहीं सकता, किन्तु तुम सबके बारेमें तफसील से लिखना। विशेष रूपसे नी०, परशुराम, डंकन और शर्माके बारेमें। तुमने कुसुमकी खबर नहीं दी।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३८० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१९३. पत्र : भाऊ पानसेको

१० मई, १९३३

चि० भाऊ,

ईश्वरपर आस्था रखो और किसी बातकी फिकर मत करो।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ९६८६ से; सौजन्य : भाऊ पानसे।

१. देखिए पृ० १५९-६०।

१९४. पाठकोंसे[1]

सभीको यह जान लेना चाहिए कि यद्यपि मुझे स्वतन्त्र माना जाता है, पर 'हरिजन' का सम्पादन उसी तरह होता रहेगा मानो मै जेलमें ही हूँ। यह पूर्णतया हरिजन-ध्येयको ही समर्पित रहेगा और हर तरहकी राजनीतिको पूरी सतर्कतासे दूर रखेगा। मेरे लिए यह खेदका विषय है कि तीन सप्ताहतक मैं 'हरिजन' के लिए कुछ नहीं लिख सकूँगा। परन्तु यदि ईश्वरने मुझे जीवित रखा तो आशा है कि मैं 'हरिजन' के लिए [आगे] और भी अधिक योग्यताके साथ लिखूँगा। मुझे यह भी आशा है कि इस बीच हरिजन-ध्येयकी तेजीसे प्रगति होगी, सुधारक और सनातनी, जहाँ भी सम्भव होगा, हरिजनोंकी सेवाके लिए परस्पर सहयोग करेंगे, सुधारक बाकी कार्यक्रमको, सनातनियोंकी भावनाओंको ठेस पहुँचाये बिना, अमलमें लायेंगे और हरिजन स्वयं अपनेमें पूरी शक्तिसे वे सुधार करेंगे जिनकी ओर इन स्तम्भोंमें मैं इतनी बार ध्यान आकर्षित कर चुका हूँ, और इस तरह सनातनियों और सुधारकोंके लिए यह स्वीकार करना और आसान हो जायेगा कि हरिजन सचमुच हरिजन हैं और उनमें प्रेमकी बिलकुल उसी ढंगसे और उसी मात्रामें प्रतिक्रिया हो सकती है जैसेकि अन्य लोगोंमें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-५-१९३३

१. **बॉम्बे क्रॉनिकल,** १३-५-१९३३ के अनुसार, यह गांधीजी द्वारा ११ मई, १९३३ को 'लिखवाया' गया था।

१९५. तार: डॉ० मु० अ० अन्सारीको

११ मई, १९३३

डॉ० अन्सारी
दिल्ली

सरोजिनीने आपके अखबारी बयान[१] का जिक्र किया था। आपको तकलीफ नहीं देना चाहता लेकिन यह आपका हक है और फर्ज है। आप जब आना चाहें आयें। आप जानते हैं कि आपपर मुझे कितना भरोसा है। आप सबको प्यार।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०८५) से।

१९६. तार: मदनमोहन मालवीयको

११ मई, १९३३

आपके आशीर्वाद[२] से मुझे सुख मिला। आपके परामर्शको भावत: पालन करता रहा हूँ। बचपनसे ही रामनाम मेरा कवच रहा है। मै अच्छा और शान्त हूँ। प्रार्थना है कि यहाँ आनेका कष्ट न करें।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०८५) से।

१. १२-५-१९३३ के **बॉम्बे क्रॉनिकल** में "पूना, ११ मई, १९३३" की तारीखके अन्तर्गत यह रिपोर्ट थी: "गांधीजी काफी कमजोर थे। पर जब सरोजिनी नायडूने उन्हें बताया कि डॉ० अन्सारी पूना आनेको तैयार हैं और यह पूछा कि क्या उन्हें बुलवाया जाये, तो गांधीजी बहुत खुश हुए और बोले, "मैं डॉ० अन्सारीकी गोदमें सिर रखे मरना चाहूँगा"। डॉ० अन्सारीको जब फोनपर यह बात बताई गई तो उन्होंने दिल्लीसे जवाब दिया: "मै बापूको अपनी गोदमें कभी मरने नहीं दूँगा। मैं उन्हें मरने ही नहीं दूँगा। मैं जल्दी-से-जल्दी बापूके पास पहुँचूँगा।"

२. देखिए पृ० ९४।

१९७. टिप्पणियाँ[1]

अस्पृश्यताको बुद्धि ग्रहण कर नहीं सकती। वह सत्यके, अहिंसाके, धर्मके विरुद्ध है, इसलिए धर्म ही नहीं। उसके मूलमें यह दम्भ है कि हम उच्च और दूसरे नीच हैं। जिस ब्राह्मणमें शूद्रका — सेवा — गुण नहीं, वह ब्राह्मण नहीं। ब्राह्मण तो वही है जिसमें क्षत्रियके, वैश्यके और शूद्रके सब गुण हों। और इनके सिवा ज्ञान हो। शूद्र कोई ज्ञानसे सर्वथा रहित अथवा विमुख नहीं होते, उनमें सेवा प्रधान है। वर्णाश्रम धर्ममें ऊँच-नीचकी भावनाके लिए अवकाश ही नहीं। वैष्णव-सम्प्रदायमें तो भंगी, चाडाल, आदि तर गये हैं। जो धर्म संसार-मात्रको विष्णुरूप मानता है, वह हरिजनको विष्णु-रहित किस प्रकार मान सकता है?

*   *   *

कोई यदि कहे कि अस्पृश्यताको मैं प्रेम-भावसे मानता हूँ तो मैं इस बातको कभी न मानूँगा। मुझे तो उसके अन्दर कहीं प्रेम-भाव प्रतीत नहीं होता। यदि प्रेम हो तो हम उन्हें जूठन नहीं खिलायेंगे। प्रेम हो तो हम उन्हें उसी तरह पूजेंगे जिस तरह माता-पिताको पूजते हैं। प्रेम हो तो हम उनके लिए अपनेसे अच्छे कुएँ, अच्छे मदरसे बना देंगे, उन्हें मन्दिरोंमें आने देंगे। ये सब प्रेमके चिह्न हैं। प्रेम अगणित सूर्योंसे मिलकर बना है। एक छोटा-सा सूर्य जब छिपा नहीं रहता तब प्रेम क्यों छिपा रहने लगा? किसी माताको कहीं यह कहना पड़ता है कि मैं अपने बच्चेको चाहती हूँ? जिस बच्चेको बोलना नहीं आता वह माताकी आँखोंको देखता है। जब आँखसे आँख मिल जाती है तब हम देखते हैं कि वे किसी अलौकिक चीजको देख रहे हैं।

हरिजन सेवक, १२-५-१९३३

१. ये "स्वर्ण-सूत्र" शीर्षकसे प्रकाशित हुई थीं।

१९८. पत्र : मीराबहनको[1]

[१२ मई, १९३३][2]

चि० मीरा,

तुम अन्ततक बहादुर बनी रहना। मेरी बेटी होना खेल नहीं है। वहाँ होनेसे तुम्हें [मुझ] से[3] भी ज्यादा कड़ी अग्निपरीक्षामें से गुजरना पड़ेगा। परन्तु मेरे बच्चोंको मेरे योग्य होनेके लिए मुझसे भी अधिक अच्छा आचरण करना पड़ेगा। क्यों ठीक है न? ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६९१) से; सौजन्य: मीराबहन।

१९९. जन्मसे नहीं, गुणसे

पाठकको शायद पता न हो कि हरिजन-ध्येयके बहुत-से एकनिष्ठ सेवकोंमें दो कोढ़ी भी हैं। उनमें एक क्षत्रिय है जिन्हें इस रोगका संक्रमण गरीबोंकी सेवा करते हुए हो गया। कुछ वर्षोंसे, प्रायः सारी सम्पत्ति-सहित, उन्होंने अपना भाग्य उन्हींके साथ जोड़ दिया है। उनका कोढ़ भी उन्हें स्वेच्छासे चुने सेवा-मार्गसे रोक नहीं सका। दूसरे, एक ब्राह्मण पण्डित हैं जो संस्कृतके अच्छे विद्वान हैं। वे प्रायः मुझे शास्त्रोंसे चुनकर ऐसे उद्धरण भेजते हैं जो अस्पृश्यताके विषयमें सुधारककी स्थितिका समर्थन करते हैं। नीचे उनके नवीनतम संकलनका अनुवाद दिया जा रहा है:

> १. स्वयं ब्रह्माका कहना है कि जिसने अपनेको शुद्ध कर्मोंसे शुद्ध कर लिया है और जिसका अपनी इन्द्रियोंपर नियन्त्रण है, वह चाहे शूद्र ही क्यों न हो उसके साथ ब्राह्मणका-सा बरताव होना चाहिए।
>
> २. स्वभाव और कर्मसे जो उच्च है, वह शूद्र होते हुए भी सर्वोत्तम द्विज माना जाना चाहिए।

१. यह मीराबहनके ८-५-१९३३ के पत्र (एस० एन० २१२३१) के जवाबमें लिखा गया था।

२. तारीख मीराबहनकी दी हुई है।

३. मीराबहनने स्पष्ट किया है: "इसके साथ उपवासकी प्रगतिका ब्योरा देनेवाला जो पत्र था, उसमें मथुरादासने लिखा था: 'इसके पीछे जो पंक्तियाँ हैं, वे बापूने शुक्रवारको दोपहरके लगभग २ बजे लिखी थीं। उस समय उन्होंने ऐनक नहीं लगाई हुई थी, इसलिए वाक्य अधूरा रह गया'"।

३. जन्म या कुल, संस्कार या वेदोंका ज्ञान किसीको द्विज नहीं बना सकता। निर्णायक कारण केवल सदाचार है।

४. केवल सदाचारसे ही व्यक्ति ब्राह्मण बन सकता है। सदाचारी व्यक्ति शूद्र होते हुए भी ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लेता है।

५. जो धर्मके पालनके लिए जीता है, जिसका धर्म ईश्वरको समर्पित है और जो दिन-रात सत्कर्मोंमें लगा रहता है, देवताओंने उसे ब्राह्मण कहा है।

६. खाने, पहनने और सोनेके लिए जो-कुछ मिल जाता है, उसीसे जो सन्तुष्ट है, देवताओंने उसे ब्राह्मण कहा है।

— **महाभारत** : शान्तिपर्व

संकलनकर्त्ताने इसपर टिप्पणी करते हुए यह सच ही कहा है कि "भारतके हरिजन इस कसौटीपर आज खरे उतरते हैं।"

७. ब्राह्मणके लिए सत्य ब्रह्म है, तप ब्रह्म है, इन्दिय-निग्रह ब्रह्म है, जीवमात्रके प्रति दया ब्रह्म है . . .

— **पाराशर स्मृति**

८. ब्राह्मण वह है जो आत्मसंयम, तप, आत्म-निग्रह, दान, सत्य, शुद्धता, दया, वेदोंका ज्ञान, विद्या, बुद्धिमत्ता, आस्था . . .से सम्पन्न है।

— **वशिष्ठ**

९. केवल वही ब्राह्मण (मानवजातिकी) रक्षा कर सकते हैं जिनमें पूर्ण आत्मसंयम है, जिनके कान वेदमन्त्रोंके संगीतसे भरे हैं, जिन्होने अपनी इन्द्रियोंको जीत रखा है, जो किसी भी जीवको कष्ट नही देते और जो परिग्रहसे बचते हैं।

(साधन-सूत्र अज्ञात)

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-५-१९३३

२००. पत्र : मीराबहनको[1]

१४ मई, १९३३

तो अब सार-सम्भाल या साथके लिए बा तुम्हारे पास नहीं रही।[2] ईश्वर तुम्हारी पूरी तरहसे परीक्षा कर रहा है। वह तुम्हें बल देगा।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७५) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७४१ से भी।

२०१. क्या करें?

एक हरिजन-सेवक लिखते हैं :

हमारे गाँवमें सिर्फ तीन देश-हितैषी पुरुष हैं। उन्होंने हरिजन-सेवाका कार्य आरम्भ कर दिया है। यहाँ हरिजनोंके लिए उनके उद्योगसे एक पाठशाला खोल दी गई है। गत रामनवमीके दिन इन सज्जनोंने सैकड़ों हरिजनोंको अपने यहाँ भोजन कराया। पंगतमें उन्हें पानी पीनेको लोटे दिये, जो बादमें धोकर वापस ले लिये गये। गाँवके कट्टरपंथी इस बातको सहन न कर सके। उन्होंने नाराज होकर इन हरिजन-सेवकोंको जातिसे बाहर निकाल दिया। पर इन तीनों सेवकोंने उनकी नाराजीकी कोई परवाह नहीं की। आज धोबी इनके कपड़े नहीं धोते, नाई बाल नहीं बनाते। बेचारे बड़ी मुसीबतमें हैं। आप सलाह दें, तो अदालतमें यह मामला पहुँचानेका विचार है। कृपा कर लिखें।

१. यह मीराबहनके नाम मथुरादास त्रिकमजीके उसी तारीखके पत्रमें जोड़ा गया था। उस पत्रमें लिखा था: "बापूको आपके पत्र बराबर मिल रहे हैं। आज उनके उपवासका छठा दिन पूरा होता है, और उनकी हालत इस अरसेमें कुल मिलाकर सन्तोषजनक ही रही है। कल डॉक्टरोंने परस्पर परामर्श करके बुलेटिन जारी किया था, जो आजके समाचारपत्रोंमें निकल गया होगा। वे लोग निराश नहीं हैं। डॉ० देशमुखने एक बहुत ही उपयोगी सुझाव दिया। साधारण जलकी जगह उन्होंने 'विची' जल देनेकी सिफारिश की। बापूने जब उसके बारेमें आवश्यक बातें जान लीं तो उसे लेना तुरन्त स्वीकार कर लिया, और वह उनके बहुत ही अनुकूल रहा। आशा है कि उससे अम्लता काबूमें रहेगी। कलसे उनके आगे पूरी **गीता**का पाठ किया जा रहा है। शामको संगीतका कार्यक्रम होता है। वे खूब प्रसन्न रहते हैं।"

२. बा को साबरमती जेलसे १३ मई, १९३३ को रिहा कर दिया गया था।

इसमें सन्देह नहीं कि इस तरह अपने लोटे हरिजनोंको पानी पीनेके लिए देना भी पाप समझा गया। बेचारे सेवकोंने लोटे साफ भी कर लिये थे। हम बाजारसे लोटे खरीदते हैं। उनका उपयोग किसने किया है, यह किसीसे पूछने नहीं जाते। हमारे हाथमें लोटा आ जानेके बाद उसमें ऐसी कौन-सी विशेषता पैदा हो जाती है जिससे कि किसी हरिजनके हाथमें जाने से वह हमारे लिए एकदम निरुपयोगी हो जाता है? उक्त गाँववालोंने तो इसका उत्तर दे दिया है। पानी पीनेके लिए हरिजनोंको लोटा देना भी गुनाह है, ऐसा वे कहते हैं, और इस दोषके लिए तीन युवक सेवकों पर अत्याचार कर रहे हैं। अब वे क्या करें? जिसे गाँववाले गुनाह मानते हैं, उसे मैं पाप नहीं मानता, मैं तो उसे पुण्य-कार्य मानता हूँ। इसलिए धोबी-नाईका प्रतिरोध तो क्या, देह-दण्ड भी दें, तो भी सहन कर लेना धर्म है। धोबी न मिले तो अपने हाथसे कपड़े धो लें। नाई न मिले तो खुद बाल बना लें; यह न हो सके तो पंचकेश बढ़ने दें। पर ऐसी हरकतों से हिम्मत न हारें।

लेकिन गाँववालोंपर रोष तो भूलकर भी न करना चाहिए। वे बेचारे क्या करें? उन्हें तो धर्मके नामपर अधर्म सिखाया गया है। वे लोग तो दयाके पात्र हैं। अस्पृश्यता-निवारण एक धर्म है, यह ज्ञान तो वहाँके तीन ही युवक सेवकोंको हुआ है। गाँववाले तो बेचारे अज्ञान-कूपमें पड़े हुए हैं। ऐसी स्थितिमें उन युवकोंका यह धर्म है कि वे अपनी दृढ़ता, पवित्रता, तपश्चर्या, त्याग, धैर्य, उदारता और प्रेमसे अन्धेरेमें फँसे हुए देहातियोंके कठोर हृदयको पिघलायें, और साथ ही हरिजनोंको भी शौचादि नियमोंका पालन करनेकी शिक्षा दें। अदालतका द्वार तो किसी भी हालतमें नहीं खटखटा सकते।

हरिजन सेवक, १९-५-१९३३

२०२. तार: मदनमोहन मालवीयको

१९ मई, १९३३

पण्डित मालवीयजी
इलाहाबाद

आपके बताये हुए 'भागवत' के अंशोंका गुजराती अनुवाद अभी-अभी समाप्त किया है।[१] आपकी आवाज और धारावाहिक टीकाकी कमी महसूस हो रही है। आप हमेशा मेरे साथ हैं। मैं बिल्कुल शान्तिसे हूँ।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०८५)से।

१. मालवीयजी ने अपने १५ मईके तार (एस० एन० २१३०२) में देवदास गांधीको सुझाव दिया था कि "गांधीजी को ध्रुवकथा भागवत, चतुर्थ स्कंध, आठवाँ व नवाँ अध्याय तथा गजेन्द्र स्तुतिभागवत, अष्टम स्कंध, दूसरा, तीसरा व चौथा अध्याय पढ़कर सुनाये जाने चाहिए।"

२०३. तार : खान साहब और अब्दुल गफ्फार खाँको

१९ मई, १९३३

खान साहब [और] अब्दुल गफ्फार खाँ
हजारीबाग सेन्ट्रल जेल

आपके तारका[1] दिलपर बड़ा असर हुआ। ईश्वर महान और कृपालु है।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० १९०८५)से।

२०४. तार : बापटको

[२० मई, १९३३][2]

आपके उपवासके बारेमें अभी-अभी सुना है। दिलपर बड़ा असर हुआ। लेकिन आपसे उपवास तोड़ देनेका अनुरोध करता हूँ। ईश्वरकी मेरे प्रति जो इच्छा हो उसे पूरी होने दें। यदि आप मेरी बात मान लेंगे तो मुझे बड़ी राहत मिलेगी। कृपया उत्तर दीजियेगा[3]।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-५-१९३३ (विशेषांक)

१. १९ मईका उक्त तार इस प्रकार था: "महात्माजी हम दोनों भाई एक महान उद्देश्यके लिए आपके उत्तम उपवासपर आपको बधाई देते हैं। हम रोज दुआ करते हैं कि आपका जीवन लम्बा हो ताकि आप भारतके दलित लोगोंकी सेवा करते रहें।"

२. बॉम्बे क्रॉनिकल, २२-५-१९३३ से।

३. बापटने, जो रत्नगिरि जेलमें ८ मईसे सहानुभूतिमें उपवास कर रहे थे, जवाब दिया था: "हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। आपकी तरह मैं भी ईश्वरके हाथोंमें हूँ। कृपया चिन्ता न करें। जीवन या मृत्युका फैसला अब ईश्वरको ही करने दीजिए।"

२०५. पत्र : मीराबहनको[1]

पूना,
[२१ मई, १९३३]

चि० मीरा,

तुम अद्भुत वीरताका परिचय दे रही हो। ईश्वरपर पूर्ण भरोसा रखे बिना सच्ची बहादुरी प्राप्त नहीं होती।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७६) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७४२ से भी।

१. गांधीजी ने यह मीराबहनके नाम मथुरादास त्रिकमजीके २१ मई, १९३३ के पत्रमें अपनी ओरसे जोड़ा था। उस पत्रमें लिखा था: "... सुबहके ७ बजनेमें अभी देर है। गांधीजी यरवदा सेंट्रल जेलके सामने पड़नेवाले पोर्चमें गहरी नींदमें सोये हैं। मैं एक कोनेमें बैठा ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँ और यहाँसे बराबर उनपर भी नजर रखे हूं। वे एक प्यारे बच्चेकी तरह अपनी खाट पर सोये है और उनका चेहरा भोरके उजालेमें दमक रहा है। केवल उनके चेहरेको देखकर कोई यह यकीन नहीं कर सकता कि पिछले तेरह दिनोंसे उन्होंने अन्न छुआतक नहीं है। सब-कुछ ठीक चल रहा है। वे आजकल सिंहगढ़का जल पी रहे हैं, जो मराठा इतिहासका एक प्रसिद्ध स्थान है। १९२० में वे स्वयं कुछ दिन उस गढ़मे ठहरे थे। उन्हें वह बहुत अच्छा लगता है और उसके ऐतिहासिक महत्त्वके कारण वे उसकी ओर तथा उसके जलकी ओर आकर्षित हुए हैं। डॉ० दिनशा मेहताने, जो आजकल उनकी देखभाल कर रहे हैं, वहाँ अपने चिकित्सालयकी एक शाखा खोल रखी है और वहाँसे जल प्राप्त करनेका प्रबन्ध उन्होंने ही किया है। वे और उनकी पत्नी बापूकी अद्भूत सेवा कर रहे है। बापूका मन बिलकुल शान्त है और वे अधिकाधिक अनासक्त होते जा रहे हैं। महादेव देसाई कल आश्रम चले गये। बापूने ये पंक्तियाँ स्वयं अपनी ओरसे जोडी हैं। वे तब ऐनक नहीं लगाये हुए थे, इसीलिए दोहरे पत्र हो गये। उन्होंने जब इसके लिए कहा, तब पत्र डाकमें छोड़ा ही जानेवाला था। नोट — मै आपको बिना नागा रोज पत्र लिख रहा हूँ और महादेवने आपको कल पत्र लिखा था। आपका आखिरी पत्र १९ मई, १९३३ का लिखा हुआ है।"

२०६. बातचीत : देवदास गांधीके साथ

पूना,
२७ मई, १९३३

यदि उपवासके इन बीस दिनोंतक बराबर मुझे जिन्दा रखनेके बाद भी इक्कीसवें दिन परमेश्वर मुझे उठा लेना चाहता है, तो यह मेरा अन्तिम यज्ञ होगा। लेकिन यदि परमेश्वर मुझे आगे और जीनेका पट्टा देता है और चाहता है कि मै और काम करूँ, तो मेरे जीवनमें एक नये युगका आरम्भ होगा।

मेरी भावी योजना परमेश्वरके हाथमे है। मैंने अपने दिमागसे रामनामके सिवाय अन्य सभी विचार निकाल दिये हैं। ईश्वर जो चाहेगा वही सही और न्यायोचित होगा।

श्री देवदासने परमेश्वरको गांधीजी के जीवनकी रक्षा करनेके लिए धन्यवाद दिया, महात्माजी ने कहा :

हाँ, यह ठीक है। परमेश्वरकी ही कृपासे मै जी रहा हूँ। लेकिन मैं नही समझता कि ईश्वरकी कृपाकी सीमा मुझे बचानेतक ही है। उसका मुझे उठा लेना भी कृपापूर्ण कार्य माना जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-५-१९३३

२०७. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२८ मई, १९३३

कल 'ईशावास्य' उपयुक्त नहीं होगा। उसके बदले 'शुद्धोऽयं बुद्धोऽथवा' रखना और अमिय या महादेव टैगोरका कोई गीत गाये। यह श्लोक भजनावलीमें है। महादेव जानता है। गीत कौन-सा क्या हो, यह मुझे नहीं देखना है।[1]

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १२७

१. २१ दिनके उपवासकी समाप्तिपर महादेव देसाईके विवरणके लिए देखिए परिशिष्ट ६।

२०८. सन्देश : इक्कीस दिनका उपवास समाप्त करनेसे पूर्व[1]

२९ मई, १९३३

अब एक-दो मिनटमें ही उपवास समाप्त करने जा रहा हूँ। ईश्वरके नामपर और ईश्वरमें विश्वास रखकर ही मैंने यह उपवास शुरू किया था। अब उसीके नामसे यह समाप्त होता है। भगवानमें मेरी श्रद्धा आज कम नहीं है, बल्कि और बढ़ी है।

आप लोगोंको मुझसे यह आशा नहीं करनी चाहिए कि इस अवसरपर मैं कोई भाषण दूँगा। यह तो ईश्वरका नाम जपने और उसका गुण-गान करनेका ही समय है। लेकिन उन डॉक्टरों और अपने उन मित्रोंको मैं कैसे भूल सकता हूं जो उपवासके इन दिनोंमें मुझपर अपने प्रेमकी सतत वर्षा करते रहे? मैं उनकी उन सेवाओंका उल्लेख किये बिना नहीं रह सकता — वे सेवाएँ मेरे लिए ईश्वर-कृपाका ही एक अंश हैं। सिवाय धन्यवादके उन्हें देनेके लिए मेरे पास और है ही क्या? समुचित पुरस्कार तो उन्हें केवल ईश्वर ही दे सकता है।

मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि आज हमारे साथ यहाँ हरिजन भी उपस्थित हैं। मैं यह तो ठीक-ठीक नहीं जानता कि परमात्मा इस शरीरसे क्या काम लेना चाहता है; पर वह काम चाहे जो हो, मुझे विश्वास है कि वह मुझे उस कामकी शक्ति अवश्य देगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-६-१९३३

२०९. पत्र : मीराबहनको

२९ मई, १९३३

चि० मीरा,[2]

मैंने अभी-अभी उपवास तोड़ा है। आगेका काम शुरू होता है। प्रभु ही उपाय और मार्ग बतायेगा।[3]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६९२) से; सौजन्य : मीराबहन।

१. महादेव देसाई द्वारा लिखित "स्पार्क्स फ्रॉम द सेक्रिड फॉयर–४" से उद्धृत। गांधीजी ने महादेव देसाईको यह सन्देश बोल कर लिखवाया था। उन्होंने बादमें इसको पढ़कर सुनाया था।

२. साधन-सूत्रमें सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

३. इसके साथ महादेव देसाईने उपवास तोड़नेका पूरा विवरण लिखा था; देखिए परिशिष्ट ६।

२१०. पत्र : द० बा० कालेलकरको

[जून, १९३३ से पूर्व][1]

चि० काका,

तुम्हारे दो पत्र एकसाथ मिले। वजन ठीक बढ़ा है। दूधसे बढ़ना ही चाहिए। तुम लोगोके बीच उपवासकी बात चल रही है, वह ठीक ही है। तुमने जो पुस्तक भेजी है उसकी पद्धति और वहाँ जो-कुछ हो रहा है उसमे अन्तर है। उससे मालूम होता है कि दिनशाजी[2] ने दूसरी पुस्तकोंमे कुछ लिया है या कुछ मौलिक सुधार किये है। हमें तो जो वे कहें वही करना है।

लेप और मालिशपर जो जोर दिया है वह मेरे ध्यानसे बाहर नही है। देख रहा हूँ कि क्या करना सम्भव है।

क्या बाल[3] आदि तुम्हारे साथ रह सकते है? बालका पत्र मिल गया है। उसे बादमें या अभी समय मिला तो इसके साथ ही पत्र लिखूंगा।

मुलाकातके लिए आनेवाले त्रिवेदीके यहाँ ठहरते है। यह अच्छा नहीं लगता। इसमें वे उसकी स्थितिका खयाल नही करते। ऐसे लोगोंका वहाँ ठहरना रोक देना चाहिए। इतना ही नहीं, लोगोंको तुम्हारे पास भी आना नही चाहिए। आनेमे खर्च कितना हो जाता है। पिछले सप्ताह पूरी फौज ही आ गई थी। मुझे यह बिलकुल अनावश्यक लगा। . . .[4] अभी नीचे आनेका विचार भी न करना। वहाँका पूरा-पूरा लाभ उठाओ, यह आवश्यक है। इसीमें अक्लमदी है। जब वहाँसे आओगे अर्थात्, जूनके महीनेमें, उस समय तो मिलेगे ही। आनेकी तनिक भी जल्दी न करना। शरीर बिलकुल स्वस्थ हो जाये और इस प्रकारके उपचारोंके सम्बन्धमे ज्ञान मिल जाये, तो बहुत लाभ होगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४७४)से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर।

१. दूध-चिकित्साके संदर्भसे (देखिए "पत्र : मीराबहनको", २१-६-१९३३) और कालेलकरसे जूनमें मिलनेके उल्लेखसे।

२. दिनशा मेहता, पूनाके प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक।

३. बाल कालेलकर, श्री द० बा० कालेलकरके पुत्र।

४. इसके बादका कुछ अंश पत्रमें काट दिया है।

२११. पत्र : मीराबहनको

पर्णकुटी, पूना ६,
३ जून, १९३३

चि० मीरा,

महादेव तुम्हें सब समाचार जरूर देगा और मैं केवल उसमें एक या दो पंक्तियाँ जोड़ दूँगा।

मुझे पहले ही तुम्हें पत्र लिखना चाहिए था परन्तु दूसरे कामके दबावसे नहीं लिख सका। बापूका स्वास्थ्य बराबर ठीक होता जा रहा है और वे धीरे-धीरे खुराक बढ़ा रहे हैं। कल उन्होंने पहली बार दूध लिया, दिन-भरमें उन्होंने १४ औंस दूध लिया। कुल मिलाकर वे दिनमें छः बार खुराक लेते हैं, जिसमें फलोंके रस, शहद और अब दूध भी शामिल है। कल दूधके अलावा उन्होंने आठ चम्मच शहद, चार सन्तरे, एक चकोतरा और एक पौंड आमका रस लिया। यह काफी अच्छा है और यदि वे इस आहारमें वृद्धि करते रहे तो डॉक्टरोंको आशा है कि लगभग दो हफ्तोंमें उनका वजन सामान्य और शक्ति पहले-जैसी हो जायेगी। परन्तु उनकी हिदायतें बड़ी कठोर हैं और बापूने उनका पालन करनेका वायदा किया है। इसका मतलब है कि इस महीनेकी चौदह तारीखतक उन्हें लिखनेका कोई काम नहीं करना चाहिए, समस्याओंके बारेमें कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिये, किसी चर्चा आदिमें भाग नहीं लेना चाहिए। पहली तारीखको सुबह लिया गया उनका वजन ८४ पौंड था।

भविष्य ईश्वरके हाथमें है। वे आज सुबह ही तुम्हारी रिहाईकी तारीखके बारेमें मुझे पूछ रहे थे। मैंने स्वीकार किया कि मुझे मालूम नहीं है, लेकिन आश्रममें मुझे बताया गया था कि तुम्हारे ढाई महीने अभी और बाकी हैं। कृपया मुझे बताना कि क्या मैं सही हूँ, और अब बापूको तुम्हारा पहले-जैसा पूर्ण, विस्तृत और विवरणपूर्ण पत्र मिल जाना चाहिए जिससे कि उन्हें तुम्हारे बारेमें सब-कुछ पता चल जाये। उन्होंने एक तरहसे मौनव्रत लिया हुआ था, परन्तु यदि वे हममें से किसीके बारेमें सोचते थे तो तुम्हारे बारेमें ही सबसे ज्यादा सोचते थे।

राजाजी[1] पिछली शाम चले गये और आशा है कि वे ११ या १२ तारीखतक वापस आ जायेंगे। जमनालालजी यहाँ आये थे। वे पल-भरके

१. गांधीजी से १ और २ जूनको हुई उनकी बातचीतके लिए देखिए परिशिष्ट ७।

लिए ही बापूसे मिले और उन्होंने उन्हें तबतक बातचीतमें उलझाना नहीं चाहा। जबतक कि वे ठीक नहीं हो जाते। छोटे बबला[1] के सिवाय आश्रमसे और कोई नहीं आया। कहीं मैं बहुत जल्दी अपने आवासको वापस न चला जाऊँ इसलिए वह मुझसे जी-भरकर बात कर लेना चाहता था।

मथुरादासने इन दिनों मेरी गद्दी संभाल रखी है और कुछ वक्ततक उनके गद्दीपर बने रहनेकी सम्भावना है। देवदास कामके बोझ और थकानकी वजहसे बीमार रहे, परन्तु अब स्वास्थ्य-लाभ कर रहे हैं। परिचारकोंमें अच्छे ब्रजकृष्ण[2] अभी हैं। बाल और हरिहर शर्मा[3] भी हैं जो अब जानेवाले हैं। शायद उनकी जगह रामदास ले लें। वह यहां है। बा बिलकुल प्रसन्न हैं और अपना सारा समय बापूकी परिचर्यामें, उनकी मालिश करनेमें और पूरी श्रद्धा और स्नेहयुक्त लगनसे उनकी खुराक तैयार करनेमें लगा रही हैं।

मैंने काफी जगह छोड़ दी है ताकि बापू एक पंक्ति लिख दें।

चि० मीरा,

मुझसे प्रत्यक्ष मुलाकातकी इच्छासे तुम्हें अपने-आपको मुक्त करना चाहिए। आशा है कि बुखार हट गया होगा।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७७) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७४३ से भी।

२१२. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

४ जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हें धैर्य रखना चाहिए और आश्रमके सभी कार्यकलापोंमें भाग लेना चाहिए।
स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

१. नारायण देसाई, महादेव देसाईका पुत्र।
२. ब्रजकृष्ण चाँदीवाला, दिल्ली के कांग्रेसी कार्यकर्ता।
३. दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रासके मंत्री।

२१३. पत्र : नारणदास गांधीको

४ जून, १९३३

चि० नारणदास,

आजसे थोड़ा लिखना शुरू कर रहा हूँ। लगता है, तुमपर बोझ असह्य सिद्ध रहा है। किन्तु मुझे आशा है कि अब कुछ हलका हो जायेगा। मैं स्वयं ज्यादा नहीं लिख पाऊँगा; बोलकर लिखवा दूँगा। इसलिए अब जरूरी बातोंके बारेमें मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३८१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२१४. पत्र : जमनाबहन गांधीको

४ जून, १९३३

चि० जमना,

क्या अभी वही इलाज चल रहा है? अब मुझे नियमित रूपसे लिखती रहना। पुरुषोत्तम कैसा है?

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८८१) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२१५. पत्र : अमतुस्सलामको

४ जून, १९३३

बेटी अमतुल सलाम,

आज कुछ खत लिखे, इसलिए यह तुमको। अब मुझे सब हाल दे दो। कैसे हो?

बापूकी दुआ

उर्दूकीकी फोटो-नकल (जी० एन० २८५) से।

२१६. तार : सी० एफ० एन्ड्रयूजको[1]

५ जून, १९३३

भलीभाँति सोचे बिना जल्दीमें कोई कदम नहीं उठाया जायेगा।

गांधी

अंग्रेजी फोटो-नकल (एस० एन० २१४८२) से।

२१७. पत्र : मीराबहनको

५ जून, १९३३

चि० मीरा,

तुम्हें फिर बुखार आ जानेसे मुझे चिन्ता हो रही है। तुम्हें सच्चा आत्मसंयम सीखना चाहिए। यह पढ़ने-लिखनेसे नहीं आता। यह तो तभी आता है जब हम यह बात निश्चित समझ लें कि ईश्वर हमारे साथ है और वह हमारी सार-सभाल इस तरह करता है मानो उसे और कोई काम ही न हो। यह कैसे होता है, यह मैं नहीं जानता। परन्तु ऐसा होता जरूर है, यह मैं जानता हूँ। जिन्हें उसपर श्रद्धा होती है, उनके कंधोंसे वह सभी चिन्ताओंका भार उतार लेता है। हममें श्रद्धा भी हो और मनमें व्यग्रता भी बनी रहे, ये दोनों बातें एकसाथ हो ही नहीं सकतीं। इसलिए मनको शान्त रखो।

स्नेह।

बापू[2]

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू ६२७८) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७४४ से भी।

१. ४ जून, १९३३ को मिले उनके तारके उत्तरमें जिसमें लिखा था : "परमप्रिय अन्सारीको प्यार। पूरी तरह विश्राम करो। कैदियोंकी रिहाईका भरसक प्रयत्न किया जा रहा है। आशा है, इस मामलेको जल्दबाजी कर और उलझाया नहीं जायेगा। इसके लिए थोड़ा समय जरूरी है।"

२. साधन-सूत्रमें इसके आगे महादेव देसाईकी टिप्पणी थी, जिसमें लिखा था : "बापूका स्वास्थ्य वस्तुतः बिल्कुल ठीक चल रहा है। आज उनका वजन लिया गया और वह ८८ पौंड २६ तोले निकला। यह बहुत ही अच्छा है। वे बहुत ही प्रसन्नचित लगते हैं और समस्याओंका सामना करने और उन्हें सुलझानेको तत्पर रहते हैं। पर डॉक्टर उन्हें ऐसी कोई चीज करने नहीं देते और उन्होंने उन्हें १४ तारीख

२१८. पत्र : डंकन ग्रीनलीजको

६ जून, १९३३

प्रिय डंकन,

केवल कल ही मैं महादेवको लिखे आपके पत्र देख सका। निस्सन्देह वक्त आनेपर आप निश्चय ही आत्मदान एवं आत्मशुद्धि-सम्बन्धी उपवासमें भाग लेंगे। वह २१ दिनका होना चाहिए या उससे कम-ज्यादा, अभी यह निश्चय करनेकी जरूरत नहीं है। ऐसा लगता है कि आपने २१ दिनका निश्चय कर लिया है। आप इसे मनसे निकाल दें। मैं आपसे यह भी अनुरोध करूँगा कि आप जल्दबाजी न करें। आपके लिए पहली जरूरी चीज यह है कि आप देखें कि क्या कुल मिलाकर आश्रम आपको कोई प्रेरणा दे पा रहा है। इस बातपर विचार करते समय आप कृपया आश्रम और उसके आदर्शको अलग-अलग न मानें। उच्चतम आदर्शको कागजके किसी टुकड़ेपर अंकित कर देना संसारमें अत्यन्त सहज है। परन्तु यदि उस आदर्शका कोई जीता-जागता प्रतिनिधि नहीं है, तो उस आदर्शका कोई महत्त्व नहीं। इसलिए मैंने सदा ही यह अनुरोध किया है कि जो मुझे और जीवनकी मेरी व्याख्याको जानते हैं, वे आश्रमके माध्यमसे उसपर अमल करें, और यदि किसी निरीक्षकको जीवनकी मेरी व्याख्या नहीं जँचती तो उसे चाहिए कि वह मेरी बात बिना किसी संकोचके अस्वीकार कर दे। मैं नहीं जानता कि मैं अपनी बात आपके सामने स्पष्ट कर पाया हूँ या नहीं। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं चाहता हूँ कि मैं जैसा जीवन जी रहा हूँ और जो यज्ञ करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ, आप उसमें यथाशक्ति योग दें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०८९) से।

तक पूरा आराम करनेका आदेश दिया है। वे बैठ सकते हैं और वजन करनेकी मशीनपर एक सेकिण्डके लिए खड़े भी हो सकते हैं (बेशक, इसके लिए उन्हें सहारा चाहिए)। वैसे सब-कुछ बिलकुल ठीक है। वे इस बातसे चिन्तित हैं कि तुमने लगातार उनके बारेमें सोचकर और चिन्ता करके रातों जागकर और अपनी जीवन-चर्यामें अनियमितता लाकर बुखार मोल ले लिया है। बापूकी खातिर अब जल्दी ठीक हो जाओ।”

२१९. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पर्णकुटी, पूना ६,
६ जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। आश्रममें आश्रमका काम करते हुए तुम्हे यही समझना चाहिए कि तुम मेरे साथ ही हो। मुझे विश्वास है कि तुम इस सीधे-से सत्यको समझती हो। जेलमें कई कैदी मेरे ही अहातेमे थे और हम सब एक ही बरामदेका उपयोग करते थे। क्या तुम समझती हो कि वे मेरे साथ रह रहे थे?

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। एस० एन० १९०९० भी।

२२०. पत्र : नी० को

६ जून, १९३३

प्रिय नी०,

महादेवके पास पड़े हुए तुम्हारे पत्रोंको मैं कल ही पढ़ सका। आटेकी चोकर अलग कर दिये जानेके बारेमे जरूर कोई गलतफहमी हुई है। आश्रममें चोकरहीन आटे का इस्तेमाल नहीं होता। आश्रममें प्रयोगमें लाया जानेवाला सारा आटा खास तौर पर पीसा जाता है और यह हमेशा बिना छना होता है। पिस जानेके बाद कभी इसे चलनीसे छाना जाता है और कभी नहीं। इसलिए पूछताछ करके मुझे बताना। भोजनके बारेमें मैंने तुम्हें जो-कुछ कहा है वह केवल तुमपर ही नही, निश्चित रूपसे सभीपर लागू होता है। सभी लोग उक्त नियत आहार न लेते हों, यह तो एक अलग बात है। परन्तु आश्रमके सार्वजनिक रसोईघरमें कमोबेश सख्तीके साथ आम तौरपर वही तरीका इस्तेमाल किया जाता है। चावल और दालका प्रयोग बिलकुल न किया जाये, यह सम्भव नहीं है। परन्तु जो चावल और दालोंका उपयोग नहीं करना चाहते, उन्हें सब तरहका प्रोत्साहन दिया गया है। मुझे पूरी आशा है कि तुम आश्रममें अधिकाधिक शान्ति महसूस कर रही होगी और तुम तथा सी० दोनों ठीक होगे।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०९१) से।

२२१. पत्र : रमाबहन जोशीको

६ जून, १९३३

चि० रमा,

अब चाहो तो मुझे पत्र लिख सकती हो। हाथ कैसा रहता है? क्या दर्द पहले जितना ही बना है? अध्ययन कैसा चल रहा है? मानसिक दशा कैसी है?

बच्चे कैसे हैं? धीरूकी तबीयत कैसी रहती है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५१) से।

२२२. पत्र : नारणदास गांधीको

६ जून, १९३३

चि० नारणदास,

मैं देख रहा हूँ कि चलने-फिरनेके योग्य होनेमें तो मुझे समय लगेगा ही, किन्तु हाथ भी जल्दी काम करने लायक नही हो पायेंगे। कल महादेवसे वहाँका हालचाल सुना। उसके दिये हुए पत्र मैंने पढ़ लिये हैं। थोड़ी गलतफहमी लगती है। मेरे कथनका तो अर्थ यह है कि सत्यकी शोधमें हो या अहिंसाके मार्गमे हो, हमारा अन्तिम कदम तो साधकमात्र द्वारा इस तरहका अनशन ही हो सकता है। और उपवासके सिलसिलेमें आश्रममें जो फेरफार खाने-पीने के सम्बन्धमे किये गये है उन्हें इस अन्तिम कदमकी तैयारी समझना चाहिए। इतना समझ लेना जरूरी है। जिसे ऐसा न लगे वह इन परिवर्तनोंके झंझटमें न पड़े। सभीको अनशनकी इस शृंखलामे भाग लेना ही है, और नहीं तो आश्रमसे चले जाना होगा, मेरे कथनका यह अर्थ नहीं था। मेरे जरा ठीक हो जानेपर तुम्हारे यहाँ आनेका विचार मुझे अच्छा लगा। अगले सप्ताह जब चाहो आ सकते हो। बहुत बात न भी कर सकूँ तो भी अपनी बात समझाने और तुम्हारी शंकाका निवारण करने लायक तो मैं हो ही जाऊँगा। किसीके घबरानेकी कोई बात नहीं है। मेरा यही कर्त्तव्य है कि जिस तरह मैंने सत्यको समझा है उस तरह उसे समझा-भर दूँ। तुम सब उसमें से जो स्वीकार कर सको सो स्वीकार कर लो। मुझे कोई नई सृष्टिकी रचना नहीं करनी है। वहाँसे तुम्हें

जो प्रश्न पूछने हों, पूछ लेना। तुम आनेका विचार करो तब जिसे साथ लाना हो, ले आना।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८३८२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२२३. तार : सीतलासहायको

७ जून, १९३३

सीतला सहाय
१६, लाटूश रोड, लखनऊ

आप १५ के बाद पद्मा[1] के साथ आ सकते हैं। लेकिन ठाकुरसाहबको मात्र दर्शनके लिए आनेसे रोकिये। अलावा इसके, मेहमानोंके रहनेके लिए और कमरा या जगह नहीं है। लेकिन यदि वे आते ही हैं तो उन्हें होटलमें ठहरनेको तैयार रहना चाहिए।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१४५६) से।

२२४. पत्र : मीराबहनको

पर्णकुटी, पूना ६,
७ जून, १९३३

चि० मीरा,

मेरा लिखना ठीक नहीं है। मैंने तुम्हें जो पिछला पत्र लिखा था, उससे मेरे हाथपर बहुत जोर पड़ा। इसलिए तुम्हारे ५ तारीखके पत्रके जवाबमें यह पत्र बोलकर लिखवा रहा हूँ।

तुम कहती हो कि महादेवके लिखे हुए पत्र[2] के अन्तमे मैंने जो संक्षिप्त वाक्य लिखा, उससे तुम्हें पीडा हुई। आश्चर्यकी बात है कि जहाँ दुःख होनेका कोई भी कारण न हो, हम वहाँ भी दुःख पैदा कैसे कर लेते हैं। मेरा वाक्य तुम्हारे बुखारके सम्बन्धमें था। तुम्हींने लिखा था कि वह अधिक चिन्ताके कारण आ गया था। तुमने

१. सीतलासहायकी पुत्री।
२. देखिए पृ० १८९।

साफ तौरपर उल्लेख किया था कि तुम वियोग सहन नहीं कर सकती। इसीके उत्तरमे मैने वह वाक्य लिखा था। आशय लाचारीसे दूर रहनेकी परिस्थितिसे ही था। यह आशय तो कतई नहीं था कि जब मेरे साथ रह सकना सम्भव हो यानी, हम दोनो कैदमे न हों, तब भी तुम मुझसे दूर रहो। उस सूरतमें तो तुम मेरे साथ ही रहोगी। लेकिन मेरा जेलसे बाहर रहना स्वाभाविक नहीं है। मेरा स्वाभाविक जीवन तो कैदीका है और इसलिए मेरा सुझाव है कि तुम्हें मेरी शारीरिक उपस्थिति के बिना काम चलाना सीख लेना चाहिए। क्या यह बात सूर्यके प्रकाशकी तरह साफ नहीं है?

तुम्हारा यह वजन घटना मुझे पसन्द नहीं है। कन्धोपर चिन्ताका यह भार लिये फिरनेकी जड़मे कही कोई मौलिक खराबी है। एक जीवन्त ईश्वरके अस्तित्वमें जीवन्त श्रद्धा रखनेका इससे मेल नही बैठता। जैसे-जैसे समय बीतता है, वैसे-वैसे मै रोम-रोममे उसका जीवन्त अस्तित्व अनुभव करता हूँ। यह अनुभव न हो तो मैं पागल हो जाऊँ। मेरे मनकी शान्तिको भंग करनेवाली कितनी ही बाते होती रहती है। इतनी घटनाएँ होती है कि ईश्वरके अस्तित्वका भान न हो तो वे मुझे जड़से हिला डालें। परन्तु वे मुझे लगभग बिना छुए गुजर जाती हैं। मैं चाहता हूँ कि तुम भी मेरी तरह इस सत्ताको पहचानो। फिर तुम्हें शारीरिक रूपसे मेरे निकट न हो पानेपर क्षोभ नही होगा। याद रखो कि तुम्हें और मुझे जैसा वियोग मजबूरन सहना पड़ता है, उसे सहन करनेके लिए किसी बहादुरीकी जरूरत नही है। लाखों मनुष्य बिना किसी प्रयत्नके इसे सहन करते हैं। यह समझनेकी भूल न करो कि इस तरहकी बातोके प्रति सवेदनशील न होनेके कारण वे ऐसा वियोग सहन कर लेते है। अगर हम बारीकीसे देखे तो पता चलेगा कि हम जितने सवेदनशील हो सकते है ठीक उतने ही सवेदनशील वे भी है। अन्तर इतना ही है कि उनकी ईश्वरमें ऐसी स्वाभाविक श्रद्धा होती है कि उसका उन्हें ज्ञान भी नही होता। उनके मुकाबलेमे हमारी श्रद्धा प्रयत्न-साध्य है। इसलिए हमे वियोग सहन करनेके लिए भगीरथ प्रयत्न करना पड़ता है। बहरहाल, तुम्हारी मनोवृत्तिका मेरा यह विश्लेषण है। अगर यह सही नही है तो तुम अपना विश्लेषण स्वय कर लो और किसी-न-किसी तरह इस भयकर चिन्तासे मुक्त हो जाओ। 'गीता' के दूसरे अध्यायमे कृष्णके सवादपर ध्यानपूर्वक मनन करो। फिर बारहवाँ अध्याय पढ़ो। और देखो कि तुम्हें सच्ची मानसिक शान्ति और स्थिरता प्राप्त हो पाती है या नहीं। मेरी इस दलीलका ब्यौरेवार उत्तर देनेका प्रयत्न न करना। मैं तुमपर इतना जोर नही डालना चाहता। मैंने यह दलील सिर्फ इसलिए दी है कि यदि सम्भव हो तो तुम्हें सान्त्वना दे दूँ। मै जानता हूँ कि जब हमारा समूचा अस्तित्व अपने ही विद्रोहमे खड़ा हो तब तर्क व्यर्थ है। शायद जिस कष्टप्रद प्रक्रियामें से तुम गुजर रही हो वह, ईश्वरकी जीती-जागती उपस्थितिका तुम्हें जो अनुभव होनेवाला है, उसकी प्रारम्भिक दशा है। ईश्वर करे ऐसा ही हो। कुछ भी हो, अपने मनमें दुबारा यह विचार आने ही न दो कि जब हम दोनों जेलसे बाहर होंगे, तब भी तुम्हारे मुझसे अलग रहनेका कोई प्रश्न रहेगा।

अब मेरी बात। मै मजेमें हूँ। ६४ वर्षकी आयुमें शरीरका पुर्नानिर्माण धीमी गतिसे ही हो सकता है। देखता हूँ कि वह गति मैंने जितनी आशा रखी थी उससे भी धीमी होगी। फिर भी लगातार स्वस्थ हो रहा हूँ। २४ औंस दूध आसानीसे ले रहा हूँ। २ पौंडतक जानेकी कोशिश है। डॉ० दिनशा मेहताकी देखरेखमे मात्रा और भी बढ़ सकती है। मै जिस ढंगसे प्रगति कर रहा हूँ, उससे मुझे पूरा सन्तोष है। दूधके अलावा मै नारंगियों और तीनसे चारतक अनारोंका रस लेता हूँ। और खासी मात्रामें, शायद ४ औंस, शहद ले रहा हूँ। कलतक सब्जीका रस ले रहा था। आजसे डॉ० मेहताने दूधकी मात्रा बढ़ानेके विचारसे रस बन्द कर दिया है। इस प्रकार तुम देखोगी कि जिस ढगसे मेरे भोजन और स्वास्थ्यमें सुधार हो रहा है उसमें शिकायतकी कोई बात नही है।

तुम शिकायत करती हो कि वहाँ सख्त गरमी पड़ रही है। यहाँ ऋतु बढ़िया और ठंडी है। बेशक, पूना बरसातके लिए एक आदर्श स्थान है।

१६ तारीखको देवदासका लक्ष्मीसे विवाह होगा; धार्मिक संस्कार उसी तारीखको होगा। परन्तु चूंकि यह विवाह वर्त्तमान हिन्दू-रिवाजके अनुसार नहीं है, इसलिए २१ तारीखको उसकी सिविल रजिस्ट्री भी होगी। जमनालालजी प्रभुदासका भी विवाह-सम्बन्ध निश्चित करनेकी कोशिश कर रहे है। यदि रिश्ता पक्का हो गया तो उसका विवाह भी उसी तारीखको हो जायेगा। रामदास यहाँ है। वह कतई स्वस्थ नहीं रह पा रहा है। उसका शारीरिक स्वास्थ्य उसकी मानसिक स्थितिपर निर्भर करता है और अभी उसे मानसिक शान्ति प्राप्त नहीं हुई है। जमनालालजी माताके समान उसकी देखभाल करने जा रहे है। सम्भवतः वह इससे ठीक हो जायेगा। वे वर्धामें सपत्नीक रहेंगे।

ऐसा प्रतीत होता है कि नी० ठीक रास्तेपर लग रही है। मार्गरेट स्पीगल, जिसका नाम अमला रखा गया है, बिलकुल पागल है। परन्तु कोई क्या करता? वह आ गई और उसे लेना पड़ा। वह एक अच्छी महिला है। परन्तु यह अभी देखना है कि वह कैसी बनती है। नी० और अमला दोनोंको हरिजन-सेवा करनी है।

मैं समझता हूँ कि मैंने तुम्हें सप्ताह-भरके लिए काफी-कुछ लिख दिया है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७९)से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७४५ से भी।

२२५. पत्र : वेरियर एल्विनको

७ जून, १९३३

प्रिय वेरियर,

निस्सन्देह मुझे आपके बारेमें समाचार तो मिलते ही रहे हैं और अब पिछले महीनेकी ३१ तारीखका आपका पत्र भी मेरे सामने है।

यह सही है कि ईश्वरकी मुझपर कृपा रही है। ईश्वरने जरूरतके वक्त मित्रकी तरह मेरी मदद की है। उसने मुझे उन अत्यन्त आश्चर्यजनक २१ दिनोंमें कभी नहीं छोड़ा। मैं लम्बा पत्र बिलकुल नहीं लिखवाऊँगा। अभी-अभी मीराको एक लम्बा पत्र लिखवा चुका हूँ — उसे इसकी जरूरत भी थी। मैं नहीं चाहता कि आप यहाँ मात्र मुझे मिलनेके उद्देश्यसे आयें। "आ जाओ" कहनेका लालच तो है; परन्तु मै जानता हूँ कि मुझे यह लोभ संवरण करना चाहिए। आपका काम सुनिश्चित रूपसे आपके सामने है; उसमें विघ्न नहीं पड़ना चाहिए।

आप सबका स्वास्थ्य ठीक लग रहा है, यह जानकर खुशी हुई। आशा है, मेरी बिलकुल शान्त भावसे रह रही होगी। जब आप माँ, इल्डिथ और इटलीकी बहनोंको पत्र लिखें तो उन्हे मेरा प्यार भेज दें। मेरे स्वास्थ्यमें तेजीसे सुधार हो रहा है।

हृदयसे आपका[1]

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०९२)से। **दि ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एल्विन,** पृ० ८३-४ से भी।

२२६. पत्र : मनु गांधीको

७ जून, १९३३

चि० मनुड़ी,

तेरे आश्रममें पहुँचनेकी खबरसे खुशी हुई। तुझे अच्छा लगता है न? अब गलेकी गाँठें काट दी गई होंगी। उन्हें कटवानेके बाद थोड़े दिन लगभग चुप रहना चाहिए, यह तो तुझे मालूम ही होगा। खुराकमे भी कुछ दिन तरल पदार्थ ही खाने चाहिए। उक्त नियमोंका पालन करनेपर ही गाँठे कटवानेका पूरा लाभ मिल पाता है।

मुझे ब्यौरेवार पत्र लिखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५२२)से; सौजन्य : मनुबहन मशरूवाला।

१. मुद्रित साधन-सूत्रमें "स्नेह। बापू" है।

२२७. पत्र : नारणदास गांधीको

७ जून, १९३३

चि० नारणदास,

यह पत्र तुम्हें समयपर आज ही डाकसे भेजनेका इरादा था। किन्तु मीरा बहनको लम्बा पत्र[1] लिखा, इसलिए दूसरा पत्र लिखनेकी हिम्मत नहीं पड़ी। इस तरह गाड़ी धीरे-धीरे चल रही है; किन्तु ठीक ही चल रही है।

नी० और अमलाके बारेमे अपने अनुभव लिखना। सफेद आटेके बारेमे नी०ने शिकायत की थी, वह तुमने देखी होगी। मुझे तो उसमें थोड़ी गलतफहमी लगती है।

लड़केके बारेमे परचुरे शास्त्रीका पत्र आते ही उनके लड़केको उसे यहाँ बुला लूँगा। यह बोझ तुमपर नहीं रहने दूँगा।

कुसुमके बारेमे मुझे सन्तोष नहीं हुआ। अब फिर कोई देशी वैद्य खोजना है या किसी डॉक्टरको ही दिखाना है? मुझे जरा लिखना कि वस्तुस्थिति क्या है।

रमाबहनके कंधेके लिए भी कुछ करना जरूरी है। या तो माणेकरावको[2] दिखाओ या वह यहाँ चली आये ताकि कुछ किया जा सके। हमारा क्या कर्त्तव्य है यह देख लेना। दूसरी बातोंके बारेमे महादेवने लिखा होगा इसलिए मैं नहीं लिखता।

अमतुस्सलाम कैसी रहती है? लगता है कि वह पत्र लिखनेमें घोर संयमका पालन कर रही है।

डॉ० शर्माके बारेमें अपने अनुभव लिखना। क्या उसका कोई पत्र आता है? तुमने उसे छुट्टी दी या वह खुद चला गया?

प्रेमा मुझे मिलने आयेगी, मै ऐसा मानकर बैठा हूँ।

कनु अब कैसा रहता है? पुरुषोत्तमका क्या समाचार है?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३८३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी ।

१. देखिए पृ० १९५-७।

२. प्रोफेसर माणेकराव, प्रसिद्ध अस्थि-विशेषज्ञ और बड़ौदा व्यायामशालाके संस्थापक।

२२८. तार : गिरिजाशंकर राय चौधरीको

[८ जून, १९३३ या उसके बाद][1]

गिरिजाशंकर राय चौधरी
२५३, बालीगंज एवेन्यू, कलकत्ता

धन्यवाद । बरसी विवाहके आड़े नहीं आती। बल्कि इसे सुखद संयोग मानें ।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१४५८) से।

२२९. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

९ जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हारे पत्र मिले। मनको स्थिर करो। बराबर मेरे साथ रहनेकी बात सोचते रहना अच्छा नहीं है। इसके विपरीत तुम्हारे सामने जो कर्त्तव्य है, उसके बारेमे तुम्हें सोचते रहना है। ३५ वर्षकी एक बुद्धिमती महिला बनो, न कि पाँच वर्षकी बच्ची।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म, (एस० एन० १९०९४) भी।

१. गिरिजाशंकर राय चौधरीके ८-६-१९३३ के तार के जवाबमें। तारमें सूचित किया गया था कि देवदासके विवाहकी तिथिपर ही देशबन्धु दासकी मृत्युकी बरसी पड़ती है।

२३०. पत्र : नी०को

६ जून, १९३३

प्रिय नी०,

अभी तुम मुझसे अपने पत्रोंके उत्तरकी कोई आशा मत रखो। मुझमें आशाके अनुरूप गतिसे ताकत नहीं आ रही है। मेरा वैसी आशा करना उचित भी नही था। ६४ वर्षके बूढ़े आदमीमें जितनी जल्दी ताकत लौट सकती है, उस लिहाजसे तो ताकत जल्दी ही आ रही है। परन्तु आशाका किला बनाते हुए मैं भूल गया था कि मैं ४६ वर्षका नहीं ६४ का हूँ।

मासिकधर्म के बारेमें तुम जो कहती हो वह बिल्कुल सही है। परन्तु इस बातकी सम्भावना नहीं है कि यह बात तुम्हारे बारेमें सही हो। जिस स्थितिका तुमने वर्णन किया है वहाँतक पहुँचनेके लिए तुम्हें करनीमें ही नहीं, विचारमें भी पूर्ण पवित्रता लानेकी जरूरत है। तब निस्सन्देह स्त्री-पुरुषमें अन्तर नही रहता; केवल रूप-भेद रह जाता है। मुझे निश्चय ही पूरी आशा है कि तुम उस स्थितितक पहुँच सकती हो। परन्तु अभी तुम उस स्थितितक पहुँची नहीं हो; पहुँच जरूर सकती हो। मुझे इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है कि तुममें ऐसी महिला बननेके गुण हैं। मैं तुम्हारी महत्त्वाकाँक्षाएँ जानता हूँ। मैं यह भी जानता हूँ कि तुम बिलकुल सच्ची बनना चाहती हो। जहाँतक तुम्हारे पत्रोंसे मैं जान पाया हूँ, तुम इसके लिए भगीरथ प्रयत्न कर रही हो। मेरी कामना है कि इसमें सफलता मिले। फिलहाल मासिकधर्म की न्यूनताके आधारपर तो मुझे कोई बहुत आशा नहीं बंधी है। इसलिए गर्भ ठहर जानेकी मेरी आशंका पूरी तरह नहीं गई है। इस दशामें मैं चाहता हूँ कि तुम इससे घबरानेके बजाय इसे ईश्वरका वरदान समझो। यदि गर्भ स्थित नहीं हुआ है तो इसे भी हम वरदान ही मानेंगे और सोचेंगे कि बाल-बाल बच गये। दोनों ही परिस्थितियोंमें इसे अन्तिम और अविस्मरणीय चेतावनी मानना है।

मुझे प्रसन्नता है कि तुम्हें अब्बास और गोविन्दजी ट्यूटर के रूपमें पसन्द आये। मुझे मालूम है कि वे बहुत बढ़िया कार्यकर्त्ता हैं। वे मन लगाकर काम करते हैं। निस्सन्देह लक्ष्मीदासको तुम अपने पहले शिक्षक और पिताके स्थानमें मानोगी। वे आश्रमके सबसे ईमानदार पुरुषोंमें से एक हैं। मैं चाहता हूँ कि आश्रममें तुम्हें जो-कुछ भी अच्छा लगे उसे ग्रहण करो और उसपर दृढ़ रहो।

जहाँतक नामका सम्बन्ध है, तुम देखोगी कि मैंने तुम्हारा सुझाव मान लिया है। तुम आश्रममें प्रत्येक व्यक्तिसे कह दो कि देवी शब्द [तुम्हारे नामसे] बिलकुल हटा दें। वे तुम्हें इच्छानुसार नी० या नी०बहन कहके सम्बोधित करें। परन्तु फिर इस

के बाद नाम, उसके अर्थ और महत्त्वके बारेमें सब-कुछ भूल जाओ। नाम कोई महत्त्व नहीं रखता। जो-कुछ हम सोचते और करते हैं सब-कुछ उसीपर आधारित है।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०९५) से।

२३१. पत्र : रमाबहन जोशीको

९ जून, १९३३

चि० रमा,

डॉक्टर पटेल[1] के साथ महादेवकी जो बात हुई उसे सुनते ही मुझे निर्णय करनेमें देर नहीं लगी। अब तो जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी शल्यक्रिया करा लो। मुझे यह बात साफ समझ आ गई है कि इससे न तो बहुत कष्ट होगा और न इसमें किसी प्रकारकी जोखिम ही है। इसलिए अब फौरन शल्यक्रिया करा लेनेमें ही बुद्धिमानी है। तुम्हारे लिए इसमें डरनेकी कोई बात नहीं है। अच्छी तरह विचार कर लेनेपर ही मैंने यह दृढ़ राय लिखी है। मुझे पत्र लिखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५२) से

२३२. पत्र : जमनाबहन गांधीको

९ जून, १९३३

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे पहले पत्र मैंने नहीं पढ़े। अभी कुछ ही दिनोंसे पत्रोंको पूरा सुनने लगा हूँ। एक दिन तो पढ़े थे, परन्तु डॉक्टरने पढ़नेके लिए मना कर दिया। इसलिए अब सुन लेता हूँ।

पहलेके पत्रोंका सार मुझे भेज दो तो मैं जवाब लिखवा दूँगा।

सावधानीके साथ प्राकृतिक उपचार करते रहनेसे स्वास्थ्य अच्छा होगा ही, यह विश्वास रखो। पहले पत्रमें मैंने आशासे अधिक लिख दिया था कि अब बराबर लिख सकूँगा। किन्तु देखता हूँ कि लिखना तो एक ओर, जब लिखवानेकी इच्छा होती है तब भी तत्काल वैसा नहीं कर पाता। थोड़ा समय लगेगा।

पुरुषोत्तम वाला उपाय मैं भी कर रहा हूँ अर्थात्, लेटे रहना और लेटे-लेटे ही दूध पीना। यह ठीक तरह हजम होने लगा तो शक्ति जल्दी आयेगी।

तुम्हें पत्र लिखनेमें संकोच करनेकी जरूरत नहीं है।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८८२) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. डॉ० मोतीभाई डी० पटेल, अहमदाबादके एक प्रसिद्ध शल्य-चिकित्सक

२३३. पत्र : मनु गांधीको

९ जून, १९३३

चि० मनुड़ी,

मैंने सुना है कि गलेकी गाँठें कटवानेमे काफी दर्द हुआ। किन्तु यह पत्र पानेतक तुम्हें पूरी तरह आराम हो चुका होगा। मेरा पहला पत्र[1] मिल गया होगा।।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १५२३)से; सौजन्य · मनुबहन मशरूवाला।

२३४. पत्र : भगवानजी पु० पंड्याको

१० जून, १९३३

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मैंने अपने गद्देके नीचे दबाकर रख दिया था। आज ही मिला है। वहाँसे निकल सको और नारणदास अनुमति दे तो अवश्य आ जाओ, ताकि बात कर सके और कुछ समझना हो तो समझ ले। तुम न आ सको तो जो प्रश्न पूछने हों पूछ लेना। किन्तु आओगे ही, यह सोचकर अभी कुछ नहीं लिखता।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३५८) से; सौजन्य : भगवानजी पी० पंड्या।

२३५. तार : ए० फेनर ब्राकवे तथा अन्य लोगोंको[2]

१२ जून, १९३३

धन्यवाद। बराबर प्रगति कर रहा हूँ।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१४६४) से।

१. देखिए पृ० १९८।

२. १० जून, १९३३ को प्राप्त उनके तारके उत्तरमें। तार इस प्रकार था:
"हम आनन्दित हैं कि ईश्वरने भारतीय अछूतों और सामाजिक तथा राष्ट्रीय स्वतन्त्रताके कार्यको चलाते रहनेके लिए आपका जीवन अक्षुण्ण रखा। फेनर ब्राकवे, जेम्स मैकस्टन, जॉन मेकगोवर्न, पार्लियामेंट-सदस्य, गिरधारीलाल पुरी, गुरदित सिंह दारासेक्रेटरी, ३३ स्टालडेट्स ऑक्सफोर्ड।"

२३६. पत्र : भूलाभाई जे० देसाईको

पर्णकुटी, पूना ६,
१२ जून, १९३३

भाईश्री भूलाभाई,

मैंने तो आज ही और अभी सुना कि आप खूब बीमारी भोग रहे हैं। जल्दी स्वस्थ हो जायें। मुझे लिखिये अथवा किसीसे लिखवाइये।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

भूलाभाई देसाई कागजात, फाइल नं० १; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

२३७. तार : मदनमोहन मालवीयको[1]

१४ जून, १९३३

खुशी हुई कि दर्द थोड़े समय ही रहा। आप बाइसको आयेंगे यह जानकर खुशी हुई। देवदास और लक्ष्मीका विवाह शुक्रवारको है। यदि आप मनसे दे सकें तो आपके आशीर्वाद चाहता हूँ[2]।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१४७०)से।

१. यह तार मदनमोहन मालवीयके १३ जून, १९३३ के इस तारके जवाबमें दिया गया था: "धन्यवाद, दर्द थोड़े समय ही रहा। बिलकुल स्वस्थ हूँ। केवल कमजोरी है। आपसे २२ को मिलनेकी आशा करता हूँ। प्रभुसे प्रार्थना है कि आप शीघ्र ही पहले-जैसी पूरी शक्ति प्राप्त कर लें।"

२. मालवीयजी ने तार द्वारा उत्तर दिया: "यद्यपि यह सम्बन्ध मुझे सम्मत नहीं है, मैं देवदास और उसकी वधूके सुखकी कामना करता हूँ।"

२३८. तार : सतीशचन्द्र दासगुप्तको[1]

१४ जून, १९३३

देवदासके विवाहका धार्मिक संस्कार शुक्रवारको। अदृष्टके विचारसे रजिस्ट्रेशन जरूरी।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१४७३) से।

२३९. पत्र : मीराबहनको

पूर्णकुटी, पूना ६,
१४ जून, १९३३

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र अभी पहुँचा है। मुझे इस सप्ताह बहुत संक्षिप्त विवरण देकर काम चलाना पड़ेगा, क्योंकि ८ बजेसे जिसे दुग्धाहार कहते हैं, शुरू होता है और ३.३० या ४ बजेतक चलता है। इस अरसेमें संपूर्ण शारीरिक और मानसिक विश्राम की जरूरत होती है। फिर भी अगर मुझे यह पत्र समयपर ही लिखना हो, तो दुग्धाहारके बीचके समयमें ही लिखना होगा। वह क्या है, इसका वर्णन बादमें[2] महादेव करेंगे। उससे अभीतक यह तो नही कहा जा सकता कि वजन बढ़ रहा है, फिर भी स्पष्ट है कि मेरी शक्ति बढ़ रही है। अतः मेरे लिए चिन्ता करनेका कोई भी कारण नही है। जहाँतक मुझे दिखाई देता है, यह कहा जा सकता है कि मेरी प्रगति सम्यक् गतिसे हो रही है।

अपनी तन्दुरुस्तीके बारेमें जो तुम कहती हो और मेरा पत्र पढ़नेमें तुमने जो भूल की, उसके बारेमें मैंने तुम्हारी बात समझ ली है। आशा करता हूँ कि कम-

१. यह सतीशचन्द्र द्वारा देवदासको दिये गये तारके जवाबमें था। तार इस प्रकार था: "समाचारपत्रोंमें कहा गया है कि आपका विवाह रजिस्टर्ड विवाह होगा। क्या यह सही हो सकता है? तार दीजिये।"

२. पत्रके अन्तमें महादेव देसाईने अपनी तरफसे लिखा था: तनिक-सा समय और है; इसलिए लिख रहा हूँ कि हर पौन घंटेपर ६ से ८ औंस दूध दिया जाता है। दूध बगैर उबाला हुआ होता है। बकरियोंके थन पोटाशियम परमैंगनेटसे और दुहनेवालेके हाथ गर्म पानीसे ठीकसे धोनेके बाद दूध सुबह-सवेरे दुह लिया जाता है। फिर उसे एक अच्छे रेफ्रीजरेटरमें रख देते हैं। इससे दूध बहुत ठण्डा और स्वादिष्ट हो जाता है। आजसे बापूको हर खुराकके साथ दो छुहारे लेनेकी इजाजत है। पूरी खुराक ६ पौंड होती है।

जोरीने तुम्हारा पिण्ड छोड़ दिया होगा और बुखार भी टूट चुका होगा। मैं मान लेता हूँ कि तुम फल लेनेमे कसर नही रखोगी। शरीरको जिस चीजकी भी आवश्यकता हो उसे जुटा लेना चाहिए और इस तरह स्वस्थ और सशक्त बन जाना चाहिए।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७४६ से भी।

२४०. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

पर्णकुटी, पूना ६,
१५ जून, १९३३

प्रिय चार्ली,

मैं चाहता था कि जितनी जल्दी हो सके तुम्हारे दो जरूरी पत्रोंका जवाब दूं। तुम्हारे तार और पत्रों[1] ने मुझे बड़ी मदद दी है। लेकिन मुझे बीती हुई बातोंकी चर्चा नहीं करनी चाहिए, क्योकि मुझे अभी अपनी शक्तिके व्ययमे कंजूसी बरतनी है। मुझे खुशी है कि तुम वहाँपर कुछ हदतक अपने भाईकी देखभाल कर पा रहे हो।

तुम्हारा यह सोचना बिलकुल सही था कि यदि मुझे ऐसा लगता कि तुम्हारा यहाँ होना जरूरी है तो आवश्यकतानुसार तुरन्त तुम्हें लिखता या तार देता। लेकिन मुझे पूरा विश्वास है कि तुम्हें अभी वही रहना चाहिए। अपने प्रभावके बारेमे जितने आशावान तुम हो मै उतना नहीं हूँ। इंडिया ऑफ़िस जो तुम्हारी बात सुनता है, इसका मै यह अर्थ लगाता हूँ कि वे लोग पहलेकी अपेक्षा अधिक शिष्ट हो गये हैं। मैं वहाँ तुम्हारी उपस्थिति इससे कहीं बड़े उद्देश्य व कही बड़े असरके विचारसे चाहता हूँ। वहाँ होनेसे तुम उन सब लोगोंको साथ रख पा रहे हो जो इस उद्देश्यके प्रति मित्रभाव रखते है। इसके अतिरिक्त, तुम्हारा आन्तरिक सत्य चुपचाप और अलक्ष्य गतिसे शुद्ध बुद्धिवाले अग्रेजोके मनमें घर करता जा रहा होगा। इस सबका सुफल अन्तमें मिलेगा। परमेश्वर तो महान और सर्वव्यापी है तथा रहस्यमय तरीकोंसे काम करता है, अतः उसके लिए सभी बातें सम्भव है। तथापि, आदमी जितना देख सकता है उसके आधारपर कहूँ तो मै मौजूदा हालतके जल्दी ही बेहतर होनेकी आशाका कोई कारण नहीं देखता और आज तो जहाँतक मैं देख पाता हूँ, हालत अधिक-से-अधिक बुरी है। इस अध्यादेश-राजने जनताको गूँगी बना दिया है।

१. देखिए पृ० १५५-६ और १९१।

अबोध जनता आतंकित हो उठी है। वह नहीं जानती कि कल उन्हें क्या भोगना पड़ेगा। धनवान लोगोके मन इस अस्पष्ट आशंकासे भयभीत है कि वे किसी सरकारी कानूनकी बन्दिशमे न बाँध दिये जाये। उन्हें लगता है कि उनकी रक्षा केवल इसीमें है कि वे उस शक्तिके आगे पूर्ण समर्पण कर दें जो उन्हें देवसे भी बड़ी प्रतीत होती है; वह ऐसी ताकत है जो हर हालतमें उन्हें अपनी इच्छाके आगे झुकनेको मजबूर करेगी। इस तरह देशमे एक प्रकारसे मौतका-सा सन्नाटा है जिसे मै, हालाँकि मैं डॉक्टरोंके आदेशसे लोगोके सम्पर्कसे दूर हूँ, अपने बिस्तरपर भी महसूस किये बिना नहीं रह पाता। यह श्मशानकी शान्ति है, जैसाकि लॉर्ड इर्विनने १९३० में एक या दो बार कहा था। उस समय उन्होने उस भयावह शक्तिका, जिसे भारत सरकार जब चाहे प्रयोगमे ला सकती थी, और अधिक प्रयोग करनेसे इनकार कर दिया था। इसलिए यद्यपि मैं निकट भविष्यमे कोई आशा नहीं देखता और यद्यपि तुम और मै इसकी उपेक्षा नहीं करते तथापि, हम सत्यको दृष्टिमे रखकर उसतक पहुँचनेके व्यवधानोंको ध्यानमे रखते है। महत्त्व समयका नही है, यदि है तो हमारे पक्षमें है। क्योकि यहाँ तो आशा-ही-आशा है; निराशाका कोई कारण नहीं है। जबतक सत्यका एक भी प्रतिनिधि सचेष्ट है, सत्यकी अन्तिम विजय निश्चित है। ईश्वरको धन्यवाद है कि जहाँतक मै देखता हूँ, भारतमे आज सत्यके यदि बहुत नहीं तो कुछ प्रतिनिधि ऐसे है जो सत्यकी रक्षाके लिए कोई भी मूल्य चुकानेमें आगा-पीछा नहीं करेंगे।

जब उद्देश्यके औचित्यमें इतना अडिग विश्वास मुझमे है, तो इस तरफसे जल्द-बाजीमे कोई कदम उठाये जानेका खतरा नहीं है। हर जरूरी कदम अधिक-से-अधिक सोच-विचारकर उठाया जायेगा। मै स्वयं सम्मानपूर्ण शान्तिके लिए कुछ उठा नहीं रखूँगा। मेरी समझमें तो मैं इसमे विफल ही रहूँगा; लेकिन इसकी मुझे चिन्ता नहीं है। जनरल स्मट्स जितने ज्यादा सख्त होते गये, मै उतनी ही दृढ़तासे और पहलेसे भी अधिक उनका द्वार खटखटाता रहा। लगा कि वह और भी मजबूतीसे बन्द कर दिया गया है; लेकिन धैर्यका पुरस्कार मिला। इसी तरह इस मामलेमे भी होगा। अब्दुल गफ्फार खाँकी हम बलि नही दे सकते। खुर्शीद नौरोजी, जो तीस वर्षसे ऊपरकी है, भावावेशसे मुक्त है, श्रद्धा और आध्यात्मिकतासे भरी हुई है। वे सीमान्त प्रान्तमें अब्दुल गफ्फार खाँके साथ रही थीं और वहाँके लोगोंके घनिष्ठ सम्पर्कमे आई। इसके बाद देवदास गया था और इन दोनोंने मुझे बताया कि अब्दुल गफ्फार खाँके मनमें कोई दुराव-छिपाव नहीं है; वे हमेशा वही कहते है जो उन्हें कहना है; और वे जो-कुछ कहते है वही दिलसे चाहते है। वे स्वीकार करते है कि वे उग्र स्वभावके है और काममे जल्दबाजी कर जाते है। लेकिन हिंसामें उनका विश्वास नहीं है और अमानुल्ला या किसी भी अन्य व्यक्तिसे उनकी गुप्त साँठगाँठ नहीं है। उनकी आकांक्षा केवल इतनी ही है कि अपने लोगोको खुश और आतंक-वादसे मुक्त देख सकें। मेरा निजी अनुभव यह है कि वे नियन्त्रण व अनुशासनमें रह सकते हैं। मुझे याद नहीं आता कि उन्होंने कभी अपने वायदे पूरे करनेसे

इनकार किया हो। मैंने जब कभी चाहा है, वे मेरे पास आये हैं। मेरा अपना दृढ़ मत यह है कि अधिकारी वर्गके सामने उनका काफी गलत चित्र खींचा गया है। अधिकारी जो बात नही चाहते वह है — उनका अपने यहाँकी जनतापर असर। निस्सन्देह उनका असर तो है, क्योंकि वे त्यागी हैं, सीधे-सादे और बहादुर हैं। यह फिरसे एक बार उसी पुरानी नीतिको दुहरानेवाली बात है कि लम्बे वृक्षोंको काटा जाये। अब्दुल गफ्फार खाँपर जिन बातोंका शक किया जाता है, यदि वे सच हैं तो एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा उन्हें सिद्ध किया जाना चाहिए। यदि उनके खिलाफ लगाये जानेवाले आरोप सच्चे साबित हों तो कांग्रेसको या खुद मुझे कुछ भी नही कहना होगा। लेकिन वह न्यायाधिकरण एक स्वीकार्य न्यायाधिकरण होना चाहिए। मैं मेरठके मामले[1] की पुनरावृत्ति नही चाहता। जैसाकि आप अच्छी तरह जानते हैं, मुझे साम्यवादसे कोई सहानुभूति नही है। मेरठके अधिकाश बन्दी मेरे विरुद्ध थे। मुझे बदनाम करने या अपमानित करनेका कोई मौका वे नहीं चूकते थे। लेकिन इसका कोई महत्त्व नहीं है। उन्हें एक विशेष मत रखनेके लिए दण्ड दिया गया है, किसी कृत-कर्मके लिए नही और दण्ड भी कैसा! लेकिन यह तो गहरी जड़ोंवाली बीमारीका लक्षणमात्र है। सत्ता और उससे मिलनेवाले फलोंको छोड़नेका आई० सी० एस० वर्गका कोई इरादा नहीं है, और श्री बॉल्डविन या सर सैम्युअल होरका इरादा भी इससे विपरीत नही है।

अस्पृश्यता-सम्बन्धी तुम्हारा तर्क महत्त्वपूर्ण तो है मगर उसमें एक प्रारम्भिक दोष है। मेरा जीवन एक अविभाज्य इकाई है। उसमें खाने नहीं है — खण्ड-पद्धतिपर उसका निर्माण नहीं हुआ है। सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा, अस्पृश्यता, हिन्दू-मुस्लिम एकता और अन्य कई चीजें, जो मैं गिना सकता हूँ, अलग-अलग नहीं गिनी जानी चाहिए और अलग-अलग नहीं सुलझायी जानी चाहिए। वे एक ही पूर्ण वस्तु, सत्यके अविभाज्य अंग हैं। ऐसा नही हो सकता कि मैं अपने-आपको पूरी तरह अस्पृश्यतामें लगा दूँ और कहूँ कि "हिन्दू-मुस्लिम एकता या स्वराज्यकी उपेक्षा करो।" ये सब चीजें परस्पर गुंथी हुई और एक-दूसरेपर आश्रित है। तुम मेरे जीवनमें मुझे कभी एक चीजपर जोर देते पाओगे, कभी दूसरी चीजपर। लेकिन यह ठीक उस पियानोवादकके समान है जो कभी एक स्वरपर जोर देता है तो कभी दूसरेपर। लेकिन वे सब स्वर एक-दूसरेसे जुड़े हुए हैं। इसलिए तुम समझ सकते हो कि मेरे लिए यह कहना नितान्त असम्भव है कि "अब मुझे सविनय अवज्ञा या स्वराज्यसे कुछ सरोकार नहीं है।" केवल इतना ही नहीं, यदि मैं ऐसा कुछ करनेका प्रयत्न भी करूँ तो कर नहीं सकता। मैं तुम्हें बता सकता हूँ कि स्वराज्यके

१. मेरठ कॉन्स्पिरेसी केस (मेरठ षड्यन्त्र अभियोग), जिसमें न्यायमूर्ति याक इस निष्कर्षपर पहुँचे थे कि रूसमें स्थापित कम्यूनिस्ट अन्तर्राष्ट्रीय संगठन पूँजी और श्रमके बीच विरोध-भावनाको भड़काकर और हड़तालों आदिके जरिये विभिन्न देशोंकी मौजूदा सरकारोंको उखाड़नेकी साजिश चला रहा है। निर्णयमें अभियुक्तोंको इस षड्यन्त्रमें हिस्सा लेनेका दोषी घोषित किया गया था और तीस अभियुक्तोंमें से सत्ताइसको आजीवन निर्वासनसे लेकर तीन वर्ष कठोर कारावासतक की सजाएँ दी गई थीं।

बिना अस्पृश्यताका पूर्णतः और हमेशाके लिए निवारण सर्वथा असम्भव है। यदि मैं अपने कथनको सही साबित करनेके लिए प्रमाण आदि प्रस्तुत करूँ तो यह पत्र व्यर्थ ही बहुत लम्बा हो जायेगा।

स्नेह।

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३००) से। एस० एन० १९०९७ से भी।

२४१. तार: सेवकराम करमचन्दको

१६ जून, १९३३

सेवकराम करमचन्द
हरिजन सेवक संघ, पुराना सक्खर

कृपया मेरी तरफसे नेवन्दरामको कहिये कि साधुवेला मन्दिरके सम्बन्धमें उपवास न करें।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१४७८)से।

२४२. तार: रामकृष्णदास चाँदीवालाको

१६ जून, १९३३

रामकृष्णदास चाँदीवाला
कटरा खुशाल, दिल्ली

आपका तार ब्रजकृष्णको पढ़कर सुना दिया। उसका स्वास्थ्य दिनोंदिन सुधर रहा है। कलसे बुखार बिलकुल नहीं है। मैं चाहता हूँ वह पुराने कब्जका पूरा इलाज कराये। आपको या माँ को नहीं आना चाहिए। मैं आपको सूचना देता रहूँगा।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१४७८-ए) से।

२४३. भाषण : देवदास-लक्ष्मीके विवाहके अवसरपर[1]

पूना,
१६ जून, १९३३

तुमने अभी-अभी हमारा परिचित भजन "वैष्णव जन तो तेणे कहिए" सुना। तुम दोनों इसपर विचार करो और सन्त-कवि नरसिंह मेहताने जैसे सच्चे वैष्णवका वर्णन किया है उसके समान रहनेकी कोशिश करो।

देवदास, तुम जानते हो कि मुझे तुमसे कितनी आशाएँ हैं। मेरी इच्छा है, तुम उन्हें पूर्ण करनेमे समर्थ बनो। यदि यह हो सका तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि तुम्हारे इस विवाहके बारेमें उठाई गई सारी आपत्तियाँ हवा हो जायेंगी। जबसे मैंने होश सँभाला, मैंने धर्मका अर्थ समझने और जहाँतक बन पड़े तदनुकूल आचरण करनेकी कोशिश की है। मेरी समझमें यह विवाह धर्मके नियमोंके विरुद्ध बिलकुल नहीं है। यदि ऐसा होता तो तुम्हें आशीर्वाद नहीं मिलता और मैं आयोजनमें उपस्थित न होता।

तुम अपने ऊपर गम्भीर उत्तरदायित्व ले रहे हो। यह उत्तरदायित्व तुम्हें प्राप्त इस महान सौभाग्यके अनुपातमें ही महान है। किसे मालूम था कि तुम्हारा विवाह पवित्रात्मा श्रीमती ठाकरसीकी छत्रछायामे उनके घरमें होगा? किसे मालूम था कि पुरोहितका काम निभानेके लिए लक्ष्मण शास्त्री-जैसा महान विद्वान और शुद्ध चरित्रवान् व्यक्ति मिल जायेगा? शायद यह संस्कार आगे किसी सुविधाजनक तारीखमें आश्रममें सम्पन्न होता। परन्तु उपवासके कारण यह अभी और यहीं हुआ। जो अनिवार्य रूपसे एक धार्मिक संस्कार है, उसका फल भी धार्मिक ही होना चाहिए। तुम्हें इसकी स्मृति हर कदम धर्मकी पूरी भावनासे उठानेकी प्रेरणा देती रहे। तुम जानते हो, धर्म ही सत्य है, और यदि तुम उसे ध्रुव तारेके समान अपना पथप्रदर्शक मानोगे तो वह निश्चय ही तुम्हारी रक्षा करेगा। तुम्हारा यह कितना बड़ा सौभाग्य है कि इतने मित्र और गुरुजन इस अवसरपर तुम्हें आशीर्वाद देनेके लिए उपस्थित हैं। आज तुमने राजगोपालाचारीकी चिर-संचित मणि लूट ली है। ईश्वर करे तुम इसके योग्य बनो। तुम इस निधिको संभालकर रखो। यह सच्चे अर्थोंमें लक्ष्मी है। तुम इसकी उसी तरह चौकसी और सुरक्षा करो जैसेकि तुम सब अच्छाइयों और सुन्दरताकी अधिष्ठात्री देवी लक्ष्मीकी करते। तुम दोनों चिरंजीवी होओ और धर्मके

१. भाषण महादेव देसाई द्वारा लिखित विवाहके विवरणसे लिया गया है। भाषणको प्रस्तुत करते हुए अपने विवरणमें महादेव देसाईने लिखा था: "गांधीजी ने वर और वधूसे कुछ शब्द कहे। बोलनेके लिए आवश्यक शक्ति समेटनेमें गांधीजी को पाँच मिनटसे कुछ अधिक ही समय लगा। देवदाससे उन्होंने अपनी बात गुजरातीमें कही और वधूसे हिन्दीमें। मै यहाँ उनके इस भाषणका सार दे रहा हूँ।"

पथपर चलो। तुम धर्मके लिए जियो और जब अवसर आये, धर्मके लिए प्राण न्योछावर करनेका तुममे उत्साह हो। आजसे तुम्हारा जीवन पहलेसे भी अधिक समर्पित जीवन बन जाये और तुम निरर्थक भोगविलासमे कभी न पड़ो। यह मेरा आशीर्वाद है और यह मेरी चिर-संचित आशा एवं अभिलाषा है।

देवदास, तुमने राजगोपालाचारीको सदा सामान्य बुजुर्गके रूपमें देखा है। आजसे वे तुम्हारे पितृ-तुल्य हुए। उनके प्रति वही भक्ति और श्रद्धा रखो जो तुम मेरे प्रति रखते आये हो।

लक्ष्मी, तुमसे मुझे ज्यादा-कुछ कहनेकी जरूरत नही है। मुझे विश्वास है कि देवदास अपने-आपको पति रूपमें तुम्हारे अनुरुप सिद्ध करेगा। जबसे मैंने तुम्हें देखा है और जबसे मैं तुम्हें जानता हूँ, मैंने महसूस किया है कि तुम्हारा नाम तुम्हारे अनुरूप ही है। तुम्हारे विवाहसे राजगोपालाचारी और मेरे बीच उत्तरोत्तर बढ़ते स्नेहका बन्धन और भी ज्यादा मजबूत बने। जिस अनोखे मुहूर्तमें यह विवाहोत्सव सम्पन्न किया जा रहा है उसका महत्त्व बतानेकी जरूरत नही है। यह अनिवार्य रूपसे एक धार्मिक संस्कार है और यह तुम दोनोंको अपना कर्त्तव्य ज्यादा अच्छी तरह निभानेका साधन साबित हो। यदि मैं ऐसा नहीं मानता कि यह विवाह धर्म-संगत है और हमारी अनुमति एवं आशीर्वाद प्राप्त करनेके लिए तुम दोनों द्वारा की गई तपश्चर्याका फल है, तो मेरा इससे कोई सम्बन्ध नहीं होता। हमारी अनुमति और आशीर्वादके तुम पूरी तरह पात्र हो।[1]

ये कुछ-एक शब्द कहनेके लिए मुझे बड़ा प्रयत्न करना पड़ा है। परन्तु मैंने सोचा कि मेरे लिए जरूरी है कि मैं तुम्हें आशीर्वाद दूँ और तुम अपने ऊपर जो महान उत्तरदायित्व ले रहे हो उसके प्रति तुम्हें सचेत कर दूँ। ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे। केवल वही रक्षा करता है, क्योंकि वही पिता, माता, मित्र और सब-कुछ है। तुम्हारा जीवन मातृभूमि और मानवताकी सेवामे लगा रहे। तुम दोनों सदा विनम्र रहो एवं तुममें सदैव ईश्वरका भय बना रहे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-६-१९३३; **हिन्दुस्तान टाइम्स**, १७-६-१९३३ भी।

१. ये दो वाक्य **हिन्दुस्तान टाइम्स**, १७-६-१९३३ से लिये गये हैं।

२४४. तार : अगाथा हैरिसनको[1]

१७ जून, १९३३

अगाथा हैरिसन
११९ ग्रोवर स्ट्रीट, लंदन

जब स्वास्थ्य मुलाकातके लायक हो जायेगा मेरी तरफसे कोई शर्त नहीं रखी जायेगी।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४६६) से।

२४५. सन्देश : दक्षिण भारतीयोंको

१७ जून, १९३३

दक्षिणके प्रान्तोंमें हिन्दी-कार्यके सम्बन्धमें पण्डित हरिहर शर्माका[2] विवरण सुनकर सभीको खुशी होनी चाहिए। लेकिन मुझे सच्ची खुशी तो तभी होगी जब हिन्दी हर गाँवमें फैल जायेगी। मैं चाहूँगा कि हर व्यक्ति इस पवित्र कार्यमें अधिक-से-अधिक जितना सहयोग दे सकता है दे।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-६-१९३३

१. कुमारी अगाथा हैरिसनके १५ जून, १९३३ को मिले तार (एस० एन० १९०९६) के जवाबमें, जो इस प्रकार था: "यदि दो व्यक्ति बिना शर्त मिलें तो क्या शान्तिका कोई रास्ता नहीं निकाला जा सकता?"

२. प्रसिद्ध हिन्दी-प्रचारक तथा उपवासके दौरान गांधीजी के चार परिचारकोंमें से एक।

२४६. सन्देश : आश्रमवासियोंको

[१८ जून, १९३३से पूर्व][1]

सत्याग्रह आश्रमके प्रबन्धक श्री नारणदास गांधी, जो गांधीजी के दर्शन करने पूना गये थे, आज सुबह वापस लौट आये। उन्होंने महात्माजी के साथ उनके उपवासके महत्त्वपर चर्चाकी। गांधीजी के अनुसार, वह सत्य और अहिंसाकी साधनामें अन्तिम सहारा है।

समझा जाता है कि गांधीजी ने श्री नारणदाससे कहा कि अपने पिछले उपवाससे उन्हें यह विश्वास हो गया है कि इसी तरहकी हजारों परीक्षाएँ उत्तीर्ण करना जरूरी होगा, और आश्रमवासियोंको पहलेकी तरह उपवास करनेमें पहल करनी चाहिए।

इसलिए उन्हें चाहिए कि वे पहलेसे भी ज्यादा पवित्र जीवन व्यतीत करते हुए अपने-आपको इसके योग्य बनायें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-६-१९३३

२४७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

मौन में

पर्णकुटी, पूना,
प्रात : ४ बजे, रविवार [१८ जून, १९३३][2]

भाई वल्लभभाई,

आपको पिछला पत्र लिखनेके बादसे ही अपने हाथसे पत्र लिखना बन्द कर देना पड़ा था। मैंने देखा कि मुझमें जरूरी शक्ति नहीं आई है। अबतक शक्ति आ गई है या नहीं, यह आजमानेको जी कर रहा है। यह आजमाइश तो आपको पत्र लिखकर ही की जा सकती है न?

डॉक्टरोंकी रिपोर्ट और उनकी बताई अवधिसे घबराइये नहीं। 'होइहि सोइ जो राम रचि राखा।' मैंने माना था कि तीन सप्ताहमें चलने-फिरने लगूँगा। मगर यह खयाल गलत निकला। फिर भी चिन्ताका कोई कारण नहीं। विलम्ब हो रहा है, इतनी ही बात है। सच पूछें तो चौंसठ वर्षकी उम्रमें दूसरा हो भी क्या सकता है? यह निश्चित समझिये कि मैं सकुशल हूँ। प्रेमलीलाबहनके प्रेम-सागरमें नहा

१. समाचारके ऊपर स्थान अहमदाबाद और तिथि १८ जून, १९३३ दी गई थी।

२. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", पृ० २१६-७।

रहा हूँ। उनके घरको मैंने धर्मशाला बना दिया है। देवदास और लक्ष्मीका विवाह उन्होंने कराया और वह भी कितने प्रेमसे। ईश्वरकी अपार कृपा है। क्या हम उसके योग्य हैं। वही योग्य बनावे।

आपकी नाकका क्या हाल है?[1]

जोशी[2] से कहिये कि रमा[3] के ऑपरेशनकी बात अभी मैंने लिखकर मुल्तवी करा दी है। डॉ० पटेल[4] ने ही बरसात होतेतक और ठंडक हो जाये तबतक ठहरनेको कहा है। वैसे कर डालनेका आग्रह उन्हींका है और वे हिम्मतके साथ कहते हैं कि इसमें कोई खतरा नहीं, और वह आवश्यक है। छगनलाल चिन्ता न करे। यह बात एक क्षणके लिए भी मेरे ध्यानसे बाहर नहीं रही।

इतना लिखा है, परन्तु थकावट नहीं लगती। फिर भी मीठे पेड़को जड़से नहीं उखाड़ूँगा और आज इसके सिवा और पत्र नहीं लिखूँगा।

प्रभावती यहाँ आ गई है, यह तो आपको लिखा जा चुका होगा।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
यरवदा जेल, पूना

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभाईने, पृ० १७-९

२४८. तार: नारणदास गांधीको

१९ जून, १९३३

सत्याग्रह आश्रम
अहमदाबाद

रामनारायण चौधरी कहते हैं कि ज्ञानदेवी प्रभुदाससे विवाहपर पूरी तरह सहमत है। इसकी पुष्टि करो और ज्ञानदेवीसे कहो वह अपनी पूरी बात मुझे लिखे।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। एस० एन० २१४८५ से भी।

१. ४ जनवरी, १९३२ को गांधीजी और वल्लभभाई गिरफ्तार किये गये थे। उसके एक दिन पहले ही वल्लभभाईने नाककी बढ़ी हुई हड्डीको बिजलीसे जला डालनेकी क्रिया कराई थी। ऐसी हालतमें कड़ाकेकी ठंडमें खुली मोटरमें उन्हें बम्बईसे पूना ले जानेसे उनका कष्ट बढ़ गया था, जो जेलकी अवधिमें बना ही रहा।

२ व ३. साबरमती आश्रमके श्री छगनलाल जोशी। वल्लभभाईको उनकी पत्नी रमाबहनका ऑपरेशन करानेकी चिन्ता थी।

४. बम्बईके प्रसिद्ध डॉक्टर स्व० पी० टी० पटेल।

२४९. तार : जमनालाल बजाजको

१९ जून, १९३३

श्री
बम्बई

रामनारायण चौधरीने तार दिया है कि ज्ञानदेवीने अपने पितासे बात करनेके बाद पूरी सहमति प्रदान की है। नारणदाससे इस कथनकी पुष्टि करनेको कहा है और ज्ञानदेवीका पत्र भी माँगा है।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१४८६) से।

२५०. डंकन ग्रीनलीजको[1]

पर्णकुटी, पूना,
१९ जून, १९३३

मैं तुम्हारा ८ तारीखका पत्र इतने दिनोंतक बराबर अपने गद्देके नीचे इस आशासे रखे रहा हूँ कि स्वयं लिखूँगा या कुछ नहीं तो बोलकर लिखवा दूँगा। लेकिन आजसे पहले इतनी ताकत ही महसूस नहीं कर पाया। मौन तोडनेमे अभी ५५ मिनट बाकी हैं। इनमें से जिनका उपयोग तुम्हारे पत्रका जवाब लिखनेमें कर सकूँ कर रहा हूँ। मुझे तुम्हारी बात बहुत पसन्द आई। तुमने जो-कुछ कहा है, मैं वह सब समझ गया हूँ और उससे मुझे सन्तोष भी हो गया है। आश्रमसे तुम्हें और कोई नहीं निकाल सकता; तुम स्वयं जाना चाहो तो बात दूसरी है। जबतक वहाँ रहनेसे तुम्हें सन्तोष है और तुम्हें यह लगता रहता है कि वहाँ तुम्हारा विकास हो सकता है, तबतक तुम वहाँ अवश्य रहो। यदि शुद्धिके लिए उपवास फिरसे किया गया,[2] कभी-न-कभी किया ही जायेगा, तो निश्चय ही उसमे तुम्हारा नाम होगा। और उसमें प्रचार और ढोल-ढमाकेका दोष भी नहीं होगा – मेरे उपवासमें तो यह दोष आ ही गया था। हर व्यक्ति अपने-आप यह तय करेगा कि उसमें इसकी योग्यता है या नहीं। सैद्धान्तिक दृष्टिसे तो वास्तवमें कोई भी योग्यता सम्पन्न नहीं है, क्योकि हममें से

१. डंकन ग्रीनलीजका नाम अगले शीर्षकके आधारपर दिया गया है।

२. गांधीजी उस समय ऐसा सोच रहे थे कि आत्मशुद्धिके ऐसे उपवास एक-एककर अनेक हरिजन-सेवक करेंगे।

हर व्यक्तिमे पापका कुछ-न-कुछ अंश है ही। इसलिए मैंने इसे मुख्यत: आत्मशुद्धिके लिए ही घोषित किया है। यदि व्यक्तिमें सेवा, और अधिक समर्पण व शुद्धिकी आन्तरिक प्रेरणा है और यह विश्वास है कि वह परीक्षा से गुजर सकता है, तो इतना काफी है। क्षमता तो आन्तरिक प्रेरणाकी उत्कटता और (इसीके प्रतिरूप) बराबर गहरे होते जानेवाले इस विश्वाससे आती है कि तपस्याकी जरूरत है। सत्यके अन्वेषकमें ऐसी कोई शक्ति नहीं होती जिसे वह खुद अपनी शक्ति कह सके। उसे उस कामके लिए, जिसके लिए उसे प्रेरित किया जाता है, उस क्षण आवश्यक (उससे अधिक नहीं) शक्ति दे दी जाती है या भेज दी जाती है।

यदि मेरे जीवित रहते उपवासका सिलसिला शुरू हो गया तो अन्य लोगोंकी तरह तुम्हारी बारी भी मैं निश्चित करूँगा या फिर मेरी मृत्यु हो जानेपर मेरे द्वारा मनोनीत उत्तराधिकारी निश्चित करेगा। यदि मैं ऐसा न कर पाया तो भाग लेनेवाले लोग अपने बीचसे स्वयं अपना नेता चुन लेंगे।

जहाँतक मैं सोच-विचारकर तय कर पाया हूँ, बात ऐसी है।

यह पत्र एक तरहसे महत्त्वपूर्ण हो गया है। इसलिए मैं तुम्हारा नाम दिये बिना टाइपराइटरपर इसकी कई प्रतियाँ बनवा रहा हूँ।

आशा है कि तुम शरीर तथा मन दोनोंसे स्वस्थ होगे।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१००) से। एस० एन० २१४८८ से भी।

२५१. पत्र: नारणदास गांधीको

१९ जून, १९३३

चि० नारणदास,

कलसे फिर पत्र लिखनेका प्रयत्न शुरू किया है। वल्लभभाईको लिखा। आज डंकनके पत्रसे शुरू किया था। अब तुम्हें लिख रहा हूँ। डंकनका लिखा पत्र भी इसके साथ है। डंकनको लिखे पत्रमें मैंने अपने विचार सहज ही स्पष्ट रूपसे व्यक्त किये हैं, इसलिए मैंने उसकी प्रतियाँ तैयार करवा ली हैं। उनमें डंकनका नाम निकाल दिया है। समय होगा तो उसकी एक नकल भी साथ भेज दूंगा। नहीं होगा तो कल भेज दूंगा। मेरे भोजन-सम्बन्धी परिवर्तनोंके बारेमें तो जो लोग पत्र लिखते है वे लिखेंगे ही; इसलिए मैं नहीं लिख रहा।

अब तुमसे देवलालीकी पूरी खबर मिलनी चाहिए। जमना, कुसुमका क्या हाल रहा है? क्या मैत्रीकी कुछ खबर है? कुसुमके लिए वैद्यकी बात पक्की कर ली हो तो लिखना।

रमाबहनका क्या हुआ? ठण्ड हो गई है, यह डॉ० पटेल कब मानेंगे? अमीना कैसी है? उसने मेरे पत्रका उत्तर नहीं दिया।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३८४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२५२. पत्र : पांडुरंग नाथूजी राजभोजको

१९ जून, १९३३

भाई राजभोज,

तुम्हारा तीन पत्र मेरे सामने है एक १० मईका और दूसरा आठ जूनका और तीसरा १६ मईका। आज तक तो सब पत्र मुझको नहीं बताये जाते थे अब भी बहुत थोड़े पत्र मुझे बताये जाते हैं। क्योंकि पूरी शक्ति अभी तक नही आई है, मेरा उत्तर देनेका तो पत्र पढ़ने और सुननेसे भी ज्यादा अनिश्चित रहा है। आज तक बहुत कम पत्र लिख सका हूँ। तुमको लिखनेका तो बहुत दफे दिलमें रहा था लेकिन मेरी इच्छा आज ही सफल होती है। श्री दफतरीके बारेमें जो कुछ तुमने लिखा है वो ठीक है ऐसी प्रतिज्ञाके लिए हरिजनोंको कहनेका केवल हरिजनोंको ही अधिकार है, इतर हिन्दू सूचना ही कर सकते हैं। शराब और गन्दा जीवनकी बात तो सारा संसारके लिए है ये केवल हरिजनोंके लिये ही नहीं हो सकती। इस बारेमें मुझको शक्ति आनेसे मैं भाई दफतरीको लिखूंगा और हरिजनमें भी लिखूंगा। तुम्हारे तीन मास खतम होनेके बाद तुम अवश्य आश्रम छोड़ सकते हो यदि तुमको विश्वास हो गया कि जो लेनेके लिए गए थे वो पाया है। मेरी सलाह यह है कि इस बारेमें नारणदासको पूछना, उनको भी अगर ऐसी प्रतीती हो गई है तो अच्छी बात है। तुम्हारे अथवा दूसरे हरिजनोंको अनशन करनेका आज कोई कारण नहीं है। प्रायश्चित्त इतर हिन्दुओंको करनेका है, हरिजनको नही। उनके लिए प्राश्चित और अनशन करनेका अवसर अवश्य आवेगा लेकिन थोडे समयकी आवश्यकता है। मेरा खयाल है कि इसमें तुम्हारे मुख्य हिस्सेका उत्तर आ जाता है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९२) से।

२५३. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१९ जून, १९३३

चि० ब्रजकिसन,

तुमारा खत मिला। केशुको अवश्य बुला लो। माताजी को तकलीफ नहिं देना चाहिये। मैंने आज तार भेज दिया है। तो भी पीछे देखा जायगा। हां अब उपचार छुट नहिं सकते।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४००) से।

२५४. पत्र : अरुण दासगुप्तको

पर्णकुटी, पूना,
२० जून, १९३३

प्रिय अरुण,

इतने लम्बे अरसेके बाद तुम्हारा छोटा-सा पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। मेरे उपवासके दौरान शायद ही कोई पत्र मुझे पढ़कर सुनाया जाता था। उपवासके दौरान माताजी और पिताजी ने दौड़कर पूना पहुँचनेके मोहका संवरण किया और अब भी संयम रखकर अपने-अपने काममें लगे हैं, इससे मुझे खुशी हुई। यदि मुझे पहलेकी तरह यात्रा करनी पड़ी, और यदि तुम शारीरिक तौरपर यात्राकी थकान बर्दाश्त करनेमें समर्थ हुए, तो मैं अपनी किसी यात्रामें तुम्हें अपने साथ ले जाना चाहूँगा। तुमने अपने स्वास्थ्य और अपनी गतिविधियोंके बारेमें कुछ नही लिखा है। इस पत्रके जवाबमें तुम इन दोनों बातोंके बारेमें मुझे कुछ जरूर लिखना।

क्या तुम अभी हालमें अब्दुल हलीमसे मिले हो?

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१०१) से।

२५५. पत्र : नी० को

२० जून, १९३३

प्रिय नी०,

अन्य पत्रोंके साथ मैं अपने बिछावनके नीचे तुम्हारे भी तीन पत्र रखे तो रहा, लेकिन अब कहीं बोलकर जवाब लिखवा पा रहा हूँ। मै पहले उस पत्रका जवाब दे रहा हूँ जो सबसे बादका है और मुझे अभी दिया गया है। मद्रासके गवर्नरके नाम तुम्हारा पत्र आज डाकसे भेजा जा रहा है। वह कुछ दूसरे शब्दोंमे भी लिखा जा सकता था, लेकिन शब्दोंका परिवर्तन इतना महत्त्वपूर्ण नही है कि उसकी वजहसे पत्र भेजनेमें देर की जाये। दो-तीन दिनके बीच प्रार्थनामें तीन-चार बार देरसे पहुँचनेके लिए तुम्हें न तो चिन्ता करनी चाहिए और न इसके कारण अपने प्रति मनमें वितृष्णा आने देनी चाहिए। फिर ऐसा भी है कि व्यक्ति अपने प्रति कुत्साका भाव रखते हुए भी गलत काम करता चला जाता है। मैंने ऐसे कई उदाहरण देखे हैं। इसलिए मेरा तो यह सुझाव है कि देर होनेके कारणका शान्तिसे विश्लेषण करो और उस कारणका निवारण करो। इन मामलोंमें तुमने स्वयं बताया है कि प्रार्थनाके लिए सही समयपर तुमने अपना काम क्यों नहीं छोड़ा। इसलिए अब तुम्हें सावधान रहना चाहिए और उचित समयपर काम छोड़ देना चाहिए, ताकि प्रार्थनाके स्थानपर शान्तिसे पहुँच सको। अपने हर मिनटपर बराबर नजर रखनेसे व्यक्ति ऐसी परेशानियोंसे बचा रहता है।

तुम्हारा १३ तारीखका लम्बा पत्र मेरी दृष्टिसे बहुत ज्यादा भावुकतापूर्ण और कवित्वमय है। तुममें कविताका आधिक्य है। और तुम्हारी भावुकताकी कोई सीमा नहीं है। मैं चाहता हूँ कि तुम इस सबको सच्ची सेवाके लिए अक्षय शक्तिमे बदल डालो। हम सबको बच्चों-जैसा बननेकी आकांक्षा करनी है। हम बच्चे नहीं बन सकते क्योंकि वह तो असम्भव है। लेकिन हम सब बच्चों-सरीखे बन सकते हैं। प्राप्त किये गये ज्ञानके बावजूद हम उनकी तरह सरल, निष्कपट, ऋजु और सहज बन सकते हैं। यहाँ 'सहज' शब्दका एक खास अर्थ है। हम जिन गुणोंको मूल्यवान माने उनका प्रस्फुटन शीशेके उष्ण कमरोंमें होनेवाले कृत्रिम प्रस्फुटनकी तरह बनावटी नहीं होना चाहिए, बल्कि वे गुण हमारे लिए वैसे स्वाभाविक हों जैसेकि शायद बच्चोंके लिए शैतानी स्वाभाविक होती है। हमें उनकी शैतानी प्यारी लगती है, क्योंकि वह उनके लिए बिलकुल स्वाभाविक है। बड़े लोगोंमें इस शैतानीका रूप स्वभावतः अच्छे, संयमित, नम्र और प्रलोभनसे परे होना है।

मासिकधर्मकी कमीका तुम जो अर्थ गढ़ रही हो, उसके विरुद्ध मैं तुम्हें चेतावनी देना चाहता हूँ। मुझे आशंका है कि इस कमीका अर्थ तुममें किसी मानसिक स्वस्थताका अंकुरित होना नहीं है। तुम अभी यौन-भावनाओंसे मुक्त नहीं हो और जबतक तुम मनसा-वाचा-कर्मणा उनसे मुक्त नहीं हो, तबतक मासिकधर्मकी

अनियमितता या कमीको किसी अन्दरूनी गड़बड़ीका ही लक्षण मानना चाहिए। मुझे लगता है कि साधारण रूपसे कहें तो उस स्थिततक पहुँचनेमें तुम्हें काफी समय लगेगा जो मासिकधर्मका प्रवाह समाप्त करनेके साथ-साथ पूर्ण स्वास्थ्यका लक्षण भी हो। हाँ, यह बात और है कि तुम, मैं और आश्रम इतने भाग्यशाली हों कि तुम एकाएक सहज शुचिताकी उस अपेक्षित स्थिततक जा पहुँचो। जब तुम वैसी स्थिति प्राप्त कर लोगी, तब तुम्हें फोड़े-फुँसी आदि नहीं होंगे और कोई दूसरा शारीरिक अथवा मानसिक कष्ट नहीं होगा। तुम उन गुणोंसे युक्त प्रसादपूर्ण व्यक्ति बन जाओगी जिनकी हम हर शाम प्रार्थनाके समय याचना करते हैं। मेरा अभिप्राय 'गीता' के द्वितीय अध्यायके अन्तिम श्लोकोंसे हैं; तुम उनका मनन करो।

दूधके उपचारको लेकर अपने मनको अशान्त न बनाओ। दवाके तौरपर उपचारकी दृष्टिसे उसमें भले ही गुण हों, किन्तु मै जानता हूँ कि दस पौंड दूध एक अस्वाभाविक आहार है। अनेक लोग दूधमें उन गुणोंके होनेका दावा करते हैं। डॉ० मेहता, जो मेरा इलाज कर रहे हैं, कहते हैं कि यह उनका अनुभूत सत्य है। जो भी हो, फिलहाल मैंने उसे उपचारके रूपमें लेना स्थगित कर दिया है और हो सकता है कि यह उपचार बिलकुल ही छोड़ देना पड़े। तुम्हें मुझपर विश्वास रखना चाहिए कि मैं सावधान रहकर तथा पर्याप्त संयमके साथ व्यवहार करूँगा। यद्यपि मेरे स्वास्थ्यमें सुधार धीरे-धीरे हो रहा है, लेकिन बराबर हो रहा है। मै अभी रोज ३-४ पौंड दूधकी अपनी सामान्य खुराक ले रहा हूँ और काफी मात्रामें फल लेता हूँ जिनमें सन्तरे, अनारका रस और अंगूर शामिल हैं। यह सब तुम्हारे और अमला दोनोंके लिए लिख रहा हूँ, क्योंकि वह भी मेरी खुराकके बारेमें चिन्तित है।

मैं देखता हूँ कि तुम कश्मीरके बारेमें बहुत आश्वस्त हो। लेकिन मैं कहना चाहता हूँ कि वहाँकी जलवायु ऐसी नहीं है जो सभी तरहकी शारीरिक व मानसिक गठनको माफिक आ जाती हो। मैं स्वास्थ्य-लाभके लिए किसी भी हालतमें कश्मीर नहीं जा सकता। मुझे अपना स्वास्थ्य वहीं हासिल करना चाहिए जहाँ मेरा काम पड़ा है। यही मैंने पहले भी किया था और तब भी उपवासके बाद। मैं आश्रममें था और मित्रोंके कहनेके बावजूद आश्रमसे बाहर निकलनेको तैयार नहीं था। वही परमेश्वर जिसने २१ दिन मेरी देखभाल की, यदि चाहेगा तो पुनः स्वास्थ्य-लाभ करनेमें भी मेरी मदद करेगा और तुम्हारा, अमला तथा अन्य लोगोंका मेरे जल्दी स्वस्थ होनेमें सर्वोत्तम अंशदान यही हो सकता है कि सब अपना-अपना कर्त्तव्य जितनी अच्छी तरह हो सके पूरा करते रहें।

अपने अन्तिम पत्रमें तुमने अपने फोड़ोंके बारेमें कुछ नहीं लिखा और एस०को सामान्य वजन हासिल करनेके लिए दिये गये मेरे सुझावके बारेमें भी कुछ नहीं लिखा। उसे पहले-जितना वजन तो प्राप्त करना ही है, साथ ही उसे वजन, ऊँचाई और सामान्य तौरपर शारीरिक तथा मानसिक विकासमें वृद्धि भी करके दिखानी है।

मैं समझता हूँ कि इस पत्रमे तुम्हारे सब प्रश्नोंका उत्तर आ गया है।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१०२) से।

२५६. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२० जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हारा पत्र मिला।

देखता हूँ कि तुम मेरे बारेमें चिन्ता करती ही रहोगी। चूँकि मुझे नी० को उसके पत्रसे उठनेवाले कई मामलोंपर काफी विस्तारसे लिखना था, इसलिए मैंने उससे अपना पत्र — कम-से-कम उसका मेरे आहारसे सम्बन्धित अंश — तुम्हें भी दिखा देनेको कहा है।[1] मुझे खुशी है कि तुम्हारा भी सब काम ठीक चल रहा है। निश्चय ही यदि मै देखूँगा कि तुम बराबर सादा और विवेकयुक्त जीवन बिता रही हो तो मैं तुम्हारा पागलपन भूल जाऊँगा।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

तुम्हारा पार-पत्र किसके पास है? कृपया मुझे मुख्य अंशकी एक नकल भेजो। तब मैं बताऊँगा कि क्या करना होगा।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। (एस० एन० १९१०३) भी।

२५७. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२० जून, १९३३

प्रिय सतीश बाबू,

मैं तुम्हें पत्र लिखनेकी सोचता रहा लेकिन लिख नही सका। अब तुम्हें अपनी गतिविधियोंके बारेमें, बंगलामे प्रकाशित 'हरिजन' के बारेमें, और जो-कुछ भी तुम जानते हो उस सबके बारेमें तथा तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा चल रहा है, इसके बारेमें मुझे विस्तारसे लिखना चाहिए। मुझे अभी भी बिस्तरमें रहना पड़ता है। लेडी ठाकरसीने जो बड़ा कमरा मुझे दे रखा है, मुझे उसमे कुछ कदम घूमनेकी इजाजत मिल गई है। मैं लगभग ४ पौड दूध और काफी मात्रामें सन्तरे, अनारका रस तथा अंगूर ले

१. देखिए पिछला शीर्षक।

रहा हूँ। यही मेरा मुख्य भोजन है। प्रगति धीमी तो है; लेकिन वह निश्चय ही बराबर हो रही है।

देवदास-लक्ष्मीके विवाहके कानूनी रजिस्ट्रेशनके सम्बन्धमें तुम्हारे सवालका जवाब तारसे दिया था।[1] जहाँतक हमारा सम्बन्ध है, धार्मिक बन्धन और धार्मिक रस्मको पूरी तरहसे कर लेना ही काफी था। लौकिक, सामाजिक तथा नागरिक परिणामोंकी दृष्टिसे इस तरहके विवाहोंमें, जिन्हें प्रतिलोम[2] विवाह कहा जाता है, धार्मिक रस्मका कोई महत्त्व नहीं होता और उन्हें कोई वैध नहीं मानता। मैं समझता हूँ कि सर हरिसिह गौड़के कहनेपर, इन सब बातोंको बचानेके लिए सिविल मैरेजका कानून पास किया गया था। उसके अनुसार एक हिन्दूको यह घोषित करना जरूरी नहीं होता कि वह हिन्दू नहीं है; बल्कि इसके विपरीत वह अपने-आपको हिन्दू घोषित कर सकता है, ऐसा वह करता भी है, और फिर भी इस तरहके विवाहके रजिस्ट्रेशनका हक माँगता है। फिर उस विवाहको कानूनकी नजरोंमें भी मान्यता मिल जाती है। रजिस्ट्रेशनकी बात मैंने खुद नहीं सोची थी; लेकिन राजाजी ने ऐसे विवाहोंमें माता-पिताका यह कर्त्तव्य माना कि ऐसी परिस्थितियोंमें बच्चोंको जितनी हो सके उतनी सुरक्षा मुहैया कर दी जाये, ताकि प्रतिकूल परिणामोसे बचा जा सके। मैं तुरन्त उनसे सहमत हो गया। यदि अब भी आपको इसमे कोई दोष दिखाई दे तो आप कृपया उसे मेरे ध्यानमें लानेमे संकोच न करें।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१४९२) से।

२५८. पत्र : जयकृष्ण पी० भणसालीको

२० जून, १९३३

चि० भणसाली,

कई दिन बाद अर्थात् महीनों बाद तुम्हारा पत्र मिला, इसलिए खुशी हुई; किन्तु पत्र पढ़कर दुःख भी हुआ। तुमने आत्मदर्शनके लिए जो उपाय सोचा है, उस रास्तेसे आत्मदर्शन नहीं हो सकता। ऐसा मेरा दृढ़ मत है। कोई होंठ सीकर मौन धारण कर ले तो उसे मौन नहीं मान सकते। जीभ काट डालनेसे भी मौन रह सकते हैं, किन्तु वह भी मौन नहीं है। बोलनेकी शक्ति होते हुए भी जो सहज मौनका पालन कर सके वही मौनधारी है। तुम जो तप कर रहे हो उसे गीताकारने तामसी तप कहा है और मैं उस कथनको सही मानता हूँ।

तुम कच्चा आटा खाते हो, यह भी चिकित्साशास्त्रके विरुद्ध है। धर्मशास्त्रने कहीं भी ऐसा करनेके लिए नहीं कहा है। तुम्हें कच्चा पदार्थ ही खाना हो तो

१. १४ जून, १९३३ को, देखिये पृ० २०५।

२. जहाँ वधुका वर्ण वरसे श्रेष्ठ हो।

फलादि खाओ, दूध-दही लो और यह खुराक पूर्ण होगी। मुझे लगता है कि तुम इस सब झंझटमें न पड़ो तो अच्छा। नीचे लिखे भजनका मनन करो।[1]

तुम आश्रममें या जहाँ अच्छा लगे शान्तचित्त होकर रहो और कोई सेवा करो। इस तरह यदि भाग्यमें होगा तो सहज भावसे आत्मदर्शन कर लोगे। यह तो तुम जानते ही होओगे कि मैंने तीन सप्ताह पहले २१ दिनोंका उपवास पूरा किया है। इसका एक विशेष कारण था। अभी बिस्तरपर तो रहना ही है, किन्तु शक्ति लौटती आ रही है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१४९१)से। **हरिजनबन्धु**, २५-६-१९३३ से भी।

२५९. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

पूना,
२० मई, १९३३

चि० हेमप्रभा,

तुम्हारा खत मिला था। कलसे ही कुछ पत्र लिखानेकी कुछ चेष्टाका फिर आरम्भ हुआ है। रामायणकी दस प्रति पहुँच गई हैं। मैं कुछ और शक्ति आनेपर पढ़ जाऊँगा। तुम्हारे स्वास्थ्यके बारेमें कुछ चिन्ता रहती है। लेकिन तुमको मैं क्या समझाऊँ? ईश्वरपर ही तुमने सब कुछ छोड़ रखा है। वह ही रक्षा करेगा। खादीका काम दिन प्रतिदिन आजकल कुछ कठिन बन रहा है। लेकिन अपनी मर्यादामें रहकर करनेसे कठिन काम भी आसान बन जाता है ऐसा मेरा अनुभव है और ईश्वर-भक्त अपनी मर्यादाके बाहर कभी नहीं जाते।

खादी प्रतिष्ठानके मूल उद्देशको कायम रखते हुए ही सौदेपुरको आश्रम बनानेकी चेष्टा हो सकती है। "श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात्"[2] ये श्लोक यहाँ विचारनीय है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०१) से।

१. कबीरका प्रसिद्ध भजन, 'साधो सहज समाध भली', जो यहाँ नहीं दिया गया है। देखिए खण्ड ४४, पृ० ४२६-२७, भजन संख्या ११८।

२. **गीता**, अध्याय ३, श्लोक ३५। देखिए खण्ड ३२, पृ० १७७ भी।

२६०. पत्र : मीराबहनको

पर्णकुटी, पूना,
२१ जून, १९३३

चि० मीरा,

तुम्हारा १८ तारीखका पत्र मेरे हाथमें आज सुबह आया।

जिसे दुग्ध-चिकित्सा कहा जाता है, उसे मैंने छोड़ दिया है। परन्तु मैं अपने ही ढंगसे ६ बजेसे प्रारम्भ करके ३ घंटेके अन्तरसे ४ पौंड दूध और रसदार फल (नारंगियाँ, अंगूर और अनारका रस) ले रहा हूँ। फिलहाल मेरे लिए इसी ढंगके अधिक अनुकूल होनेकी सम्भावना है। मेरा वजन बढ़कर ९३$\frac{3}{4}$ पौंडतक पहुँच गया है। यह वृद्धि अच्छी है और मुझे रोज तीन-चार बार चन्द कदम टहल लेनेकी इजाजत भी मिल गई है। छह सप्ताहके बाद मैंने पहले-पहल टब-स्नान किया। इससे बड़ी ताजगी आई। तो देख लो, जहाँतक मेरे स्वास्थ्यका सम्बन्ध है, कोई चिन्ता की बात नहीं है। कथित दुग्ध-चिकित्सामे मेरी ऊँचाईके हिसाबसे मुझे बिना किसी कष्टके १२ पौड दूध रोज ले सकना चाहिए। यह एक खास तरीका है और बहुत लोगोंके लिए बड़ा कारगर होता है। मेरे लिए भी अन्तमें इसके सफल होनेकी आशा रखी गई थी, परन्तु मैं इसपर तर्क करनेमे फँसना नहीं चाहता था और इसलिए फिलहाल मैंने इसे छोड़ दिया है। तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि काकासाहब यह इलाज करा रहे हैं। इस समय वे १० पौंड दूध रोज ले रहे हैं और उन्हें १२ पौडतक पहुँचना है। उनका वजन १२० पौंडतक हो गया है। ब्रजकृष्ण भी, जिन्हें तुम्हें मालूम है, बरसोंसे हमेशा कब्ज रहता है, यही चिकित्सा करा रहे हैं। वह हर घंटे १ पौंडके हिसाबसे बिना किसी दिक्कतके १२ पौंड दूध रोज ले लेते हैं। यह अच्छी तरह आजमाया हुआ तरीका है। इस प्रणालीमें मुख्य बात यह है कि जबतक दुग्ध-कल्प जारी रहे, तबतक बिस्तरमें लेटे रहना पड़ता है। दूध लेनेसे पहले रोज सुबह खूब व्यायाम किया जा सकता है।

यह कुछ निश्चित नहीं है कि देवदास भविष्यमें कहाँ रहेगा या क्या करेगा। इतना ही काफी है कि वह और लक्ष्मी दोनों बहुत खुश हैं और राजाजी भी, जो अपने बच्चोंके लिए माता-पिता दोनों हैं, बहुत खुश हैं। वे उन्हें प्यार करते हैं और यदि वे किसी और काममें व्यस्त न हों तो उनमे निमग्न रहकर सन्तुष्ट रहेंगे। इसके बाद प्रभुदासकी बारी है। ऐसा सम्भव है कि उसका विवाह एक लड़कीसे हो जाये जो इस समय आश्रममें रह रही है। वह संयुक्त प्रान्तकी है। लेकिन अभी कुछ निश्चित नहीं है। रामदास साबरमती गया है और अपनी पत्नीके साथ जल्दी ही वर्धा जायेगा। वेरियरको एक-न-एक तकलीफ बनी ही रहती है। अब वह हर्नियाका

ऑपरेशन करानेकी तैयारीमें है। लम्बे अरसेसे उसे यह कष्ट है। वास्तवमें मुझे तो लगता है कि ऑपरेशन करानेमें काफी देर हो चुकी है। राधा अभीतक देवलालीमें ही अटकी है। वहाँ रुखीके दूसरा बेटा हुआ है। वह देवलालीमें अपना इलाज करवा रही है। केशू अब भी वहाँ रह रहा है। उसे क्या करना है, यह तय नहीं हुआ है। छोटालालका एक्जीमा अब ठीक है। बालकृष्ण अब भी वैसा ही कमजोर है जैसा पहले था। वह भी वर्धामें है। स्वास्थ्यके कारणोंसे शान्तिबहन यहाँ ओम[1] के साथ है। उसका स्वास्थ्य ठीक नहीं चल रहा। एक पुराने व्यापार-सम्बन्धी मामलेके सिलसिलेमें जमनालालजी अभी-अभी वर्धाके लिए रवाना हो गये हैं। कानकी उनकी तकलीफ अभी कुछ दबी है। लेकिन वह केवल दबी ही है। उसने उन्हें बहुत कमजोर कर दिया है। उन्हें शारीरिक व मानसिक थकान बड़ी जल्दी हो जाती है। लगता है, नी० ठीक राहपर आती जा रही है। डकन निश्चय ही काफी खुश हैं और जाहिरमे तो उनका स्वास्थ्य भी ठीक बना हुआ है। नी० के बारेमें ऐसा नहीं है। उसके फोड़े-फुसियाँ हो रहे हैं। मैं समझता हूँ कि मैंने तुमको परिवारकी लगभग सारी खबरें सुना दी है। यह तो ठीक ही है कि मैं कई नाम और छोटी-मोटी अनेक तकलीफोंका उल्लेख करना भूल गया हूँ जो इस बड़े परिवारमे चल रही हैं; लेकिन तुम्हें एक बानगी दे दी है जिससे परिस्थितिका अनुमान हो जाता है।

तुम्हारे अपने स्वास्थ्यका समाचार सुखद है। मैं चाहता हूँ और आशा करता हूँ कि तुम अब लगातार बिना रुकावटके प्रगति जारी रखोगी। रोजमर्राका कार्यक्रम पूरा करनेका आग्रह करके तुम अपने-आपपर ज्यादा बोझ मत डालो। घबराओ मत और बिना कठिनाई या बोझके जो-कुछ किया जा सके, करो। तब तुम बिलकुल ठीक रहोगी।[2]

बालक-बालिकाओंके नक्षत्र-विद्या सीखनेके बारेमे तुम जो कहती हो वह बिलकुल सही है।

क्या मैंने तुम्हें बताया था कि प्रभावती साथ है? पत्र लिखते समय वह मेरे पलंगके पास खड़ी है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८१) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७४७ से भी।

१. उमा अग्रवाल, जमनालाल बजाजकी पुत्री।

२. साधन-सूत्रमें आगेका अंश गांधीजी के स्वाक्षरोंमें है।

२६१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पर्णकुटी, पूना,
२२ जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हारे दो मूर्खतापूर्ण व्यर्थके पत्र मिले।

मुझे नहीं मालूम था कि तुम इतनी असंतुलित, शक्की और अतिभावुक हो। किस बातसे तुमने ऐसा सोच लिया कि मैं तुम्हें एक अजनबी मानता हूँ? या यह मान लिया कि तुम मेरे लिए बेटीसे कम कुछ हो? आजकल तुम अपने हस्ताक्षर करते समय अपनेको मेरा शिष्य लिखती हो। मेरा एक ही शिष्य है; वह बहुतोंके बराबर है; वह शिष्य मैं खुद हूँ। तुम क्यों समझती हो कि मैं यह अतिरिक्त भार उठाऊँगा और अपना जीवन दुःखमय बनाऊँगा? बेटे-बेटियाँ और भाई-बहन बनानेमें मुझे खुशी होती है। इसलिए तुम या तो बेटी हो या कुछ नहीं; और शिष्या तो निश्चय ही नहीं हो। और यह कैसा शिष्य जो हर कदमपर गुरुपर सन्देह करे। क्या अब भी मेरे 'पागल' कहनेपर तुम्हें आश्चर्य हो रहा है? और तुम मेरे भोजनके बारेमें चिन्ता क्यों करती हो? क्या तुम मुझपर इतना विश्वास नहीं कर सकती और तुम्हें इस बातका भरोसा नहीं हो सकता कि मैं अपने लिए कोई जोखिम नहीं उठाऊँगा। खैर, अब चूँकि मैं अपने तरीकेसे दूध और फल ले रहा हूँ, शायद तुम चिन्ता करना छोड़ दोगी। हर हालतमें, मैं अच्छा हो रहा हूँ, वजन बढ़ रहा है और ताकत भी आती जा रही है। क्या तुम भी मेरी तरह अच्छी होती जा रही हो?

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। एस० एन० १९१०५ से भी।

२६२. पत्र : नारणदास गांधीको

२५ जून, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारे पत्र मिल गये हैं। केशु और राधा कल आये। राधा मेरे पास ठहरी और केशु ब्रजकृष्णके पास। कल रातको केशुसे बात की। राधा आज ब्रजकृष्णके साथ गई है। ब्रजकृष्ण दिनशाजी के यहाँ इलाज करवा रहा है। वह भी यह इलाज करवाये या नहीं, इसका विचार कर रही है। केशु या राधा आश्रममें तो नहीं आयेंगे, यह स्पष्ट है। जमनालालजी उनसे देवलालीमें मिलकर तब वर्धा गये हैं।

ज्ञान वर्धा चली गई होगी। प्रभुदास उससे मिले और तुम्हारी, काशी और रामदासकी राय जाननेके बाद तय करे।

राजभोजके बारेमें अपने अनुभव विस्तारसे लिखना। नी० के पत्र पढ़ लेते होगे। रामजी का क्या हाल है?

कुसुमके ज्वरका क्या कारण हो सकता है? जमना अब ठीक होगी। पुरुषोत्तमका पोस्टकार्ड आया है। दिनशाके साथ बात कर उसे तार दूँगा। किसी प्रकारकी अड़चन होनेकी ज्यादा सम्भावना तो नहीं है।

वहाँ बरसातका क्या हाल है?

बापू

[पुनश्च :]

लगता है शक्ति दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। वजन भी ९५ तक पहुँच गया है। यह तो अच्छा ही माना जायेगा।

भणसाली और चैतन्यके पत्रोंके बारेमें तुम सबको मालूम ही है। उनका जवाब[१] 'हरिजनबन्धु' में देखना।

इसके साथ, नी०, अमला, आनन्दी, रमा, अमीना, कुसुम, जमना, अमतुस्सलाम, चम्पा और रामदासके पत्र भेज रहा हूँ (अंतिम अलग लिफाफेमें सील किया है)।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३८६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. जे० पी० भणसालीको; देखिए पृ० २२२-३।

२६३. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२६ जून, १९३३

चि० अमला,

माँ को जो कष्ट पहुँचा है उसकी पूर्ति करनेके दो तरीके हैं। सबसे स्वाभाविक तरीका (यानी उनके पास लौटना) तुम्हें स्वीकार नहीं है। दूसरा है, उस सेवा-कार्यमें अपनेको खपा देना जो तुमने चुना है। उस हालतमें हर प्रौढ़ महिला तुम्हारे लिए माँ हो जायेगी। तुम्हें उनको पत्र बराबर लिखते रहना चाहिए और अपने कामका विवरण देते रहना चाहिए। इनसे उन्हें राहत मिलेगी।

जो पोशाक तुम्हें सबसे अच्छी लगती हो और आसानीसे धुल सकती हो, वही पहनो। इसका मतलब है मेरे जैसा . . .[1], एक पेटीकोट जो टखनोंसे ३ इंच ऊपर रहे और एक ढीली घुटनोंतककी कुरती। मीराने मजदूरी करनेवाली औरतों-जैसी पोशाक चुनी है साथमें . . .[2]।

तुम्हें उनके बाहरी रूपकी नकल करनेकी जरूरत नहीं है। यदि कर सकती हो तो उनकी आत्माके आन्तरिक सौन्दर्यकी नकल करो। लेकिन वह बात भी क्यों सोचो। तुम्हारे सामने आश्रमका आदर्श है। अपनी क्षमता-भर उस आदर्शको पानेकी कोशिश करो तो वह तुम्हें प्राप्त हो जायेगा। और अपनी शक्तिकी सीमासे बाहर जानेकी कोशिश न करो।

कृपया मेरे स्वास्थ्यके बारेमें चिन्ता न करो। परमेश्वरको जबतक इस संसारमें मेरी सेवाओंकी जरूरत है, वह उसकी चिन्ता करेगा।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

१ और २. यहाँ पढ़ा नहीं जा सकता।

२६४. पत्र : डॉ० सैयद महमूदको

पर्णकुटी, पूना,
२६ जून, १९३३

प्रिय डॉ० महमूद,

आप चाहे जहाँ जायें, पारिवारिक कष्ट तो साथ लगे ही रहते है। देखता हूँ, इन दिनों बेगम महमूद शायद मियादी बुखारसे पीड़ित है और आप उन्हें दिल्ली साथ ले गये है। बड़ी जोखिमका काम था; लेकिन उन्हे डॉ० अन्सारीकी देखभालमें रखा जा सके इस दृष्टिसे मैं समझता हूँ कि ऐसा करना सही था। मै आशा करता हूँ कि उनके स्वास्थ्यमें बराबर सुधार हो रहा होगा।

देवदासने मुझे वे उपहार, जो आप लाये थे, दिखाये। उन उपहारोंके पीछे आपकी तथा जालभाई[1] की प्यारकी भावनाओंकी यद्यपि मैंने कद्र की किन्तु मुझे लगा कि रेशमकी चीजोंको स्वीकार नहीं करना चाहिए क्योंकि पिछले निश्चय और आदतके अनुसार लक्ष्मीको यथासम्भव रेशमकी चीजे नहीं पहननी चाहिए। यह राय दे चुकनेके बाद मैंने निर्णय लक्ष्मी, राजाजी और देवदासपर छोड़ दिया। जहाँतक रेशमकी चीजें इस्तेमाल करनेकी बात थी, उन सभीको मेरे-जैसा ही लगा, लेकिन मित्रों द्वारा स्नेहपूर्वक भेजे गये उपहारोंको वापस करनेमें उन्हें कुछ संकोच हुआ। लेकिन मैंने कहा कि अगर सब लोग इस बातसे सहमत हों कि इस तरहके उपहारोंको लौटा देना चाहिए तो लौटानेका काम मैं कर दूँगा। श्रीमती नायडूको जब यह सब मालूम हुआ, तो उन्होंने कहा कि यदि आपका दिया हुआ उपहार लक्ष्मीके लिए स्वीकार न किया जाये तो वह उन्हें दे दिया जाये। इसलिए मैंने आपकी दी हुई साड़ी उन्हें दे दी। जालभाईकी साड़ी उन्हें लौटाई जा रही है। मथुरादास हाल ही में एक या दो दिनके लिए बम्बई जा रहा है; तब वह उसे ले जायेगा। लेकिन थैला और उसमें की अन्य चीजें रख ली गई हैं। आशा है कि आपको यह सन्तोष होगा कि वे चीजें देवदास और लक्ष्मीको आपके स्नेहकी बराबर याद दिलाती रहेंगी। तीसरे मित्र जिन्होंने रेशमकी साड़ियाँ भेजीं, घनश्यामदास बिड़ला थे। मैंने उनके बारेमें उनसे बात की। उन्होंने हमारी कठिनाई समझी और खुशीसे साड़ियाँ वापस ले लीं। मैं इसके निष्कर्षकी ओर इशारा करना चाहूँगा। अगली बार मित्रोंको उपहार देनेसे पहले आप देख लें कि वे लोग उन उपहारोंको लेकर उनका इस्तेमाल कर सकते हैं या नहीं। हम लोग रोमाँ रोलाँके निवासपर गये थे। उन्होंने सोचा कि हममें से हरेकको उस अवसरकी यादमें कुछ-न-कुछ दिया जाये। और ऐसा लगता

१. दादाभाई नौरोजीके पौत्र।

है कि मुझे क्या दिया जाये, इसपर उन्होंने अपनी बहनसे रात-भर विचार-विमर्श किया। किताब या ऐसी ही कोई अन्य उपयोगी चीजपर उनका ध्यान नही गया। इसलिए उन्होंने एक बड़ी मामूली मगर बड़ी ही कलात्मक डिबिया मुझे भेजी। यह डिबिया शायद सुँघनी रखनेकी थी। मेरे लिए तो यह एक अमूल्य निधि है। इसलिए यह विद्यापीठ संग्रहालयमे रखी जायेगी। निश्चय ही यह छोटी-सी डिबिया स्वीकार करनेमें सकोचकी कोई बात नही थी। मैने इस सुन्दर घटनाका उल्लेख इसलिए किया कि यहाँ उसका उल्लेख उपयुक्त है और मै जानता हूँ कि इससे आपको खुशी होगी; साथ ही मै जो-कुछ कहना चाहता हूँ उसे भी इससे बल मिलेगा।

मैं नहीं जानता कि आप कब कहाँ होंगे। यदि आप इस तरफ जल्दी ही न आ सके, तो मैं चाहूँगा कि आप राजनैतिक परिस्थितिपर अपने विचार मुझे लिख भेजें। आप मुझे क्या काम देना चाहेंगे? आम कांग्रेसी जनोंको क्या करना चाहिए? शेरवानी कहाँ है? यदि यह पत्र आपको दिल्लीमें मिल जाये तो मैं चाहूँगा कि कम-से-कम पत्रका यह अंश आप डॉ० अन्सारीको दिखा दें और यदि वे अगले महीनेके शुरूमें ही न मिल सकें, तो मैं चाहूँगा कि वे भी मुझे अपनी राय लिख भेजें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डा० सैयद महमूद
मार्फत – डॉ० मु० अ० अन्सारी
१ दरियागंज, दिल्ली

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०८९) से। एस० एन० १९१०६ से भी।

२६५. पत्र: मोतीलाल रायको

२६ जून, १९३३

प्रिय मोतीबाबू,

मै आपके पत्रका जवाब इससे पहले ही न दे पाया; आप इसके लिए मुझे क्षमा करें। बात यह है कि मैं अभी बिस्तरसे लगा हूँ और मुझमें बोलकर पत्र लिखवानेकी शक्ति भी सीमित ही है। मेरा अधिकांश समय शरीरकी जरूरतोंपर ध्यान देनेमें बीत जाता है।

जैसाकि आप 'हरिजन' के ताजा अंक[1] से देखेंगे, मन्दिर-प्रवेशपर लिखे आपके पत्रका एक अंश तो प्रकाशित किया ही जा चुका है।[2] केवल प्रमाणित किये जा

१. २४ जून, १९३३ के।
२. "हमें अपने मित्रोंसे बचायें", शीर्षकसे।

सकनेवाले वक्तव्य ही प्रकाशित हों, इस बातकी अतिरिक्त सावधानी रखी गई है; फिर भी गलतियाँ हो जाती है। ईश्वरको धन्यवाद है कि आपके-जैसे जागरूक लोग है जो 'हरिजन' के स्तम्भोंमें कोई गलत बात छप जानेपर उधर ध्यान दिलाते रहते हैं। आदमीके कामोंमें गलतीकी गुंजाइश न रहे, ऐसा पक्का प्रबन्ध सम्भव नहीं है और त्रुटि हो जानेके डरसे कामकी घटनाओंकी रिपोर्ट ही प्रकाशित न की जाये, यह भी बड़ी कठिन बात है। इसलिए त्रुटिशील हम लोग इतना ही कर सकते हैं कि अपने सब वक्तव्यों, कार्यों और विचारोंमें जरूरतसे ज्यादा सावधान रहे और जब भी गलती हो जाये, तभी अपना कदम वापस लेने और भूल स्वीकार करनेको तत्पर रहें।

मेरी हालत ठीक होते ही मै 'हरिजन' में उपवासपर लिखनेकी बात सोच रहा हूँ।[1] इसलिए मैं उसके बारेमें यहाँ कुछ नही कह रहा हूँ। मुझे खुशी है कि आपका काम ठीक रूपमे आता जा रहा है। जिस डॉक्टरके बारेमे आपको लिखा था, संयोगवश वह अभी यही है। उसका पर्याप्त अनुभव हो चुकनेपर मैं आपको तत्काल लिखूँगा। आपको बिना अधिक देर किये अपनी आँखकी तकलीफपर ध्यान देना चाहिए।

आपका,
बापू

श्रीयुत मोतीलाल राय
प्रवर्त्तक सघ, चन्द्रनगर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०४५) से।

२६६. पत्र : एम० आसफ अलीको[2]

२६ जून, १९३३

प्रिय आसफ अली,

आपका लम्बा पत्र मिला। उसके लिए धन्यवाद। उसे समाचारपत्रोंमें भेज देनेकी बातका मै बिल्कुल बुरा नहीं मानता। मुझे वह पत्र भेजनेका आपको पूरा-पूरा हक था और जिस स्पष्टतासे आपने अपने विचार व्यक्त किये हैं, उसकी मैं कद्र करता हूँ।

१. देखिए "उपवासके बारेमें", पृ० २६६।

२. यह ४-७-१९३३ के *हिन्दू* में प्रकाशित हुआ था और गांधीजी की ओरसे श्री आसफ अलीके उस खुले पत्रका जवाब था जिसमें सत्याग्रहको स्थगित करने और कांग्रेसकी नीतिमें बुनियादी परिवर्तन करनेकी माँग की गई थी।

मैं मौजूदा हालतपर अभी कुछ कह नहीं सकता क्योंकि मैं अभीतक बिस्तरसे लगा हूँ और स्थितिका ठीकसे विश्लेषण नहीं कर पाया हूँ। फिर भी मैं चाहता हूँ कि आप मेरी सैद्धान्तिक कठिनाई समझें; वह मेरी सीमा भी है। अहिंसा मेरे लिए केवल प्रयोग ही नहीं है। वह मेरे जीवनका अंग है। सत्याग्रहका समूचा सिद्धान्त, असहयोग, सविनय अवज्ञा और इसी तरहकी अन्य चीजें इस सैद्धान्तिक मान्यताकी निष्कृति है कि अहिंसा मानव-जीवनका नियम है। मेरे लिए वह साधन भी है और साध्य भी। और अब तो मेरा यह विश्वास पहलेसे भी ज्यादा दृढ़ हो गया है कि भारतके सामने जो जटिल स्थिति है, उसमें सच्ची स्वतन्त्रता पानेका इसके अलावा दूसरा कोई उपाय नहीं है। इसलिए मौजूदा स्थितिपर विचार करते समय मुझे हर चीजकी जाँच अहिंसाकी दृष्टिसे करनी होगी।

हृदयसे आपका,

एम० आसफ अली महोदय, बार-एट-लॉ
कूचा चेलान, दिल्ली

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१०८) से।

२६७. पत्र : जमनालाल बजाजको

२६ जून, १९३३

चि० जमनालाल,

यदि तुम केशुको काबूमें कर सको तो उसमें मेरा आशीर्वाद तो है ही। मेरी एक चिन्ता भी दूर हो जायेगी। वह आजकल यहीं है। राधा भी है। इस बारेमें मथुरादास लिखेगा। कमलाकी खातिर तुम्हें यहाँ आनेकी कोई जरूरत नहीं होनी चाहिए। उपवासकी कड़ीके बारेमें तुम्हें विचार ही नहीं करना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९१६) से।

२६८. पत्र : रमाबहन जोशीको

२६ जून, १९३३

चि० रमा,

क्या मुझे पत्र न लिखनेकी सौगन्ध खाई है? जिसका शरीर और मन ताजा हो, स्वस्थ हो, वह ऐसा करे तो मुझे बिलकुल बुरा न लगेगा। लेकिन क्या तुम्हारे बारेमें यह सही है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५३) से।

२६९. पत्र : अमीना गु० कुरैशीको

२६ जून, १९३३

चि० अमीना,

क्या तू मेरे पत्रका जवाब भी नहीं देगी? समय-समयपर तेरी याद आती रहती है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६६७) से। सी० डब्ल्यू० ४३१२ से भी; सौजन्य : हमीद गु० कुरैशी।

२७०. पत्र : जमनाबहन गांधीको

२६ जून, १९३३

चि० जमना,

फिर कैसे बीमार पड़ गई?

मौन समाप्त होनेके बाद दिनशाजी से पुरुषोत्तमके विषयमें बात करूँगा और बादमें तुम्हें तार[1] दूँगा। उसके बारेमें मुझे याद है।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८८३) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. गांधीजी ने किन्तु जमनाबहन गांधीके श्वसुर खुशालचन्द गांधीको तार दिया था; देखिए पृ० २३६।

२७१. पत्र : अमतुस्सलामको

२६ जून, १९३३

बेटी अमतुल सलाम,

जो मुझे हमेशा लिखती थी वह लड़की अब बिलकुल लिखती ही नहीं। यह कैसी बात! तुमको मैंने एक ख़त लिखा था वह मिला कि नहीं? सेहतके खबर लिखो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २८६) से।

२७२. तार : नारणदास गांधीको

२८ जून, १९३३

नारणदास गांधी
साबरमती आश्रम

सि० के बारेमें कानूगासे परामर्श करो और लिखो।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५००) से।

२७३. तार : जमनालाल बजाजको

२८ जून, १९३३

जमनालाल बजाज
वर्धा

ज्ञानदेवीने दृढ़तापूर्ण पत्र लिखा है कि उसे प्रभुदाससे विवाहके लिए बाध्य न किया जाये। आप हर मूल्यपर उसकी स्वतन्त्रताकी रक्षा करेंगे। उसे पत्र भेज रहा हूँ।[1]

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०१) से।

१. देखिए पृ० २१४ और २२४।

२७४. पत्र : बलीबहन एम० अडलजाको

२८ जून, १९३३

चि० बली,

मनुड़ीके बारेमे तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी जबान या तुम्हारी कलमका मुकाबला कौन कर सकता है। तुम्हें तिलका ताड़ बनाना अच्छी तरह आता है। तुम्हें मालूम नहीं है कि मैंने तो सबको आनेसे रोका है। नीमू[1] को भी मना किया है। मेरे मना करनेपर भी जो नहीं रुक पाते, वे आ जाते हैं। बुआ[2] को भी मना किया है। रामी आने लायक नहीं है। उसके पास पैसा कहाँ है। कुँवरजीका खर्च बड़ी मुश्किलसे चलता है। हाँ, तुम्हारे पास अखण्ड खजाना है और तुम उसे बच्चोंपर लुटाना जानती हो। किन्तु मेरी सलाह मानो तो मेरे पास आनेका मोह खुद भी छोड़ दो और रामीका भी छुड़ा दो। मै जानता हूँ तुम्हें मुझसे स्नेह है। इस स्नेहका उपयोग तुम मेरे काममें करो तो वह मुझसे मिलनेसे ज्यादा अच्छा है। तुमने जो लिखा है वह सच ही है। मेरे लिए जिस तरह रामदास और देवदास हैं, उसी तरह तुम बहनें भी हो। तुम्हें बिना पूछे भागकर मेरे पास आनेका अधिकार जरूर है। इसी अधिकारके आधारपर मैं तुम्हें संयमका पालन करनेकी सलाह दे सकता हूँ। न हो पाये तो आ सकती हो। मैंने रामदासको भी यही लिखा था। कमु[3] का पत्र मेरे पास पड़ा है। उसे अलग पत्र नहीं लिखता। अभी पूरी शक्ति नहीं आई। कमु ठीक होगी?

हरिलालका पत्र इसके साथ है। उसकी अभी तो कोई आशा नहीं है। मनुका विवाह अभी नहीं हो सकता। मनु बिलकुल बच्ची है। उसमें घर चलानेकी तनिक भी क्षमता नहीं है।

मेरी समझमें आजकल हरिलाल यहाँ नहीं है। उस ओर होना चाहिए।

मुझे लिखती रहना।

मनुका वजन बढ़ रहा है। जबतक उसे ठीक लगे तबतक यहीं रहने देना। अब तो मुझे भी यहाँ बहुत दिन नहीं बिताने हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०५४) से; सौजन्य : सुरेन्द्र मशरूवाला।

१. निर्मला, रामदास गांधीकी पत्नी।
२. सरोजिनी नायडू।
३. कमला पटेल।

२७५. तार : खुशालचन्द गांधीको

२९ जून, १९३३

खुशालचन्द गांधी
राजकोट

पुरुषोत्तमके लिए प्रबन्ध कर लिया। उसे भेजें। मैं ठीक हूँ।

मोहनदास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०३) से।

२७६. तार : फ्रांसिस जे० मैककोनेलको

बिशप मैककोनेल
होटल मोरिसन, शिकागो

२९ जून, १९३३

धन्यवाद। खेद है शरीक नहीं हो सकता[१]।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१५०४) से।

२७७. पत्र : मीराबहनको

२९ जून, १९३३

चि० मीरा,

गुरुवारकी सुबह है और ५.३० बजे है। तुम्हारा पत्र मेरे सामने है।

यह सोचकर मुझे खुशी होती है कि तुम फिर अच्छी हो गई हो और दिनों-दिन तुममें शक्ति आ रही है। हमें सभी ऋतुओंमें स्वस्थ बने रहने योग्य शक्ति प्राप्त कर लेनी चाहिए। मैं जानता हूँ कि यह कठिन काम है, परन्तु यह इन्सानके

१. सी० एफ० वेल्रके २८ जून, १९३३ के पत्र (एस० एन० २१५०२) से ज्ञात होता है कि गांधीजी को शिकागोमें सितम्बर, १९३३ में होनेवाली 'पार्लियामेंट ऑफ रिलीजन्स' में आमन्त्रित किया गया था और उनका यह तार इसीके सम्बन्धमें था।

बूतेसे बाहरकी बात नहीं है। इसमें मनका बहुत हाथ होता है। अगर हम बाह्य बातोंके प्रति 'गीता' के छठे अध्यायके अनुसार पूरी तरह अनासक्त हो सकें, तो यह स्थिति प्राप्त हो सकती है। सम्प्रति यह हमारे बूतेके बाहर दिखाई देती हो, तो इससे घबरानेकी आवश्यकता नहीं है। गीताकार हमें कोशिश करनेके लिए कहता है और अपने विपुल अनुभवसे बताता है कि सच्चा प्रयत्न असफल कभी नहीं होता। देर लग सकती है, परन्तु सफलता निश्चित है।

हाँ, उपवासके दिनोंमें मैंने नमक नहीं लिया। यह तो 'रपट पड़ेकी हरगंगा' थी। मैं नमक ले ही नहीं सकता था। मुझे अरुचि हो गई थी और इस कारण इसको लेनेकी मैंने कोशिश नहीं की और इसकी वैसी जरूरत भी नहीं थी जैसीकि सोडेकी। सोडा तो इसलिए मैंने ज्यों-त्यों करके लिया ही।

कल मेरा वजन ९७$\frac{३}{४}$ था। कल कुल मिलाकर तीन बारमे ४४ मिनट घूमा तो भी थकान नहीं मालूम हुई। इसलिए यह प्रगति पहलेसे बहुत अच्छी है। थोड़ी बातचीत करनेमें भी कठिनाई नहीं होती।

राधा और केशु अभी मेरे पास हैं। राधा पहलेसे कुछ बेहतर है। वह आज देवलाली वापस जा रही है। केशु कुछ दिन मेरे साथ रहेगा ताकि पूरी बातचीत हो सके।

बेचारा प्रभुदास! प्रस्तावित नाता टूट गया है। इसलिए और आगे खोज होनी है।[१]

देवदास और लक्ष्मी और अपनी विधवा बेटीके[२] साथ राजाजी व उनका बेटा अब भी यहीं हैं और कुछ समयतक और रहनेवाले हैं।

'महाभारत' पढ़नेके बारेमें तुम्हें सभी व्यक्तियोंके नाम और उनका संक्षिप्त इतिहास और उनका एक-दूसरेसे सम्बन्ध लिख लेना चाहिए और वर्णक्रमानुसार ऐसी सांकेतिका बना लेनी चाहिए जिससे अपनी नोटबुकसे किसी भी नामका परिचय तुरन्त पा सको। इसे तैयार कर लेनेसे तुम्हें भ्रममें नहीं रहना पड़ेगा और यदि वह सूची ठीकसे तैयार हो सकी तो दूसरोंके लिए भी बड़ी उपयोगी होगी।

तुम्हारा यह कहना बिलकुल ठीक है कि हिन्दी-अनुवाद अंग्रेजी-अनुवादसे, चाहे वह कितना ही अच्छा हो, पढ़नेमें बेहतर होता है। यह स्वाभाविक है, क्योंकि संस्कृत हिन्दीसे सम्बद्ध है।

प्रभावती मेरे पास है और तुम्हें प्यार भेजती है। राधा आज देवलालीके लिए रवाना हो गई है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८२) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७४८ से भी।

१. देखिए "तार: जमनालाल बजाजको", २८-६-१९३३।

२. नामगिरि वरदाचारी।

२७८. तार : प्रफुल्ल घोषको

३० जून, १९३३

प्रफुल्ल घोष
३९ क्रीक रोड, कलकत्ता

किसी भी दिन आइये स्वागत है।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०५) से।

२७९. तार : नेवन्दरामको

नेवन्दराम
सीरूका चौक, सक्खर

३० जून, १९३३

तुमसे उपवास न करनेका आग्रह करता हूँ[१]।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०६) से।

२८०. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पर्णकुटी, पूना,
३० जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हारे दादीकी तरह सलाह देनेके बावजूद, मुझे अपने भोजनका वही क्रम जारी रखना है, जो मैंने अपनाया है। अधिकांश दादियाँ जब सलाह देती हैं, तो बिना माँगे सलाह देनेका अपना काम शुरू करनेसे पहले कम-से-कम वे तथ्योंकी जानकारी तो ठीकसे कर लेती हैं। लेकिन तुम विचित्र दादी हो। तुम अपने प्रवचन इस बातकी परवाह किये बिना शुरू कर देती हो कि वे तथ्योंपर आधारित

१. हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेश दिलानेके लिए; देखिए पृ० २०९।

हैं या प्यारपर। फिर तुम्हारा साधिकार यह 'यूरोपमें हम लोग' कहना भी मज़ेदार है। दुर्भाग्यसे यूरोपके लिए जो-कुछ ठीक है, हो सकता है वह हर हालतमें भारतके लिए ठीक न हो। और क्या तुम यह नहीं देख पातीं कि 'यूरोपमें हम लोग'का अर्थ केवल तुम्हारे-जैसे कुछ सनकी लोग ही होते हैं? सच्चे 'यूरोपके हम लोग' जीवित शुक्तियों, झिंगा मछली, आखेटमें मारे हुए बड़े जानवरों, 'क्रॉलिंग' पनीर, उत्तेजक शैम्पेन और तेज बियरमें विश्वास करते हैं। तुमने बात गाजरके रससे शुरू की है। आशा है कि तुम बात 'पोर्ट वाइन' तक नहीं ले जाओगी। रस तो दोनों ही हैं; लेकिन दोनोंमें थोड़ा अन्तर है। भगवान न करे कि तुम कभी प्राकृतिक चिकित्सावाली कुमारी बन जाओ। इतना ही बहुत काफी और बहुत अच्छा होगा कि तुम ठीकसे पूरी हरिजन-सेविका बन जाओ। यदि तुम वह बन जाओ तो प्राकृतिक चिकित्सा अपने-आप चलती रहेगी।

क्या तुम जानती हो कि तुम्हें हिन्दी-अक्षर अभी ठीकसे बनाने नहीं आते। मै आशा करता हूँ कि तुम खुद जिस ढँगसे पढ़ रही हो उस ढंगसे अपने शिष्योंको नहीं पढ़ाती होगी। तुम्हें दोषपूर्ण अक्षरोंसे सन्तोष नही कर लेना चाहिए। क्या तुम जानती हो कि तुम्हारा 'क' 'फ'की तरह और 'र' संख्यासूचक '२'की तरह और 'ट' 'ढ'की तरह होता है? शायद ही कोई ऐसा अक्षर होगा जिसे बिलकुल ठीक लिखा गया कह सकूँ। शुरू-शुरूमें मै आलोचनात्मक नहीं होना चाहता था। लेकिन जब तुमने पहले-पहल हिन्दीमें अक्षर लिखने सीखे तबसे अभीतक कुछ सुधार नहीं हुआ है। तुम्हें इतना तो कर लेना चाहिए कि जो अक्षर तुम हर पत्रमें उतारती हो उन्हें उनके सही रूप समझनेके बाद उतारो। यह काम अपने बेकारके भारी वस्त्रोंको साफ करने जितना भारी नहीं है। वस्त्रोंका वजन तो खुद तुम्हारा बढ़ाया हुआ है; लेकिन वह थोड़ा-बहुत क्षम्य है। गलत अक्षर लिखना तुम्हें सर्वथा अक्षम्य मानना चाहिए।

मैं देखता हूँ कि तुम्हारा पारपत्र नकलके अनुसार १५ मार्च, १९३५ को समाप्त हो जायेगा। यदि यह ठीक है और यदि उसकी अवधि बढ़ानेकी जरूरत है तो मैं समझता हूँ कि यह काम जर्मन वाणिज्य दूतको करना है। यदि तुम यह नहीं जानती तो पूछताछ करनी होगी।

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। एस० एन० १९१०९ से भी।

२८१. पत्र : नी० को

३० जून, १९३३

नी०,

तुम्हारे पत्र सामने हैं। मै आखिरी पत्रका जवाब पहले दे रहा हूँ।

तुम भयानक लेकिन एक अद्भुत परीक्षामे से गुजर रही हो। आशा है कि भगवान तुम्हें इसे सह सकनेकी शक्ति देगा। यदि तुम केवल इतना समझ जाओ कि हमारा परिवार वहुत गरीब परिवार है और हम गरीबीके आदर्शसे बहुत दूर हैं तो तुम देखोगी कि सि० की बीमारी गरीव लोगोके जीवनमें घटनेवाली साधारण बात है; और तब उसका बोझ उठाना तुम्हें आसान हो जायेगा। तुम्हें एक डॉक्टर सुलभ है। सचमुचके गरीबोंको डॉक्टर नही मिलता। वे तो यह भी नहीं जानते कि डॉक्टर कैसा हो सकता है। उन्हें तो देहातके बिल्कुल अयोग्य वैद्यसे ही सन्तोष करना पड़ता है। जितना-कुछ वह वैद्य कर दे उतना ही बहुत है। बहुधा वैद्योंकी स्वार्थी वृत्तिके कारण भी उन्हें कोई ठीक मदद नहीं मिल पाती। इसलिए सि० को आश्रममें जितनी राहत दी जा सकती है, तुम्हें उसीसे सन्तोष करना होगा। तुम आश्रमके उन थोड़े-से लाड़-प्यारमें विगड़े लोगोंसे अपनी तुलना न करो जो तुम्हारी सूक्ष्म दृष्टिसे बच नहीं पाये होंगे। लेकिन जब यह जानकर कि तुम और लाड़-प्यारमें बिगड़े हुए लोगोमे से नहीं हो, तुम्हें खीझ और आक्रोश हो, तो इस बातको याद कर लेना कि जिसे तुमने अपना पिता बना लिया है, वह लाड़मे बिगड़े आश्रम-वासियोंमें सवसे बढ़कर है। यदि तुम मेरा लाड़में बिगडना बर्दाश्त कर सकती हो, तो अन्य लोगोंका लाड़में विगड़ना भी बर्दाश्त कर सकोगी। और शायद तब तुम यह भी समझ जाओगी कि वे यदि विगड़े हुए हैं तो क्यों बिगड़े हुए हैं; और फिर यह भी जान जाओगी कि अन्य लोगोंकी तुलनामे तो तुम भी शायद लाड़में बिगड़े लोगोंमें गिनी जाओगी, क्योंकि लाड़-प्यारके कारण बिगड़नेके भी तो अलग-अलग दर्जे है। जो भी हो, मैं चाहता हूँ कि तुम खुश रहो, शान्त रहो और सि० की बीमारी और अपने फोड़ोंके बावजूद भी सन्तुष्ट रहो।

डॉक्टरोंपर अविश्वासके मामलेमें तुम्हारी और मेरी दोनोंकी एक ही दशा है। लेकिन यह अविश्वास एक सीमातक ही होना चाहिए और इसे विवेकपर आधारित होना चाहिए। जो डॉक्टर मेरी देखभाल कर रहे हैं, उनके प्रति तुम सरासर अन्याय कर रही हो। उन्होंने बड़ी सावधानी रखी है, ईमानदारीसे काम किया है और मेरी मदद करते रहे हैं। जैसाकि तुम सोचती हो, उन्होंने सन्तरे बन्द नहीं किये हैं। उनका कथन प्राकृतिक चिकित्साकी नवीनतम पद्धतिके अनुरूप है। वे जानते हैं कि मैं उनका कोई नीमहकीमी उपचार स्वीकार करनेवाला नहीं हूँ। इसलिए वे

ईमानदारीसे मेरी सनक के अनुकूल कुछ करनेका प्रयत्न कर रहे है। मै तुम्हें बता सकता हूँ कि उन्होंने मुझे क्या हिदायते दी है, मै सचमुच क्या कर रहा हूँ और तब शायद तुम्हें लगेगा कि उन्होने ऐसा कुछ नही कहा या ऐसा कुछ नही किया जो प्राकृतिक चिकित्साके नियमोंके विरुद्ध पड़ता हो। आश्रममे डॉक्टरकी मौजूदगीसे सि०के बारेमें मैं इतना तो जानना ही चाहता हूँ कि सि०को शिकायत क्या है और उसका वजन क्यों घट गया है। वहाँका डॉक्टर आसानीसे कोई दवा नही लिखेगा; फिर भी वह सामान्य उपाय बतायेगा और इसके लिए मुझे और आश्रमवासियोंको उसका कृतज्ञ होना चाहिए। उसके बाद हम उसकी सलाह माने या न माने, लेकिन बालककी बीमारीका ठीक-ठीक निदान तो हर हालतमें जरूरी है।

जहाँतक तुम्हारे फोड़ोंका सवाल है, तुमने यह ठीक किया कि फिलहाल दूध तक छोड़ दिया। रसदार फल अधिक मात्रामें लो और गर्म पानी, नीबू और नमक या सिर्फ गर्म पानी, नींबू तथा गुड़ या शहद लो। यदि गुड़ लो तो पानी छान लेना चाहिए। सबसे अच्छा तो यह होगा कि उसे ठडे पानीमे घोल लो और फिर गुड़का छना हुआ पानी स्टोवपर रख दो।

यह भी ठीक है कि तुमने पत्रमे अपने उग्र स्वभावके कुछ दृष्टान्तोंका उल्लेख किया है। मैंने उस स्वभावको ताड़ लिया था और इसलिए तुम्हारे पत्रसे मुझे कोई अचम्भा नहीं हुआ। लेकिन तुम एकाएक कोई साहसिक प्रयत्न करके उस हिंसासे छुटकारा नहीं पा सकती, न तुम्हें अपना क्रोध सि० पर उतारना चाहिए। किसी चीजको खाने-न-खानेके बारेमे सि० पर कोई दबाव मत डालो। आखिरकार जो चीजे वह खाता है वे उसे अच्छी लगनी चाहिए और याद रखो कि हम सब अधिकांशत. अपने माता-पिताके ही अनुरूप होते हैं। तुम्हें सि० पर इसलिए गुस्सा नहीं होना चाहिए कि वह कई बातोंमें तुम्हारा ही दूसरा संस्करण है।

क्या सि० ने आश्रममें किसी औरसे दोस्ती बना ली है; बड़े लोगोंमें से किसीसे या बच्चोंमे से? मुझे लिखो।

अब रही कुत्तोंकी बात। तुम्हारा यह कहना बिल्कुल ठीक है कि हमें इसका कोई हल खोजना चाहिए। यूरोपीय देशोंमें यह हल है कि वहाँ आवारा कुत्तोंको मार डाला जाता है। भारत उस हलको बर्दाश्त नहीं करेगा; तथापि अहिंसाके नियमानुकूल आदर्श हल भारत नहीं खोज पाया है। जानवरोंकी देखभाल करनेवाला संघ आवारा कुत्तों वगैरहकी जिम्मेदारी उठा लेता है। दुर्भाग्यसे ऐसे संघ ठीक ढंगसे संगठित नहीं है। जो भी हो, आश्रम एक ऐसे संघसे सम्पर्क रखे हुए है और बहुधा वह कुत्तोंसे आश्रमको मुक्त कर देता है। नारणदाससे कहो कि इस बार संघने कुत्तोंको वहाँसे क्यों नही हटाया।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११०) से।

२८२. पत्र : बी० एस० रावको

३० जून, १९३३

प्रिय गोपालराव,

तुम्हारा पत्र पाकर खुशी हुई। लेकिन आश्रमके ४० लोगोंमें से सर्वोत्तम लोगों पर तुमने जो प्रयोग किया, उसके अत्यन्त कटु अनुभवके बावजूद तुम अपनी सलाह जोर देकर दोहरा रहे हो, इससे मुझे दु:ख हुआ। क्या तुम अपने प्रयोगकी[1] पूर्ण विफलताको भूल गये हो? मुर्देकी तरह पीली पड़ जानेके बावजूद साहसके साथ तुम्हारे प्रयोगकी आजमाइश जारी रखनेकी वजहसे मीराबाई मृत्युके द्वारतक पहुँच गई थी और मैं कमजोरीसे लगभग निश्चेष्ट हो गया था। क्या तुम यह सब भूल गये? तुम्हारी विफलता और बिना पके माँड़का प्रयोग करनेकी हिदायतके लिए तुम्हारी अज्ञान-भरी जिद्दपर मैंने तुम्हें चेतावनी दी थी। मैंने तुम्हारा ध्यान इस ओर भी खींचा था कि तुम्हारी बुद्धि वैज्ञानिक नहीं है और यह भी कहा था कि जो लोग दुर्भाग्यवश तुम्हारी देखरेखमें हैं, तुम उनके प्रति बिल्कुल लापरवाह हो। दूधकी कमीको पूरा करनेके लिए तुमने जो सब्जी लेनेकी सलाह दी है वह बच्चोंके लिए जहर है, मै तुमसे आग्रह करूँगा कि जिन प्रयोगोंके बारेमे तुम जानते हो कि वे असफल रहे हैं उन्हे छोड़ दो। कुछ मामलोंमें शायद तुम्हें अस्थायी सफलता प्राप्त हो गई हो। किन्तु उससे तो यही सिद्ध होता है कि प्रकृति कितनी कृपालु और सहिष्णु है। वह नियमका उल्लघन करनेवाले अपने बच्चोंको लम्बे अर्सेतक बर्दाश्त करती है। तुम प्रकृतिकी इस उदारताका नाजायज फायदा उठा रहे हो। यह जानकर शायद तुम्हें दु:ख होगा कि मैं बकरीके दूध और फलसे स्वास्थ्य-लाभ कर रहा हूँ और तुम जो चीज उसकी जगह लेनेको कहोगे, उसके लेनेकी कोई गुंजाइश नहीं है। मै तो तुमसे इतना ही आग्रह करूँगा कि जो भोले-भाले लोग तुम्हारे ऊपर विश्वास करके अपनी बीमारियोंसे छुटकारा पानेके लिए आयें, उनके स्वास्थ्यको खतरेमे न डालो। मैंने कड़े शब्दोंमें लिखा है, क्योंकि मैं उस खतरेको जानता हूँ जो तुम्हारी बताई हुई गलत खुराकमे निहित है। अगर तुम यह कह सको कि अपने उस प्रयोगपर, जो गलत साबित हो चुका है, अब और अड़े नहीं रहोगे, तो मुझे प्रसन्नता होगी।

हृदयसे तुम्हारा,

श्रीयुत बोल्लाप्रागुड़ु सुन्दरगोपाल राव

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१११) से।

१. कच्चा अन्न खानेका। यह १९२९ की गर्मियोंमें किया गया था; देखिए खण्ड ४१।

२८३. पत्र : एम० एस० वाजिद हुसैनको

३० जून, १९३३

प्रिय महोदय,

आपने जो जूते व चप्पलें भेजी हैं, उनके लिए धन्यवाद। मुझे इस बातकी खुशी है कि ऊँचे खानदानके होते हुए भी आपने मोचीका उपयोगी पेशा अपनाया है।

हृदयसे आपका,

एम० एस० वाजिद हुसैन
शूज़ क्यूरिओ चैम्बर, विक्टोरिया स्ट्रीट, लखनऊ

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११२) से।

२८४. पत्र : हिल्डा वुडको

३० जून, १९३३

प्रिय बहन,

आपका पत्र मिला।

मैं इसे हरिजन सेवक संघके केन्द्रीय बोर्डके महा सचिव श्रीयुत अमृतलाल ठक्करके पास भेज रहा हूँ। आपने जिन विद्यार्थियोंका उल्लेख किया है, उन्हें वजीफा देनेमें मैं समझता हूँ कि कोई कठिनाई नहीं होगी। फिर भी जिन बालक-बालिकाओंके लिए वजीफोंकी जरूरत हो, उनके पूरे ब्यौरे श्रीयुत ठक्करके पास भेजना जरूरी होगा।

हृदयसे आपका,

श्रीमती हिल्डा वुड
वुड बंगला, अडियार, मद्रास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११३) से।

२८५. पत्र : जमनाबहन गांधीको

३० जून, १९३३

चि० जमना,

मेरा पत्र मिला होगा। पुरुषोत्तमको यहीं बुलाना था, इसलिए उसे और कुछ लिखा था। अब उसे तार[1] भेजा है और उसकी राह देख रहा हूँ।

मैंने और किसे पत्र लिखनेकी बात कही थी? मैं भूल गया हूँ।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८८४) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२८६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३० जन, १९३३

चि० प्रेमा,

तेरे पत्र क्यों नहीं आते? तेरा शरीर कैसा है, मन कैसा है, गला कैसा है? सुशीलाके क्या समाचार हैं?

धुरन्धर तो मुझसे फिर एक बार मिल चुका है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ६७८५) से; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१. देखिए "तार : खुशालचन्द गांधीको", पृ० २३६।

२८७. पत्र : नारणदास गांधीको

३० जून, १९३३

चि० नारणदास,

सुनता हूँ कि महालक्ष्मीको रिहा हुए और वहाँ आये हुए तीन सप्ताह हो गये हैं। किन्तु मुझे तो कल शामको अनायास ही इसकी खबर मिली। हो सकता है कि तुमने अपने किसी पत्रमें लिखा हो और वह मुझे न बताया गया हो। अब उसे यहीं भेज देनेके लिए आज तार दे रहा हूँ। वह अपने बच्चोंके बारेमें परेशान है, ऐसा जान पड़ता है।

सि० के लिए तार[1] भेजा ही है। तुमने जो लिखा है वह ठीक है कि उसे जबर्दस्ती खाना खिलानेमें भूल हुई है। मैंने इस विषयमें लिखा तो है।[2] उसका वजन कम हो गया, यह बहुत चिन्ताकी बात है। उसे मक्खनकी आदत है, इसलिए शायद मक्खन देनेसे वजन ठीक हो जाये। गेहूँके आटेके बारेमें मैंने जो लिखा है और कहा है उसका कुछ कर पाये हो? ज्ञानके बारेमें क्या हुआ, सो कुछ मालूम नहीं पड़ा। उसका अन्तिम पत्र पढ़ा होगा। लगता है, उसके पिताने उसपर दबाव डाला है। काशी, जमना, आदि ज्ञानके साथ सम्बन्ध करनेके विरुद्ध हैं, इसका कारण मालूम करके लिखना। ज्ञानका विरोध एक बात है और काशी आदिका विरोध दूसरी बात है। यह सब मालूम कर लेना आवश्यक दिखाई देता है।

भगवानजीसे मिलनेकी बहुत इच्छा है। मुझे लगता है कि उसे आने देना ही ठीक है। और महालक्ष्मी उसके साथ ही आये।

बापू

[पुनश्चः]

संलग्न पत्र : भगवानजी, रामदास, जमना, मैथ्यू, प्रेमा और ज्ञान।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० / १) से। सी० डब्ल्यू० ८३८७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. देखिए पृ० २३४।

२. देखिए पृ० ६९-७०।

२८८. पत्र : नारणदास गांधीको

३० जून, १९३३

चि० नारणदास,

डॉ० अग्रवाल आँखोंके डॉक्टर हैं। चश्मेके बिना कैसे काम चलायें, वे मुख्यतया यही बताते हैं। वे वहाँ आश्रम देखने आ रहे हैं। बच्चोंकी आँखोंका निरीक्षण करना चाहें तो करने देना। हरिजन बालकोंको देखें तब भगवानजी साथ जाये। जिनके चश्मा है वे उसे छोड़नेका तरीका उन्हें सिखायें। बाहरके लिए सिफारिशकी माँग करें तो नहीं देना। मुझे उनकी शक्तिका कुछ पता नहीं है। अच्छे आदमी लगते हैं। मुझपर जो प्रयोग किया उसमें सफल नहीं हुए। वे दो-चार दिन रहेंगे।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३८८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२८९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१ जुलाई, १९३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मेरे पत्रके साथ टकरा गया। मैंने कल ही लिखा और तूने भी कल लिखा।

हम सबके वर्ष एकके-बाद-एक बहे जा रहे है। हम छोटे हो रहे हैं, क्या यह कहना कदाचित् अधिक सही नहीं होगा? जितने वर्ष चले गये उतने आयुमें से कम हो गये। इस हदतक क्या हम छोटे हुए नहीं माने जायेंगे? मैं तो इसमें से सार यह निकालना चाहता हूँ कि हम अधिक सावधान बनें। हमें सौंपी हुई पूंजी कम होती जा रही है। जो शेष रही है उसका पूर्ण उपयोग करना हम सीखें। मैं चाहता हूँ कि तेरे विषयमें ऐसा ही हो।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४७) से। सी० डब्ल्यू० ६७८६ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

२९०. एक गश्ती चिट्ठी[1]

२ जुलाई, १९३३

प्रिय भाई,

जैसाकि आप जानते हैं, श्रीयुत अणेने १२ तारीख[2] को कुछ कांग्रेसी लोगोंको आमन्त्रित किया है। यदि आपका स्वास्थ्य इजाजत दे, तो मैं चाहूँगा कि आप उक्त दो या तीन दिनोंके लिए आ जायें। वे दिन मेरे लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होंगे; सम्भवतः राष्ट्रके लिए भी। मेरी इच्छा है कि आप उपस्थित हो सकें।

सदैव आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११४) से।

२९१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२ जुलाई, १९३३

चि० अमला,

मेरे दो वायदोंकी याद दिलाकर तुमने ठीक किया है। तुम्हारी माताजी को पत्र लिखनेकी बात मेरे मनमें थी, लेकिन इस समय मैं लिख नहीं सका। और फिर यह बात ध्यानसे उतर गई। मुझे पता था कि तुम्हें कुछ भेजना है। वह इस पत्रके साथ ही तुम्हें मिल जायेगा।

जहाँतक सूतके हारकी बात है, मेरा खयाल था कि महादेवने तुम्हें भेज दिया है। वह भी तुम्हें इस पत्रके साथ मिल जायेगा। यह मेरे अपने सूतसे तैयार किया गया है।

अगर तुम वही चीज पहन रही हो जो मीरा पहनती है, तो वह चीज साया ही है। क्या वह साया वैसा ही नहीं जैसा आश्रमकी महिलाएँ पहनती हैं? तुम्हें याद होना चाहिए कि मीराकी साड़ी एक दुपट्टा मात्र है जो उसके बदनपर पड़ा रहता है। यह लम्बाईमें शायद तीन गज भी न हो। उससे केवल उसकी नंगी पीठ, सिर और पेट-भर ढँकते हैं।

अगर तुम्हें आश्रमका अपना आदर्श वहाँ सुलभ नहीं है, तो एक-न-एक दिन तुम्हें निराश होना पड़ेगा। अच्छा हो कि तुम खुद अपनेपर ध्यान रखो। तुम्हारे पत्रोंसे स्थिरता और जिम्मेदारीकी कमी झलकती है। सावधानी बरतो और विनम्र रहो।

१. एस० एन० रजिस्टरके अनुसार यह पत्र अनेक व्यक्तियोंको भेजा गया था।

२. देखिए पृ० २७४ और २७८ ।

तुम्हारे पार-पत्रके बारेमे मैं पहले ही लिख चुका हूँ।[1]

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात : सौजन्य : नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय।

२९२. पत्र : अभयदेव शर्माको

२ जुलाई, १९३३

भाई अभय,

तुमारा खत (राजेन्द्र बाबू) परका पढ़ गया। मुझको अच्छा और उचित लगा। भावना सुंदर है। प्रायोपवेशनका समय आया हुआ नहि लगता है। किसी रोज ये भी करना पड़े।

छीपाकर कार्य करनेसे नुकसान ही हुआ है उसमें संदेह नहिं है। देखें क्या संभवित है। मव कुछ करनेवाला राम है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६६२)से।

२९३. बातचीत : पूनामें हरिजन कार्यकर्त्ताओंके साथ[2]

[२ जुलाई, १९३३][3]

उचित रीतिसे किये गये उचित प्रचार-कार्यके विरुद्ध मैं नहीं हूँ। हरिजनोंमें मद्यनिषेधका प्रचार-कार्य अवश्य ही कल्याण-कार्य होगा, पर इस कार्यमें भी कम-से-

१. देखिए पृ० २३९।

२. इस सम्बन्धमें महादेव देसाईने अपने लेख "स्पार्क्स फ्रॉम दि सेक्रेड फायर–९" में, जिससे कि यह अंश उद्धृत किया गया है, लिखा था : "उपवासके बाद गांधीजी पहली बार हरिजन-कार्य करनेवाले कार्यकर्त्ताओंकी काफी बड़ी मण्डलीसे मिले। सर्वेन्ट्स ऑफ अनटचेबिल्स सोसाइटीकी सामान्य सभाकी बैठक सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके भवनमें हुई थी, किन्तु उसके सदस्य कुछ प्रश्नोंपर गांधीजी की राय जाननेके लिए उनसे मिलने पर्णकुटी आये। प्रश्न ये थे : प्रचार-कार्य और सेवाकार्यमें से क्या किसी एकको चुना जाये अथवा दोनोंको महत्त्व दिया जाये? या प्रचार-कार्य न करके केवल सेवाकार्य ही किया जाये? गांधीजी का आग्रह था कि व्यवस्था-सम्बन्धी खर्च बहुत कम हो और जो भी सीमा तय कर दी जाये उसका उल्लंघन न हो। लेकिन इस नियमके अर्थके विषयमें बहुत-सारे मुद्दे उठाये गये। उदाहरणके लिए, हरिजनोंमें प्रचलित मद्यपानकी बुराईके खिलाफ गांवोंमें जो प्रचार-कार्य किया जाये उसपर होनेवाला खर्च उचित माना जाये या नहीं? मैं यहाँ इन सवालोंके विषयमें गांधीजी के विचार संक्षेपमें दूँगा।"

३. देखिए अगले शीर्षकका 'पुनश्च:'।

कम खर्च होना चाहिए। अगर हरिजन-बस्तियोंमें इस प्रचार-कार्यके लिए निर्दोष चरित्रवाले हरिजन ही मिल सकें, तो यह सारा पैसा हरिजनोंके पास ही जायेगा, और प्रचार-कार्य भी अधिक कारगर हो सकेगा। एक प्रश्न मुझसे यह पूछा गया है कि क्या मै एक चरित्रवान सुयोग्य सवर्ण शिक्षकसे एक अयोग्य हरिजन शिक्षकको अधिक पसन्द करूँगा? इस और ऐसे ही अन्य प्रश्नोंके सम्बन्धमें मै कहना चाहता हूँ कि मैं तो एक सच्चरित्र हरिजन शिक्षक खोजनेकी कोशिश करूँगा, और फिर, जहाँतक शिक्षण-योग्यताका सम्बन्ध है, मै उसे योग्य बनानेका प्रयत्न करूँगा। किसी हरिजन विशेषको आजीविका देने के बजाय मै, निस्सन्देह, बच्चोंके हितके बारेमें पहले सोचूँगा। पर ऐसे प्रत्येक प्रश्नका निर्णय उसके गुण-दोषको दृष्टिमे रखते हुए करना चाहिए। इसलिए मैं यही कहना चाहता हूँ कि योग्यतापर जरूरतसे ज्यादा जोर मत दीजिए।

पर प्रचार-कार्यके सम्बन्धमे हम एक सामान्य नियम यह बना सकते हैं कि प्रचार-व्ययपर हर बार सदस्योंकी राय ली जाये। इस विषयमें जितना ही अधिक मैं सोचता हूँ, उतना ही मुझे निश्चय होता जाता है कि अगर हमे अपने कार्यको स्थायित्व देना है, तो प्रचार-कार्यके लिए खर्च कम-से-कम करना होगा। प्रचार-कार्यके लिए जहाँ लगातार खर्चकी जरूरत हो, वहाँ वह तीन भागोंमे बाँट दिया जाये: २० प्रतिशत प्रबन्ध-व्यय, २० प्रतिशत प्रचार-कार्य और ६० प्रतिशत कल्याण-कार्य।

आप पूछते हैं कि पहलेके समान 'हरिजन-दिवस' मनाया जाये या नहीं। मै कहूँगा, जरूर मनाया जाये। परन्तु यदि वह ठीक तरहसे मनाया जाये, तो पैसेकी कोई आवश्यकता नहीं है। हरिजन-दिवसका यह मतलब नहीं है कि अपनी थोड़ी-सी बची-खुची रकममें काट-छाँट की जाये। इसी तरह, १०० रुपये दान प्राप्त करनेके लिए ७५ रुपये खर्च कर डालना मैं पसन्द नही करूँगा। क्योंकि उस दशामें दान तो केवल २५ रुपयेका ही रह जाता है। मैं यह नहीं कहता कि प्रचार-कार्य बुरा है; बुद्धिमानीसे निर्देशित प्रचार-कार्य जरूरी है। पर मेरा कहना यह है कि प्रचार-कार्य स्वावलम्बी बनाया जा सकता है। स्वागत अथवा जुलूसके लिए अपने कोपको हाथ न लगाइये। उसपर खर्च होनेवाला पैसा आप सहानुभूति रखनेवाले स्थानीय मित्रोंसे लें और अपने बजटपर उसका भार न डालें।

हमें सदा यह याद रखना चाहिए कि तीव्र आलोचकोंकी दृष्टि हमारे ऊपर जमी है। फलेच्छाके बिना यदि हम प्रत्येक कार्य धार्मिक भावनासे करें, तो हमारे कार्यका अवश्य असर पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-७-१९३३

२९४. पत्र : जमनालाल बजाजको

२ जुलाई, १९३३

चि० जमनालाल,

ज्ञानके सम्बन्धमे तार[1] दिया है, सो मिला होगा। छगनलालका पत्र इसके साथ है। इससे मैं यह समझा हूँ कि ज्ञान वहाँ नहीं पहुँची। ज्ञान किस तरह राजी हो गई, यह यदि तुम जान पाये हो तो मुझे लिखना।

१२ तारीखवाली बैठकके[2] लिए तुम जैसे-तैसे आओ ही, इसकी बिलकुल जरूरत नही है। अपनी राय भेजना चाहो तो भेज दो। जरूरत होगी तो पढ़ लूँगा। अच्छा तो यह हो कि उसे तुम अणेजी को लिख भेजो।

कमलाके लिए भी तुम्हें आनेकी जरूरत नहीं। जो-कुछ हो सकता है, वह बराबर होता रहेगा। मैं पूछताछ करता रहता हूँ। कमलनयन आता-जाता रहता है। जानकी देवीसे भी मिला था। कमला भी मिलकर गई। वह अभी बच्ची ही है। खूब लाड़-प्यारमें पली है, इसलिए अपनी जिम्मेदारीका भान कम है। इसमें उसका कसूर नहीं। जैसे हम, वैसी ही हमारी सन्तति। हमारे भीतर उत्तरोत्तर जो परिवर्तन होते हैं, उन सबतक हमारी सन्तति नहीं पहुँच सकती। हरिलाल इसका सोलह आने उदाहरण है। वह सब मर्यादाएँ लाँघ गया। उसने ये सब खुलेआम तोड़ीं। मैंने मनसे भोगोंको चाहा और बाह्येन्द्रियोंपर धीरे-धीरे अधिकार प्राप्त किया। यदि मनको भी अन्तमें वश न कर सका होता तो आसानीसे मिथ्याचारी व्यक्तियोंमें मेरी गिनती होती। परन्तु मुझमें जो परिवर्तन हुए, उनका प्रभाव हरिलाल पर कैसे होता? मैंने बीचमें यह व्याख्यान ही दे डाला।

तुम सारे काम शरीरको सँभालकर करो। प्रभुदास यदि वहाँ आया हो तो लिखना कि उसके क्या हाल है। अब वह किस खोजमें है?

विनोबा, बालकृष्ण और छोटेलालकी तबीयत कैसी रहती है?

राधिका आकर गई। अब वह देवलालीमे है। केशु अभी यहाँ है, शान्त है। अभी किसी निश्चयपर नहीं पहुँच सका है। पहुँच जायेगा। उसे काफी समय दे रहा हूँ। लक्ष्मीनिवासकी पत्नी सुशीलाने जो ५,००० रुपये हरिजन-सेवाके लिए दिये हैं, उनके बारेमें तुमने क्या फैसला किया?

देवदास और लक्ष्मी, रणछोड़दासके बंगलेमें रहते हैं। राजाजी घनश्यामदासके साथ। मेरी तबीयत ठीक हो रही है। रोज तीन बार मे ४५ मिनट घूम लेता

१. देखिए पृ० २३४।

२. देखिए "एक गश्ती चिट्ठी", पृ० २४७।

हूँ। वजन ९७ पौंडतक पहुँच गया है। और भी बढ़ेगा। अब मेरी चिन्ता करनेकी कोई बात नहीं रहती।

नारणदासका पुरुषोत्तम बहुत करके यहाँ आयेगा और डॉ० दिनशाके यहाँ नैसर्गिक उपचारकी शिक्षा लेगा।

वहाँका तुम्हारा काम कब पूरा होगा?

गिरधारी फिर आज गिरफ्तार होगा। कल छूटा था। उसे हैदराबाद जानेका हुक्म दिया गया था। उसने उसे नहीं माना।

तुम्हारा खान-पान आदि ठीक चल रहा होगा। मुझे सविस्तार लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आज १०से ११-३० बजेतक हरिजन-सेवकोंके साथ बातचीत की।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९१७)से।

२९५. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

३ जुलाई, १९३३

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र बराबर मिलते रहते हैं। मैंने पत्र तो सब पढ़े ही हैं पर मैं जवाब कहाँसे देता। अब काफी शक्ति आ गई है, इसलिए रोज थोड़े-से पत्र लिखनेका प्रयत्न करता हूँ। वजन भी बढ़ रहा है। खुराक काफी ले लेता हूँ। खुराकमें सिर्फ दूध और फल ले रहा हूँ। मेरी चिन्ता करने-जैसी कोई बात नहीं है। तुम्हें यह पत्र मिलनेतक कहाँ रहूँगा यह तो राम ही जाने। शायद वल्लभभाईके पास। जो होता है सो हो। हमारी इच्छासे कुछ और नहीं हो सकता।

तुम अपने कर्त्तव्यमें जुटे रहो, इतना ही काफी है। सुशीला तुम्हारी मदद करती है, यह बात मुझे पसन्द आती है। दोनों संयमका पालन करोगे तो सुशीला बहुत-कुछ कर पायेगी। लगता है, सीता[1] के लिए ठीक व्यवस्था कर दी है। मेरी समझमें शान्तिका विश्वास नहीं किया जा सकता। वह बहुत अस्थिर-सा है।

जालभाई मिल गया था। उसकी लड़कीके सम्बन्धमें समझ गया हूँ।

सोराबजी[2] के बारेमें तुमने जो किया है वह ठीक लगता है। कई बार नीतिका पालन करते हुए मित्र साथ छोड़ देते हैं। उसके विषयमें चिन्ता नहीं करनी चाहिए। इतना निश्चित रूपसे जान लें कि जिसे हम नीति मानते हैं, वह वास्तवमें कहीं अनीति तो नहीं और उसमें हमारा स्वार्थ तो नहीं छिपा हुआ है। नीतिके नामपर

१. मणिलाल और सुशीलाकी बेटी।

२. दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजी के एक सहयोगी कार्यकर्त्ता, पारसी रुस्तमजीका पुत्र।

जितना अनीतिपूर्ण व्यवहार संसारमें होता है, उतना उसे अनीति कहकर नहीं होता। अनीति, नीतिकी आड़में ही पनप सकती है। इसीलिए कई बार हमारे सामने धर्म-संकट उपस्थित हो जाता है। नीति-अनीतिका भेद कर पानेके लिए यम-नियमोंका पालन आवश्यक हो जाता है।

देवदास और लक्ष्मी यहीं हैं। मजेमे हैं। विवाहका वर्णन तो किसी-न-किसीने लिख ही भेजा होगा। दोनों भाग्यशाली दिखाई देते हैं। अप्रत्याशित आशीर्वाद प्राप्त कर पाये हैं।

रामदास बदनसीब है। सुखी या शान्त रह ही नहीं पाता। शरीर शिथिल हो चुका है। नीमू भी बीमार पड़ती ही रहती है; बच्चोंका भी यही हाल है। फिर अब योनिमें विकृति आ गई है, इसलिए शायद ऑपरेशन भी करवाना पड़े। फिर भी रामदास भक्त है, भोला है और कर्त्तव्य जानने और उसका पालन करनेका प्रयत्न करता है। इसलिए मैं यही मानता हूँ कि अन्ततः उसका जीवन सुखी ही होगा। फिर भगवान तो भक्तोंकी परीक्षा अच्छी तरह लेते ही हैं। इसलिए विश्वास है कि रामदास यदि जिन्दगी-भर दुखी रहा तो भी वह भक्ति छोड़नेवाला नहीं है। तुम दोनों उसे पत्र लिखते रहना। रामदास और नीमूने अपनी डोरी जमनालालजी के हाथमे दे दी है, किन्तु अभी तो वे नीमूके बीमार हो जानेसे वर्धा पहुँच ही नहीं पाये हैं। इसलिए वहाँ पहुँचनेमें कुछ देर हो सकती है। जमनालालजी को पत्र लिखते रहते होगे। जानकीदेवी और बच्चे यहीं हैं। सिर्फ मदालसा[१] वर्धामे विनोबाके पास है। महादेव और मथुरादास भी हैं। बा तो है ही। मनु अभी हालमे आई है। हरिलाल शराबके पीपेमें पड़ा रहता है अथवा यों कहें कि शराबका पीपा उसके पेटमे पड़ा रहता है। उसका बोझ लादकर वह और बोझ कैसे उठा पाये? मैं इस दुःखका रोना नहीं रोता। मेरे ही पापोंका यह कड़वा फल होगा, ऐसा सोचकर शान्त रहता हूँ।

वेस्टके बारेमें समझ गया हूँ। अन्तमें जो तुम्हें ठीक लगे वही करना। तुमपर उसकी अच्छी छाप न पड़े तो मैं उसकी सफाई नहीं दे सकता। देवीबहनको लिखे वेस्टके पत्र मैंने विलायतमें पढे थे। उनसे मुझे लगा था कि वह जैसा-का-तैसा बना है। मनुष्योंके गुण देखकर उनका ही स्मरण करनेकी सीख तुलसीदासने दी है। अवगुण तो हममें होते ही हैं। उनके कारण संसार हमारा त्याग करे तो हम मुँह फुला लेते हैं और यह भूल जाते हैं कि इन अवगुणोंके रहते हुए भी जगतने हमारा त्याग नहीं किया और ध्यान रखा। इतनी सीख काफी है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८१०)से। सी० डब्ल्यू० १२२२ से भी; सौजन्य : सुशीला गांधी।

१. जमनालाल बजाजकी पुत्री।

२९६. पत्र : लीलावती आसरको

३ जुलाई, १९३३

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिल गया है। यह अच्छा संकल्प है। अब श्रद्धापूर्वक इसपर दृढ़ रहना। अपनी शक्तिसे ज्यादा कुछ न करना। शरीर जो काम न कर सके उसे करनेका हठ न करना। मनमें नम्रता होगी तो सब-कुछ ठीक ही होगा। मुझे पत्र लिखती रहना। ईश्वर तुझे शान्ति देगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३२६) से। सी० डब्ल्यू० ६६०१ से भी।

२९७. पत्र : नारणदास गांधीको

३ जुलाई, १९३३

चि० नारणदास,

ज्ञान वर्धा नहीं गई ऐसा मान ले रहा हूँ। पुरुषोत्तमको तार भेजा है। उसका कोई उत्तर नहीं आया। मैंने पत्र नहीं लिखा। तार मिल ही गया होगा, ऐसा मान लिया है। यदि तुम्हें उससे कुछ खबर न मिली हो तो उसे फौरन पत्र लिख देना जिससे समय बचे। वह जितनी जल्दी आये उतना अच्छा। मुझे फिर कब गिरफ्तार कर लिया जायेगा, कहा नहीं जा सकता।

केशु अभी यहीं है। मेरे साथ चर्चा करता रहा है। शान्त है। पिंजाईके बारेमें क्या फैसला करना है, यह पूछनेपर लगा कि वह इसे समझा ही नही है और मैं तो निश्चय ही नही समझा हूँ।

महालक्ष्मीको भेजनेके बारेमें तार भेजा है। उसे रवाना न किया हो तो कर देना। भगवानजी के बारेमें भी मैंने यही राय दी है कि वह चाहे तो यहाँ चला आये।[1] यहाँ आयेगा तो उसे शान्त कर पाऊँगा।

ब्रजकृष्ण डॉ० मेहताके अस्पतालमें इलाज करा रहा है। वह अच्छा हो रहा है। रोज दससे बारह रतल दूध पीता है। कृष्णन नायर भी अभी यहीं है। वहाँ जानेका सुझाव दूँगा।

१. देखिए पृ० २४६।

यदि बहनोंने अलग रसोई शुरू की है तो कोई बुराई नहीं। मुझे उसमें भलाई ही दिखाई देती है। उसका एकमात्र कारण भात नहीं है, भात भी एक कारण हो सकता है। भातके बिना उनकी गुजर नहीं और कभी-कभी दूसरी चीजें भी चाहिए। दूसरे उनसे द्वेष न करें। दूसरे जो करते हों उसकी बुराई न करें। हम जो-कुछ करते है अपने हितके लिए करते हैं — यही समझें, तभी काम चलता है। दूसरोंकी देखादेखी किसीको भी कुछ करनेकी जरूरत नहीं। ऐसा करनेमें कोई भलाई भी नहीं है। इसलिए सार्वजनिक रसोईमे दूध-घीके सिवा जो-कुछ बने वह जेलकी खुराक-जैसा हो, यही ठीक लगता है। हमारी परीक्षाका समय अभी आ रहा है। कब आ जायेगा, यह नही जानता। किन्तु आयेगा और आना ही चाहिए, इस सम्बन्धमें मुझे कोई शंका नहीं। जिसने उसके लिए अपने शरीर और मनको तैयार किया होगा वह जीतेगा। जिसने नहीं किया होगा वह गिरेगा। संसारमें सदा ऐसा ही होता आया है। जो बहने अलग रसोई करती हैं उनकी कोई आलोचना न करे। किसीको ऐसा करनेका अधिकार नहीं है। आलोचना करनेका कोई कारण ही नहीं है। कौन अपने सामर्थ्यसे बाहर कुछ कर सकता है? किसीके भोजनके सम्बन्धमें आलोचना करना बहुत बुरा है। इसमें जो जितने संयमका पालन कर सके उतना कम समझे। लेकिन किसीको दूसरे व्यक्तिके संयमको तौलनेका कोई अधिकार नहीं है। तौलनेका कोई साधन भी नहीं है। मिर्च-मसाला छोड़नेके अपने त्यागको मै बहुत बड़ा नहीं मानता, किन्तु यदि हरिलाल शराब छोड़ सके तो मैं अपने मनसे उसके संयमको बहुत महान मानूँगा। इसी तरह कई लोगोंके लिए मसालेका त्याग उतना ही बड़ा हो सकता है। रेवाशंकरभाई[1]को बीड़ी छोड़नेमे कितनी परेशानी हुई थी। अहिंसाके सारे प्रयोग ऐसी ही चीजोंमे तो करने पड़ते हैं। सबको पूरी बात धीरजसे समझाना।

कुसुमके सम्बन्धमे मेरा असन्तोष दूर नहीं हुआ। क्या कभी वैद्य द्वारा इलाज करानेकी नौबत न आयेगी? किन्तु जबतक वह सन्तुष्ट है तबतक मुझे विचार करनेकी जरूरत नही है।

धीरू और बलभद्र[2]के फेफड़ोंकी जाँच हो चुकी होगी। मुझे तो उसमें बिलकुल विश्वास नहीं है। एक्सरे लेनेके बाद विशेषज्ञ ही उसे देख सकता है। तुम्हें या मुझे तो उससे कुछ भी समझमें नही आयेगा। इन सबको मैं बड़ोंका मनबहलाव मानता हूँ। वे गरीबोंके लिए तो कतई नहीं हैं। किन्तु जबतक लोग हमें पैसा देते है और जबतक हमारा इन बातोंपर विश्वास है, तबतक यह करते रहें।

मुझे लगता है कि अब मैंने तुम्हारे सभी प्रश्नोंका उत्तर दे दिया है।

मेरी तबीयतका अन्दाज तो तुम्हें मेरे पत्रसे ही मिल जायेगा।

पुरुषोत्तम आ गया है। जमनालालके पत्रसे मालूम होता है कि ज्ञान वर्धा पहुँच गई थी। तुम्हारे पढ़नेके लिए जमनालालका पत्र साथ भेज रहा हूँ।

१. रेवाशंकर जगजीवन झवेरी, डॉ० प्राणजीवन मेहताके भाई और श्री राजचन्द्रके श्वसुर।

२. रावजीभाई नाथाभाई पटेलके छोटे भाई, आश्रमके एक विद्यार्थी।

[पुनश्च :]

नारणदास,

पत्र समाप्त होनेके बाद कन्हैयालाल और मगनलालके पत्र मिले। वे इसके साथ हैं। मुझे तो इस सम्बन्धमें कोई खबर नहीं थी। तुम्हें कुछ मालूम है? जीवराम[1]का कोई पत्र आया है? उसका क्या हाल है? मैंने तो उन्हें लिखा है कि जीवरामका पत्र मिलनेपर ही सलाह दे सकूँगा। सम्भव है, वे दोनों भद्रकसे चल चुके हों। मुझे ये पत्र आज ही मिले हैं। २० जूनके हैं। उत्तर मासके अन्ततक माँगा था।

परचुरे शास्त्रीके लडकेके बारेमें वाई[2] पत्र लिखा है। जवाब आनेपर तुम्हें लिखूँगा।

हरखाजी का पत्र है। तुमने शायद देखा होगा। वह चाहता है कि किसी दूसरे स्थानपर रहनेकी व्यवस्था कर दी जाये। क्या तुम्हारे ध्यानमें कोई ऐसा स्थान है।

पत्र : अमला, उसकी माँ, गजराकी माँ, वालजी, रामजी, कुसुम, हरखाजी, लीलावतीको और कन्हैयालाल, मगनलालके।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८३८९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२९८. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पर्णकुटी, पूना,
४ जुलाई, १९३३

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे पत्र लिखना बन्द करनेकी तो कोई बात ही नहीं है। फिर भी मैं व्यस्त रहूँ अथवा न रहूँ, यह हमेशा चाहूँगा कि तुम समझदारीकी बातें लिखो, नासमझीकी नहीं। तुम लगभग हमेशा नासमझीकी बातें लिखती हो। अगर तुम समझदारीके साथ लिखो और तुम्हें काफी-कुछ लिखना पड़े तो मैं, पत्र चाहे जितना लम्बा क्यों न हो, परवाह नहीं करूँगा। लेकिन मूर्खतापूर्ण पत्र केवल एक वाक्य अथवा एक शब्दका भी हो, तो वह जरूरतसे ज्यादा लम्बा माना जायेगा।

१. कच्छके जीवराम कोठारी, जो एक लाखकी अपनी सारी सम्पत्ति गांधीजी को दान करके गरीबोंकी सेवा करनेके लिए उड़ीसा चले गये थे।

२. गाँवका नाम।

क्या तुम जानती हो कि जिस पत्रका जवाब लिख रहा हूँ, उसमे तुमने कितनी ही व्यर्थकी बाते लिख मारी हैं। इसी वजहसे मैंने तुम्हें ३५ वरसकी 'बच्ची' कहा है।[१]

अपने भविष्यके बारेमे तुम्हारे सवाल बहुत ज्यादा विचित्र हैं। मेरे विचारमें तुमने अभीतक कुछ सीखा ही नहीं है। तुमने काफी-कुछ सीख लिया है, यह प्रमाण-पत्र तो अन्ततः सिखानेवाले ही देंगे न? तुम खुद ही अपनेको प्रमाणपत्र नहीं दे लोगी। जब तुम अच्छी तरह सीख जाओगी तो तुम देखोगी कि तुम्हारा काम तो तय कर दिया गया है। निश्चय ही तुम हरिजन-सेवाके लिए प्रशिक्षित की जा रही हो। उस सेवाका क्या स्वरूप होगा, यह कहना अभी कठिन है। लेकिन उसे कर सकनेसे पहले तुम्हें हिन्दी ठीक आ जानी चाहिए और कपासको कपड़ेकी शक्लमे बदलने तककी सारी प्रक्रियाओंका तुम्हें अच्छी तरह ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। मैंने केवल दो चीजोका जिक्र किया है; ऐसी बहुत-सी अन्य चीजे भी हैं जिनका ज्ञान प्रभावशाली ढंगसे हरिजन-सेवा कर सकनेके लिए जरूरी है।

आशा है कि जजीर और तुम्हारी माताजी के नाम मेरे पत्र-सहित तुम्हें मेरा कलका पत्र[२] मिल गया होगा।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। एस० एन० १९११५ भी।

२९९. पत्र : नी० को

४ जुलाई, १९३३

आशा है कि सि० का बुखार मियादी नहीं होगा। उसे मियादी बुखार हो जानेका कोई कारण नहीं है। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि तुमने उसे खानेको जो दिया, वह नहीं दिया जाना चाहिए था। मुझे भरोसा नहीं होता कि लक्ष्मीदास ऐसा चाहता था कि सि० वह सब खाये जो तुमने बताया है। वैसे तो हर बुखारके मियादी बन जानेकी सम्भावना मानकर उपचार करना सदा अच्छा होता है। दूसरे शब्दोंमें सभी तरहके बुखारका मुख्य इलाज एक ही है, यानी फलोंके रस और उबले पानीके सिवाय कुछ न दिया जाये और जब बुखार हट जाये तो

१. देखिए पृ० २००।

२. देखिए पृ० २४७। यह पत्र ३ जुलाईको "पत्र : नारणदास गांधीको" के साथ भेजा गया था; देखिए पृ० २५५।

पानी मिलाया हुआ पतला दूध उबालकर दिया जाये। यदि तुम्हारा दिमाग बिलकुल साफ और शान्त है, तो मैं नहीं चाहता कि सि० को कहीं और ले जाओ। आश्रममें उसकी ठीक परिचर्या हो जाये तो वह बिलकुल ठीक हो जायेगा। मियादी बुखारके मरीजके लिए अच्छी परिचर्या और फलोंके रसके अलावा किसी अन्य चीजकी जरूरत नहीं होती। फलोंके रसमें मुख्य रूपसे सन्तरेका रस और कुछ परिस्थितियोंमें पतला दूध दिया जाना चाहिए। डॉक्टरी मददके बारेमें जिद्द मत करो। आश्रममें जो डॉक्टर आते हैं, वे बहुत समझदार हैं। वे जानते हैं कि आश्रमके लोग बहुत ज्यादा दवाएँ लेनेके प्रति रुचि नहीं रखते। यदि सम्भव हो तो व्यक्तिगत मोह छोड़कर सि० को आश्रमके एक ऐसे बच्चेके रूपमें देखो जिसकी परिचर्यामें तुम्हें लगाया गया है। लेकिन मैं जानता हूँ कि यह एक ऐसी मन स्थिति है जो थोपी नहीं जा सकती। यदि तुम ऐसी मन:स्थिति नहीं बना सकतीं तो साफ तौरपर ऐसा कहनेमें सकोच मत करना। आश्रममें हर व्यक्ति ऐसा अनासक्त नहीं है। बल्कि ऐसी अनासक्ति शायद किसीमें भी नहीं है। लेकिन मैं तुमसे बहुत-कुछ आशा करता हूँ। तुम्हारे सामने उच्चतम आदर्शसे कम कोई चीज नहीं है। मैं चाहता हूँ कि तुम उस उच्चतम आदर्शको हासिल करो। हो सकता है कि सि० की बीमारी तुम्हारी अनेकों अग्निपरीक्षाओंमें से एक हो। ईश्वर तुम्हारा पथ-प्रदर्शन करे, शक्ति दे और रक्षा करे।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० १९११६) से।

३००. बातचीत: एक मित्रके साथ[1]

४ जुलाई, १९३३

यदि यह कथन सच है कि जीवनके बीच हम मृत्युमें रह रहे हैं, तो क्या इससे उल्टी बात भी सच नहीं है कि मृत्युके बीच हम जीवनमें रह रहे हैं? उस दिन एक मित्रके साथ गांधीजी की भेंटके दौरान कम-से-कम मुझे तो यही अनुभूति हुई।

एक मित्रने अपने घर लौटनेसे पहले गांधीजी से दो-चार मिनट बात करनेकी इच्छा प्रकट की। कई दिनोंतक यहाँ रहनेके बाद ही उसने यह इच्छा मुझे बताई थी। पर गांधीजी के सामने जाते ही उसका धैर्य छूट गया। कुछ देर वह अवाक् ही रहा।

गांधीजी: बोलो, बात शुरू करो। महादेवने मुझसे कहा है कि तुमने कई साल पहले जो प्रतिज्ञा की थी, उसके बारेमें मुझसे तुम कुछ बात करना चाहते हो। मैं तो उस प्रतिज्ञाको भूल ही गया हूँ। पर खैर, बात शुरू करो।

१. यह महादेव देसाई द्वारा लिखित "स्पार्क्स फ्रॉम दि सेक्रेड फायर-९" से लिया गया है।

यह सुनकर उसकी कुछ हिम्मत बँधी और टूटे-फूटे शब्दोंमें वह बोला: पाँच साल पहले मैंने एक प्रतिज्ञा लिखी थी, और —

गां० : और उसका तुम पालन नहीं कर सके?

नहीं, इससे उल्टी बात है, मैंने बीचमें कहा।

गां० : (हिम्मत बंधाते हुए) तो फिर ये आनन्दाश्रु हैं?

पर वह तो अवाक् ही रहा और उसके गालोंपर आँसू बहने लगे। गांधीजी ने कहा:

महादेवने जो कहा है, वह शायद सब ठीक नहीं है। तो मैंने जो किया था, वह करो। मैंने अपने पिताके आगे जब पहले-पहल अपना पाप स्वीकार किया था,[1] तो मेरी भी जबान नही खुली थी। इसलिए मैंने अपना अपराध लिखकर उन्हें दे दिया था। तुम्हे भी जो कहना हो, मुझे लिखकर दे दो।

पर वह मित्र तो अब भी नहीं बोला। उसने मेरी तरफ इशारा किया कि मुझे अब जाने ही दो। पर थोड़े और आँसू बहाकर उसमें बोलनेकी हिम्मत आ गई।

मित्र : बापू! पाँच सालसे कुछ अधिक पहले मैंने अपनी एक प्रतिज्ञा लिखी थी और आपने उसका एक शब्द ठीक किया था।

गां० : हाँ, पर मैं तो वह सब भूल गया हूँ।

गांधीजी को वह पुरानी बात याद करानेके बाद उस युवकने कहा:

बापू, मेरी आत्माके अन्दर एक घोर संग्राम चलता रहा है। किन्तु भगवानकी दयासे मैं उस प्रतिज्ञाके अक्षरोंका और बहुत-कुछ अंशोंमें उसके मर्मका भी पालन कर सका हूँ।

गां० : यह बड़ी अच्छी बात है। तुम्हारे आँसुओंको मैं अब समझा। ईश्वर जिसकी प्रतिज्ञा पूरी करा देता है, उसका हृदय कृतज्ञतासे उमड़ पड़ता है।

मित्र : पर सवाल अब यह है।

गां० : क्यो? तुम्हारी माँ अधीर हो रही होगी। माताएँ तो सभीकी अधीर रहा करती है।

मित्र : जी हाँ। आपने जिस प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर करके अपनी मोहर लगा दी थी वह उसीके पास है। वह सिर्फ यही पूछा करती है कि प्रतिज्ञाकी अवधि कब पूरी होगी। लेकिन माता-पिता मुझे तनिक भी तंग नहीं कर रहे है। हैरानी तो मेरी खुद अपनी ही है। एक बार मैं संकल्प कर लूँ, तो फिर कोई मुश्किल नहीं। मगर बापू, अन्तरात्माके इस निरन्तर संग्रामसे क्या कोई लाभ है?

गां० : अवश्य है। संग्राम क्या प्राकृतिक जगतका एक नियम नही है? यदि है, तो आध्यात्मिक जगतका तो यह और भी बड़ा नियम है। प्राकृतिक जगतमें

१. देखिए खण्ड ३९, पृ० २२।

आध्यात्मिक नियम है और आध्यात्मिक जगतमें प्राकृतिक नियम है। जीवन एक सतत संघर्ष है। हमारे अन्दर हमेशा ही तूफान उठता रहता है। प्रलोभनके विरुद्ध संघर्ष करते रहना हमारा सतत कर्त्तव्य है। 'गीता' मे तीन स्थानोंपर यह बात कही गई है। इसका उल्लेख तो तीनसे भी अधिक स्थानोंपर आया है, पर मुझे तीन ही का स्मरण है। कहावत है, संकल्प-भर हो तो मार्ग तो निकल ही आता है। बाइबिलमें कहा गया है, "माँगो, तो तुम्हें दे दिया जायेगा", "ढूँढ़ो, तो तुम्हें मिल जायेगा", "खटखटाओ, तो द्वार खुल जायेगा।"

मि० : बापू, मुझे आशीर्वाद दो।

गां० : तुम जो चाहते हो वह लिख दो। अगर वह ठीक होगा, तो उसपर मैं हस्ताक्षर कर दूँगा।

उस मित्रने अपनी डायरी निकाली और चौथी जुलाईके पृष्ठपर लिखा : "तुमने जो-कुछ कहा है, उसका मर्म याद रखना। तुम्हारी साधना सफल हो, यही मेरा आशीर्वाद है।" और यह लिखकर उसने उसपर "बापू" — यह अमूल्य स्वीकृति प्राप्त करनेके लिए डायरी मेरे हाथमें दे दी।

बापूने उन शब्दोंको एक बार पढ़ा, दो बार पढ़ा और फिर कहा :

एक शब्द मैं यहाँ जोड़ दूँ?

यह कहकर गांधीजी ने अपने हाथसे 'साधना' के पहले 'अनिवार्य' शब्द लिख दिया और फिर नीचे काँपते हुए हाथसे 'बापू' यह हस्ताक्षर कर दिये। उन्होंने कहा :

हाथ न काँपता तो कितना अच्छा होता। पर कोई हर्ज नहीं। 'अनिवार्य' शब्द यहाँ बहुत जरूरी है। इस सिलसिलेमे 'गीता' के छठे अध्यायका अन्तिम भाग पढ़ लेना।

वह भाई कृतज्ञतापूर्वक प्रणाम करके चुपचाप चल दिया। उसके वे आँसू संक्रामक थे। उन आँसुओंने मुझे भी रुला दिया, क्योंकि दो दिन पहले ही गांधीजी ने कहा था :

अपने चारों ओर मैं ज्यों-ज्यों अन्धकार घिरता देखता हूँ, मेरी आस्था त्यों-त्यों बढ़ती ही जाती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-७-१९३३

३०१. पत्र : नी० को

५ जुलाई, १९३३

नी०,

तुम्हारा लम्बा पत्र मिला। मुझे बात जँची नहीं। तुम फिर भावनाओंके वशमें पड़ गई हो। सुनहरे ढक्कनने सत्यको छिपा रखा है। यदि तुम सि०को ही अपना बच्चा मानना छोड़ती हो तो संसारके सभी बच्चोंको तुम्हें अपना मानना होगा। अभी तुम्हारी दुनिया आश्रम है। बहुधा गरीब लोग पहाड़ोंसे मैदानमे आते हैं और तब उनके बच्चे मैदानोंमें जो परिस्थिति होती है उसके अनुसार रहते हैं। यह सोचना बिलकुल गलत है कि छोटे बच्चे नयी जलवायुमें पहुँचकर वहाँके परिवर्तनोंको बर्दाश्त नहीं कर सकते। मैं इस सम्भावनासे इनकार नहीं करता कि यदि सि०को किसी पहाड़ी स्थानपर ले जायें तो वह जल्दी ठीक हो जाये। लेकिन तुम्हारी तपस्या तो इसीमे है कि तुम जहाँ हो, वहीं बनी रहो और उसका जीवन जोखिममें रहने दो। विश्वासका ऐसा ही मूल्य चुकाना होता है। वह विश्वास कोई विश्वास ही नहीं है जो जोखिमके प्रति पूरी सुरक्षा चाहे। यदि तुम सि० के बारेमे चिन्ता करना छोड़ दो और उसकी परिचर्या-भर करो, तो वह बिलकुल ठीक हो जायेगा।

यदि मेरी दलील या मेरी राय तुम्हें अच्छी न लगे तो निस्संकोच होकर लिखना। मैं नहीं चाहता कि तुम अपने-आपको विवश अथवा किसी तरहके दबावमें महसूस करो। मैं तो चाहता हूँ कि तुम अपने-आपको इतना आजाद महसूस करो जितनी कि कभी नही थी। तुमको मुझसे और आश्रमसे बाँधने वाली चीज है प्रेम और समान आदर्श। मै तभीतक तुम्हारा मार्गदर्शन कर रहा हूँ जबतक कि तुम्हें मेरे निर्णयमें विश्वास है? मैंने एक नहीं अनेक बार अपने बहुत ही ज्यादा प्यारे लोगोंकी जिन्दगीसे काफी खिलवाड़ किया है। यदि तुमको मेरी इस बातमें सचाई लगे, तो तुम्हें भी ऐसा करना चाहिए। तुम्हें साहससे काम लेना चाहिए, लाचारीसे कभी नहीं। इसलिए तुमको कैसा लग रहा है, तुम्हारा क्या खयाल है, यह लिखनेमें संकोच मत करना। वैसे, मैं आशा करता हूँ कि सि०को अब ज्वर नहीं होगा और वह तात्कालिक खतरेसे बाहर हो चुका होगा। इन दोनों बातोंके ख्यालसे गीले कपड़ेकी पट्टियाँ रखना जरूरी है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११७) से।

३०२. तार : भूलाभाई जे० देसाईको

६ जुलाई, १९३३

भूलाभाई देसाई
सिविल अस्पताल, नासिक

अभी-अभी पता चला कि आप बहुत बीमार हो जाने के कारण रिहा कर दिये गये हैं। कृपया सही हालत तारसे सूचित करें। जल्दी से पुनः स्वास्थ्य लाभ की आशा करता हूँ।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०९) से।

३०३. तार : नी० को

६ जुलाई, १९३३

नी०
सत्याग्रह आश्रम, साबरमती

तुम्हारा पत्र मिला। आशा है कि सि० बेहतर होगा। मेरी पक्की राय है कि तुम्हें अल्मोड़ा नहीं जाना चाहिए। स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०८) से।

३०४. तार : उर्मिला देवीको

६ जुलाई, १९३३

उर्मिला देवी
२४, रमेश मित्तर रोड, भवानीपुर, कलकत्ता

पत्र मिला। ठीक हूँ। यदि आना जरूरी हो तो आप आ सकती हैं। खुद मैं आपके आनेको पैसा, समय, शक्तिका अपव्यय मानता हूँ। रजिस्टर्ड पत्र द्वारा अपने विचार लिख भेजो।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५१०) से।

३०५. तार : भूलाभाई जे० देसाईको

६ जूलाई, १९३३

भूलाभाई देसाई
बम्बई

सुबह सवेरे नासिक तार दे दिया। यदि आप काफी ठीक हों तो जरूर आयें। हालत तार से सूचित करें।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५११) से।

३०६. पत्र : मीराबहनको

६ जुलाई, १९३३

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला।

मेरी प्रगति बराबर हो रही है। अब मैं ९८ पौंडसे ऊपर हूँ। खुराक वही पहले-जैसी है। दिनमें तीन बार कुल मिलाकर १ घंटे २० मिनट घूम सकता हूँ। यह कम नहीं है। इससे मुझे थकान नहीं होती। आशा है, अच्छी सेहतकी स्पर्धामें तुम मुझे हरा दोगी। बेशक, वहाँकी गर्मी तुम्हारे विरुद्ध है। लेकिन अब तो वर्षा हो ही जायेगी। किसी भी हालतमें, जब गर्मी बहुत सताये, तब अगर गीली चादर लपेट लोगी तो तुरन्त ठण्डक मिल जायेगी। चादर कैसे लपेटनी है, यह तो तुम्हें आता ही है। अपने बिछौनेकी चादर ले लो। उसे ठण्डे पानीमें डुबो लो। इतनी अच्छी तरह निचोड़ लो कि पानी न रह जाये। उसे एक कम्बलपर बिछा दो। चादरपर नंगी लेट जाओ और उसे अपने चारो और लपेट लो। पैरोंसे गर्दनतक कम्बल ओढ़ लो। पाँच मिनट या आराम मालूम हो तो अधिक उसीमें रहो। ठिठुरन महसूस नहीं होनी चाहिए। ऐसा हो तो तुरन्त बाहर निकल आना चाहिए। इससे बड़ी ताजगी और ठण्डक मिलती है। जरूरत हो तो अकसर इस तरह चादर लपेट सकती हो। खुद इसकी परीक्षा करके देख लो।

टिप्पणियाँ लिखना, जैसाकि मैंने सुझाया है,[1] उतना कठिन नहीं जितना तुम्हें लगता है। जब आदत हो जाती है तो वह बहुत आसान और दिलचस्प काम हो जाता है। जैसे-जैसे आगे पढ़ती जाओ सन्दर्भ लिखना न भूलो ताकि अपनी सांकेतिका और टिप्पणियोंके सहारे तुम तुरन्त किसी विशेष नामको खोज सको। ये टिप्पणियाँ साधारण उपयोगके लिए बड़ी जरूरी साबित हो सकती है, बशर्ते कि वे संक्षिप्त हों और संगत हों।

तुम्हारा बन्दरोंका वर्णन बड़ा दिलचस्प है। क्या वे अभीतक तुम्हारा भोजन छीनकर नहीं ले गये? हाँ, यह तो तुम जानती ही हो कि जब वे क्रोधमें आते है, तब सख्त चोट पहुँचा सकते हैं।

पुरुषोत्तम यहाँ है और मेहताकी देखरेखमें, जो पूरी लगनसे मेरी सेवा-परिचर्या कर रहा है, प्राकृतिक चिकित्सा सीख रहा है। महादेव बुखारमें पड़ा है। वह एक-दो दिनमें बिलकुल ठीक हो जायेगा।

गंगाबहन झवेरी और नानीबहन झवेरी गंगाबहनके स्वास्थ्य-लाभके लिए यहाँ हैं। बड़ी गंगाबहन आश्रममें है। वह दो दिन पहले वहाँ पहुँची है।

१. देखिए पृ० २३७।

लक्ष्मी देवदासके साथ बहुत ज्यादा खुश दिखलाई देती है। केशु अब भी यहाँ है, और कुछ दिनों रहेगा। फिर वह वर्धा जायेगा और जमनालालजी के रुई ओटने के कारखानेमे काम करेगा। प्रभावती विशेष प्यार भेजनेका आग्रह कर रही है।

हम सबकी ओरसे स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८३) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७४९ से भी।

३०७. पत्र : विनोबा भावेको

७ जुलाई, १९३३

चि० विनोबा,

मैंने तुमपर बहुत बड़ी जिम्मेदारी डाल दी है। लेकिन जो भी जिम्मेदारी आ पड़े उसे उठा लेनेकी शक्ति तुममें है या 'गीता' की भाषामें कहें तो तुम सारा बोझ ईश्वरपर छोड़ पाते हो। आश्रममे जितने लोगोंको भेजा है, उन सबकी ठीक व्यवस्था हो गई होगी। लेकिन अभी तो मैं तुम्हें पश्चिमके चार भाई-बहनोंके बारेमें विशेष रूपसे लिखना चाहता हूँ। चारोंको हरिजन-सेवाके लिए तैयार करना है। जबतक इन लोगोंका हमसे सम्बन्ध है तबतक वे राजनीतिसे अलिप्त रहें। चारोंके साथ काफी मिलते रहना और किसी अंग्रेजी जाननेवाले व्यक्तिको उनकी सहायताके लिए रख देना। मेरीबहन और डंकन भाई दोनों सरल हैं और तुम्हें उनसे कोई परेशानी नहीं होगी। नी० और अमलाबहन (अर्थात् डॉक्टर स्पीगल)के विषयमें यह नहीं कहा जा सकता। नी०का स्वास्थ्य ठीक रहा तो सम्भव है कि वह काफी काम कर पायेगी। अमलाबहनके विषयमे कुछ नहीं कहा जा सकता। उसमें आग्रह है, पर योग्यता कम है। विचार उत्तम होते हुए भी उनपर अमल करनेमें बहुत सुस्त है। अनेक प्रकारकी योजनाएँ बनाया करती है। चारोंको दूधकी आवश्यकता होगी। इन लोगोंको तेल माफिक नहीं आयेगा, ऐसा मेरा विचार है। चारोंकी जरूरतें मालूम कर लेना। उन चारोंसे और दूसरोंसे भी कहना कि फिलहाल मैं उन्हें पत्र लिखनेमें असमर्थ हूँ। भविष्यकी रामजी जाने। . . .[1] को सोचकर एक पत्र लिखना या लिखवाना। तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी? मनु बीमार नहीं पड़ी होगी?

बालकृष्ण और छोटेलालके स्वास्थ्यकी खबर अच्छी नहीं थी। रामदास वहाँ जम गया होगा और वहाँकी जलवायु उसे, नीमू और बच्चोंको माफिक आ गई होगी। विद्या हिंगोरानी वहाँ आई है। वह शरीर और मनसे नाजुक है पर वह

१. साधन-सूत्रमें नाम अस्पष्ट है।

अत्यन्त पवित्र महिला है। उसमें भक्तिकी मात्रा बहुत ज्यादा है। उसकी तरफ लक्ष्मीबहन ध्यान देती होंगी, इसलिए ज्यादा नहीं लिखता। वत्सलाका डर दूर हो गया होगा। मदालसा प्रगति कर रही होगी। हरिजनोंसे तुम्हारा सम्पर्क दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा होगा। उपवासकी कड़ीकी बात मुझे भूली नहीं है। वह मेरे मनमें रहती है। ऐसा लगता रहता है कि इसके बिना हमारा प्रायश्चित्त पूरा नहीं हो सकता। मेरा यह अभिप्राय नहीं कि वह इससे ही पूरा हो जायेगा। किन्तु यदि योग्य स्त्री-पुरुष उपवासकी शृंखलामें भाग लें तो अस्पृश्यता-निवारणका काम बहुत आगे बढ़ेगा, ऐसा मेरा विचार जरूर है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०८५) से।

३०८. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

७ जुलाई, १९३३

चि० हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला। उमेद है अब अच्छी हो गई होगी। तुमारी परीक्षा ईश्वर चारों ओरसे कर रहा है। तुमारे चित्तमें शांति है यही बड़ी बात है। मैं तुमको क्या आश्वासन दूं? मुझे लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०२) से।

३०९. पत्र : अमतुस्सलामको

७ जुलाई, १९३३

प्यारी बेटी अमतुल सलाम,

तुम्हारा खत बहुत दिनोंके बाद मिला। मुझे बहुत खुशी हुई। 'प्यारी' लफ्ज अगर मेरे कोई खतमें छूट गया, तो उसके माने ऐसे कभी नहीं हो सकते कि तुम प्यारी मिट गई।

यह सुनकर कि तुमको अब अच्छा है, मैं बहुत खुश हुआ। तुम्हारा और खत मुझे नहीं मिला है। मेरे सब हाल तो तुम सबको मिलते रहते हैं।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २८७) से।

३१०. अनशनके बारेमें[1]

अनशन पूरा होनेके बादसे ही मुझे यह लग रहा था कि अपने अनशनके बाद सार्वजनिक रूपमें यदि कुछ भी लिखूँ, तो वह हरिजनोंके बारेमें, 'हरिजन' पत्रमें और अनशनके सम्बन्धमें ही हो। ईश्वर-कृपासे यह इच्छा पूरी हुई है और मैं इसी कृपाके कारण पहलेकी तरह भविष्यमें कुछ-न-कुछ 'हरिजनबन्धु' में देते रहनेकी आशा रखता हूँ। पर इसका यह अर्थ नहीं है कि प्राप्त कामको निपटानेकी मुझमें पहले-जैसी शक्ति आ गई है। अभीतक मुझे बड़ी सावधानीसे रहना पड़ता है और यह भी आवश्यक होता है कि मैं बिस्तरपर लेटा रहूँ। इसलिए खास तौरपर पत्र लिखनेवालोंसे मैं धीरज रखनेकी प्रार्थना करता हूँ। शायद मुझे अच्छा होनेमें अभी एक महीना और लगेगा। कौन जानता है कि इस एक महीनेमे क्या होगा? हम क्षणजीवी हैं। दूसरे ही पलमें क्या होगा, इसका भी हमे पता नहीं होता। तो फिर मेरे-जैसे हरिजन-सेवकोंकी अभिलाषाओंके बारेमें तो कहा ही क्या जाये? 'हरिजनबन्धु' के जो पाठक उसे सेवाभावसे ही लेते और पढ़ते हैं, उन्हें मेरी सलाह यह है कि वे मेरे लेखों और रायोंकी प्रतीक्षा ही न करें। हरिजन-सेवकका मार्ग तो बिलकुल स्पष्ट है, क्षेत्र विशाल है। 'हरिजनबन्धु' हर हफ्ते चालू प्रवृत्तियोंकी कल्पना करानेका प्रयत्न करता है। वह यह भी बतानेका प्रयत्न करता है कि क्या करना चाहिए, क्या हो सकता है और वह कैसे किया जा सकता है। उसमें से सभीको कुछ-न-कुछ सेवाका सुयोग मिल जाना चाहिए। तो फिर मेरे लेख या मेरी रायकी क्या जरूरत रहती है? मुझे उसके लिए कुछ लिखनेकी इच्छा हो जाती है, तो वह सिर्फ आत्मसन्तोषके लिए ही है। जब मैं पाठकोंसे कुछ कहना चाहता हूँ, उन्हें कुछ समझाना चाहता हूँ, तभी लिखनेकी जरूरत होती है। किन्तु लिखनेकी जरूरत हो या न हो, या मुझमें लिखनेकी शक्ति न रहे या मुझे अवकाश न हो, तो भी मैं आशा रखता हूँ कि पाठक शिथिल नहीं होंगे और 'हरिजनबन्धु' के साथ अपने सम्बन्ध बनाये रखेंगे।

अब अनशनके बारेमें लिखता हूँ।

बहुतोंने यह प्रश्न किया है कि ईश्वरकी प्रेरणा क्या चीज थी? वह प्रेरणा मुझे किस तरह हुई? यह मैंने कैसे जाना कि वह ईश्वरकी ही प्रेरणा थी? क्या मैंने ईश्वरके दर्शन किये हैं? मुझे उसका साक्षात्कार हुआ है? लोग अभीतक इस तरहके प्रश्न पूछ रहे हैं।

मेरे लिए ईश्वर-प्रेरणा, अन्तरकी गूढ़ ध्वनि, अन्त:प्रेरणा और सत्यका सन्देश, वगैरह एक ही अर्थके सूचक शब्द हैं। मुझे किसी आकृतिके दर्शन नहीं हुए, ईश्वरका

१. इसी लेखका संक्षिप्त अनुवाद ९-७-१९३३ के **हरिजन** में भी छपा था।

साक्षात्कार नहीं हुआ है। मै यह नहीं मानता कि इस जन्ममें साक्षात्कार होना होगा तो भी वह किसी आकृतिका दर्शन करना होगा। ईश्वर निराकार है, इसलिए ईश्वरका दर्शन आकृतिके रूपमें नहीं हो सकता। जिसे ईश्वरका साक्षात्कार हो जाता है, वह सर्वथा निष्कलंक बन जाता है। वह पूर्णकाम हो जाता है। उसके विचारमें दोष, अपूर्णता या मैल नहीं होता। उसका कार्यमात्र सम्पूर्ण होता है, क्योंकि वह स्वयं कुछ करता ही नहीं। उसके भीतर रहनेवाले अन्तर्यामीको ही सब-कुछ करना है। वह तो उसीमें समाकर शून्यवत् हो गया है। ऐसा साक्षात्कार करोड़ोंमे किसी एकको ही होता होगा। हो जरूर सकता है, इस बारेमें मुझे बिलकुल शंका नहीं। मुझे यह साक्षात्कार करनेकी अभिलाषा है, किन्तु मुझे हुआ नही, और मै जानता हूँ कि मैं अभी इससे बहुत दूर हूँ। मुझे जो प्रेरणा हुई, वह दूसरी ही चीज थी; और ऐसी प्रेरणा समय-समयपर या किसी समय बहुतोंको होती है। ऐसी प्रेरणा होनेके लिए खास साधनाकी जरूरत तो होती ही है। मामूली-से-मामूली काम करनेकी शक्ति प्राप्त करनेके लिए भी अगर कुछ-न-कुछ प्रयत्न, कुछ-न-कुछ साधनाकी जरूरत रहती है, तो ईश्वरकी प्रेरणा प्राप्त करनेकी योग्यताके लिए प्रयत्न और साधनाकी जरूरत हो, इसमें क्या आश्चर्य? मुझे जो प्रेरणा हुई उसके विषयमे कहता हूँ: जिस रातको वह प्रेरणा हुई, उस रातको बड़ा हृदय-मंथन होता रहा। चित्त व्याकुल था। मार्ग नहीं सूझता था। जिम्मेदारीका बोझा मुझे कुचले डालता था। इतनेमें मैंने एकाएक आवाज सुनी। मैने देखा कि वह बहुत दूरसे आती हुई मालूम होनेपर भी बिलकुल नजदीककी थी। यह अनुभव असाधारण था। वह आवाज ऐसी ही थी जैसे कोई व्यक्ति हमसे कुछ कहता है, तब होता है। इच्छा न होनेपर भी उसे सुने बिना गति ही नहीं है, यह मै साफ देख सका। उस समय मैं स्वप्नावस्थामें नहीं था। मैं बिलकुल जागृत था। असलमें रातकी पहली नींद लेकर मैं उठा था। यह भी न समझ सका कि मै कैसे उठ गया। आवाज सुननेके बाद हृदयकी वेदना शान्त हो गई। मैने निश्चय कर लिया; अनशनका दिन और उसका समय निश्चित किया। मेरा भार एकदम हल्का हो गया और हृदय उल्लासमय हो गया। वह समय ११ से १२ बजेके बीचका था। थकनेके बजाय मै ताजा हो गया। इसलिए आकाशके नीचे बिस्तरपर जहाँ पड़ा था, वहाँसे उठकर कोठरीमे जाकर और लालटेन जलाकर मुझे जो लिखना था वह लिखने बैठा। वह लेख[1] पाठकोंने देख लिया होगा।

पूछा गया है, क्या मै यह सिद्ध कर सकता हूँ कि वह ईश्वरकी प्रेरणा थी और मेरे सन्तप्त मस्तिष्ककी तरंग नही थी। जो ऊपर दिये गये वर्णनको नही मान सकता, उसके लिए मेरे पास दूसरा सबूत नही है। पूछनेवाला जरूर कह सकता है कि मेरा वर्णन केवल आत्मवंचना है। ऐसा और लोगोंके बारेमें भी हुआ है। मैं यह तो हरगिज नहीं कह सकता कि मेरे विषयमें आत्मवंचनाकी सम्भावना थी ही नही। ऐसा कहूँ तो उसे साबित नही कर सकता। मगर इतना जरूर कहता हूँ कि सारी

१. देखिए पृ० ७४-६।

दुनिया मेरा कहना न माने और विरुद्ध राय दे, तो भी म अपने इस विश्वासपर कायम रहूँगा कि मैंने भीतरी आवाज सुनी और मुझे ईश्वरकी प्रेरणा हुई।

परन्तु कुछ लोग तो ईश्वरके अस्तित्वसे ही इनकार करते हैं। वे तो यही कहते हैं कि ईश्वर-जैसी कोई शक्ति ही नहीं; वह केवल मनुष्यकी कल्पनामें ही रहता है। जहाँ इस विचारका बोलबाला हो, वहाँ तो यह भी कहा जा सकता है कि किसी भी चीजका अस्तित्व नही है। क्योंकि ऐसे लोगोंको तो सभी कुछ कल्पनाके घोड़े-जैसा ही लगना चाहिए। ऐसे लोग भले ही मेरे कथनको कल्पनाका एक नया घोड़ा मानें, मगर उन्हें भी समझना चाहिए कि जबतक यह कल्पना मुझपर अधिकार जमाये हुए हैं, तबतक मैं उसीके अधीन रहकर काम कर सकता हूँ। सच्ची-से-सच्ची चीजें भी सापेक्ष या सन्दर्भके अनुपातमें ही सच्ची होती हैं। सम्पूर्ण और शुद्ध सत्य तो केवल ईश्वरके बारेमें ही हो सकता है। अपने लिए तो जो आवाज मैंने सुनी, वह मुझे अपने अस्तित्वसे भी ज्यादा सच मालूम हुई है। ऐसी आवाजे मैंने पहले भी सुनी हैं। उनके अनुसार चलकर मैंने कुछ खोया नहीं, बल्कि बहुत-कुछ पाया है। दूसरे लोगोंका भी, जिन्होंने ऐसी आवाजे सुननेका दावा किया, यही अनुभव है।

एक दूसरा सवाल भी जरा सोच लेने लायक है। जिस अनशनके दौरान कई होशियार डॉक्टरोंकी उपस्थिति और मदद रहती हो और वे अत्यन्त प्रेमपूर्वक उपवासीकी देखभाल कर रहे हों और उसे रास्ता बता रहे हों, जहाँ उपवासीको अनेक प्रकारसे आराम दिया जाता हो — और मेरे लिए यह सब-कुछ हुआ है — वह अनशन क्या ईश्वर-प्रेरित माना जा सकता है? इस तरहकी आलोचनामे कोई सार नहीं, यह तुरन्त नहीं कहा जा सकता। इसमें कोई शक नहीं कि मेरे लिए जो-जो सुविधाएँ कर दी गई थीं, वे न होतीं और किसी एकान्त स्थानमे किसीकी मददके बिना उपवास किया होता, तो जिस प्रेरणाका दावा मैंने किया है, वह ज्यादा चमक उठती।

इस तरह आलोचनाको एक हदतक मान लेनेपर भी मुझे कहना चाहिए कि प्रेमी मित्रोंकी उदारताका मैंने जो उपयोग किया है, उसके लिए न मुझे पछतावा है, न शर्म। मैं मृत्युके साथ लड़ रहा था। इसलिए मेरी प्रतिज्ञाके विरुद्ध न जाने-वाली जितनी मदद मिल गई, उस सबको मैंने ईश्वरकी भेजी हुई मदद मानकर नम्रतापूर्वक स्वीकार कर लिया।

कोई मुझसे पूछे कि अनशनके उचित होनेके बारेमें मुझे अब कोई शंका है या नहीं, तो मैं कह सकता हूँ कि मुझे जरा भी शंका नहीं। इतना ही नहीं, इस अनुभवके तो मेरे पास अत्यन्त ही मीठे संस्मरण हैं। यद्यपि शरीरकी व्यथा काफी थी, परन्तु उस समयकी अवर्णनीय आन्तरिक शान्तिसे उस व्यथाका पूरी तरह बदला मिल गया। शान्ति तो मुझे अपने सभी अनशनोंमें मिली है, किन्तु इस हालके अन-शनसे बहुत शान्ति मिली। शायद उसका कारण यह था कि इस बार मेरी दृष्टि अनशनके किसी भी परिणामपर नहीं थी। पहलेके अनशनोंमें मुझे ऐसे परिणामोंकी

आशा रहती थी जो थोड़े-बहुत साफ तौरपर दिखाई दे सकते थे। परन्तु इस उपवासके बारेमें ऐसी कोई बात थी ही नहीं। इतनी श्रद्धा जरूर थी कि इसके परिणाम-स्वरूप आत्मशुद्धि और दूसरे साथियोंकी शुद्धि थोड़ी-बहुत होगी ही। साथी इतना जरूर समझ लेंगे कि आन्तरिक शुद्धिके बिना सच्ची हरिजन-सेवा असम्भव है। लेकिन ऐसे परिणामका अन्दाज लगानेका हमारे पास कोई पैमाना नही होता। इसलिए परि-णामपर बाह्य दृष्टि रखनेके बजाय उन इक्कीस दिनोंमे मैं मुख्यतः अन्तर्मुख रहा, यह कहा जा सकता है।

इस अनशनके स्वरूपपर थोड़ा और विचार कर लेना जरूरी है। क्या वह केवल देह-दमन था? मेरा दृढ़ विश्वास है कि केवल देह-दमनके लिए किया गया उपवास डॉक्टरी दृष्टिसे शरीरको कुछ लाभ पहुँचाता है; इसके अलावा उसका कोई खास असर नही होता। यह मैं जानता हूँ कि मेरा उपवास देह-दमनके लिए बिलकुल नहीं था। उसकी कोई तैयारी भी नहीं थी। उपवास आरम्भ करनेसे पहले मैंने उसकी कल्पना भी नहीं की थी। इस अरसेमे मित्रोंको लिखे गये पत्र यह साफ बताते है कि उस समय यह अनशन मेरी दृष्टिमे था ही नही। मेरे लिए यह अनशन हृदयसे निकली ईश्वरके प्रति याचना या प्रार्थना थी। प्रार्थनाके विषयमें अपने क्रमिक अनुभवसे मेरे सामने यह स्पष्ट होता रहा है कि थोड़े-बहुत अनशनके बिना शुद्ध प्रार्थना असम्भव है। यहाँ अनशनका विस्तृत अर्थ करना जरूरी है। अन-शनका अर्थ है अपनी सब इन्द्रियोंको पोषण देनेकी क्रिया थोड़े-बहुत अंशमे बन्द कर देना। प्रार्थना हृदयगत वस्तु है। प्रार्थना करता हुआ मनुष्य न आँखोंसे दूसरा कुछ देखता है, न कानोंसे दूसरा कुछ सुनता है, न दूसरी इन्द्रियोंका व्यापार करता है, उसके विचार भी सिर्फ प्रार्थनामे ही लगे रहते है। तो फिर ऐसे समय खानेकी क्रिया मन्द हो जाये या बिल्कुल बन्द हो जाये तो इसमे क्या आश्चर्य? इस प्रकार जो मनुष्य प्रार्थनामे ही लगा हुआ होता है, उसे और कुछ भी काम नहीं सूझ सकता। ऐसा एक समय जरूर आ सकता है जब मनुष्य केवल प्रार्थनामय हो जाता है। इसीका अर्थ है साक्षात्कार। ऐसे समय तो वह खाता-पीता या कुछ भी काम करता हो, तो भी प्रार्थना ही करता है, क्योंकि उसकी प्रवृत्तिमात्र एक महायज्ञ है। वह स्वय शून्यवत् बनकर रहता है। इसे सन्तोंने 'सहज समाधि' कहा है। असख्य मनुष्य अनशनमय प्रार्थना करते हों, तो उनमें से थोड़े-बहुत ही 'सहज समाधि' प्राप्त कर सकते है। अतः मेरे-जैसे मामूली आदमीके लिए तो सर्वेन्द्रिय-दमनसे ही प्रार्थनाका आरम्भ हो सकता है। इस प्रकार अनशनका विचार करें तो यह आध्यात्मिक दृष्टिसे किया जानेवाला दुःख-तृप्त हृदयका नाद है। इसमें आत्माकी परमात्मामें लीन हो जानेकी तीक्ष्ण वृत्ति होती है। यह तो मैं नहीं जानता कि मेरा अनशन कहाँतक इस प्रकारका था। पर मैं यह जानता हूँ कि वह अनशन सिर्फ इसी दृष्टिसे हुआ था। ईश्वर-प्रेरणाकी मेरी भूख बहुत वर्षोंकी है। वह भूख अभीतक तृप्त नहीं हुई है। मै कह सकता हूँ कि मेरा सारा पुरुषार्थ इसलिए है कि मेरा छोटे-से-छोटा काम भी ईश्वर-प्रेरित ही हो।

परिणामकी अपेक्षा न होनेपर भी मैं इस अनशनके कुछ परिणाम देख सका हूँ। इस अनशनसे प्रेरित होकर कुछ साथियोंने अपनी शुद्धि की है। मेरा अनशन सिर्फ उन्हीं साथियोंके दोषोंसे सम्बन्ध नही रखता था जिन्हें मैं जानता था। वह हरिजन-सेवामें लगे सभी साथियोंकी और मेरी अपनी शुद्धिके लिए था। उपवासको पूरा हुए अभी थोड़ा ही समय हुआ है। इस बीच जो प्रमाण मेरे पास आये है, उनसे जाहिर होता है कि अनशनसे साथियोंमे शुद्धि हुई है और हो रही है। यह भी कहा जा सकता है कि इस अनशनसे यह बात काफी स्पष्ट हुई है कि हरिजन-सेवाका काम केवल धार्मिक प्रवृत्ति है, वह धार्मिक दृष्टिसे होना चाहिए और उसमे धार्मिक वृत्तिवाले शुद्ध हृदयके सेवक और सेविकाएँ होनी चाहिए।

अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ इतना ही नही है कि हरिजनोंकी आर्थिक और सामाजिक स्थितिमे सुधार हो जाये। इस कामका ध्येय इससे बहुत आगे बढ़ा हुआ है। अस्पृश्यता अनादि कालसे चली आ रही ईश्वर-निर्मित व्यवस्था है, ऐसा माननेवाले असख्य हिन्दुओंके हृदयोंको हिलाना है। यह तो स्पष्ट हो है कि इस ध्येयको हम प्राप्त कर ले, तो हरिजनोकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति अपने-आप सुधर जायेगी। उनकी हीन दशाका सबसे बड़ा कारण अस्पृश्यताका भूत है। परन्तु धर्मके नामपर होनेवाला यह अधर्म दूर करने और ऊँच-नीचकी भावनाको बिलकुल मिटा देनेका अर्थ होगा –– हिन्दुओंके हृदयका जबरदस्त परिवर्तन कर देना और हिन्दू-धर्मको धीरे-धीरे नष्ट करनेवाले जहरको निकाल डालना। ऐसा परिवर्तन मनुष्यमात्रमे रहनेवाली दयाकी भावनाको जागृत करनेसे ही हो सकता है। यह जागृति अनशनमय प्रार्थनासे सम्भव है, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है और ऐसी पूर्वजोंकी भी साक्षी है।

इसलिए दिन-दिन मेरा यह विश्वास पक्का होता जा रहा है कि प्रार्थनारूपी अनशनोंकी एक शृंखला बनानी चाहिए, जिसमे योग्य पुरुष और स्त्रियाँ अपना-अपना योग दे और उस शृंखलाकी कड़ियाँ बन जाये। वह शृंखला कैसे बने, कौन उसकी कड़ियाँ बने, यह सब मै अभी साफ तौरपर नहीं जानता, लेकिन उसके लिए खूब कोशिश कर रहा हूँ। अगर यह शृखला तैयार की जा सकती हो, तो मेरा दृढ़ विश्वास है कि उससे सुधारक, सनातनी और हरिजन तीनोंको लाभ होगा; संसार भी उस लाभसे वंचित नहीं रहेगा। हरिजन भाई-बहनोंके पत्र बताते हैं कि उनमें मेरे अनशनसे विशेष जागृति हुई है। हिन्दुस्तानके बाहरसे आनेवाले अनेक पत्र बताते हैं कि व्यक्तियोंके हृदयमे वहाँ भी जागृति हुई है। और अगर मेरे-जैसे एक आदमीके अपूर्ण अनशनसे इतनी जागृति हो सकती है, तो जब अनशनोंकी अविच्छिन्न शृंखला कायम होगी और उसमें अनेक निर्दोष भाई-बहन आडम्बरके बिना, डॉक्टरों वगैरहकी मददकी आशा के बिना और दूसरे किसी आश्वासनके बिना अपना बलिदान देंगे, तो उसका परिणाम कितना बड़ा होगा और उसका असर कहाँतक पहुँचेगा, इसका हिसाब कौन लगा सकता है?

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ९-७-१९३३

३११. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

८ जुलाई, १९३३

प्रिय "दादी मां",

वृद्धावस्थाके कारण तुम सीधे-सादे हिन्दीके अक्षर भी नही सीख पाती।

तुम्हारी खातिर मैने 'पेटीकोट' शब्दको ऑक्सफोर्ड शब्दकोशमें देखा और पाया कि मैंने उसका सही प्रयोग किया था।[1] भारतीय महिलाकी स्कर्ट उसकी साड़ीका वह हिस्सा है जो कमरसे नीचे रहता है और पेटीकोटको ढाँकता है।

'वेलास्ट' शब्दका ठीक प्रयोग किया गया था। शब्दकोश देखो। अभी मेरे पास इतना समय नही है कि मेरा जो अभिप्राय है उसके दृष्टान्त तुम्हें दूं। यदि तुम स्वयं उन्हें खोज लो तो अच्छा होगा।

जो गलेकी जंजीर तुम्हें भेजी है, वह इतनी मजबूत तो है ही कि कुछ महीने काम दे जायेगी। दूसरी आसानीसे बनाई जा सकती है। क्या तुम चाहती हो कि तुम्हे एक अतिरिक्त जंजीर भेजूं।

स्नेह।

बापू

अमलाबहन[2]

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

३१२. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

८ जुलाई, १९३३

प्रिय सतीशबाबू,

× × ×[3]

यदि बंगलामें प्रकाशित 'हरिजन' आत्मनिर्भर नही होता तो आप उसे बन्द कर देनेमे न झिझकें। जनता चाहती हो तभी उसका प्रकाशन जारी रखना चाहिए। आप उसका मूल्य घटाकर यथासम्भव कम-से-कम कर सकते हैं। लेकिन फिर

१. देखिए पृ० २४७।

२. देवनागरी लिपिमें गांधीजी के स्वाक्षरोंमें।

३. साधन-सूत्रके अनुसार।

भी काफी ग्राहक न मिलें, तो साफ हो जायेगा कि उसकी माँग नहीं है। हरिजन-सेवा ऐसे प्रचारपर निर्भर नहीं है। इस कार्यका क्षेत्र अधिक विस्तृत होनेके बजाय उसमें घनत्व और तीव्रता अधिक होनी चाहिए। तीव्रता ही कार्यका क्षेत्र भी निश्चित करेगी।

डाकका समय पूरा हो गया इसलिए और अधिक कुछ नहीं।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११९) से।

३१३. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

८ जुलाई, १९३३

चि० प्रेमा,

. . .[1] के बारेमें अपना अनुभव लिखना। बहुत लोग कहते हैं कि वह . . .[2] के लिए अयोग्य है। नारणदासकी भी यही राय है। अपनी राय बताना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४८) से। सी० डब्ल्यू० ६७८७ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

३१४. पत्र : एलस्टेयर मैक्रेको

पर्णकुटी, पूना ६,
९ जुलाई, १९३३

प्रिय श्री मैक्रे,

आपने पिताके पत्र का प्रथम पृष्ठ, जिसमें उन्होंने मेरे उपवासका जिक्र किया है, भेजनेके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

संसारके मुख्य धर्मोंके बारेमें मेरी जो राय है वह 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंमें कई बार साफ-साफ व्यक्त की गई है। उन धर्मोंके सत्य होनेमें मेरी आस्था है। मैंने उनका अध्ययन किसी आलोचककी तरह नहीं, बल्कि अपनी योग्यतानुसार सत्यके अनुयायीकी तरह किया है, और इसलिए उनके अध्ययनसे मुझे काफी मदद मिली है। मेरी समझमें आजके मेरे विचारोंमें परिवर्तनकी सम्भावना नहीं है। मैं ईसा मसीहको महानतम धर्मोपदेशकोंमें मानता हूँ। किन्तु उन्हें पूर्ण ईश्वर-रूप मानना स्वीकार नहीं करता। आपको यह जानकर हैरत होगी कि प्रगाढ़ प्रार्थनामें मेरा विश्वास तभी दृढ़ होने

१ और २. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिये गये हैं।

लगा था जब मैं ईसा मसीहके उपदेशोंके बारेमे कुछ भी नहीं जानता था। लेकिन जब मैंने बाइबिल, कुरान तथा दूसरे धर्मग्रन्थोंको पढ़ा, तो यह जानकर कि इन सबने उपवासको अन्तःकरणसे निकलनेवाली प्रार्थना कहा है और उसे ईश्वरसे घनिष्ठता स्थापित करनेमें सहायक बताया है, तो मेरे विश्वासको और ज्यादा बल मिला।

आपके पिताके पत्रका पृष्ठ मैं वापस भेज रहा हूँ।

संलग्न

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१२१) से।

३१५. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१० जुलाई, १९३३

चि० अमला,

अपनी सभी त्रुटियोंको समझनेमे जल्दबाजी मत करो। मै चाहता हूँ कि तुम पत्रोंमें मुझे अपनी सहज प्रवृत्तियोंके बारेमें लिखती रहो। मुझे जब समय मिलेगा, मैं उनमें से कुछकी व्याख्या करूँगा। तबतक इतना जान लो कि मैं आलोचनामें जो-कुछ कहता हूँ वह स्नेहयुक्त होता है और मै आशा करता हूँ कि तुम मजाक समझ पाती हो।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

३१६. पत्र : नारणदास गांधीको

१० जुलाई, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। पुरुषोत्तमने काम शुरू तो कर दिया है किन्तु अभी निश्चिन्त नहीं हुआ।

केशु अभी यहीं है। वह शान्त है। मुझे लगता है कि ज्ञानके सम्बन्धमें हमें कुछ ज्यादा करना चाहिए।

पण्डितजी[1] से कहना कि गजानन और धीरूके सम्बन्धमें समझ गया हूँ। रामदास और नीमू आये हुए हैं। कानो[2] बीमार पड़ गया है, इसलिए उन्हें रुकना पड़ा है।

१. नारायण मोरेश्वर खरे।
२. रामदास गांधीका पुत्र।

महादेवको बिलकुल काम नहीं है। बाबलाको ज्वर हो आया है, किन्तु आज थोड़ा-सा ही है। चिन्ताकी कोई बात नही।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३१७. भाषण : नेताओंके सम्मेलन, पूनामें–१

१२ जुलाई, १९३३

इसके बाद[1] गांधीजी बोले। उन्होंने सम्मेलनके सामने उपवास रखनेके कारण स्पष्ट किये। उन्होंने यह भी कहा कि उपवासके बाद मुझे देशमें चल रहे आन्दोलनकी स्थितिके बारेमें कई सुझाव मिले हैं। अनेक कांग्रेसियोंने मुझसे यह अनुरोध किया था कि मैं उनके विचार जाननेके लिए आन्दोलन स्थगित कर दूँ और इसलिए कार्यकर्ताओंका यह सम्मेलन बुलाया गया है। उन्होंने कहा कि यह सुझाव भी दिया गया था कि सर्वश्री शास्त्री और बिड़लाको भी सम्मेलनमें आमन्त्रित करना चाहिए। परन्तु मैंने कहा कि यदि सर्वश्री शास्त्री और बिड़लाको बुलाया जाये तो समान विचार रखनेवाले दूसरे लोगोंको भी बुलाना चाहिए। चूँकि सम्मेलन कांग्रेसियोंका है, इसलिए मैंने यह सलाह दी कि इसमें गैर कांग्रेसियोंकोआमन्त्रित न किया जाये।[2]

श्री गांधीने अपने भाषणके दौरान देशमें शान्ति स्थापित करनेकी अपनी तीव्र इच्छा व्यक्त करते हुए कहा कि मैं शान्ति स्थापनाके लिए निश्चय ही भरसक कोशिश करूँगा।

श्री गांधीने कहा कि सम्मेलन बुलानेका कारण यह नहीं है कि परिस्थितियाँ बदल गई हैं या सरकारने कुछ शर्तें सामने रखी है, बल्कि इसका कारण यह है कि मेरे उपवास और बादमें मेरी रिहाईसे विचित्र परिस्थिति पैदा हो गई। मुझे यह सोचकर शर्म महसूस होती है कि यह सब सिर्फ एक आदमीकी वजहसे हो रहा है। परन्तु और कोई चारा नहीं था।

सदस्योंसे अपने विचार निस्संकोच और साफ-साफ व्यक्त करनेके लिए कहते हुए श्री गांधीने कहा कि मैं जानना चाहूँगा कि आप सविनय अवज्ञा आन्दोलनको अनिश्चित कालतक के लिए स्थगित रखना चाहेंगे या कुछ शर्तो-सहित निश्चित अवधितक। उन्होंने कहा कि मुझे पता लगा है कि कुछ लोगोंकी ऐसी राय है कि आन्दोलन बिना शर्त वापस ले लेना चाहिए। अन्य लोगोंका खयाल है कि सरकारके

१. सम्मेलनके प्रधान एम० एस० अणेने पहले भाषण दिया।
२. आगेका अंश **हिन्दू**, १३-७-१९३३ से लिया गया है।

आग कुछ शर्तें रखनी चाहिए और उनपर समझौता हो जानेपर ही आन्दोलन वापस लेना चाहिए। गांधीजी ने कहा कि मैं सबके विचार सुननेके बाद सोच-विचारकर कल अपनी राय जाहिर करूँगा और कांग्रेसको क्या कार्यवाही करनी चाहिए, इस बारेमें कांग्रेसको सलाह दूंगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-७-१९३३ और **हिन्दू,** १३-७-१९३३

३१८. पत्र : मीराबहनको

१३ जुलाई, १९३३

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र पहुँच गया। तुम कल्पना कर सकती हो कि मुझपर कितना भार आ पड़ा है। यह पत्र, दूसरे एक-दो महत्त्वपूर्ण पत्र और 'हरिजन' के लेख लिखनेके लिए मैंने मौन ले लिया है। ७ बजे सुबह एक सज्जनको मिलनेका समय दिया है। अभी उसके लिए कुछ मिनट बाकी हैं। ईश्वरकी मुझपर कृपा है कि वह मुझे अपने सामने पड़े हुए कामको निबटा सकने योग्य शक्ति दे देता है।

वजन घटता-बढ़ता रहता है। कार्याधिक्यके कारण वह १०१ से घटकर ९९ से भी कम हो गया है। कुछ समयतक इसी तरह घटता-बढ़ता रहेगा। मेरी तबीयत बिलकुल अच्छी रहती है।

मैं चाहता हूँ कि तुम मन और शरीर दोनोंकी स्वस्थताकी होड़में, उसकी चिन्ता किये बगैर, मुझे हरा दो। तुमने मुझे पिता और माँ दोनों बना तो लिया, परन्तु मुझसे पाई हुई विरासतमें वृद्धि नहीं की तो फायदा क्या हुआ? मेरा सचमुच यह विश्वास है कि जहाँ परस्पर कर्त्तव्यका भाव हो, वहाँ ऐसा ही होना चाहिए। माता-पिता उनके दोषों और कमियोंके लिए नहीं बनाये जाते; बल्कि उनमें जो गुण तुमने मान लिये हों उनके लिए बनाये जाते हैं। इसलिए उनके असली या काल्पनिक गुण केवल आत्मसात् ही नहीं किये जाते, उनमें वृद्धि भी की जाती है। मैं चाहता हूँ, तुम इस नियमको सिद्ध कर दिखाओ। मुझे विश्वास है कि तुम ऐसा कर दिखाओगी।

क्या तुम्हें गोरखनाथकी मशहूर मिसाल मालूम है? वे अपने गुरु मछन्दरनाथसे आगे बढ़ गये थे।

स्नेह।

बापू

१. समाचारमें आगे कहा गया है: "केवल एक या दोको छोड़कर अन्य सभी वक्ताओंने यह राय जाहिर की कि सविनय अवज्ञा स्थगित कर देनी चाहिए, और बावजूद इसके कि सरकार राजबन्दियोंको रिहा करती है या नहीं, यह कदम उठाया जाना चाहिए...।"

[पुनश्च:]

मेरे पत्र लिखते समय प्रभावती मेरे पास खड़ी है और तुम्हें स्नेह भेजती है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६८०) से; सौजन्य: मीराबहन।

३१९. भाषण: नेताओंके सम्मेलन, पूनामें–२

१४ जुलाई, १९३३

पिछले सितम्बरसे जो घटनाएँ घटी थीं, उनका हवाला देनेके बाद गांधीजी ने अपना भाषण शुरू किया। उन्होंने कहा:

मुझपर दोष लगाया जाता है कि मैंने तीन पाप किये है। वे ये हैं: (१) साम्प्रदायिक आधारपर निर्वाचनके निर्णय (कम्यूनल अवार्ड)में परिवर्तनके लिए मेरा उपवास, (२) अस्पृश्यता-विरोधी प्रचार चलानेके लिए मेरे द्वारा सशर्त स्वतन्त्रताका स्वीकार किया जाना (३) सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्थगित करना।

जहाँतक साम्प्रदायिक निर्णयका सम्बन्ध है, मैंने गोलमेज परिषद्में स्पष्ट कर दिया था[१] कि मैं 'अछूतोंके लिए पृथक् निर्वाचन' के विरोधमें संघर्ष करते हुए मिट जाऊँगा। उस वक्तव्यके अनुरूप आवश्यक था कि मैं साम्प्रदायिक आधारपर किया गया निर्णय बदलवाता। इसलिए मुझे सरकारसे पत्र-व्यवहार करना पड़ा। उपवास और जेलके अन्दरसे प्रचार उसके स्वाभाविक परिणाम थे।

तीसरे आरोपका उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा कि जैसे ही मुझे रिहा करके जेलका दरवाजा मेरे लिए बन्द कर दिया गया, मैंने सोचा कि गिरफ्तारियों, लाठी-चार्ज, आदिकी खबरें सुन-सुनकर मैं उपवासके दौरान जीवित नहीं रह सकूँगा; इसलिए मैंने श्री अणेसे प्रार्थना की कि आन्दोलन स्थगित कर दिया जाये।

सविनय अवज्ञाके बारेमें बोलते हुए गांधीजी ने इस तरह कहा:

मैंने हरएकके भाषण ध्यानसे सुने हैं और जो [आन्दोलन] वापस लेनेकी बात कह रहे हैं, उनके भाषण और भी ज्यादा ध्यानसे सुने हैं। मैंने उनके तर्क सुने; परन्तु मैं अभीतक आश्वस्त नही हुआ हूँ। मैं वही तर्क आन्दोलनको जारी रखनेके बारेमें भी दूँगा। कईएक वक्ताओंसे यह सुनकर कि कार्यकर्त्ता थक गये है और आराम चाहते हैं, मुझे दुःख हुआ। यदि उन्होंने यह कहा होता कि वे स्वयं थक गये हैं, तो मुझे ज्यादा अच्छा लगता। कार्यकर्त्ता नहीं थके हैं। देश नहीं थका है। देश [आन्दोलनको] जारी रखनेके लिए तैयार है।

कुछ नेताओंमें विश्वासकी कमीका मुझे दुःख है। मुझे पक्का विश्वास है कि किसी सम्मानजनक समझौतेके बिना आन्दोलनको वापस लेना गलत और विनाशकारी होगा और इसके घातक परिणाम होंगे। यह राष्ट्रके प्रति विश्वासघात कहलायेगा। सरकार पूरी तरह आत्मसमर्पण चाहती है। मैं मिट्टीमें मिल जाऊँगा पर आत्मसमर्पण

१. देखिए खण्ड ४८, पृ० ३३०।

नहीं करूँगा। जब सरकारने राष्ट्रीय माँग नहीं मानी है, तो हम आन्दोलनको किस तरह वापस ले सकते हैं? यह कहना कि आन्दोलन १९३० में शुरू हुआ, गलत है। असली आन्दोलन १९२० में शुरू हुआ और संघर्ष अभी जारी है, हालाँकि बीचमें कुछ सालोंके लिए उसमें विराम-सा आ गया था।

अब इसे वापस नहीं लिया जा सकता। सच्चा सत्याग्रही अन्ततक अपने उद्देश्यकी प्राप्ति होनेतक संघर्ष करता ही रहेगा। कईएक वक्ताओंने संख्याकी कमीका हवाला भी दिया है। जो ऐसा कहते हैं वे सत्याग्रहका क ख ग भी नहीं जानते। मुझे संख्याकी परवाह नही है। मैं आपको ऐतिहासिक तथ्य दे सकता हूँ जहाँ मुट्ठीभर लोगोंने भारी संकटके बावजूद लड़ाई लड़ी और विजयी हुए।

गांधीजी ने उन लोगोंके रुखपर, जो आन्दोलन वापस लेनेके पक्षमें हैं, खेद प्रकट किया। उन्होंने दोहराया कि देश नहीं, कुछ नेतागण अब थक गये हैं। उन्होंने काठियावाड़के बैलोंका उदाहरण दिया कि जब दोनोंमें से एक बैल बैठ जाता है तो दूसरेको भी बैठना पड़ता है। परन्तु यदि दूसरा खड़ा हुआ बैल काफी मजबूत हो, तो बैठे हुए बैलको भी खड़ा होना पड़ता है। बताया जाता है कि गांधीजी ने कहा कि दमनके कारण सामूहिक सविनय अवज्ञा जारी रखना सम्भव नहीं है और इसलिए उन्होंने व्यक्तिगत सत्याग्रहकी योजना बनाई है जिसमें हर कार्यकर्त्ता स्वयं अपना नेता होगा। कई वक्ताओं द्वारा जिस रचनात्मक कार्यक्रमका सुझाव दिया गया था, उसका हवाला देते हुए गांधीजी ने कहा कि यह भ्रम है। यदि आन्दोलन वापस ले लिया गया तो देशमें रचनात्मक कार्यक्रम जारी नहीं रखा जा सकता।

एक वक्ताने सुझाव दिया था कि एक करोड़ कांग्रेस-सदस्योंकी भर्ती की जाये। उसका हवाला देते हुए गांधीजी ने कहा कि यह असम्भव कार्य है। यदि आन्दोलन वापस ले लिया गया तो बारडोलीमें छः सदस्य भी भर्ती नहीं किये जा सकते।

भाषण समाप्त करते हुए गांधीजी ने कहा कि मैं शान्तिकी खोजमें भटक रहा हूँ और सविनय अवज्ञा फिरसे आरम्भ करनेसे पूर्व मैं सम्मानजनक समझौता करनेके सभी उपाय ढूँढूँगा। कुछ मित्रोंने उनके वाइसरायको पत्र लिखनेपर आपत्ति की थी। इसपर उन्होंने कहा कि सच्चे सत्याग्रहीको बातचीत आरम्भ करनेका प्रस्ताव रखनेमें कोई लज्जा अनुभव नहीं करनी चाहिए। उसे सम्मानजनक समझौता करनेकी भरसक कोशिश अवश्य करनी चाहिए। बातचीत कमजोरीकी वजहसे नहीं, पूर्ण शक्तिकी भावनासे आरम्भ की जा रही है। उन्होंने सम्मेलनसे अपील की कि यदि वे लोग आवश्यक समझें तो उन्हें [गांधीजी को] यह अधिकार दे दिया जाये कि वे वाइस-रायसे बिना किसी शर्तके मिल लें और सम्मानजनक समझौतेकी कोशिश करें।

गांधीजी ने बिना शर्त आन्दोलन वापस लेनेकी बातका विरोध किया और कहा कि समझौतेकी बातचीतसे पहले बिना शर्त आन्दोलन वापस लेनेकी सरकारकी माँग एक जाल है। उन्होंने सदस्योंसे कहा कि वे इस जालमें न फँसें। अपने भाषणके

उपरान्त उन्होंने सदस्योंको अपने वक्तव्यपर विचार व्यक्त करनेके लिए कहा। उन्होंने वक्ताओंसे कहा कि वे उनके प्रति व्यक्तिगत निष्ठाके कारण उनका समर्थन न करें।[1]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-७-१९३३

३२०. तार: वाइसरायके निजी सचिवको[2]

१४ जुलाई, १९३३[3]

वाइसरायके निजी सचिव
वाइसराय कैम्प

क्या महामहिम शान्तिकी सम्भावनाका रास्ता खोजनेके खयालसे भेंटकी अनुमति देंगे। कृपया तार दीजिए।[4]

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), पृ० ४२। एस० एन० २१५२६ भी।

१. गांधीजी के भाषणके बाद सम्मेलन सदस्योंको विचार-विमर्श करने और अपना मत स्थिर करनेके लिए अवकाश देनेके विचारसे एक घंटेके लिए स्थगित कर दिया गया। सम्मेलनकी बैठक जब पुनः आरम्भ हुई तब गांधीजी ने प्रतिनिधियों द्वारा पूछे गये प्रश्नोंका उत्तर दिया; देखिए परिशिष्ट ८। सम्मेलनने गांधीजी को वाइसरायसे बिना शर्त भेंटकी अनुमति देनेका अनुरोध करनेका अधिकार दिया। देखिए अगला शीर्षक।

२. इस तारका गांधीजी के हाथका लिखा मसविदा भी प्राप्त है; उसका आशय यही है, शब्दोंमें कुछ फर्क है।

३. एस० एन० साधन-सूत्रके अनुसार।

४. उत्तरमें वाइसरायके निजी सचिवका तार इस प्रकार था: "भेंटकी अनुमति देनेके विषयमें आपके तारके उत्तरमें वाइसराय महोदयने मुझसे यह कहनेको कहा है कि यदि परिस्थितियाँ भिन्न होतीं तो वे आपसे सहर्ष मिलते। लेकिन ऐसा लगता है कि आप सविनय अवज्ञा आन्दोलनको, कुछ शर्तोंके सिवा, वापस लेनेके लिए तैयार नहीं है और वाइसराय महोदयसे आप जो भेंट करना चाहते हैं उसका उद्देश्य सरकारसे इन्हीं शर्तोंके विषयमें बातचीत करना है। ऐसा निर्णय भी ले लिया गया मालूम होता है कि इस बातचीतके फलस्वरूप यदि सरकारके साथ कांग्रेसका समझौता न हो तो पहली अगस्तसे कांग्रेस सविनय अवज्ञा पुनः शुरू कर दे। आपको यह याद दिलानेकी तो जरूरत ही नहीं है कि सरकारकी स्थिति इस विषयमें यह है कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन पूर्णतः असंवैधानिक है, उसके साथ कोई समझौता नहीं हो सकता और सरकार उसे बंद करानेके लिए किसी तरहकी बातचीतमें कोई हिस्सा नहीं लेना चाहती। २९ अप्रैल, १९३२ को भारत-मन्त्रीने हाउस ऑफ कामन्समें यह कहा था कि कांग्रेसका सहयोग प्राप्त करनेकी शर्तके रूपमें कांग्रेसके साथ कोई सौदा करनेका सवाल ही पैदा नहीं होता। अपने परवर्ती वक्तव्योंमें सरकार लगातार इस स्थितिपर कायम रही है। यदि कांग्रेस एक संवैधानिक दलकी स्थितिको

३२१. उलटा रास्ता

अपनेको सनातनी कहनेवाले एक प्रोफेसरके पत्रसे नीचे कुछ अंश उद्धृत किये जा रहे हैं। उद्धरण पढ़ने लायक है :

मैं एक पक्का सनातनी ब्राह्मण हूँ। मैंने अनेक प्रकारसे सनातनधर्मकी सेवा की है। सनातनधर्म पर मैंने पुस्तकें लिखी है और लेख भी लिखे है। अनेक सनातनी संस्थाएँ और नेता मेरे इस सेवा-कार्यके साक्षी हैं। इसलिए सनातनधर्म पर बोलनेका मैं अधिकार रखता हूँ। अबतक मैं हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशका विरोधी था। किन्तु आज अचानक मेरी अन्तरात्माने मुझसे कहा कि यदि तथाकथित अस्पृश्योंको मन्दिरोंमें पतितपावन भगवानके दर्शनका अधिकार न मिला, तो हिन्दू-धर्मका विनाश निश्चित है। पिछले महीनोंके कटु अनुभवने मेरी विचारधारामें क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया है। मैं जानता हूँ कि मेरे इस कथनसे बहुतोंको आश्चर्य होगा। बहुतेरे तो यह भी कहेंगे कि यह मनुष्य अपना धर्म त्यागकर भाग रहा है। लेकिन मुझे तो हिन्दुओं और हिन्दू-धर्मकी सुरक्षा ही आज एकमात्र धर्म-कार्य प्रतीत होता है और इसके लिए मैं दुनिया-भरकी बदनामी अपने सिरपर लेनेको तैयार हूँ। . . . हिन्दुओंकी आज कैसी दुर्दशा हो रही है। उनकी विपत्तिका पार नहीं। किसी भी दुखी हिन्दूको देख कर मेरी आँखोंसे आँसू बहने लगते है और मै यथासाध्य उसका दुःख दूर करने की कोशिश करता हूँ . . . उन्हें इस प्रकार दुर्दशामें ग्रस्त देखनेसे तो मर जाना अच्छा . . . . पर सनातनी हिन्दुओंको अपनेसे सहमत करनेके लिए अगर आप मेरी एक शर्त मान लें तो बड़ा अच्छा हो। वह शर्त यह है कि सिर्फ उन्हीं हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेशका अधिकार दिया जाये जिन्होंने नित्य स्नान करने, स्वच्छ वस्त्र पहनने और गोमांस तथा मुरदार मांस न खानेकी दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली हो। बेचारे सनातनियोंका भी दोष नहीं है। उनकी इन गन्दी आदतोंने ही वस्तुतः अस्पृश्यताको जन्म दिया है। हरिजन जिन निर्योग्यताओंसे पीड़ित हैं, उनके लिए बहुत हदतक वे खुद ही दोषी हैं। हरिजनोंको उनकी गन्दी आदतोंके लिए न धिक्कारकर सनातनियोंसे मन्दिर-प्रवेशके लिए कहना, मेरी समझमें, उनकी बुरी आदतोंको और प्रोत्साहन देना है।

पुनः अपनाना चाहती है और इस आन्दोलनको, जिससे देशको गम्भीर क्षति पहुँची है और कष्ट उठाना पड़ा है, समाप्त करना चाहती है, तो उसके लिए रास्ता खुला ही है। कांग्रेस सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्वयं वापस लेकर शान्तिकी स्थापना करे, यह सर्वथा कांग्रेसके हाथकी बात है। लेकिन चूँकि कांग्रेस ऐसा करनेकी इच्छुक नहीं है, इसलिए वाइसराय महोदयसे भेंटकी बातका कोई अर्थ नहीं रह जाता।"

> **इसलिए आपसे प्रार्थना है कि मेरे इस सुझावको आप स्वीकार कर लें, और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं सनातनी मित्रोंको इसके लिए राजी करके रहूँगा कि हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेशका अधिकार मिलना चाहिए। इसके लिए मैं जोरोंका प्रचार करूँगा और ईश्वरकी कृपासे मुझे इसमें सफलता भी मिलेगी।**

पाठकको यह नहीं सोचना चाहिए कि इस पत्रमे 'अन्तरात्माकी वाणी' का जो उल्लेख है, उसका उपवासके बारेमें मेरे दावेसे कोई सम्बन्ध है। यह पत्र-लेखकका स्वतन्त्र विचार है। यह पत्र गत २५ अप्रैलका है। सम्पादकने कई पुराने पत्र अपने पास रख छोड़े थे, जो आज मेरे सामने लाये गये है। यह उन्हीं पत्रोंमें से एक है। मालूम नहीं कि विद्वान पत्र-लेखकने अपने विचार तबसे कुछ बदले है या वे अब भी वैसे ही हैं। पर इस प्रकारके विचार अकसर मेरे सामने आये हैं। इसलिए भ्रम-निवारण जरूरी है। सनातनी सज्जनकी विचारधारामें जो परिवर्तन हुआ, उसपर मै सन्तोष प्रकट करता हूँ। पर मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशपर वे जो शर्त लगाना चाहते हैं, उससे तो उनका उद्देश्य ही विफल हो जाता है। वह यह भूल जाते हैं कि हरिजनोंकी वर्त्तमान दुर्दशाके जिम्मेवार सवर्ण हिन्दू हैं। इसलिए हमें तो उन्हें, जिस रूपमें वे हैं, उसी रूपमें अपनाना चाहिए और यह विश्वास रखना चाहिए कि हमारे संसर्ग और प्रेमसे — अगर हम सच्चे होंगे तो — सभ्य-समाजके लिए अरुचिकर उनकी तमाम बुरी आदतें आप ही छूट जायेंगी। हरिजनोंको उनकी वर्त्तमान दशापर धिक्कारना ठीक वैसा ही है, जैसेकि कोई गुलामोंका मालिक अपने गुलामोंकी दुर्दशा और गन्दगीके लिए उन्हें ही दोषी ठहराये। गुलामोंका मालिक अगर यह शर्त रखे कि गुलामीसे छुटकारा मिलनेसे पहले गुलामोंको अपनी गन्दगी खत्म करनी चाहिए, तो इस बातपर किसे हँसी न आयेगी। यही नहीं, बल्कि यह भी कहा जायेगा कि गुलामोंके मालिकका यह सब ढोंग है और गुलामोंको मुक्त करनेकी उसकी नीयत ही नहीं है। यह बात भी ध्यानमें रखनी चाहिए कि मन्दिरोंमें जानेके लिए जो शर्त दूसरे सब हिन्दुओंपर लागू है, वह हरिजनोंपर भी लागू होगी। हरिजनों और सवर्ण हिन्दुओंमें कोई प्राकृतिक जाति-भेद होता तो वे तुरन्त पहचान लिये जाते। प्रकृतिने उनकी पहचानके कोई खास निशान नहीं बनाये हैं। आज भी हजारों नहीं, तो सैकड़ों हरिजन बिना पहचाने मन्दिरोंमें जाते हैं। जनगणनाकी रिपोर्टोंपर इस पत्रमें जो विचार हुआ है[1] उससे यह समझमें आ सकता है कि उनमें जिन लोगोंको 'अस्पृश्य' वर्गमें नहीं रखा गया है उन सबने बिना रोक-टोक मन्दिरोंमें प्रवेश किया होगा। नई जनगणनामें कुछ जातियोंको पहली बार अस्पृश्योंकी सूचीमें शामिल किया गया है और कुछको उसमें से निकाल दिया गया है। केवल इसीसे किसी जातिकी स्पृश्यता या अस्पृश्यता सिद्ध नहीं होती। इस प्रकार बिना पहचाने जो तथाकथित राज्य-रचित अस्पृश्य मन्दिरोंमें चले जाते हैं उसका श्रेय हिन्दुओंको कदापि नहीं मिल सकता। चाहिए तो यह कि सवर्ण हिन्दू

१. देखिए पृ० ६५-८ और ११८-२१।

अस्पृश्यताको पाप समझकर स्वेच्छासे त्याग दें और इस प्रकार अपनेको शुद्ध करें। सच्चा श्रेय उन्हें इसीमें मिलेगा। यह बात मैं अनेक बार कह चुका हूँ कि अस्पृश्यता जिस रूपमें आज बरती जा रही है, उसी रूपमें उसी अर्थमें मैं उसे ले रहा हूँ। प्रोफेसर तथा उनके ही समान विचारवाले सज्जनोंको यह समझ लेना चाहिए कि अस्पृश्यता-निवारणका यह आन्दोलन केवल हरिजनोंको खुश करनेके लिए नहीं चलाया जा रहा है। इसका लक्ष्य हिन्दू-समाजके चलनमें आमूल परिवर्तन करना है। प्राणिमात्र समान है और भेद-भाव मिथ्या है, माया है — हिन्दू-धर्मकी यह उच्च और असंदिग्ध घोषणा होते हुए भी, उसमें जो ऊँच-नीचका भेदभाव घर कर बैठा है उसको नष्ट करना ही इसका लक्ष्य है। इस विश्वासका सीधा परिणाम कम-से-कम यह होना चाहिए कि मनुष्यमात्रके साथ समान व्यवहार किया जाये। और यह विश्वास केवल संन्यासियोंके लिए नहीं है, यह मनुष्य-मात्रके लिए है और नित्य व्यवहारके लिए है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-७-१९३३

३२२. तार : सी० एफ० एन्ड्रयूजको[1]

१५ जुलाई, १९३३

एन्ड्रयूज
इसूहोस्ट
लन्दन

अनौपचारिक सम्मेलन[2] कल रात समाप्त हो गया। सर्वसम्मतिके अनुसार वाइसरायको शान्तिकी सम्भावनाका मार्ग खोजनेकी दृष्टिसे भेंटकी माँग करते हुए तार दे दिया।[3]

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१५२७) से।

१. तार एन्ड्रयूजके १४ जुलाई, १९३३ को लंदनसे भेजे गये तारके उत्तरमें था जिसमें लिखा था: "कृपया यहाँकी ठीक-ठीक मौजूदा हालतके बारेमें अपनी भाषामें एकदम तार दें। (एस० एन० २१५२७)

२. कांग्रेसके कुछ प्रमुख नेताओंका, जो कि पूनामें १२ जुलाईसे १४ जुलाईतक हुआ; देखिए पृ० २७४-५ और २७६-८।

३. देखिए पृ० २७८।

३२३. पत्र : कृष्णस्वामीको

पर्णकुटी, पूना,
१६ जुलाई, १९३३

भाई कृष्णस्वामी,

आपका खत मिला। आपका श्री राजगोपालाचारीसे परिचय है यह भी मुझे राजाजी से मालूम हुआ। आपके विवाहपर मेरा आशीर्वाद है।

मोहनदास गांधीके आशीर्वाद

श्रीयुत कृष्णस्वामी
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार
ट्रिप्लिकेन
मद्रास[१]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५८०) से। सी० डब्ल्यू० ४४०५ से भी।

३२४. प्रमाण-पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

१६ जुलाई, १९३३

श्री परशुराम मेहरोत्राका मुझे कई बरसोंका परिचय है। उसको मैंने उत्साही, उद्यमी और प्रामाणिक युवक पाया है। उसकी अभिरुचि सम्पादन कार्यकी ओर है। मेरी उमीद है कि उसको ऐसा कार्य शीघ्र मिल जायगा और उसमें उसको सफलता मिलेगी।

मोहनदास गांधी

प्रमाण-पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८४८) से। सी० डब्ल्यू० ३०७१ से भी; सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा।

१. पता सी० डब्ल्यू० साधन-सूत्रसे लिया गया है।

३२५. तार : वाइसरायके निजी सचिवको

[१७ जुलाई, १९३३][1]

वाइसरायके निजी सचिव
शिमला

इसी तारीखके आपके तारसे मुझे दु:ख और आश्चर्य हुआ। सरकार एक अनौपचारिक सम्मेलनकी गुप्त कार्यवाहीके अनधिकृत प्रकाशनपर सरकारी तौरपर ध्यान देगी और उसके आधारपर भेंटकी प्रार्थनाको अस्वीकार कर देगी, मुझे ऐसी आशा नहीं थी। यदि भेंटकी स्वीकृति मिल जाती तो मैं यह दिखा सकता था कि उस कार्यवाहीका उद्देश्य, कुल मिलाकर, एक सम्मानपूर्ण सुलहपर पहुँचना था। सम्मेलन निस्सन्देह सुलहके पक्षमें था, बशर्ते कि वह आत्मसम्मानको क्षति पहुँचाये बिना कायम हो सके। परन्तु यदि सरकारकी यह धारणा हो कि जो संगठन राज्यके कानूनोंको, वे चाहे कितने ही दमनकारी क्यों न हों, तोड़नेकी कार्रवाइयोंमें लगा है उसके प्रतिनिधियोंके साथ, सुलहतक के लिए भी, वह तबतक बातचीत नहीं कर सकती जब तक कि वह संगठन पहले उन कार्रवाइयोंको, उन्हें मानव परिवारके सहज अधिकारके अनुरूप मानते हुए भी, छोड़ न दे, तो मेरे लिए कहनेको कुछ नहीं रह जाता। फिर भी मै अपने बारेमें एक बात कहना चाहूँगा। मेरा जीवन शान्तिपूर्ण उद्देश्योंसे शासित है। मैं सच्ची शान्तिके लिए लालायित हूँ। पर मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैं कामचलाऊ शान्तिसे सन्तुष्ट नहीं हो सकता। यदि मैं असहयोग या सत्याग्रहका सहारा लेता हूँ, तो वह जबरदस्तीके सहयोगकी जगह सच्चा और स्वैच्छिक सहयोग स्थापित करने और कानूनोंके जबरन पालनकी जगह उनका स्वेच्छासे पालन करानेके लिए होता है। अतः मैं यह आशा करता हूँ कि भेंटकी मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली जायेगी।[2]

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१५२६) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), पृ० ४२ से भी।

१. वाइसरायके निजी सचिवके १७-७-१९३३ के तारके उल्लेखसे।

२. गांधीजी को इसका उसी दिन निम्नलिखित उत्तर (एस० एन० २१५२६) भेज दिया गया था :

३२६. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१७ जुलाई, १९३३

चि० अमला,

मैं दूसरी जंजीर[1] भेजनेकी कोशिश करूँगा। किसी बातकी चिन्ता न करो, मेरी भी नहीं। आखिर तो परमेश्वर हम सबका पालन करता है और सर्वसमर्थ संरक्षक है।

तुम्हारा हिन्दी-पत्र तुम्हारे लिए बहुत अच्छा था। अक्षर अभी ठीकसे नहीं उतरे। मूल अक्षरोंसे उन्हें मिलाकर देखना चाहिए।

अगर तुम यह सुनो कि मैं यरवदा या ऐसी ही किसी अन्य जेलमें ले जाया गया हूँ, तो परेशान न होना।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

३२७. पत्र : जमनालाल बजाजको

१७ जुलाई, १९३३

चि० जमनालाल,

मुझे जरा भी फुरसत नहीं मिलती। इससे लिखनेकी इच्छा होते हुए भी नहीं लिख पाता। आश्रमको लिखे पत्रकी नकल इसके साथ है। मेरे विचार इस तरह उड़ते रहते हैं। आखिर कहाँ जाकर ठहरेंगे, यह पता नहीं। मुझे आज-कलमें ठिकाने लगा दिया गया तो फिर ऐसे विचारोंका आदान-प्रदान नहीं हो सकेगा। परन्तु तुम स्वयं तो विचार करने ही लग जाओ। जो ठीक लगे, वैसी सलाह नारणदासको देना। मेरा पत्र विनोबा पढ़ेंगे ही। उनको लिखनेका समय मिला ही नहीं और आज भी मिलनेकी आशा नहीं।

"महामहिमको आशा थी कि सरकारकी स्थिति स्पष्ट है। वह यह है कि सत्याग्रह ऐसा आन्दोलन है जिसका उद्देश्य गैर-कानूनी कार्रवाइयों द्वारा सरकारपर दबाव डालना है और कि जिस संगठनने उस आन्दोलनको छोड़ा नहीं है उसके प्रतिनिधिके साथ सरकारके बातचीत करनेका कोई सवाल पैदा नहीं होता।"

१. देखिए पृ० २७१।

कमला[1] के उपवास चल रहे हैं। सम्भवतः आज छूटेंगे। मेहता ध्यान रखते हैं। मुझे रोज रिपोर्ट देते हैं। उसवासमें खूब हिम्मत रखी है।

तुम्हारा शरीर ठीक रहता होगा।

तुम्हें कूद तो पड़ना ही है। परन्तु जल्दी न करो। शरीर और सुधर जाये तभी आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९१८) से।

३२८. पत्र : भगवानजी पी० पण्डयाको

१७ जुलाई, १९३३

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मुझे मिला था। सतारासे पत्र नहीं आया। नारणदासको तुम्हारे बारेमें लिखना मैं भूल ही गया। आज याद आनेपर फौरन उसे लिखा है। अब तुम्हारे साथ बात करेगा। बाकी सब उसे लिखे पत्रसे मालूम हो जायेगा।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३६०) से; सौजन्य : भगवानजी पी० पण्डया।

३२९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१७ जुलाई, १९३३

चि० प्रेमा,

मेरा पत्र तो तुझे मिला ही होगा। मेरी आशाएँ तू जानती है। नारणदासको लिखे मेरे पत्रसे अधीर नहीं होना चाहिए। अभी तो ऐसे कदमके लिए तैयारीकी जरूरत है। वह समय कब आयेगा, यह तो दैव ही जानता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४९) से। सी० डब्ल्यू० ६७८८ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१. जमनालाल बजाजकी पुत्री।

३३०. तार: जमनालाल बजाजको

किरकी,
१८ जुलाई, १९३३

जमनालाल बजाज
वर्धा

कल आश्रम पहुँच रहा हूँ। रेवा कल रवाना हो रही है। गंगाधर राव दो दिन बम्बई रहेंगे।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १११

३३१. भेंट: पत्र-प्रतिनिधियोंको

पूना,
१८ जुलाई, १९३३

अपने आसन्न कार्यक्रमके बारेमें पूछे जानेपर उन्होंने कहा कि मैं साबरमती आश्रम केवल इसलिए जा रहा हूँ कि आश्रममें लोगोंसे मिल-जुल लूँ।

यदि मै गिरफ्तार होनेसे पहले आश्रम नही गया तो इसका मुझे दुःख रहेगा। चाहे आज या चाहे कुछ दिनों बाद मेरा गिरफ्तार होना निश्चित है।

वाइसरायके उत्तर[1] के बारेमें आपका क्या विचार है?

मेरी रायमें वाइसरायके उत्तरसे स्थिति खेदजनक बन गई है; इसमें गम्भीर खतरा निहित है। उस उत्तरमें जो सिद्धान्त रखा गया है, वह मेरी रायमें बिलकुल नया है। मुझे नहीं मालूम कि सभ्य देशोंने अपनी विद्रोही प्रजाके साथ शान्तिके लिए बातचीत करना कभी अस्वीकार किया है। अबतक वे सिरसे पाँवतक शस्त्रोंसे लैस विद्रोहियोंसे भी बातचीत करते आये है, फिर यह तो स्पष्ट ही उन सत्याग्रहियोंसे सम्बद्ध मामला है जो अहिंसक हैं।[2] शान्ति-स्थापनाके लिए भेंट करनेकी

१. देखिए पाद-टिप्पणी संख्या ४, पृ० २७८।
२. यह वाक्य **हिन्दू**, १९-७-१९३३ से लिया गया है।

मामूली प्रार्थनाका उत्तर देते समय महामहिमका समाचारपत्रोंमे प्रकाशित गोपनीय कार्यवाहियोंकी अनधिकृत रिपोर्टोकी ओर ध्यान देना भी महान खेदका विषय है। मेरी रायमें यह भी एक खतरनाक सिद्धान्त है। मेरी जानकारीमें तो राज्योंके प्रमुखोंने इस तरहकी स्थितियोंमे समाचारपत्रोकी रिपोर्टोंकी ओर कभी शायद ही ध्यान दिया हो। इसलिए स्वाभिमानी भारतीयोका कर्त्तव्य बिलकुल स्पष्ट है। किसी व्यक्तिको अपना धर्म-पालन करनेसे रोका जाये तो इससे ज्यादा अवनति और अपमानकी कल्पना मै नहीं कर सकता।

सम्मेलनके वास्तविक उद्देश्यके बारेमें प्रश्न किये जानेपर गांधीजी ने सम्मेलनको अनौपचारिक बताया और कहा :

किसी प्रतिवादके भयके बिना मै कह सकता हूँ कि इस सम्मेलनका आयोजन केवल यह निश्चय करनेके उद्देश्यसे किया गया था कि काग्रेसी शान्ति चाहते हैं या नही। यदि देशकी हालतसे मै पूरी तरह अनभिज्ञ न होता तो इस अनौपचारिक सम्मेलनको बुलानेमे मेरा हाथ न होता। इसलिए यह सम्मेलन मेरा पथ-प्रदर्शन करनेके लिए बुलाया गया था। यह स्वाभाविक था कि मेरे सहयोगी मुझे जेलके बाहर पाकर मुझसे यह आशा करते कि मैं इस सम्बन्धमे उन्हें सलाह दूँ कि काम किस तरीकेसे किया जाये। देशकी हालतको बिना जाने मै कोई निश्चित राय नहीं दे सकता था। इसलिए सम्मेलन बुलाना इसका एकमात्र उपाय था। मुझे प्रसन्नता है कि मैं आज यह कह सकता हूँ कि यद्यपि सम्मेलन एक मतसे सविनय अवज्ञा छोड़ देने या बन्द कर देनेके लिए तैयार नही था, फिर भी इसमें कोई शक नहीं कि सम्मानजनक शर्तोपर आन्दोलन वापस लेनेकी उसकी पूरी इच्छा थी। परन्तु वाइसरायके तार इस तथ्यके प्रमाण हैं कि सरकार सम्मानजनक समझौता नहीं चाहती, बल्कि यह चाहती है कि कांग्रेस अपमानजनक ढँगसे पूर्ण आत्मसमर्पण कर दे।

यह मेरी भविष्यवाणी है कि जो आज असम्भव है वह कल सम्भव होगा। वह कल कब आयेगा यह मै नहीं जानता। परन्तु वह कल आ रहा है और लोगोंकी आशासे कहीं ज्यादा जल्दी आ रहा है। यह बात मेरे विचारसे उतनी ही निश्चित है जितनी मेरी-आपकी यह भेंट।

यह पूछे जानेपर कि क्या सम्मेलनमें बहुमत आन्दोलन वापस लेनेके पक्षमें था और वर्त्तमान निर्णय सम्मेलनपर थोपा गया है, गांधीजी ने कहा :

यह सही नहीं है; यदि यह सही होता तो मैं अपनी राय थोपनेका दोषी नहीं बनता। पर मैं निस्संकोच यह स्वीकार करता हूँ कि सम्मेलनमें काफी लोगोंका मत [आन्दोलन] पूरी तरह वापस लेनेके पक्षमें था परन्तु उस रूपमें नहीं जैसाकि सरकार चाहती है।

कांग्रेस-नीतिके भविष्यके बारेमें गांधीजी ने कहा :

श्री अणे एक वक्तव्य देंगे। यदि मैं यह कहूँ कि उनके वक्तव्यमें देशको फिलहाल आन्दोलन स्थगित कर देनेकी सलाह दी जायेगी तो यह कोई रहस्योद्घाटन

नहीं होगा। यह कदम उठाये जानेके भी कारण हैं; उनकी गहराईमें जानेकी इस वक्त जरूरत नहीं है। वे यह सलाह भी देंगे कि कांग्रेसके उन सारे संगठनों और उन गुप्त तरीकोंको बन्द कर दिया जाये केवल जिनके सहारे वे चल रहे हैं।

जैसीकि श्री अणेने घोषणा की है, यह आन्दोलन इस महीनेके अन्ततक मेरी खातिर स्थगित रहेगा; और यद्यपि वाइसरायकी मनाहीसे स्थिति बहुत-कुछ बदल गई है, तो भी इस बातको ध्यानमें रखते हुए कि मुझमें थोड़ा-बहुत काम करने योग्य ताकत आ गई है, और किसी तरहकी गलतफहमी न हो, इस दृष्टिसे यह निश्चय किया गया है कि आन्दोलन स्थगित रखा जाये।

यह पूछे जानेपर कि क्या वे सारे भारतके एकमात्र नेता बनेंगे उन्होंने कहा :

अभी तो मैं विनम्र सलाहकारकी भूमिका निभा रहा हूँ। अभी मैं ऐसा नहीं मानता कि मैं यरवदासे पूरी तरह और सचमुच छूट आया हूँ। मुझे अकल्पित परिस्थितियोंके पैदा हो जानेपर छोड़ा गया था। उस परिस्थितिका अनुचित लाभ उठानेकी मेरी कोई इच्छा नहीं है। आन्दोलन स्थगित रखनेकी अवधि समाप्त होनेतक और सरकारको पहले बताये बिना मैं सविनय अवज्ञाका कोई काम नहीं करूँगा।

तब हरिजन आन्दोलनका क्या होगा, यह पूछे जानेपर उन्होंने कहा :

बहुत-से लोगोंने आशा की थी कि मैं अपना सारा समय हरिजन आन्दोलनमें लगाऊँगा। वे मुझे नहीं समझते, और उनमें से किसीके प्रति किसी अनादरकी भावनाके बिना मैं यह कहूँगा कि वे यह नहीं जानते कि वे जो-कुछ सोचते हैं उसमें क्या उलझनें हो सकती हैं। पहली बात तो यह है कि मेरा जीवन किन्हीं अलग-थलग भागोंमें नहीं बँटा है, बल्कि वह एक अविभाज्य इकाई है। इसलिए मैं अपने जीवन-भरके उन कामोंको सम्भवतः नहीं छोड़ सकता जो मुझे उतने ही प्यारे हैं जितना हरिजन-कार्य। मेरे काम अन्योन्याश्रित हैं। इसलिए यदि मैं दूसरे कामोंको छोड़ दूँ तो इससे मेरी हरिजन-सेवा की ही हानि होगी। और फिर मैं चौबीसों घंटे तो हरिजन-कार्य कर नहीं सकता। यह असम्भव है। यदि यह सुझाव दिया जाये कि मैं हरिजन-कार्यके लिए जेल-जीवनका त्याग कर सकता हूँ — जो सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लेनेसे बिताना पड़ता है, तो इसका मतलब यह होगा कि मैं अपने जीवन-सिद्धान्तका ही त्याग कर दूँ। इसलिए मैं यह सेवा अपनी योग्यतानुसार केवल तभीतक कर सकता हूँ जबतक यह मेरे जीवनको प्रभावित करनेवाले सिद्धान्तोंके अनुकूल रहे।

अन्तमें, जैसाकि मैं पहले कह चुका हूँ, हरिजन-कार्यके लिए आत्मशुद्धिके निमित्त बहुत ज्यादा व्यक्तिगत प्रयत्नोंकी जरूरत होती है। सम्भवतः उस मामलेमें इसे अन्य सामाजिक, राजनीतिक या अर्ध-राजनीतिक आन्दोलनोंसे अलग किया जा सके। अभी हालके मेरे उपवाससे मेरा दृष्टिकोण शायद स्पष्ट हो जाता है। इसलिए मुझे पक्का

भरोसा है कि दूसरे कामोंमें मेरा ध्यान रहनेसे हरिजन सेवा-कार्य करनेकी मेरी क्षमतामें किसी भी तरहकी कमी नहीं आती।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-७-१९३३; **हिन्दू**, १९-७-१९३३ भी।

३३२. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको[1]

बम्बई,
१८ जुलाई, १९३३

चूँकि वाइसरायने मेरी साधारण-सी प्रार्थनाको, जिसमें कोई शर्त नहीं थी, ठुकरा दिया है, इसलिए शान्तिकी फिलहाल कोई आशा नहीं है। आदमी जो-कुछ कर सकता है मैंने उतना करनेकी कोशिश की। परन्तु बातचीतका द्वार इस तरह बन्द कर दिये जानेपर मैं लाचार हूँ।

अनौपचारिक सम्मेलन शान्तिके पक्षमें था। सम्मानजनक शान्तिका आधार क्या होता, यह कहना कठिन है। परन्तु यह निश्चित है कि उसका आधार कम-से-कम गांधी-इर्विन समझौते[2] को फिरसे बहाल करना होता। क्योंकि मैं यह दिखा सकता था कि समझौता कांग्रेस द्वारा नहीं, सरकार द्वारा भंग किया गया है।

कोई भी दल 'श्वेत पत्र' से सन्तुष्ट नहीं है। इससे कांग्रेसको तो कभी सन्तोष होगा ही नहीं। परन्तु भेंटके दौरान मैं तो 'श्वेत पत्र' की चर्चा भी नहीं छेड़ता। मेरी नजरमें एक बिलकुल ही अलग योजना थी। जिसपर सरकार और कांग्रेस दोनों रजामन्द हो सकते थे।

आन्दोलन स्थगित रखनेकी अवधि समाप्त हो जानेके बाद सविनय अवज्ञा निश्चय ही फिरसे आरम्भ कर दी जायेगी। यदि सरकार अटकले लगाकर जल्दबाजीमें कोई कार्यवाही करे तो दूसरी बात है। परन्तु कांग्रेसके कार्यवाहक अध्यक्ष सामूहिक सविनय अवज्ञाको, जिसमें कर न देनेका अभियान भी सम्मिलित है, बन्द कर रहे हैं। वे गुप्त तरीकोंका भी बहिष्कार कर रहे हैं और चूँकि कांग्रेससे सम्बन्धित संगठन गुप्त तरीकोंसे ही चल सकते हैं, इसलिए वे फिलहाल कांग्रेससे सम्बन्धित सभी संगठनोंको समाप्त कर रहे हैं। इसलिए सविनय अवज्ञा व्यक्तिगत प्रयत्नतक ही सीमित रहेगी। लोग व्यक्तिगत रूपमें, आर्थिक या दूसरी सहायताकी आशा किये बिना, अपनी ही जिम्मेदारीपर सविनय अवज्ञा करेंगे।

आप पूछते हैं कि यदि आन्दोलन हिंसात्मक हो उठा तो मुझे क्या करना चाहिए। मै केवल यही कह सकता हूँ कि बड़ी-से-बड़ी उत्तेजनाके बावजूद यह आन्दोलन अहिंसात्मक रहा है। अतः अब इसके हिंसात्मक होनेकी सम्भावना नहीं है।

१. **बॉम्बे क्रॉनिकल**, २१-७-१९३३ में यह "लन्दनके **डेली हेरॉल्ड** द्वारा पूछे गये कुछ प्रश्नोंके गांधीजी द्वारा दिये गये उत्तर" के रूपमें छपा था।

२. देखिए खण्ड ४५।

और यदि यह हिंसात्मक हो ही जाता है, तो मै जानता हूँ कि इसका तात्कालिक उपाय मेरे हाथमें है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १९-७-१९३३

३३३. तार : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

साबरमती,
१९ जुलाई, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग, पूना

मै चाहूँगा कि जबतक मैं यहाँ हूँ, साबरमती जेलकी कैदी मीराबाई स्लेडको सप्ताहमें एक पत्र लिखने और उसका उत्तर प्राप्त करनेकी जो अनुमति प्राप्त है, उसके बदले मैं उससे मिल लिया करूँ।

गांधी

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (११), भाग २, पृ० २९।

३३४. बातचीत : अहमदाबादके हरिजनोंसे[1]

[१९ जुलाई, १९३३][2]

यह तो आपका काम है कि आप अपने कामके वर्तमान तरीकोंमें सुधारोंके लिए सुझाव दें। यह काम पूरी तरह सफाई और स्वास्थ्यकी दृष्टिको ध्यानमें रखकर

१. यह महादेव देसाई द्वारा लिखित "अहमदाबाद लेटर" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। इसके साथ भूमिकामें निम्नलिखित टिप्पणी थी : "कोई लगभग एक सौ व्यक्ति — उनमें से बहुतोंने शुद्ध सफेद खादी पहन रखी थी — सेठ रणछोड़भाईके आंगनमें गांधीजी के इर्द गिर्द इकट्ठे हो गये। उन्होंने जो प्रश्न पूछे वे इस बातके प्रमाण थे कि अब उनमें जागृति आ गई है, और उनसे उनकी प्रतिभा और निर्भयताका पता चलता था जिससे कि वे अपनी समस्याओंकी चर्चा कर सकते थे। गांधीजी ने पहले भंगियोंकी समस्याको लिया, क्योंकि दुर्भाग्यग्रस्त जनोंमें बेचारा भंगी सबसे अधिक दुर्भाग्यग्रस्त है।"

२. **बॉम्बे क्रॉनिकल**, २०-७-१९३३ की रिपोर्टसे, जो "अहमदाबाद, १९ जुलाई" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी और जिसमें लिखा था : "पूर्वाह्णमें गांधीजी स्थानीय दलित वर्गके लोगोंके प्रतिनिधि मडलसे मिले।"

किया जाना चाहिए। मै इस कामसे परिचित हूँ। मैंने दक्षिणी आफ्रिकाकी जेलोंमें यह काम किया है। गन्दगीको उठाकर ले जानेके लिए टोकरियाँ ठीक नहीं है। आपके पास मजबूत बाल्टी होनी चाहिए जिसे दो आदमी उठाकर ले जायें। आपके तरीके इतने रूढ़ और पुराने हैं कि हो सकता है आपको यह नया तरीका पसन्द न आये। परन्तु आपको मेरा यह सुझाव है कि बाल्टियाँ कहीं ज्यादा सुविधाजनक, साफ और उपयोगी है। यदि आपको मेरा सुझाव पसन्द हो, तो मै यह मामला स्थानीय नगर निगमके सदस्योंके सामने रखनेके लिए तैयार हूँ। आप सार्वजनिक स्नानागार चाहते है। इस बातकी मुझे खुशी है। परन्तु मै आपको सचेत कर दूँ कि आपके ही कुछ लोग दूसरी जगहोंपर मुहैया की गई सुविधाओंका उपयोग करनेके लिए तैयार नहीं हैं। आप स्वयं जागृत हों और जो आपका कल्याण कर रहे हों उन लोगोंके हाथ मजबूत करें।

इसके बाद सब हरिजनोंको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा :

ऐसा लगता है कि आप सवर्ण हिन्दुओंकी अपने प्रति हृदयहीनतासे चिन्तित हैं। जितना मुझसे हो सकता है उतना मैं उनसे निबटनेकी कोशिश कर रहा हूँ। परन्तु यह अवसर उन्हें सन्देश देनेका नहीं है। मैं आपके माध्यमसे उनतक सन्देश कैसे पहुँचा सकता हूँ? मै आपसे कहूँगा कि आप उनके बारेमें न सोचकर अपने बारेमें सोचें। यह हिन्दू-धर्मके शुद्धिकरणका आन्दोलन है। आप सोचिए कि इसमें आपका क्या योगदान हो सकता है। सवर्ण हिन्दू क्या करते है इस बातकी परवाह किये बिना यदि आप अपने-आप प्रयत्न करें, यदि आप अपनी गन्दी आदते छोड़ दें, यदि आप अपने रहन-सहनका तरीका बदल डालें, तो मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जन्मजात उच्चताकी बात अपने-आप समाप्त हो जायेगी। उच्चता शुद्ध और पवित्र जीवनमें निहित है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आप अपने अस्वच्छ कामके बावजूद हम लोगोंकी निस्बत ज्यादा साफ और पवित्र जीवन-यापन कर सकते हैं। आपकी सेवा ऐसी है जिसके बिना समाज चल नही सकता। मैं चाहता हूँ कि आप अपने व्यवसायका महत्त्व समझें। इसे सफाईसे करना सीखें और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि तब लोग आपकी शर्ते माननेपर बाध्य हो जायेंगे। आप अपने ऊपर निर्भर रहें, अपने पैरोंपर खड़े हों और अपनी मुक्ति अपने-आप प्राप्त करें।

परन्तु आपकी शिकायत है कि आपके लोग हरिजन सेवक संघके सदस्य नहीं बनाये जा रहे। आपका यह भी सुझाव है कि आप लोगोंको इसके प्रशासनमें भाग दिया जाये। यदि संघके सवर्ण हिन्दू सर्वाधिपति बनते, या आपपर हुकुम चलाना चाहते तो मैं आपका सुझाव समझ सकता था। तब मै उनसे कहता कि वे सारे अधिकार त्याग दें। परन्तु वे सर्वाधिपति नहीं ऐसे सेवक हैं जिन्होंने युगोंतक अपने पूर्वजों द्वारा की गई गलतियोंके लिए पश्चात्ताप करनेका संकल्प किया है। उनके प्रायश्चित्तमें आप हिस्सा कैसे बँटा सकते हैं? वे जो-कुछ कर सकते हैं, प्रायश्चित्तके रूपमे कर रहे हैं। आपको कोई प्रायश्चित्त नहीं करना है। आप विश्वास मानिए, जिस क्षण आप संघके प्रशासनमें भाग माँगने लगेंगे, बोझ आपपर आ पड़ेगा और सवर्ण

हिन्दू घोषित कर देंगे कि अब उनकी कोई जिम्मेदारी नहीं है। पैसा इकट्ठा करने और राहत देनेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेनेमें शक्ति या अधिकारका कोई घमण्ड नही है। मैंने प्रशासनिक खर्चे कम करनेके लिए कठोर सुझाव दिये हैं और वे कार्यान्वित किये जा रहे हैं। अस्पृश्यता-विरोधी मंडलके कार्यकारी पदपर होनेकी माँग करनेके बजाय, आप अपने सलाहकार मडल बना सकते हैं जो यदा-कदा अपने सुझाव अस्पृश्यता-विरोधी मंडलोंको देते रहें। इस तरह आप अपने-आपको बहुत उपयोगी बना सकते है।

आपने मुझसे पूछा है कि मैंने आपके साथ ठहरनेके बजाय सेठ रणछोड़लालका आतिथ्य क्यों स्वीकार किया है? अगर मैं यह कहूँ कि मैं उनके पास आपके हितमें ठहरा हूँ, तो क्या आप मेरी बातका विश्वास करेंगे? आप यह तो नहीं चाहते हैं कि मैं आपके प्रति अपने स्नेहका प्रदर्शन करूँ? यदि आपके पास ठहरना ही परीक्षा होती तो वैसा करनेसे भी मुझे कोई संकोच नहीं होता। मैं चाहता हूँ कि आप मेरे कहनेपर विश्वास रखें कि मैं आपके यहाँ रहनेकी निस्बत यहाँ रहकर आपके लिए ज्यादा अच्छा काम कर सकता हूँ। यदि सेठ रणछोड़लाल अस्पृश्यताके पक्षपाती होते तो बात अलग थी। तब मै उनके पास ठहरनेकी बात नही सोचता। परन्तु आप देख सकते हैं कि उन्होंने मेरे लिए अपना घर हरिजनोंका घर बना डाला है।

एक आवाज: हमें आपका रणछोड़भाईके पास ठहरना बुरा नहीं लगता है। परन्तु सनातनी लोग हमें चिढ़ा रहे हैं कि "देखो आपके गांधी भी आपसे किनारा करते हैं और मिल-मालिकोंके पास ठहरते हैं।"

देखिए, यदि आप इन मामलोंमें सनातनियोंकी बात सुनेंगे तो आप कहींके नहीं रहेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-७-१९३३

३३५. बातचीत: अहमदाबादके अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ताओंसे[1]

[१९ जुलाई, १९३३][2]

गांधीजी ने गुजरातमें अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ताओंसे मिलने और अपने सुझाव देकर उनकी मदद करनेका भी मौका निकाला। कार्यकर्त्ताओंने गाँवोंमें काम करनेकी कठिनाइयाँ बताईं। उन्होंने कहा कि उन्हें इनकी जानकारी है और सुझाव दिया कि भविष्यमें कुछ समयतक तो गाँवोंमें मुख्य रूपसे कल्याण-कार्य ही होगा।

१. यह महादेव देसाई द्वारा लिखित "अहमदाबाद लेटर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
२. **बॉम्बे क्रॉनिकल**, २०-७-१९३३ से; देखिए पिछला शीर्षक भी।

हरिजन बच्चोंके लिए स्कूल और हरिजनोंके लिए कुएँ और मन्दिर बनवाने होंगे। मनमें सुधारके समर्थक सवर्ण हिन्दुओंकी सहानुभूति पानेका भी ध्यान रखना होगा। उन्हें अपने बच्चोंको इन स्कूलोंमें भेजने और केवल सवर्ण हिन्दुओं द्वारा उपयोग किये जानेवाले कुओं और मन्दिरोंके बजाय हरिजनोंके लिए बनाये कुओंका उपयोग करने और हरिजनोंके लिए खोले गये मन्दिरोंमें जानेके लिए कहना चाहिए। इसलिए यह जरूरी है कि हरिजनोंके ये स्कूल, कुएँ और मन्दिर सवर्ण हिन्दुओंके लिए बने स्कूलों, मन्दिरों और कुओंसे बेहतर हों।

कस्बों और शहरोंमें काम अपेक्षाकृत आसान है। कार्यकर्त्ता अहमदाबादमें सवर्ण हिन्दुओंसे अस्पृश्यता-विरोधी प्रतिज्ञाओंपर हस्ताक्षर करवा रहे हैं। गांधीजी ने सुझाया कि अब कार्यकर्त्ताओंको प्रतिज्ञाओंपर हस्ताक्षर करनेवाले लोगोंसे कहना चाहिए कि वे हरिजनोंके प्रति अपनी सहानुभूतिको क्रियात्मक रूप दें। इस प्रयोजनकी सिद्धिके लिए वे घर-घर जायें और ऐसे हर घरसे जो निश्चित रूपसे सुधारका विरोधी न हो, चन्दा इकट्ठा करें। चन्देकी रकम बहुत कम ही क्यों न हो। हजारों घरोंसे इस तरह इकट्ठे किये गये तांबेके पैसोंका मूल्य मुट्ठी-भर अमीर लोगोंसे इकट्ठे किये गये रुपयोंसे बहुत ज्यादा होगा।

हरिजन सेवक संघकी स्थानीय शाखा द्वारा एक हरिजन कन्या छात्रावास खोला गया था। परन्तु भंगी लड़कियोंको छात्रावासमें प्रवेश पानेकी प्रेरणा देनेमें कार्यकर्त्ताओंको बड़ी कठिनाई हुई, यहाँतक भय था कि यदि भंगी लड़कियाँ वहाँ आ गईं तो अन्य हरिजन वर्गोंकी लड़कियाँ वहाँसे चली जायेंगी। इसपर गांधीजी ने स्पष्ट सलाह दी कि अन्य हरिजन वर्गोंकी लड़कियोंके वहाँसे चले जानेका खतरा मोल लेकर भी, भंगी लड़कियोंको छात्रावासमें आनेकी प्रेरणा दी जानी चाहिए।

घर-घर जाकर चन्दा इकट्ठा करनेके अपने सुझावपर अमल करते हुए गांधीजी ने स्वयं सायंकालकी प्रार्थनामें आनेवाले लोगोंसे अनुरोध किया कि वे हरिजन-कार्यके लिए पैसे दें। इसकी तत्काल अनुकूल प्रतिक्रिया हुई।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-७-१९३३

३३६. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

१९ जुलाई, १९३३

मैंने हाउस ऑफ कॉमन्सकी भारत बजट-सम्बन्धी बहसमें सर सैम्युअल होरके भाषणकी रिपोर्ट देखी है। यह दूसरी आश्चर्यजनक चीज है और वाइसरायके तार जैसी ही दुःखदायी है।

मैं कह सकता हूँ कि उपवास शुरू करनेके बादसे मैं नियमित रूपसे अखबार नहीं पढ़ सका हूँ। उपवासके दौरान दस-बारह दिन तो मैं समाचारपत्रोंपर नजरतक नहीं डाल सका; और यह सिर्फ इसलिए कि मेरे पास वक्त ही नहीं था। इसलिए मै यह नही कह सकता कि समाचारपत्रोंने औपचारिक सम्मेलनकी कार्यवाहियोंको सही रूपमें व्यक्त किया है या नही। इससे मेरा मतलब यह नहीं है कि प्रकाशित विवरण अनिवार्य रूपसे गलत हैं; मैं तो इतना ही कहना चाहता हूँ कि गोपनीय कार्यवाहियोंकी अनधिकृत रिपोर्टोंकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए था। निस्सन्देह, अनौपचारिक सम्मेलनमें मैंने या किसी औरने क्या कहा, वाइसरायके लिए इसका कोई महत्त्व नहीं होना चाहिए था। यदि भेंट करनेकी अनुमति दी होती तो भेटमें वाइसराय स्वयं जान लेते कि हमारा क्या कहना है। सम्मेलनकी कार्यवाही तो जान-बूझकर इसलिए गोपनीय रखी गई जिससे भेंटके लिए की गई मेरी प्रार्थनामें कोई बाधा न पड़े।

मुझे कहा गया है कि मैं अब भी उन रिपोर्टोंके सही होनेसे इनकार कर दूँ। समाचारपत्रोंकी फाइलें देखे बिना मैं यह कैसे कर सकता हूँ और मैं कितने समाचारपत्र पढ़ूँ? मैं सूचित करना चाहता हूँ कि योजनामे सौदेबाजीकी कोई बात नहीं थी। इतना काफी होना चाहिए था कि भेंटकी मेरी प्रार्थनाके साथ कोई शर्त नहीं रखी गई थी। भेटकी वह प्रार्थना तो केवल शान्तिकी सम्भावनाएँ खोजनेके लिए थी। मैं समझता हूँ, इसपर इसी दृष्टिसे विचार किया जाना चाहिए था। लेकिन अब जो स्थिति है उसमे मुझसे शायद यह सवाल करना ही सही है कि क्या खुद मुझे देशको सविनय अवज्ञा अपनानेकी सलाह देनेका पछतावा है और क्या मैं अब भी सविनय अवज्ञा वापस लेनेकी सलाह देनेको तैयार हूँ। उस प्रश्नका उत्तर[1] मैं पहले ही दे चुका हूँ।

इसके बाद भेंट करनेवालेने पूछा कि क्या समझौतेका द्वार अन्तिम रूपसे बन्द हो चुका है। गांधीजी ने तत्काल उत्तर दिया :

१. देखिए पृ० २८६-९।

मेरे लिए नही। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, द्वार कभी बन्द नही होगा और जब भी मुझे रत्तीभर भी अवसर मिलेगा, मै वाइसरायका द्वार खटखटानेमे संकोच नहीं करूँगा। परन्तु मैं समझता हूँ कि जहाँतक अधिकारियोंका सम्बन्ध है, उन्होंने तो द्वार अन्तिम रूपसे बन्द कर दिया है और जबतक कांग्रेस सविनय अवज्ञा पूरी तरह वापस नहीं ले लेती, द्वार बन्द रहेगा, और मुझे विश्वास है कि वह कभी आन्दोलन बन्द नहीं करेगी।

जब उनसे यह पूछा गया कि क्या ऐसी कोई सम्भावना है कि आप ३१ जुलाईसे पहले सविनय अवज्ञाको प्रोत्साहित करनेके लिए कुछ करेंगे? गांधीजी ने कहा :

इस महीनेकी समाप्तिसे पूर्व, जिस अवधिमें सविनय अवज्ञा (आन्दोलन) स्थगित है, मैं ऐसा कोई सार्वजनिक काम नहीं करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-७-१९३३

३३७. भेंट : 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको

२० जुलाई, १९३३

सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें बहुत-से लोग भेड़-चाल चलते हैं, इसलिए वे किसीके नेतृत्वमें काम करते हैं और एकसाथ डूबते हैं या पार लगते है। व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा में हरएक अपना नेता स्वयं होता है और इसलिए एककी कमजोरीका दूसरे व्यक्तिपर असर नही होता। एक लाख व्यक्ति व्यक्तिगत रूपमें सविनय अवज्ञा कर सकते हैं, परन्तु इसका अर्थ यह होगा कि उनमें से हरएकने आत्मनिर्भर होकर अपनी ही जिम्मेदारीपर काम किया है। इसका यह अभिप्राय नहीं कि लोग एकमत नहीं है और वे अलग-अलग दिशाओंमें काम कर रहे हैं। इसके विपरीत, यदि अलग-अलग लोग एक उद्देश्य सामने रखकर और एक झंडेके नीचे काम करें, एक-दूसरे पर निर्भर रहे बिना ही काम क्यों न करें, वे उसी एक दिशामें जायेंगे। व्यक्तिगत सत्याग्रहकी खूबी यह है कि इसमें पराजय नामकी कोई चीज नही है और इसका दायरा भौतिक शक्ति द्वारा कभी सीमित नहीं किया जा सकता, फिर वह शक्ति कितनी ही बड़ी क्यों न हो।

व्यक्तिगत सविनय अवज्ञामें ऐसी हर चीज शामिल है जिसे व्यक्ति उचित समझता है और जिसके लिए कांग्रेस द्वारा अहिंसा और सत्यके सिद्धान्तके अनुसार अनुमति दे दी गई।

प्र० — क्या जेलमें बन्द होना देशके लिए सहायक है?

उ० — यदि मेरा वैसा विचार न होता तो मैंने सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द कर दिया होता। सविनय अवज्ञाके पीछे यह सत्य है कि अन्यायपूर्ण शासन

पद्धतिमें स्वतन्त्रताप्रेमी व्यक्ति अपने-आपको जेलसे बाहरकी अपेक्षा जेलमें अधिक स्वतन्त्र मानता है।

प्र० — पूना सम्मेलनके परिणामस्वरूप क्या आप ऐसा महसूस नहीं करते कि कांग्रेस दो या दोसे अधिक दलोंमें बँट जायेगी।

उ० — हालाँकि कांग्रेसियोंमें तीव्र मतभेद है, फिर भी मुझे किसी ऐसे परिणामकी कोई आशंका नही है। पूना सम्मेलनमे अध्यक्षके प्रति जिस तरह तत्काल आज्ञाकारिताका प्रदर्शन किया गया, जितना अधिक सद्भाव और जितना कम रूखापन देखनेमें आया, वैसा मैंने कहीं नहीं देखा। निस्सन्देह मुझे विश्वास है कि कांग्रेस दलमें कोई विघटन नहीं होगा और आप देखेंगे कि जब कार्यवाहक अध्यक्ष द्वारा प्रकाशित की जानेवाली संशोधित योजना सामने आयेगी तो उसमें कांग्रेसके लगभग सभी मतोंको स्थान मिलेगा।

प्र० — क्या आप धीरे-धीरे सविनय अवज्ञाको वापस लेंगे?

मैं किसी भी आन्दोलनमें गतिरोधको प्रतिष्ठा-भंग या कमजोरी कभी नहीं मानता। इसी कारण मैंने सामूहिक सविनय अवज्ञा बन्द कर देनेकी सलाह दी है। यह स्पष्ट ही गतिरोध स्वीकार करना है। यदि मुझे ऐसा महसूस होता कि सविनय अवज्ञाका और कोई रूप नहीं हो सकता और यदि मेरी इस रायसे अन्य कोई भी सहमत न होता, तो भी मै उसे पूरी तरह वापस लेनेकी सलाह दे देता। परन्तु सत्याग्रहमें तो व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा अन्तिम चीज है; इसके आगे टिकनेका कोई भी उपाय कारगर नहीं हो सकता। इसीलिए मैंने दृढ़तासे कहा है कि यह एक अजेय शक्ति है। जहाँतक वाइसरायसे भेंटका सम्बन्ध है, यह प्रयत्न इसलिए किया गया था कि मेरी और सम्मेलनकी हार्दिक इच्छा थी कि यदि भेंटसे कोई सम्मानजनक समझौता हो जाता है तो व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन भी बन्द कर दिया जाये। इसलिए आप देख सकते हैं कि भेंटके लिए की गई प्रार्थनाके पीछे ऐसी कोई जिद्द नहीं थी कि व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा किसी भी परिस्थितिमें वापस नहीं ली जायेगी।

जबतक सरकार चाहेगी तबतक मै यहाँ हूँ, अन्यथा कम-से-कम कैदकी स्थगन अवधिके अन्ततक यानी ३१ जुलाईतक तो हूँ ही।

मेरी समझमें इंग्लैंडमें हमारे जो मित्र हैं वे फिलहाल कुछ नही कर सकते। मेरे लिए यह बात स्पष्ट है कि वाइसरायका कहना ऐसा नहीं है जिससे सहमत हुआ जा सके। इस कठिनाईपर विजय पानेका सिवाय इसके कोई और तरीका नहीं है कि लोग और अधिक तथा शुद्ध तपश्चर्यामें जुट जायें।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य: नारायण देसाई।

३३८. तार : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

अहमदाबाद,
२१ जुलाई, १९३३

सरकारके सचिव
गृह विभाग, पूना

मीराबाईसे मिलनेकी अनुमति तत्काल देनेके लिए आभारी हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०) (११), भाग-२, पृ० ३७।

३३९. पत्र : जमनालाल बजाजको

अमृत भवन, एलिस ब्रिज,
२१ जुलाई, १९३३

चि० जमनालालजी,

इधर तुम्हारा कोई पत्र नहीं मिला। मैंने आशा रखी थी। पूनासे लिखा मेरा पत्र[1] मिला होगा। आश्रमकी आहुति देनेके सम्बन्धमें बातचीत कर रहा हूँ। लगभग निश्चित ही है। आज निश्चय हो जायेगा। इस आहुतिका अनुकरण करना जरूरी नहीं है। इसको आदर्श मानकर जो अपना आचरण बनाना चाहें, वे तो बनायेंगे ही। वर्धा आश्रमके सम्बन्धमें भी फिलहाल साबरमतीका अनुकरण करनेकी आवश्यकता नहीं। समय मिला तो विशेष रूपसे लिखूँगा।

अब्दुल गफ्फारखाँका लड़का, जो विलायतमें था और वहाँसे अमेरिका गया था, मुझसे पूनामें मिला था। अभी बम्बईमें है। अमेरिकाके शक्करके कारखानेमें काम सीखकर आया है। कितना सीखा है, सो तो भगवान जाने। खुर्शेदबहन वगैरहकी सलाह है कि वह शक्करके किसी कारखानेमें फिलहाल काम करे तो अच्छा। अपने कारखानेमे उसे आजमा देखो। उसने मुझपर अपनी होशियारीकी छाप नहीं डाली। भलमनसाहतकी डाली है। अभी तो कहता है कि आप जैसा कहेंगे, वैसा करूँगा। इस समय तो उसे वेतन देनेकी बात नहीं है। एक महीनेके बाद यदि वह काममें

१. देखिए पृ० २८६।

कुशलता दिखाये तो वेतन तय किया जा सकता है। अभी तो उसके लिए रहने-खानेका ही इन्तजाम करना पड़ेगा।

मेरी तबीयत ठीक है। रणछोड़भाईके यहाँ ठहरा हूँ। आश्रम रोज जाता हूँ। आज मीराबहनसे मिलनेकी आशा रखता हूँ। इजाजतके लिए तार दिया था, सो वह मिल गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९१९) से।

३४०. एक अमेरिकी आलोचना[1]

इसी पिछले उपवासके बारेमें पश्चिमसे मुझे जो पत्र मिले है, उनमें से ज्यादातर सद्भावनासे भरे है और उनमें उपवास तथा उसके पीछे निहित उद्देश्यकी सराहना की गई है। परन्तु, निम्नलिखित पत्र मैत्रीपूर्ण पत्रोंमें अभिव्यक्त मतको सन्तुलित कर देता है और यह सम्भवतः बहुसख्याके मतका प्रतिनिधि है:

> जैसाकि दैनिक पत्रोंकी संक्षिप्त सूचनाओंमें बताया गया है, आपका इक्कीस दिनका उपवास अब समाप्त हो गया है। पर इससे क्या मिला? दुनियाको यह बताया गया था कि यह तथाकथित अस्पृश्योंके लाभके लिए है। उनके लिए आखिर इसने क्या किया?
>
> (महात्मा गांधीकी खबर अब मुखपृष्ठपर नहीं छपती। दैनिक पत्रोंमें हमें उन्हें भीतरके पृष्ठोंमें खोजना पड़ता है।)
>
> भारत, जिसकी संस्कृति और सभ्यता ऐतिहासिक कालसे बहुत पुरानी है, जिसे ईसाके शिष्य टॉमसने पहली शताब्दीमें ईसा मसीहकी नवीन वाणी दी, और जिसे पिछली कुछ शताब्दियोंमें प्रकाशके सम्मुख आनेके अनेक अवसर मिले, अभी भी अन्धविश्वासके अन्धकारमें रह रहा है। उसके समाजकी जाति-व्यवस्था आधुनिक संसारके लिए सबसे बड़ा नासूर है।
>
> इलाज क्या है? एक अकेले आदमीका — ऐसे आदमीका उपवास जिसने वृद्धावस्थामें अपने कपड़े उतार दिये हों और जो नंगे पाँव लन्दनकी सड़कों पर घूमा हो, निश्चय ही उसका इलाज नहीं है, फिर वह उपवास चाहे कितनी ही अवधिका क्यों न हो, और वह आदमी चाहे कितना ही सच्चा क्यों न हो, उसमें अमेरिकी प्रचार-पद्धतियोंके कुछ भौंडे रूपोंकी इतनी गन्ध है कि वह कारगर नहीं हो सकता।

१. लेखका सारांश **बॉम्बे क्रॉनिकल**, २२-७-१९३३ में "पूना, २१ जुलाई, १९३३" तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत छपा था।

कोई एक चीज भारतकी निचली जातियोंको उनकी गरीबी और अधोगति से उबार नहीं सकती। यदि कभी ऐसा हुआ, तो वह बहुत-से प्रभावोंका कार्य होगा जिनमें प्रत्येकका एक ही लक्ष्य की ओर योगदान होगा। शुरूआत खुद उनके अन्दरसे होनी चाहिए।

बेहतर हालतके लिए एक मानसिक उत्कंठा होनी चाहिए।

कोई भी नस्ल जिसकी स्त्रियाँ पराधीन हैं या, जैसाकि आपके यहाँ है, 'आत्माहीन' हैं, मानव-प्रगतिमें कभी ऊँची नहीं उठी है।

धार्मिकताके बाद दूसरा स्थान स्वच्छताका ही है। आपके लाखों लोग घिनौनी गन्दगीमें रह रहे हैं, और जबतक वे उस कीचड़से निकलने नहीं लगते, वह उनके उत्थानमें बाधा बनी रहेगी।

स्वच्छ मन और स्वच्छ तन एक नये जीवनकी बात सोचेंगे, जिसमें 'आत्माकी खातिर शरीरको पीड़ित करने' जैसी कोई खुराफात नहीं रह सकती। उदाहरणके लिए, आपके 'साधु-महात्मा' किसी विकृत आसनमें वर्षों बैठे रह कर आत्माकी मुक्तिके लिए खुले आम अपने शरीरको यन्त्रणा देते हैं। कोई भी प्रबुद्ध व्यक्ति उनकी बातको अब गम्भीरतासे नहीं लेता, वे खुद उसे गम्भीरतासे लेते हैं, मुझे तो इसमें भी शक है। वे बैठकर चिन्तन करते हैं या बस बैठे ही रहते है?

अन्धविश्वासपूर्ण धार्मिक कृत्य, जैसेकि शरीरको कीलोंसे बींध लेना, जीभमें बर्छी भोंक लेना और अन्य वीभत्स यन्त्रणाएँ, जिनकी बात अमेरिका और विश्वमें अब सभीको मालूम है, मनमें केवल घृणा और यह भाव पैदा करते हैं कि वस्तुतः वे ही 'अस्पृश्य' हैं।

मैंने कैथेरीन मेयोकी पुस्तक 'मदर इंडिया' तो नहीं पढ़ी, पर प्रामाणिक लोगोंने मुझे बताया है कि (उसके विरुद्ध भारतके आक्रोशके बावजूद) वह तथ्योंका, भयानक तथ्योंका संकलन है, और मैं ऐसे लोगोंको जानता हूँ जिनकी तबीयत उसे पढ़कर बहुत खराब हो गई है।

भारतके बदनसीब लोगोंके लिए, जिनके ध्येयका आपने इतने गौरवपूर्ण ढंगसे प्रतिपादन किया है, यदि आप सचमुच कुछ करना चाहते है, तो सस्ते प्रचारके अपने इन प्रयासोंको छोड़ क्यों नहीं देते, एक शिक्षा-व्यवस्था स्थापित क्यों नहीं करते, एक ऐसा तरीका क्यों नहीं निकालते जिससे ज्यादा-से-ज्यादा लोग लाभ उठा सकें? और तब आप देखना कि विश्वके प्रबुद्ध राष्ट्र, विशेष कर अमेरिका आपका समर्थन करेंगे। यह बड़ा भारी काम है, क्योंकि छः करोड़ लोगोंतक पहुँचना है—और अस्वास्थ्यकर सामाजिक परिस्थितियोंके कारण, जिन्हें शिक्षा ही सुधार सकती है, उनकी संख्या बड़ी तेजीसे बढ़ती जा रही है—और सदियों पुरानी परम्परापर काबू पाना है। यह कार्य कई

पीढ़ियोंको करना होगा, पर यह कारगर रहेगा। यह ऐसी ठोस नींव होगी जिसपर आप अपनी भावी महानताका निर्माण कर सकते हैं।

ज्ञान, प्रगति, महत्त्वाकांक्षा और स्वशासनकी आत्मिक इच्छासे एक सूत्रमें बँधे छः करोड़ लोगोंके एकजुट राष्ट्रको उनके अपने ही देशवासियोंकी कोई भी अल्पसंख्या या कोई अन्य शक्तिशाली राष्ट्र अपनी दासतामें नहीं रख सकता।

किसी समाजसेवी द्वारा उठाये गये कुछ कदमोंके जो लोग विरुद्ध होते हैं, वे अपना विरोध उसके आगे व्यक्त करनेका आम तौरपर कष्ट नही उठाते। वे उसकी अभिव्यक्ति स्थानीय समाचारपत्रोंमें करते हैं। इस महान हरिजन आन्दोलनमें मैं विश्वकी मैत्री अपने साथ रखना चाहता हूँ; इसलिए इस पत्रका उत्तर देना ठीक रहेगा।

पर इस पत्रपर ध्यान देना कठिन है, क्योंकि यह पक्षपातसे शुरू होता है और पक्षपातपर ही खत्म होता है। जाति-व्यवस्था "आधुनिक संसारके लिए सबसे बड़ा नासूर" नहीं है। उसे शायद यहतक पता नही है कि यह व्यवस्था है क्या। इसमें जो बुराई घुस गई है उसके खिलाफ मैंने खुद आवाज उठाई है। परन्तु वह बुराई मूल व्यवस्थाके लिए विजातीय है, और दूर की जा सकती है जैसेकि की जा रही है। अस्पृश्यता सबसे बड़ी अपवृद्धि है। और दुनिया यह जानती है कि इस बुराईसे जूझनेके लिए भगीरथ प्रयत्न किये जा रहे है। पत्र-लेखक जिस उपवासको हिकारतकी नजरसे देखता है, वह इस आन्दोलनकी सहायताके लिए ही था। पत्र-लेखकने उपवास और मेरी पोशाकको "अमेरिकी प्रचार-पद्धतियोंके भौंडे रूपों" से जिस तरह मिश्रित किया है, मुझे उससे विचलित नहीं होना है। हलवेका प्रमाण तो उसे खानेमें ही मिलेगा।

परन्तु इस मतका हृदयसे समर्थन किया जा सकता है कि "कोई एक चीज भारतकी निचली जातियोंको उनकी गरीबी और अधोगतिसे उबार नहीं सकती" और कि "शुरुआत खुद उनके अन्दरसे होनी चाहिए।"

इससे करीब-करीब अगले वाक्यमें ही भारतकी स्त्रियोंके बारेमें यह लांछन दोहराया गया है कि वे 'आत्माहीन' हैं। इस लांछनकी पोल खुल चुकी है। पत्र-लेखकको यह बताना शायद बेकार है कि बहुत-से नामी विदेशी लेखक इस बातपर आश्चर्य प्रकट कर चुके हैं कि भारतीय स्त्रियोंको अपेक्षाकृत अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त है। इसका अर्थ यह नहीं है कि उनकी दशाको सुधारनेके लिए अभी बहुत-कुछ करना शेष नहीं है। पर यह चीज निर्विवाद है कि जहाँ पश्चिममें स्त्रियोंकी दशामें सुधार हाल ही में हुआ है, वहाँ भारतीय स्त्रियाँ आवश्यक मामलोंमें प्राचीन कालसे ही ऐसी स्वतन्त्रताका उपभोग करती आ रही हैं जो विदेशी प्रेक्षकोंकी नजरसे भी नही छिपी है।

यह स्पष्ट है कि पत्र-लेखकने भारतीय आदतों और प्रथाओंके बारेमें जो साहित्य पढ़ा है, वह अज्ञानवश और स्वार्थवश रचित मिथ्या वर्णनोंसे भरा है। हम लोगोंकी अस्वच्छताके बारेमें जितनी सख्तीसे मैंने लिखा है, शायद ही किसीने लिखा हो।

परन्तु उसे 'घिनौनी गन्दगी कहना' एक 'भौंडा लांछन' है। यह दूसरोंकी आदतोंके प्रति उग्र असहिष्णुताका ही द्योतक है।

पत्र-लेखकने यदि अज्ञान और सनसनीसे भरे साहित्यपर विश्वास करनेकी बजाय चीजोंको अपनी आँखोंसे देखा होता, तो वह तथाकथित योगियों द्वारा सहन की जाने-वाली यन्त्रणाओंके बारेमें इस तरहके उच्छृंखल सामान्यीकरणमें न पड़ता। जिस तरह अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता, उसी तरह किसी एक तथाकथित योगीके आत्म-पीड़नमें लगनेसे ही यह लांछन सिद्ध नहीं हो जाता कि जो लोग इन्द्रिय-निग्रह द्वारा आत्माकी मुक्तिके लिए प्रयत्न करते है, उनमें आत्मपीड़नका आम चलन है। शरीरको आत्माके वशमें करनेके लिए इन्द्रिय-निग्रह अनिवार्य है और उसका मानव-जातिमे आम चलन है।

मिस कैथेरीन मेयो और उसकी लांछनोंसे भरी कृति 'मदर इंडिया'के पढ़नेसे "कुछ अज्ञात लोगोंकी तबीयत बहुत खराब हो जाने" की बात मुझे छोड़ देनी चाहिए। यदि कुछ इस तरहके पाठक हैं जिन्होंने उस पुस्तकको, जिसने भारतकी मोरियाँ खोल दी हैं और पाठकोंको यह विश्वास दिलाया है कि यही भारत है, पढ़कर अपनी तबीयत खराब कर ली है, तो निश्चय ही वे दयाके पात्र है।

अन्तिम वाक्योंमे पत्र-लेखक यह सलाह देता है कि 'अस्पृश्यों'की दशा सुधारनेके लिए क्या मार्ग अपनाना चाहिए। 'हरिजन'के पृष्ठ उसे यह बता सकते है कि हरिजन सेवक संघ भारत-भरमें किस तरहका रचनात्मक कार्य करनेकी कोशिश कर रहा है। जो अमेरिकी मित्र इस आन्दोलनका नैतिक समर्थन कर रहे हैं, उनका यह कर्त्तव्य है कि वे इन पृष्ठोंमें प्रति सप्ताह निकलनेवाली कार्यकी रिपोर्टोका सार अमेरिकी जनताके सम्मुख रखें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-७-१९३३

३४१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२२ जुलाई, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने तुम्हें लिखनेकी कई बार इच्छा की, परन्तु लाचार था। मुझमें रत्ती-रत्तीकर शक्ति लौट रही थी और उसे मैं सामनेके आवश्यक कार्यको निपटानेमें लगाता रहा।

माताजी और कमलाके साथ बहुत अच्छा समय बीता। सरूप और रणजीतसे अधिक नहीं मिल सका।

माताजी को कृष्णाकी चिन्ता है। उसके भविष्यके बारेमें उन्होंने मुझसे लम्बी बात-चीत की। इस मामलेमें तुम्हारे पास मेरे लिए कोई सुझाव हो तो बताओ। यों मेरी गतिविधियाँ अनिश्चित हैं। परन्तु इसकी कोई चिन्ता नहीं।

देवदास और लक्ष्मीको मैंने पूनामें छोड़ा था। अब वे यहाँ आनेवाले हैं। बहुत करके देवदास अब दिल्लीमे बस जायेगा। महादेव, बा और प्रभावती मेरे साथ हैं। लगता है कि वे सब शीघ्र ही जहाँ-तहाँ चले जायेंगे।

उपवासके पहले जितनी शक्ति प्राप्त करनेमें बहुत समय लग रहा है। परन्तु मेरी हालत धीरे-धीरे बेहतर होती जा रही है।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० १११

३४२. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

२२ जुलाई, १९३३

प्रिय बहन,

तुम्हारे अमोघ प्रेमकी याद भूलती ही नहीं। सोचा भी नही था कि मैं तुम्हें इतनी परेशानीमें डाल दूँगा। किन्तु लाचार था। लिखनेसे भावनाकी कीमत कम हो जाती है, तो भी लिखे बिना नही रह सकता इसलिए इतना लिख डाला है। मेरी तबीयत अच्छी रहती है। छोटे-बड़ों — सबको मेरा आशीर्वाद। सेवकोंको भी आशीर्वाद। उनकी सेवा भी कुछ मामूली नही थी। मुझ-सा गरीब बदलेमें क्या दे सकता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९)से। सी० डब्ल्यू० ४८३१ से भी; सौजन्य : प्रेमलीला ठाकरसी।

३४३. पत्र : जमनालाल बजाजको

२२ जुलाई, १९३३

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। प्रश्न तो सब ठीक है। भरसक जवाब दे रहा हूँ। आश्रम सौप देनेमे मतलब यह है कि जो वस्तु अन्तमें उन्हें ले ही लेनी है वह उन्हें सौंप देना अधिक अच्छा है। प्रतिवर्ष लगानके लिए माल उठा ले जायें, उससे तो शौकसे सारी जमीन ही ले लें। फिर जब हजारों लोग बिना इच्छाके बरबाद हो गये तो सत्याग्रह आश्रम कहलानेवाला आश्रम स्वेच्छासे आत्मत्याग करे, यह इष्ट है और धर्म भी मालूम होता है। परन्तु इसका अर्थ यह नही कि अभीसे वहाँके आश्रमको

भी ऐसा ही करना है। इसके विपरीत मुझे लगता है कि वहाँसे जो भी व्यक्ति निकल सकें, उन्होंसे सन्तोष मान लें। विनोबा तो अब नहीं निकल सकते। उन्हें हरिजन-सेवाके लिए रहना है। महिला आश्रमका पूरा उपयोग करना चाहता हूँ। क्या वहाँ बच्चे भी आ जायें? कितनी ही बहनें तो वहाँ आयेंगी ही। नी० और अमला बहनका प्रश्न है ही। उन्हें वहाँ भेजे बिना दूसरा उपाय नहीं है। दोनोंसे हरिजन-सेवाका काम लेना ही है। अभी तो दोनोंको तैयार होना है। नी० का पुरुषोंसे सम्बन्ध कम होना चाहिए। जंगम सम्पत्ति यदि सरकार न ले तो कहीं खुलेमें रखेंगे। गायोंका प्रश्न बड़ा है। विचार कर रहा हूँ।

तुम्हें अभी कूद पड़नेकी जल्दी नहीं करनी है। समय आनेपर कूदना। अभी इतना ब्यौरा काफी है न? बहुत काम है, किसी तरह समय निकालकर लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२०) से।

३४४. पत्र : देवदास गांधीको

२२ जुलाई, १९३३

चि० देवदास,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिल गया है। आश्रमका बलिदान कर देनेका निर्णय हो चुका है। यहाँ आनेके बारेमें बात तो हो चुकी है, ऐसा मुझे याद है। अब जैसा तुम्हें ठीक लगे, वैसा करना। यदि तत्काल दिल्ली जाना आवश्यक हो तो अवश्य चले जाओ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०१९) से।

३४५. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

शनिवार [२२ जुलाई या उसके पश्चात्] १९३३[1]

चि० प्रेमा,

अकल्पित बाधा न आई तो आज तीन बजे पहुँचूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३५०) से। सी० डब्ल्यू० ६७८९ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१. **बापुना पत्रो–५ : कु० प्रेमाबहन कंटकने** में प्रेमाबहनने कहा है कि उन्होंने गांधीजी को आश्रम पुस्तकालयमें आनेका निमंत्रण "संभवत: जुलाई, १९३३" में उस समय दिया था जब गांधीजी रणछोड़लालके बंगलेमें ठहरे हुए थे। १९३३ में गांधीजी अहमदाबादमें २० से ३१ जुलाईतक ही थे।

३४६. तार : श्रीमती सेनगुप्तको

२३ जुलाई, १९३३

श्रीमती सेनगुप्त
मार्फत "एडवांस", कलकत्ता

अभी-अभी सेनगुप्तकी[१] आकस्मिक मृत्युकी बात सुनी। आपकी क्षति राष्ट्रकी भी क्षति है। अपने प्रति संवेदना रखनेवाले अनगिनत लोगोंमेंसे मुझे भी एक मानिए।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५३०) से।

३४७. पत्र : रमाबहन जोशीको

२३ जुलाई, १९३३

चि० रमा,

तुम्हारे अच्छे होनेकी खबर रोज मिलती रहती है। अब थोड़े दिनोंमें बिलकुल स्वस्थ हो जाओगी। मन्दिरमें पहुँचनेसे पहले एक बार मिल पानेकी आशा करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५४) से।

१. राँचीमें कैद यतीन्द्रमोहन सेनगुप्तकी २२ जुलाई, १९३३ की रातको अचानक पक्षाघातके दौरेसे मृत्यु हो गई थी।

३४८. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२४ जुलाई, १९३३

प्रिय सतीशबाबू,

आपका छोटा-सा, मधुर और महत्त्वपूर्ण पत्र मिला। काश, मैं उसके उत्तरमें आपको एक लम्बा प्रेमपत्र भेज सकता। पर वैसा मै कर नहीं सकता। समय ही नहीं है।

हाँ, मैं और आश्रमके बहुत-से सहवासी चले जायेंगे। आश्रम भंग किया जा रहा है और सरकारको सौप दिया जाना है, या मूक सृष्टिके लिए छोड़ दिया जाना है कि वह उसपर अधिकार कर ले। चल सम्पत्ति, जबतक सरकार उसे नहीं चाहेगी, मित्रोंके पास धरोहर रहेगी। उचित समयपर आपको कागजात मिल जायेंगे। मेरे लिए सिर्फ यही रास्ता रह गया था। परन्तु आश्चर्यकी बात यह है कि आश्रमके बच्चोंको मेरे द्वारा सुझाये गये कदमका औचित्य समझमे आ गया। इस कदमका आपपर, प्रतिष्ठानपर, या साबरमतीके ढंगपर व्यवस्थित किसी अन्य संस्थानपर कोई असर नहीं पड़ता। उनका वक्त अभी नहीं आया है; शायद कभी न आये। व्यक्तिगत रूपसे आप हरिजन-ध्येयके लिए और हेमप्रभा खादीके लिए पूर्णतया समर्पित हैं। आपकी चाहे कैसी भी आलोचना क्यों न हो, पर फिलहाल किसी भी हालतमे इससे विदा नहीं लेनी है। यदि आवश्यकता पड़े तो आप इस पत्रका उपयोग कर सकते हैं। मेरे पास इस बहसमे पड़नेका समय नहीं है, और न यह आवश्यक ही है, कि जो नियम साबरमतीपर लागू किया जा रहा है, वह मैं आप और अन्य लोगोंपर भी क्यों नही लागू करता।

मुझे आशा है कि यदि 'बंगला हरिजन'की बिक्रीसे खर्चा न निकलता होगा तो आप निस्संकोच उसे बन्द कर देगे। बस्तियोंमें आप जो अद्वितीय कार्य कर रहे हैं, उससे किसी और चीजके लिए आपके पास सचमुच समय ही नही बचता होगा। आपको बंगालमें अंग्रेजी संस्करणका और देशी भाषाके समाचारपत्रोंका उपयोग करना चाहिए।

मुझे इसमे जरा भी सन्देह नहीं है कि मैं जेलमे बन्द कर दिये जानेपर भी हरिजन-कार्य करता रहूँगा। परन्तु क्या होना है, यह ईश्वर ही ज्यादा अच्छी तरह जानता है।

स्नेह।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०७१) से।

३४९. पत्र : अमृतलाल वी० ठक्करको

२४ जुलाई, १९३३

भाई ठक्कर बापा,

'हरिजन' शास्त्री बीमार पड़ गया है। ज्वरसे परेशान है। पूनाकी खुराक माफिक नही आई। अभी तो किसी प्रकार निभा रहा हूँ। मलकानीको भेज सको तो काम चल जायेगा। किन्तु न भेज सको तो भी कोई हर्ज नहीं। वहाँका काम बिगाड़ना नहीं चाहता।

मलकानीके वेतनका क्या फैसला हुआ है? उसे आश्रमसे ही वेतन मिलता है, इतना निश्चित है। किन्तु अब आश्रम भंग कर दिया गया है। यह समाचार अखबारोंमें देखोगे। इसलिए अबसे वेतन वहीं देना होगा। ये हरिजन-कार्य-सम्बन्धी प्रवृत्तियाँ जेलसे चलेंगी ही। राम-राम।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२३) से।

३५०. पत्र : नानाभाई आई० मशरूवालाको

२४ जुलाई, १९३३

भाई नानाभाई,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। मुझे भी फिनिक्ससे पत्र आता रहता है। सुशीला और मणिलाल एक-दूसरेमें ठीक-ठीक ओतप्रोत हो गये हैं और सुखी हैं।

आश्रमको भंग करनेका निर्णय किया है। इसके बारेमें अधिक जानकारी अखबारोंमें मिल जायेगी। ज्यादा लिख सकूँ, इतना समय नहीं है।

अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६८८) से। सी० डब्ल्यू० ४३३३ से भी; सौजन्य : कनुभाई मशरूवाला।

३५१. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२४ जुलाई, १९३३

चि० हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला था। मुझे उत्तर लिखनेका समय नहि रहता है। शक्ति काफी आई है तो भी इतनी नहिं जिससे मैं अपरिमित उद्यम कर सकुं। मेरा कुछ भी हो तुमारे लिये खादी काम ही है। मैंने सब हाल सतीश बाबुके खत[1] मे वताये है इसलिये यहां नहि लिखता। अरुण अच्छा होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०३) से।

३५२. भेंट : एम० एस० अणेके वक्तव्यके बारेमें[2]

अहमदाबाद,
२४ जुलाई, १९३३

मै यह कह सकता हूँ कि कुछ स्थानोंपर वह गलत ढंगसे पेश किया गया है और कुछ महत्त्वपूर्ण अंश बिलकुल छोड़ दिये गये हैं। श्री अणेके वक्तव्यकी एक नकल मेरे पास है। उसका मसौदा पूनामें तैयार किया गया था, और मुझे पूरा यकीन है कि उसके कटे-छँटे रूपसे जैसा अनुमान होता है, वैसा श्री अणेने उसे बदला नहीं है।

यह पूछनेपर कि श्री अणेके वक्तव्यसे कौंसिलमें प्रवेश-सम्बन्धी स्थितिपर क्या असर पड़ेगा, गांधीजी ने कहा कि कौंसिलमें प्रवेशके बारेमें स्थिति बिलकुल वही है जो श्री अणेके वक्तव्यसे पहले थी। यदि कांग्रेसी कौंसिलमें प्रवेश चाहते हैं तो कोई भी एक व्यक्ति उसे रोक नहीं सकता।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २५-७-१९३३

१. देखिए पृ० ३०५।
२. देखिए परिशिष्ट ९।

३५३. पत्र : अ० भा० चरखा संघको

अहमदाबाद,
२५ जुलाई, १९३३

अवैतनिक मंत्री
अखिल भारतीय चरखा संघ
मिर्जापुर, अहमदाबाद

प्रिय महोदय,

इसी २० तारीखके आपके पत्रके सन्दर्भमें मुझे यह कहना है कि, मेरी रायमें, 'हैंडलिंग' का अर्थ है, सफरी, जिसे एक छोटी झोंपड़ीमें रखा जा सके, और आसानीसे एक जगहसे दूसरी जगह ले जाया जा सके।

पाँचवीं शर्तके बारेमें कहना यह है कि यदि विशेष पूनियाँ आवश्यक हों तो मूल्यमें यन्त्रके साथ लगनेवाले धुनाई-यंत्रका मूल्य भी शामिल होगा। परन्तु, मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि शर्तोंका जो अर्थ मैं कर रहा हूँ उसका प्रभाव निर्णायकोंपर डाला नहीं जा सकता। शर्तोंके बारेमें मेरी किसी भी रायका प्रभाव उनपर कतई पड़ने नहीं देना चाहिए। इसलिए, यह केवल मशीनोंके चुनावमें और आविष्कर्त्ताओंको क्या करना है यह बतानेमे आपके मार्गदर्शनके लिए ही है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१२२) से।

३५४. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

२५ जुलाई, १९३३

महात्मा गांधीने आज एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको बताया कि उन्होंने साबरमती आश्रमको, जो लगभग १८ वर्षसे चला आ रहा है, भंग करनेका फैसला कर लिया है। इस तरहका गम्भीर कदम उठानेका कारण जब उनसे पूछा गया तो महात्मा गांधीने कहा :

कारण मेरे लिए बिलकुल स्पष्ट है। संघर्षमें भाग लेनेवाले सैकड़ों या हजारों लोग अपना सब-कुछ गँवा चुके हैं। ग्रामवासियोंने बहादुरीसे जो कष्ट सहे हैं, उनकी कहानी सुननेके बाद मुझे लगा कि मेरी ओरसे कोई सख्त कार्यवाही जरूरी है। ऐसी क्या चीज थी जिसका मैं त्याग कर सकता। इस पृथ्वीपर ऐसी कोई चीज मेरे पास

नहीं है जिसे मैं अपनी कह सकूँ। परन्तु मेरे पास कुछ चीजें ऐसी हैं जो, जो-कुछ मेरा माना जा सकता है, उससे अधिक मूल्यवान हैं। इन मूल्यवान चीजोंमें आश्रम शायद सबसे अधिक मूल्यवान है, और मुझे लगा कि मेरे लिए जो जीवनका नया और पवित्र सेवाव्रत है उसे शुरू करनेसे पहले मुझे आश्रमके अपने साथी कार्यकर्त्ताओंको उसमें मेरे साथ भाग लेनेको और इन सब अमूल्य वर्षोंमें जिन गतिविधियोंमे वे लगे रहे हैं, उन्हें फिलहाल छोड़ देनेको आमन्त्रित करना चाहिए। मुझे यह कहते हुए खुशी होती है कि उनमें से किसीको भी यह विश्वासकरने में जरा भी झिझक नही हुई कि आश्रमके लिए यह त्याग करनेका समय आ गया है।

यह पूछनेपर कि आश्रमकी बहुत-सी गतिविधियोंका क्या होगा, गांधीजी ने कहा :

यह ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर देना कुछ कठिन है। परन्तु, आम तौरपर मैं यह कह सकता हूँ कि यदि ये गतिविधियाँ सच्ची थीं और भारतकी कुछ वास्तविक आवश्यकताओंको पूरा करती थीं, तो ये आश्रमके भंग हो जानेके बाद भी जीवित रहेंगी। उदाहरणके लिए, खादीकी सारी गतिविधि निश्चित रूपसे आश्रम भंग होनेके बाद भी जारी रहेगी। वस्तुतः आश्रम जो काम कर रहा था वह केवल यही था कि नई तरहके चरखोंका आविष्कार कर और जो चालू है उन्हें परिपूर्ण बनाकर खादीके निर्माणमें नये प्रयोग करना, बहुत-से हरिजन परिवारोंकी सहायता करना, और रुई खादी बनकर बाहर आनेसे पहले जितनी हस्त-प्रक्रियाओंमें से गुजरती है, शिक्षार्थियोंको उनकी शिक्षा देना। यह निस्सन्देह आवश्यक और बहुत ही महत्त्वपूर्ण काम है। परन्तु मुझे विश्वास है कि आश्रमके एक संस्थाके रूपमें न रहनेपर भी, यह काम जारी रहेगा। यही बात कमोबेश आश्रमकी अन्य गतिविधियोंके बारेमें भी कही जा सकती है।

यह पूछनेपर कि अब वे क्या करनेवाले हैं, गांधीजी ने कहा :

जो-कुछ मैं कह चुका हूँ उससे अधिक अभी मुझे कुछ नहीं कहना चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि अगले कुछ दिनोंमे मैं एक और वक्तव्य[1] दूँगा।[2]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-७-१९३३; **हिन्दू**, २५-७-१९३३ भी।

१. वक्तव्यके लिए देखिए अगला शीर्षक।

२. यह वाक्य **हिन्दू**, २५-७-१९३३ से लिया गया है।

३५५. वक्तव्य : एम० एस० अणेके वक्तव्यके बारेमें

[२६ जुलाई, १९३३][१]

श्रीयुत अणेने जो वक्तव्य जारी किया है वह अनौपचारिक सम्मेलनमे दी गई मेरी सलाहके बहुत ही अनुरूप है। जो निर्णय लिया गया है, उसका उसमें कोई कारण नहीं बताया गया है। वह कार्य मेरे लिए छोड़ दिया गया है। इसका अर्थ यह नहीं है कि श्रीयुत अणे और मेरी सलाह माननेवाले अन्य मित्र आवश्यक रूपसे इन्हीं कारणोंसे निर्देशित थे। अतः ये [कारण] केवल मेरे ही माने जाने चाहिए।

मेरी रायमें, वर्तमान परिस्थितियोंमें सविनय अवज्ञाका बिलकुल वापस ले लेना खतरनाक होता। सत्याग्रहके तकनीककी, जैसाकि मैंने उसे जाना है, यह अपेक्षा है कि जबतक उसके जारी रहनेसे सत्य और अहिंसाके उद्देश्य ही विफल न होते हों, वह चाहे एक ही व्यक्ति द्वारा जारी रहे पर जारी रहना चाहिए। वह, उसमें भाग लेनेवाले लोगोंकी कमजोरीके कारण, या (जो एक ही बात है) प्रतिपक्षीकी दिखाई देनेवाली विजयके कारण, छोड़ा नही जा सकता। दमन जितना अधिक होगा, सच्चे सत्याग्रहीकी शक्ति उतनी ही अधिक होगी। एक व्यक्ति भी यदि सत्याग्रह जारी रखता है, तो जिन लोगोंने निराशा या कमजोरीके कारण उसे छोड़ दिया है उनमें उसका पुनर्जागरण सुनिश्चित हो जाता है।

परन्तु कार्यक्रममे आमूल परिवर्तन नितान्त आवश्यक थे।

श्रीयुत अणेके आदेश गुप्त तरीकोंको निषिद्ध ठहराते है। उनमें अपने-आपमें कोई दोष नही है। आन्दोलनको गुप्त तरीकोंसे चलानेमें उद्देश्य पवित्र हो सकता है और कार्यकर्त्ता सरकारकी दमनकारी कार्यवाहियोंसे उत्पन्न परिस्थितिका सामना करनेमें बहुत ही दक्षता दिखला सकते हैं, यह बात मै पूर्णतया मानता हूँ। परन्तु गोपनीयता सत्याग्रहके प्रतिकूल है और उसकी प्रगतिमें बाधा डालती है। लोगोंमें आज जो पस्तहिम्मती है, उसमें निस्सन्देह इसका बड़ा योग रहा है। मैं यह जानता हूँ कि गोपनीयतापर प्रतिबन्ध लगनेसे कुछ ऐसी गतिविधियाँ रुक जायेगी जो कांग्रेसको आम जनताकी आँखोंके सामने रखती लगती थीं। परन्तु इस सन्दिग्ध लाभसे बहुत ज्यादा अच्छा यह रहेगा कि एक ऐसा तरीका जो सत्याग्रहकी भावनाके प्रतिकूल है और जिससे उसकी प्रभावकारितामें विघ्न पड़ता है, निश्चित रूपसे समाप्त हो जायेगा।

एक और परिवर्तन यह किया गया है कि जन-आन्दोलन रोक दिया गया है। जनताने जहाँ भी राष्ट्रीय आह्वानका उत्तर दिया, वहीं बड़ी वीरता दिखलाई और बहुत कष्ट सहा। परन्तु इस बातका पर्याप्त प्रमाण मिल रहा है कि अध्यादेश राज्यकी,

१. समाचारपत्रोंकी तत्कालीन रिपोर्टों और **दि इंडियन एनुअल रजिस्टर**, खण्ड २, पृ० ३३३ के अनुसार।

जिसे अब तथाकथित विधानसभाओंने विधानका स्थायी रूप दे दिया है, लम्बी यातनाको वह अब और नहीं सह सकती। कांग्रेसको, एक संगठनके रूपमें, उसकी कारगर ढंगसे मदद करनेमें रोज ज्यादा कठिनाई महसूस हो रही है। जो थोड़ी-बहुत राहत सम्भव थी, गोपनीयताको समाप्त कर देनेसे वह भी रुक जायेगी। जनताने अभी बिना मार्ग-दर्शनके एकजुट होकर काम करना नहीं सीखा है। व्यक्तियोंके उदाहरणसे उसे अभी और प्रशिक्षण और अनुभव प्राप्त करना होगा।

सत्याग्रह, इसलिए, उन व्यक्तियोंतक सीमित रहना है जो, कांग्रेसकी ओरसे और उसके नामपर काम करते हुए भी, अपनी खुदकी जिम्मेदारीपर सत्याग्रह करेंगे। जो ऐसा करेंगे वे कांग्रेससे आर्थिक या किसी अन्य सहायताकी अपेक्षा नहीं रखेंगे। उन्हें, बीमारी हो या स्वास्थ्य, हर स्थितिमें अनिश्चित कालतक कारावासके लिए तैयार रहना चाहिए। वे अपनी सजाकी मियाद पूरी हो जानेपर या जनताकी शक्तिसे ही जेलसे बाहर आ सकते हैं, और किसी तरह नहीं। सजा पूरी हो जानेपर उन्हें पहला अवसर मिलते ही फिर जेल जानेकी कोशिश करनी चाहिए। उन्हें अपने कार्यसे जुड़े सभी खतरोंका, जिनमें बेहद गरीबी और चल व अचल सारी सम्पत्तिका नुकसान या लाठी-प्रहार-जैसी शारीरिक यन्त्रणाएँ शामिल होंगी, सामना करनेको तैयार रहना चाहिए।

स्वभावतः इस तरहके कार्यकी, खासकर शुरूमें, केवल थोड़े-से लोगोंसे ही अपेक्षा की जा सकती है। बहुतेरे लोग इन कठिनाइयोंको सुनकर ही भयभीत हो सकते हैं। परन्तु संसार-भरके देशभक्तों और सुधारकोंका अनुभव यह दिखाता है कि कष्टको जब सच्ची भावनासे ग्रहण किया जाता है, तो प्रकृति हमें उसे सहनेकी क्षमता प्रदान कर देती है।

इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि इस तरहकी अनुकूल प्रतिक्रिया, यदि हुई तो, सबसे पहले बुद्धिजीवियोंमें ही होनी है। उनका उदाहरण अन्ततः संक्रामक सिद्ध होगा और सारे राष्ट्रमे फैल जायेगा, जिसके फलस्वरूप जनतामें ऐसी जागृति आयेगी जो कैसे-भी क्रूर दमनसे कुचली नही जा सकेगी। इसके अलावा, जनतामें से व्यक्ति अभी भी निश्चित रूपसे यह कार्य कर सकते है। केवल उन्हें व्यक्तिगत सत्याग्रहके फलितार्थोंको समझ लेना चाहिए।

मुझे विश्वास है कि ये नर-नारी राष्ट्रीय भावनाका और पूर्ण स्वाधीनताके राष्ट्रके दृढ़ संकल्पका प्रतिनिधित्व करेंगे। यहाँ यह आपत्ति की जा सकती है कि थोड़े-से व्यक्तियोंका वीरतापूर्वक कष्ट सहना अपने-आपमें चाहे कितना ही प्रशंसनीय क्यों न हो, पर उसका कोई व्यावहारिक मूल्य नहीं है और ब्रिटिश नीति उससे प्रभावित नहीं हो सकती। इस तरहके विचारसे मैं असहमत हूँ। मेरी रायमें, जिस प्रक्रियाकी रूपरेखा मैंने रखी है वह, लम्बी और अनन्त दिखाई देते हुए भी, व्यवहारमें सबसे छोटी सिद्ध होगी। कारण, कि मेरी यह धारणा है कि सच्ची स्वाधीनता अर्थात्, जनताके अर्थोमें और उसके लिए स्वाधीनता, भारतके मामलेमें, किसी और तरीकेसे अप्राप्य ही सिद्ध होगी। अहिंसा कांग्रेस-संविधानका अभिन्न अंग है, और अहिंसाका तरीका उसी मार्गकी माँग करता है जो मैंने सुझाया है।

यह बात अत्यन्त मंदबुद्धि व्यक्तिकी भी समझमें आ सकती है कि ब्रिटिश नीति किसी ऐसे संविधान द्वारा जो ब्रिटिश इच्छाको अभिव्यक्त करता हो और राष्ट्रकी इच्छा और उसके कल्याणकी उपेक्षा करता हो, बदली नहीं जा सकती। कोई भी संविधान यदि वह ब्रिटिश इच्छासे भारतपर थोपा गया है और भारतमें तथा भारत द्वारा की गई हर कार्यवाहीसे अप्रभावित है, तो स्वाभाविक रूपसे ब्रिटिश नीतिको और कठोर बनायेगा और कायम रखेगा। वह नीति तो केवल ब्रिटिश दमनके विरोधमें की गई भारतकी समुचित कार्रवाईसे ही बदली जा सकती है और बदली जायेगी। दूसरे शब्दोंमें, ब्रिटेन वह कार्य सम्पन्न नहीं कर सकता। वह हमें स्वयं सम्पन्न करना है। हमारी स्वाधीनताका अर्थ ब्रिटेनकी इच्छाकी नहीं बल्कि हमारी इच्छाकी अभिव्यक्ति होना चाहिए। मैंने जो मार्ग सुझाया है, केवल वही हमारी इच्छा अर्थात्, करोड़ों मूक लोगोंकी इच्छाकी अभिव्यक्तिके लिए आवश्यक समर्थन तैयार करेगा। कारण, कि व्यक्तिगत कार्यवाही अन्ततः जनताको अवश्य प्रभावित करती है।

हमे यह नही भूलना चाहिए कि भारतका मामला असाधारण है। इतिहासमें इस तरहका कोई और दृष्टान्त मुझे नहीं मालूम। भारतमे ब्रिटिश इच्छा भारतके अपने नर-नारियों द्वारा थोपी गई है। भारत अपनी जनताके दमन और शोषणके लिए अधिकारी और सैनिक प्रदान करता है और अन्य साधन प्रदान करता है। यदि यह घोर अनैतिक स्थिति एक दिनमे या एक शताब्दीमें भी न बदले तो कोई आश्चर्य नही होना चाहिए।

परन्तु, जैसे ही हम अपने लक्ष्यकी ओर सही मार्ग अपनाते है, हमारी सफलता सुनिश्चित हो जाती है। मेरा यह दावा है कि हमने वह मार्ग १९२० में अपनाया और यद्यपि यह चीज स्पष्ट रूपसे प्रदर्शित नहीं की जा सकती, पर हमने तबसे पूर्ण स्वराज्यकी ओर बड़े-बड़े डग रखे हैं। किसी भी दूसरे तरीकेसे हम अपने लक्ष्यके इतने निकट नहीं पहुँच सकते थे। इस बातसे कौन इनकार कर सकता है कि पिछले तेरह वर्षोंमें हमने जनतामें जैसी जागृति देखी है, वैसी सितम्बर १९२० से पहले सौ वर्षोंमें कभी नहीं देखी गई थी।

मेरी सलाह निराशा या पराजयकी भावनाकी उपज नही है। मुझमें इनमें से एक भी नहीं है। मैं तो यह देखकर उल्लाससे भरा हूँ कि राष्ट्रीय प्रतिक्रिया इतनी जबरदस्त रही। उल्लासका सबसे बड़ा कारण यह है कि व्यक्तियों तथा जनताने, अपनी इच्छा और कल्पनातीत उत्तेजनाके बावजूद, अपनी कार्यवाहीमें अहिंसाका पालन किया। सीमाप्रान्तके पठानोंने अहिंसाका पालन किया, इसके महत्त्वको हम पूरी तरह समझे नहीं हैं, क्योंकि हम इस घटनाके बहुत ही समकालिक हैं। हो सकता है, उन्होंने हिंसात्मक भाषाका प्रयोग किया हो। परन्तु हिंसात्मक कार्यवाहीसे वे इस तरह दूर रहे हैं जैसेकि पहले, जहाँतक हमें याद है, कभी नहीं रहे थे — ऐसा कई गम्भीर स्वतन्त्र साथियोंका कहना है। यदि अहिंसा पठानके दिलमें जड़ें जमा लेती है, तो वह हमारी कई कठिन समस्याओंको सुलझा देगी। जो चीज सीमाप्रान्तके पठानके बारेमें सच है, वह भारत-भरके सत्याग्रहियोंके बारेमें भी ज्यादातर सच है।

मुझे गलत नहीं समझना चाहिए। मेरा दावा बहुत मामूली है। जबतक दिलसे हिंसा नहीं मिटती, तबतक हिंसाके अचानक विस्फोटका खतरा सदा रहेगा। मुझे यह कहते दुःख होता है कि हमारे दिलोंमें काफी हिंसा है। हमने, असहाय होनेके कारण, नीतिके तौरपर अहिंसात्मक ढगसे कार्य किया है। यदि हम कारगर ढंगसे कर सकते, तो हम हिंसा ही करते। मैं चाहूँगा कि भारत हिंसाकी शक्ति रखते हुए भी हिंसाका त्याग करे। मैं चाहूँगा कि इस तथ्यको अच्छी तरह समझ लिया जाये कि जन-साधारणको अपनी स्वाधीनता खुद प्राप्त करनी है, और उनकी संख्या इतनी अधिक है कि यदि वे हिंसात्मक उपायोंसे कुछ प्राप्त करेंगे तो वह स्वाधीनता नहीं होगी, बल्कि एक दानव होगा जो उन्हें निगल जायेगा और शायद सारी दुनियाको तबाह कर देगा। एक शिक्षा, जो पश्चिमी राष्ट्र ज्वलन्त अक्षरोंमें संसारको दे रहे हैं, यह है कि हिंसा शान्ति और सुखका मार्ग नहीं है। हिंसाके पंथने उन्हे या उनके सम्पर्कमें आनेवालोंको अधिक सुखी या पहलेसे बेहतर नहीं बनाया है। यदि हम कभी, एक राष्ट्रके रूपमें, अहिंसाकी जीवन्त आस्थापर पहुँच गये और हमने हिंसाको अपने दिलोंमें से निकाल दिया, तो हमें सत्याग्रहका सहारा लेनेकी भी जरूरत नहीं पड़ेगी। उसकी जरूरत तभीतक है जबतक हम अहिंसाको मात्र एक नीति या उपायके रूपमें आजमा रहे हैं। नीतिके रूपमें भी यह हिंसासे सदा बहुत अधिक कारगर रहती है। अधिनायकके आदेशोंपर गुप्त संगठन स्वभावतः खत्म हो जायेंगे। हर सत्याग्रही स्वयं अपना नेता होगा। कांग्रेसका भार वह खुद अपने कन्धोंपर वहन करेगा। इस तरहके सत्याग्रही राष्ट्रीय सम्मानके ट्रस्टी होंगे।

कांग्रेसियोंकी संख्या जहाँ करोड़ोंमें गिनी जा सकती है, वहाँ, नई योजनाके अधीन, सत्याग्रहका प्रतिनिधित्व केवल कुछ हजार या इससे भी कम लोग करेंगे। यदि ये नर-नारी सच्चे हुए, तो मुझे पक्का विश्वास है कि इनकी संख्या बढ़कर लाखों हो जायेगी। इस बीच, बाकी कांग्रेसी कांग्रेसकी अन्य विविध रचनात्मक गतिविधियोंमें जुटे रहेंगे — जैसे हरिजन-सेवा; साम्प्रदायिक एकता; खादीका उत्पादन और वितरण; पूर्ण मद्य-निषेध; विदेशी कपड़े और अन्य ऐसे मालका बहिष्कार जिसकी देशी वस्तुओंसे स्पर्धा है या जो और किसी तरह राष्ट्रके हितों, देशी वस्तुओंके उत्पादन, देशी उत्पादन-पद्धतियोंके सुधार और ग्रामोद्योगोंके विकास या पुनरुत्थानके लिए हानिकारक है; कृषि और पशु-पालनमे सुधार; श्रमिक संघोंका संगठन जिसका उद्देश्य श्रमिकोंका राजनैतिक शोषण नहीं, बल्कि उनकी दशाको सुधारना और पूंजीपति और श्रमिकके सम्बन्धोंको सुधारना होगा। वस्तुतः, राष्ट्रीय गतिविधिकी कोई भी शाखा कांग्रेससे अछूती नहीं रह सकती। यह तभी सम्भव होगा जब हम इस मिथ्या धारणासे मुक्ति पा लेंगे कि सत्याग्रहके सिवा कांग्रेसकी कोई और गतिविधि नहीं है या वह [सत्याग्रह] अन्य सब गतिविधियोंमें बाधक है। यह धारणा शायद तब सच रहेगी जब सामूहिक सत्याग्रह हो और आन्दोलन तीव्र और प्रचण्ड होना हो। परन्तु जबतक वह समय नहीं आता, तबतक राष्ट्रनिर्माणकी हर गतिविधिको उचित महत्त्व दिया जाना चाहिए और किसीकी भी उपेक्षा नहीं होनी चाहिए।

सत्याग्रही राष्ट्रकी अहिंसक सेनाके प्रतिनिधि हैं। जिस तरह हर नागरिक सक्रिय सैनिक नहीं हो सकता, उसी तरह हर नागरिक सक्रिय सत्याग्रही नहीं हो सकता। जब सैनिक केवल इसलिए कि वह प्राणोंको बाजी लगाकर अपने राष्ट्रके लिए लड़ता है, अपनेको औरोंसे श्रेष्ठ नहीं समझता, तो सत्याग्रहीको तो, जो अपने राष्ट्रके लिए केवल कष्ट सहता है, कदापि ऐसा नहीं समझना चाहिए। जो लोग योद्धाओंकी पाँतसे बाहर हैं, वे यदि अपनेको राष्ट्रके सेवक मानकर अपनी प्रतिभाको पूर्णतया राष्ट्रीय कल्याणमें लगाते हैं और किसी भी ऐसी व्यक्तिगत या सार्वजनिक कार्यवाहीमें भाग नहीं लेते है जो राष्ट्रीय हितके प्रतिकूल है, तो वे भी उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं।

इसके अलावा, जहाँ कांग्रेस, एक संगठनके रूपमें, सत्याग्रहियोंकी खुलेआम सहायता नहीं कर सकती, और मेरी योजनाके अनुसार उसे सभी गुप्त तरीके छोड़ने होंगे, वहाँ कांग्रेसियों और कांग्रेसके तरीकों और उद्देश्यसे सहानुभूति रखनेवाले अन्य लोगोंका भी यह कर्त्तव्य होगा कि वे, जहाँतक सम्भव हो, सत्याग्रहियों, खासकर लगानबन्दी आन्दोलनमें भाग लेनेवाले बहुत ही निर्धन किसानोंके दीन परिवारोंकी सहायता करें। उन्हें यह विश्वास दिलाना चाहिए कि आन्दोलनके दौरान (मेरे खयालसे अवैध और गलत ढगसे) जब्त की गई एक-एक इंच जमीन राष्ट्रके स्वतन्त्र होनेपर, जैसाकि उसे किसी दिन होना ही है, उन्हें या उनकी सन्तानको वापस मिल जायेगी। मुझे पता चला है कि जिन किसानोंने राष्ट्रीय स्वाधीनताके लिए अपना सब-कुछ दाँवपर लगा देनेका मार्ग चुना है, कांग्रेस उनकी गुप्त रूपसे सहायता करनेमें सफल रही है, यद्यपि इस काममें लगे कार्यकर्त्ताओंको व्यक्तिगत रूपसे इसके लिए भारी जोखिम उठानी पड़ी है। इस तरहकी सहायता देना भविष्यमें सम्भव नहीं होगा, न केवल इसलिए कि गुप्त तरीकोंको छोड़नेका निश्चय कर लिया गया है, बल्कि इसलिए भी कि कांग्रेसके पास आयका कोई अनवरत स्रोत नहीं है। इस तरहके परिवारोंकी, यदि और किसी खयालसे नहीं तो मानवताके खयालसे ही, खुलेआम सहायता करनेका भार अब उन लोगोंके कन्धोंपर होगा जो सत्याग्रहमें भाग नहीं ले रहे हैं। सरकारको चुपडी और दो-दो नहीं मिल सकतीं। यदि वह व्यक्तिगत और खुली सहायताको भी रोकेगी, तो उसे सत्याग्रहियोंके आश्रितोंको जेलमें बन्द करना होगा अन्यथा उनका पालन करना होगा। जो लोग अच्छी हालतोंमें एक बार खुद बरबादी मोल ले चुके है और अब प्रति व्यक्ति प्रतिमास तीन या चार रुपयेकी सहायतापर जीवन-निर्वाह कर रहे हैं, उनकी संख्या यदि दुनियाको पता चले तो वह हैरान रह जाये। मैं समझता हूँ कि उनके घरतक जब्त हो जानेका खतरा है।

कौंसिलके कार्यक्रमको मैंने यहाँ छुआ नहीं है। जो सुधार होनेवाले हैं उनके प्रवर्तनके बारेमें सोचना अभी, मेरे विचारमें, सर्वथा असामयिक है। हमें नहीं मालूम कि वे यदि होने हैं तो किस तरहके होने हैं और कब होने हैं। जिनका उनमें भाग लेनेकी ओर झुकाव हो, उनके लिए यह उचित होगा कि वे अपनी कोई नीति निश्चित करनेसे पहले सुधारोंकी प्रतीक्षा करें। अब मौजूदा विधानसभाएँ रह जाती है। जिस तरह मैं सत्याग्रहपर निर्णायक राय दे सकता हूँ, उस तरह इस प्रश्नपर नहीं दे

सकता। स्वाधीनताकी प्राप्तिके लिए कौंसिलोंमें प्रवेशके विचारसे ही मेरा सिर चकराने लगता है। उनसे कुछ विशिष्ट मामलोंमें कुछ राहत मिल सकती है, पर वह राष्ट्रको उसके लक्ष्यसे दूर रखनेवाली दूषित वायु है। यद्यपि मैंने श्रीयुत राजगोपालाचारी और अन्य लोगोके जरिये अस्पृश्यता-सम्बन्धी विधेयकोंके मामलेमे विधानसभाओं और सरकारका सहयोग प्राप्त करनेकी कोशिश की थी, पर वे मेरे लिए कोई प्रलोभन नही है। उसे प्राप्त करनेकी कोशिशकी मुख्य जिम्मेदारी उनके कन्धोंपर नहीं, मेरे कन्धोंपर है। अपनी उस कोशिशपर मुझे क्षमायाचना नही करनी है। असहयोगके सिद्धान्तके वह बिलकुल अनुकूल है।

एक ऐसी चीज है जिसपर श्रीयुत अणेका मुझसे और कुछ अन्य मित्रोसे मतभेद था। मेरा यह दृढ़ विचार रहा है कि अखिल भारतीय अधिनायक और प्रान्तीय अधिनायकोंके पद भी समाप्त कर देने चाहिए। परन्तु, उतना ही दृढ़ उनका यह विचार था कि यह पद चाहे प्रतीक रूपमे ही रहे, पर कायम रहना चाहिए। लेकिन मुझे इस मार्गमे गम्भीर कठिनाइयाँ दिखाई दे रही है। अधिनायकोंको, नई योजनाके अधीन, औरोंकी तरह अपनी नियुक्तिके तुरन्त बाद ही सत्याग्रह करना है। उच्च कोटिके सभी स्त्री-पुरुषोंको शीघ्र ही जेलकी राह पकड़नी है। इसलिए शीघ्र ही वह समय आ जाना है जब अधिनायकत्वकी वस्तुतः योग्यता रखनेवाले स्त्री-पुरुष उपलब्ध नहीं होंगे। तब केवल नाम मात्रके अधिनायक ही रह सकेंगे, जैसेकि पहले रहे है। वे आसानीसे परेशानी पैदा करनेवाली स्थितियाँ उत्पन्न कर सकते है। और आखिरी बात यह है कि जब प्रत्येक सत्याग्रहीसे स्वयं अपना नेता होनेकी अपेक्षा की जाती है, तो अधिनायक बनानेका कोई औचित्य ही नही रहता। वस्तुतः, उनका केवल अस्तित्व ही व्यक्तिगत सत्याग्रहियोंके प्रवाहको रोक सकता है। क्योंकि वे अधिनायकोंके आदेशोंकी प्रतीक्षा कर सकते है, जबकि नई योजनामें किन्हीं और आदेशोंकी व्यवस्था नहीं है। श्रीयुत अणे द्वारा जारी किये गये अन्तिम आदेशोंके अनुसार, कांग्रेस को केवल अपने आदर्शमें ही सगठनके रूपमें रहना चाहिए। इसलिए, मेरा अभी भी यह विचार है कि यदि मेरा तर्क उन्हें जँचे तो अधिनायकोंको अपने-आपको खत्म कर देना चाहिए।

वाइसरायने सुलहकी सम्भावनाओंकी खोजतकके लिए मुझसे मिलनेसे इनकार कर दिया है। इसलिए उन स्थितियोंकी जाँच जिनमें पूर्ण स्वराज्यके बिना भी किन्तु उसकी ओर बढ़ते हुए सत्याग्रह स्थगित किया जा सकता, अनावश्यक हो जाती है। परन्तु मैं उस बातको, जो मैं प्रायः कहता आया हूँ, फिर दोहरा सकता हूँ कि सारा असहयोग इसीलिए है कि जबरदस्तीके सहयोगकी जगह सच्चा सहयोग सुनिश्चित हो सके, और कानूनोंकी सारी सविनय अवज्ञा इसीलिए है कि उनका पालन जबरदस्तीकी बजाय स्वेच्छासे हो। इसलिए, मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि कांग्रेस सम्मानपूर्ण सुलहके लिए सदा तैयार रहेगी।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २००२५) से।

३५६. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

अहमदाबाद,
२६ जुलाई, १९३३

बम्बई सरकारके सचिव
(गृह-विभाग)
पूना

प्रिय महोदय,

सन् १९१५ में जब मैं हिन्दुस्तान लौटा, तो सत्यकी सेवाके उद्देश्यसे सत्याग्रह आश्रमकी स्थापना मेरा पहला रचनात्मक कार्य था। आश्रमवासी सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अपरिग्रह, अभय, अस्पृश्यता-निवारण, खादीपर केन्द्रित स्वदेशी, सर्वधर्म-समभाव और शरीर-श्रमका व्रत लिये हुए हैं। आश्रमकी मौजूदा जगह १९१६ में खरीदी गई थी। आश्रमवासियोंकी मुख्यतया अपनी मेहनतसे ही आजकल आश्रमकी कई गतिविधियाँ चल रही हैं। पर मजदूरी देकर बाहरके मजदूरोंकी मदद लेनेकी भी जरूरत पड़ती है। वहाँकी मुख्य गतिविधियाँ ये है: बिजलीसे चलनेवाले यन्त्रोंकी मदद बिना ग्रामोद्योगके रूपमे खादीका उत्पादन, गोशाला, खेती, वैज्ञानिक ढंगसे पाखाना-सफाई और लिखना-पढ़ना सिखाना। आश्रममें इस समय १०७ आदमी (४२ पुरुष, ३१ स्त्रियाँ, १२ लड़के और २२ लड़कियाँ) हैं। अभी जो जेलमें है और जो आश्रमके बाहर दूसरे कामोंमें लगे हुए है, उन्हें इनमें नहीं गिना गया है। अबतक आश्रमने लगभग एक हजार आदमियोंको खादी तैयार करनेका प्रशिक्षण दिया है। जहाँतक मैं जानता हूँ, उनमे से ज्यादातर लोग उपयोगी रचनात्मक काम कर रहे हैं और ईमानदारीसे रोजी कमा रहे हैं।

आश्रम एक रजिस्टर्ड ट्रस्ट है। उसका रुपया विशेष-विशेष कामोंके लिए निर्धारित है। प्रत्येक विभागको स्वावलम्बी बनानेका उद्देश्य होते हुए भी, सभी दायित्वोंको पूरा करनेके लिए आश्रमको अबतक मित्रोंसे दान भी लेना पड़ा है। अनुभवने हमें बताया है कि जबतक आश्रम शिक्षाका (उसके विशाल अर्थमें) काम करेगा और उसके लिए न केवल फीस नहीं लेगा, बल्कि पढ़नेवालोंको रोटी-कपड़ा भी देगा, तब तक वह पूरी तरह स्वावलम्बी नहीं बन सकता।

आश्रमकी अचल सम्पत्तिका अन्दाज लगभग ३,६०,००० रुपये होता है और चल सम्पत्तिका अन्दाज, नकदी-सहित, ३,००,००० रुपयेसे ऊपर[1] पहुँचता है। आश्रम तथाकथित राजनीतिमें भाग नहीं लेता। पर वह यह मानता है कि सत्य और अहिंसाके पालनके लिए खास परिस्थितियोंमें असहयोग और सत्याग्रह अनिवार्य है।

१. बादमें इसे सुधार कर "लगभग २,००,००० रुपये" कहा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

इसीलिए १९३० का सत्याग्रह आन्दोलन लगभग ८० आश्रमवासियोंके दांडी-कूच से शुरू किया गया था।

वर्तमान परिस्थितिमें, जब एक तरफ सरकारका दमनचक्र तेज होता जा रहा है और दूसरी तरफ लोगोंकी हिम्मत उतनी ही टूटती जा रही है, आश्रमके लिए अधिक बड़ा बलिदान करनेका समय आ पहुँचा है।

उपवास तोड़नेके बाद जो बयान मेरी नजरसे गुजरे हैं उनसे मालूम होता है कि :

१. देशके विभिन्न भागोंमें व्यक्तिगत सत्याग्रहियोंको त्रस्त करनेके लिए पुलिसकी तरफसे यातनाएँ देनेके तरीके अख्तियार किये गये हैं,

२. स्त्रियोंका अपमान किया गया है,

३. लोगोंका आजादीसे चलना-फिरना लगभग असम्भव हो गया है,

४. देशके बहुत-से भागोंमें कांग्रेसियोंके लिए ग्राम-सेवा करना प्रायः असम्भव हो गया है,

५. बहुत-सी हवालातों और जेलोंमें सत्याग्रही कैदियोंपर अपमानजनक और शारीरिक यन्त्रणा देनेवाले अत्याचार किये गये हैं,

६. लोगोंपर उनके बूतेसे बाहर भारी जुर्माने किये गये हैं और वे बहुत ही नाजायज तरीकोंसे वसूल किये गये हैं,

७. भूमि-कर या लगान रोकनेवाले किसानोंको उनके अपराधसे कहीं अधिक सजाएँ दी गई हैं, जिसमें उद्देश्य साफ-साफ उन्हें और उनके पड़ोसियोंको आतंकित कर घुटने टिकवाना रहा है,[1]

८. अखबारोंका मुँह बन्द कर दिया गया है,

९. सार यह कि देशमें एक सिरेसे दूसरे सिरेतक आत्मसम्मानके साथ स्वतन्त्रता से रहना असम्भव हो गया है।

निस्सन्देह, इन सब बयानोंको सरकारी हलकोंमें गलत ठहराया जायेगा, या किसी-न-किसी तरहके स्पष्टीकरणसे उड़ा दिया जायेगा। सम्भव है कि ये अतिशयोक्तिसे मुक्त न हों। परन्तु अधिकांश कांग्रेसियोंके साथ मैं इनपर यकीन करता हूँ। इसलिए ये हमें कार्यवाहीके लिए मजबूर करनेको काफी हैं।

अतः मुझे केवल कारावाससे सन्तोष नहीं होगा। इसके अलावा, मुझे साफ दिखाई दे रहा है कि जबतक आश्रम इस आन्दोलनके साथ अपना सम्बन्ध बिलकुल खत्म न कर दे, आश्रमका विशाल रचनात्मक कार्यक्रम सही-सलामत चल नहीं सकता। यह स्थिति स्वीकार करना मूल सिद्धान्तको नकारनेके बराबर है। अबतक मुझे आशा थी कि कुछ आश्रमवासियोंके सत्याग्रह करनेके साथ-साथ आश्रम भी बना रह सकता है और चाहे कांग्रेसका ध्येय तुरन्त सिद्ध न हो सके, तो भी निकट भविष्यमें सरकार और कांग्रेसके बीच सम्मानपूर्ण समझौता हो जाना है। पर कांग्रेसने मेरे

१. "घुटने टिकवाना" शब्द बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्टससे लिये गये हैं।

जरिये ईमानदारीसे जो सुलहका हाथ बढ़ाया, उसे वाइसरायने दुर्भाग्यसे ठुकरा दिया है। यह चीज साफ बताती है कि सरकार न शान्तिके लिए प्रयत्नशील है और न शान्ति चाहती है। वह तो यह चाहती है कि देशका सबसे बड़ा और, यदि एकमात्र नहीं तो, अधिक-से-अधिक लोकप्रिय राजनैतिक संगठन दाँतोंमे तिनका लेकर उसकी शरणमे जाये। जबतक कांग्रेसको अपने वर्तमान सलाहकारोंपर विश्वास है, यह होना असम्भव है। इसलिए यह संघर्ष जरूर लम्बा चलेगा, और लोगोंने जितना बलिदान अबतक किया है, यह उससे बहुत बड़ा बलिदान उनसे माँगेगा। इस आन्दोलनके जनककी हैसियतसे, स्वाभावतः मुझसे अधिक-से-अधिक बलिदानकी अपेक्षा की जाती है। वह बलिदान मैं उस चीजको कुरबान करके ही कर सकता हूँ जो मेरे लिए सबसे निकट है, सबसे प्रिय है, और जिसकी रचनाके लिए मैंने और दूसरे बहुत-से आश्रमवासियोंने अटूट धीरज और अपार सावधानीसे अठारह सालतक मेहनत की है। आश्रमके एक-एक पशु और एक-एक पेड़का अपना इतिहास है और उससे पवित्र संस्मरण जुड़े हुए हैं। वे सभी एक विशाल कुटुम्बके सदस्य हैं। जो कभी बिलकुल वीरान जमीन थी, मानव प्रयत्नोंसे उसे एक काफी बड़ी बाग-बगीचेवाली आदर्श बस्ती बना लिया गया है। इस कुटुम्ब और इसकी विविध गतिविधियोंको भंग करनेका काम हमसे आँसू बहाये विना नहीं हो सकेगा। आश्रमवासियोंके साथ मैंने भक्तिभावसे खूब बातें कर ली है। और उन्होंने, भाइयों और बहनों दोनोंने, उसकी वर्तमान गतिविधियोंको बन्द करनेके मेरे सुझावका एकमतसे स्वागत किया है। जो थोड़े-बहुत भी सशक्त हैं, उन्होंने सघर्ष स्थगित रखनेकी अवधि पूरी होते ही व्यक्तिगत सत्याग्रह करनेका निश्चय किया है।

यहाँ यह बता देना जरूरी है कि आश्रमने पिछले दो सालसे जमीनका लगान चुकानेसे इनकार कर रखा है और उसके कारण उसकी काफी कीमती चीजें जब्त कर ली गई है और बेच डाली गई है। इस कार्यवाहीकी मैं कोई शिकायत नहीं करता। परन्तु ऐसी खतरनाक परिस्थितियोंमे एक बड़ी संस्थाका चलाना आनन्ददायक या लाभदायक नही हो सकता। मै यह पूरी तरह समझता हूँ कि राज्यके साथ, वह चाहे न्यायी हो या अन्यायी, लोकसत्तात्मक हो या विदेशी, उसके किसी नागरिक का यदि संघर्ष होता है, तो वह उसकी जमीन-जायदाद किसी भी समय जबरदस्ती ले सकता है। इसलिए अनिश्चित कालतक चलनेवाले इस संघर्षमें जो होना अनिवार्य है, उसे पहलेसे ही मान लेनेमें मुझे समझदारी ही दिखाई देती है।

परन्तु आश्रमको भंग करनेका निर्णय कर लेनेपर भी हम चाहते हैं कि उसकी हर चीजका उपयोग सार्वजनिक कामोंमें हो। इसलिए जबतक सरकार, किसी भी कारणसे, उसकी किसी या तमाम चल सम्पत्तिपर — नकदी सहित — कब्जा करना न चाहे, तबतक मेरा विचार उसे ऐसे मित्रोंको सौंप देनेका है जो उसका उपयोग लोक कल्याणके लिए और जिन कामोंके लिए वह निर्धारित है उनके लिए करेंगे। इस प्रकार खादीका माल और कारखाने और बुनाईघरका सारा सामान अखिल भारतीय चरखा संघको सौंप दिया जायेगा, जिसकी तरफसे कि यह काम किया जा रहा है। गाय और दूसरे पशु, गोसेवा संघको सौंप दिये जायेंगे, जिसकी तरफसे कि

यहाँकी गोशाला चलाई जा रही है। पुस्तकालय सम्भवतः एक ऐसी संस्थाको सौंप दिया जायेगा जो उसे संभालनेके लिए तैयार होगी। रुपया और दूसरी चीजें जिन-जिन लोगोंकी होंगी, उन्हें लौटा दी जायेंगी या जो मित्र उन्हें संभालनेको तैयार होंगे, उन्हें सौंप दी जायेंगी।

अब रह जाते हैं, जमीन, मकान और खड़ी फसलें। मेरा सुझाव है कि सरकार उनपर कब्जा कर ले और उनका जो-कुछ करना हो करे। ये चीजे भी मैं खुशीसे मित्रोंको सौंप देता, परन्तु उन्हें लगान चुकाना पड़े, इसके लिए मैं तैयार नहीं हो सकता। साथी सत्याग्रहियोंको ये चीजें स्वाभाविक रूपसे, सौंपी ही नहीं जा सकतीं। इसलिए मै इतना ही चाहता हूँ कि जमीन, मकान, कीमती पेड़ और खड़ी फसलें बरबाद होने न दी जायें, जैसाकि बहुत-सी दूसरी जगहोंपर हुआ है, बल्कि उनका सदुपयोग किया जाये।

जमीनके एक हिस्सेके मकानोंमें कुछ हरिजन परिवार रहते हैं। अबतक उनसे कोई किराया नहीं लिया जाता था। उन्हें सत्याग्रहमें शामिल होनेको कहनेकी मेरी इच्छा नहीं है। वे अबसे आश्रमके ट्रस्टियोंको नाममात्रका, एक रूपया वार्षिक, किराया देंगे और जितनी जमीन उन मकानोंने रोक रखी है उसके लगानके लिए जिम्मेदार होंगे।

यदि, किसी भी कारणसे, सरकार उपरोक्त सम्पत्तिपर कब्जा न करे तो भी आश्रमवासी संघर्ष स्थगित रखनेकी अवधि पूरी होनेपर, यानी ३१ तारीखके बाद, आश्रम छोड़कर चले जायेंगे। हाँ, सरकार उससे पहले ही आश्रमपर अधिकार कर ले तो बात दूसरी है। मेरी प्रार्थना है कि इस पत्रका जवाब मुझे तारसे दिया जाये। खास तौरपर मुझे यह बता दिया जाये कि चल सम्पत्तिके बारेमें सरकारकी इच्छा क्या है, ताकि उसका निपटारा यदि मुझे ही करना हो तो मैं समय रहते कर सकूँ।

आपका विश्वस्त,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५३५) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रेक्टस, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८००(४०), भाग २, पृ० १७१-८१ से भी।

३५७. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

२६ जुलाई, १९३३

बम्बई सरकारके सचिव
(गृह-विभाग)
पूना

प्रिय महोदय,

आपके नाम अपने आजके पत्रमे एक वक्तव्यको सुधारना है। पृष्ठ २, पंक्ति ३ मे "३,००,००० रुपये से ऊपर" के बजाय "लगभग २,००,००० रुपये" पढ़िए।

आपका विश्वस्त,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१२३) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रेक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) भाग २, पृ० १८३ से भी।

३५८. पत्र : सैयद महमूदको

२६ जुलाई, १९३३

प्रिय डॉ० महमूद,

आपके दो पत्र मिले।

आपने जिस घोषणाका सुझाव रखा है, वह मुझे करनी नही चाहिए। ऐसी किसी घोषणाका जिसके साथ तुरन्त कोई कार्यवाही नहीं होनी हो, इस समय कोई मूल्य नहीं है। कर्त्तव्यकी भावना और अत्यन्त शुद्ध उद्देश्योंसे की गई कार्यवाहीतक का बिलकुल गलत अर्थ लगाया जाता है। पर मैं आपके आगे अपने इस विश्वासको फिर दोहरा सकता हूँ कि मुसलमान मित्रोंको साथ लिये बिना मैं स्वर्गमें भी जाना नहीं चाहूँगा। सचाई यह है कि मैं जितना अधिक आत्मनिरीक्षण करता हूँ, उतना ही मुझे यह अनुभव होता है कि मेरे मनमें हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और अन्य लोगोंके बीच कोई भेदभाव नहीं है। उन्हें हानि पहुँचाकर फूलना-फलना मेरे लिए घृणित होगा।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके बारेमे आपके दूसरे सुझावका जहाँतक सम्बन्ध है, मालवीयजी जहाँ बहुत त्याग कर सकते हैं, वहाँ वे विश्वविद्यालयका त्याग नहीं करेंगे। वे इतने दार्शनिक है कि यदि वे उसे आत्मसम्मानके साथ रख नहीं सकेंगे, तो जाने देंगे। परन्तु वे, यदि मैं उन्हें ठीकसे समझा हूँ तो, विश्वविद्यालयके जान-

बूझकर त्यागको एक भारी गलती समझेंगे। इससे भी बड़ी बात यह है कि उसके सह-ट्रस्टी उन्हें कभी भी वैसा कदम उठाने नहीं देंगे। और इससे भी बड़ी बात यह है कि छात्रोंकी अपना प्रशिक्षण रोकनेकी कतई इच्छा नहीं है। इसलिए, आप और मैं चाहे कुछ भी चाहें, जो कदम आपने सुझाया है वह मुझे सम्भव नहीं लगता।

आपके दूसरे पत्रका जहाँतक सम्बन्ध है, आप जो कहते हैं वह अर्थ सत्य हो सकता है अर्थात्, मैं यह चाहता हूँ कि विरोधका रूप बनाये रखनेके लिए कुछ व्यक्ति जेल जायें। परन्तु वे जेल जाये, यह मैं इसलिए चाहता हूँ कि कुछ खरे सत्याग्रहियोंका कारावास एक असंदिग्ध और दुर्निवार प्रदर्शन हो सकता है।

बेगम महमूद अब पहलेसे अच्छी है, यह जानकर खुशी हुई और मुझे आशा है कि वे बिलकुल स्वस्थ हो जायेंगी। आपके अपने स्वास्थ्यके बारेमें मेरी बड़ी इच्छा है कि आप डॉ० मेहताके सेनिटोरियममें प्राकृतिक चिकित्सा कराये। मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि आप बिलकुल स्वस्थ हो सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

महादेवका सलाम।

डॉ० सैयद महमूद
फरीदी मंजिल
दरगाह शरीफ
अजमेर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०९०) से। एस० एन० १९१२४से भी।

३५९. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

२६ जुलाई, १९३३

प्रिय बहन,

तुम्हें एक पोस्टकार्ड लिखा था, वह मिल गया होगा। आश्रमको तोड़ देनेके निर्णयके बारेमें तुमने पढ़ा ही होगा। मुझे कुछ लड़कियोंको कहीं रखना पड़ेगा। आनन्दी और मणिको तो तुम जानती ही हो। उन्हें और तीन दूसरी लड़कियोंको तुम्हारी शालामें रखनेकी इच्छा है। दूसरी लड़कियोंमें एक महादेवकी बहन, दूसरी यहाँके उपमन्त्रीकी लड़की शारदा और तीसरी नरहरिकी लड़की वनमाला है। उसे भी तुमने देखा तो है ही। उन्हें लेनेमें तुम्हें कोई असुविधा न हो और लीलाबहन भी राजी हो तो पत्र लिखना। तुम्हारी अनुमति मिले तो मुझे उन्हें फौरन रवाना कर देना पड़ेगा। पहली तारीखको मेरा क्या होगा, यह कहा नहीं जा सकता। हो

सके तो मुझे तारसे जवाब देना। आश्रमके पतेपर तार भेजोगी तो हो सकता है मुझे जल्दी मिल जाये। पत्र 'अमृत भवन' में जल्दी मिलेगा क्योंकि मैं आश्रम दोपहरके एक बजे पहुँचता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८३२) से; सौजन्य : प्रेमलीला ठाकरसी।

३६०. पत्र : अमृतलाल नानावटीको

२६ जुलाई, १९३३

चि० अमृतलाल,

काकासाहबको लिखा तुम्हारा पत्र पढ़ा और हँस पड़ा। तुममें विनोदकी समझ, सेंस ऑफ ह्यूमर[१] कम है। मैं तुम्हारी जगह होता तो हँस देता। तुम्हें मथुरादाससे हँसकर यही कहना चाहिए था कि तुम मुझे पहचान लो तो तुम यही कहो कि जितना अधिकार तुम्हें है उतना ही मुझे भी है। मथुरादास तुम्हें स्नातकके रूपमें पहचान नहीं पाया। उसने तुम्हें उत्तरका कोई अनजान व्यक्ति समझा और हिन्दीमें बात करनी शुरू की। तुम मेरे पास आ सकते थे। मैंने भी तुम्हें नहीं पहचाना था, किन्तु मेरे इस गुनाहकी सजा देना ठीक तो नहीं था।

शिकायत तो मुझे करनी चाहिए। किन्तु उलटा चोर कोतवालको डाँटे वाली बात तुमने की है।

अब दुःख किसलिए[२]?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९६५२) से; सौजन्य : अमृतलाल नानावटी।

१. गांधीजीने इन्हीं शब्दोंका प्रयोग किया है।
२. देखिए अगला शीर्षक।

३६१. पत्र : द० बा० कालेलकरको

२६ जुलाई, १९३३

चि० काका,

तुम्हारा पत्र मिला।

जो-कुछ अमृतलाल[1] के साथ हुआ है, ऐसा बहुत लोगोंके साथ हुआ होगा। यह घटना दुःखद अवश्य है, पर इसमें दोष किसीका नहीं है। या सिर्फ बाल[2] का ही दोष मानना चाहिए और उसके बाद, या उससे भी अधिक, खुद अमृतलालका। मथुरादासने जो कहा मेरी रक्षाके लिए ही कहा। मुझे तो मालूम ही कैसे होता। मथुरादासने किसीको बाहर जानेके लिए कहा, यह मैंने देखा; किन्तु अमृतलालको मैं कैसे पहचानता। उसने तुम्हारा नाम लिया हो तो मुझे इसकी खबर नहीं। किन्तु यदि वह इस घटनापर हँस पड़ता तो दूसरे सब भी हँसते। मैंने यहाँ कनुके साथ भी ऐसा ही किया था। जब वह पाँव छूनेके लिए बढ़ा तो उसे पहचाने बिना दूर हटा दिया। किसीने अमृतलालको पहचानकर जान-बूझकर ऐसा नहीं किया है। उसे क्यों नहीं पहचाना, ऐसा कहो तो किसीको ज्यादा दोष नहीं दिया जा सकता। अमृतलालको हँसकर हिन्दीके बजाय गुजरातीमें जवाब दे देना चाहिए था।

बाल मथुरादासको भले ही कुछ न कह सका हो लेकिन उसे मुझसे तो कह ही देना चाहिए था। मैं मथुरादासको पत्र नहीं भेज रहा हूँ। भेजनेसे बात बढ़ेगी।

तुम्हें 'हरिजन' में लगाये बिना छुटकारा नही-था। अब आनन्द[3] को भेजा है। जब समझो कि वह तैयार हो गया है, तभी खिसक आना। जिसमे तुम-जैसी लेखन-शक्ति हो, वह अपनी अंग्रेजी तो सहज ही शुद्ध कर सकता है। तुम्हारी अंग्रेजी मंजी हुई नहीं है किन्तु विचारोंमें प्रवाह न हो, ऐसा नहीं है।

तुम यहाँ आ सको तो मुझे तो अच्छा ही लगेगा। मैंने बाल को खूब लम्बा पत्र लिखनेके लिए कहा ही है। किन्तु अपने-आप देखना अलग बात है।

महादेवने पत्रमे जो निराशा व्यक्त की है, वह अनुचित है। लेकिन तुम्हारी बात मैं समझता हूँ। मेरे पास रहनेके बारेमें भी समझ गया हूँ। मुझे तुम भार लगने लगे थे, ऐसा मानना भूल ही है। किन्तु यह किस प्रकार मान लेते हो कि हम जो संकल्प करेंगे उसे पूरा कर ही पायेंगे? जिसे मेरे पास भेजा जायेगा, वह

१. अमृतलाल नानावटी।

२. द० बा० कालेलकरका पुत्र।

३. आनन्द हिंगोरानी।

आयेगा। मैं तो मानता ही हूँ कि सरकार महादेवको भेजेगी। वह [मेरी अपेक्षाको] जानती है।

आ सको तो आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४७७) से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर

३६२. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

२६ जुलाई, १९३३

मेरा खयाल है कि मेरे शब्द बिलकुल स्पष्ट और सुनिश्चित थे। मैंने केवल यह कहा था कि यदि भेंटकी स्वीकृति मिल जाती, तो मैं कुछ ऐसा रख सकता था जो सरकार और जनता दोनोंको स्वीकार होता। यदि आप मुझसे यह पूछे कि मैं वाइसरायके आगे क्या रखता, तो वह मैं आपको बता नहीं सकता। इसका कारण यह नहीं है कि वह कोई रहस्य है, बल्कि यह है कि वह मुझे मालूम नहीं है। मैंने जब वह बयान दिया था तो मुझे अपनी प्रत्युत्पन्नमतिपर भरोसा था। वह समझौतेके ऐसे सुझाव रखनेमे जो स्वीकार किये जा सकें, अभीतक कभी चूकी नहीं है।

लॉर्ड इर्विनके पास मैं कोई पहलेसे सोचे-साचे सुझाव लेकर नहीं गया था। परन्तु बातचीत[2] के दौरान जैसे ही वे मेरे मनमें आये मैंने उन्हें उनके आगे रख दिया। और क्योंकि दोनों पक्ष शान्तिका सकल्प रखते थे, इसलिए एक रास्ता निकल आया। लॉर्ड विलिंग्डनके साथ भेंटमें भी, यदि उन्होंने संकल्प दिखाया होता तो, ऐसा ही होता। इसलिए मेरे मनमें कोई योजना छिपी हो, ऐसा कोई रहस्य नहीं है। यदि कोई होती तो उसे सर्वसाधारणके आगे रखनेमें मुझे कोई संकोच नहीं होता।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-७-१९३३

१. साधन-सूत्रके अनुसार गांधीजीसे यह पूछा गया था कि "यदि वाइसरायने आपको भेंटकी अनुमति दी होती तो आपके मनमें उनके समक्ष रखनेके लिए क्या योजना थी"।

२. देखिए खण्ड ४५।

३६३. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको

२६ जुलाई, १९३३

आश्रमको भंग करनेका अर्थ यह होगा कि हर आश्रमवासी एक चलता-फिरता आश्रम बन जायेगा जो, जेलमें या बाहर कहीं भी क्यों न हो, आश्रमके आदर्शको पूरा करनेका दायित्व वहन करेगा।

गांधीजी ने आगे बताया कि [आश्रमको] शीघ्र भंग करनेसे प्रोत्साहन खत्म या कम नहीं होगा, बल्कि और अधिक प्रयत्न, और अधिक समर्पण तथा और अधिक बलिदानके लिए और भी अधिक प्रोत्साहन मिलेगा। यह महीना पूरा होनेपर वे यथासम्भव शीघ्र ही आश्रमको भंग कर देंगे। उन्होंने घोषणा की:

आश्रमके बारेमें हर कदम अधिकारियोंको पूरी जानकारी देनेके बाद ही उठाया जायेगा।

यह पूछनेपर कि क्या वे आश्रमको धनाभावके कारण बन्द कर रहे हैं, गांधीजी ने कहा:

ऐसा कहना द्वेषपूर्ण और निराधार है। आश्रमके बहुत-सारे मित्र हैं, जिन्होंने उसे कभी अभाव नहीं होने दिया है।

यह पूछनेपर कि क्या वे आश्रमको निराशाके कारण बन्द कर रहे हैं, गांधीजी ने कहा कि यह कहना भी उतना ही निराधार है। उन्होंने आगे कहा:

मुझे न केवल कोई गहरी निराशा नहीं है, बल्कि यह विश्वास है कि आश्रम-वासियोंमें से अधिकतरने, मनुष्यके लिए जहाँतक सम्भव है, आदर्शके अनुरूप रहनेका पूरा प्रयत्न किया है। पर, इतना जरूर सच है कि यद्यपि आश्रमवासियोंने, मुझ समेत, सिद्धान्तोंके अनुरूप रहनेकी ईमानदारीसे कोशिश की, फिर भी हम सब विफल रहे हैं। परन्तु यह ऐसा कारण नहीं है जिससे निराशा हो। यह तो ऐसा कारण है जिससे और अधिक कोशिश होनी चाहिए।

यह पूछनेपर कि सभी कांग्रेस संगठनोंको निष्क्रिय कर देनेका अर्थ क्या यह होगा कि भारतमें अराजकता फैल जायेगी, गांधीजी ने कहा:

नहीं, अराजकताका अर्थ है शासन और अनुशासनका अभाव। कांग्रेस कड़े अनुशासनमें रहेगी। व्यक्तियोंकी गतिविधियाँ कांग्रेस-प्रस्तावोंमें निर्धारित सीमाओंके अन्दर ही रहेंगी।

अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी एक बैठक बुलानेके सुझावके बारेमें गांधीजी ने कहा:

मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। पर, व्यक्तिगत रूपसे मेरा यह खयाल है कि जबतक सत्याग्रहको बिलकुल छोड़ देनेका ही कदम न उठाया जाये, यह असम्भव है। इस तरहके इरादेकी सरकारको सूचना देनी चाहिए। इसकी सलाह देना ठीक होगा या नहीं, इस सवालका जवाब हर सदस्यके अपने मिजाजपर निर्भर करेगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २७-७-१९३३

३६४ पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

अहमदाबाद,
२७ जुलाई, १९३३

प्रिय गुरुदेव,

यरवदा-समझौतेके बारेमें, जहाँतक उसका बंगालसे सम्बन्ध है, समाचारपत्रोंको दिया गया आपका सन्देश[1] मैंने पढ़ा है। मुझे यह जानकर गहरा दुःख हुआ कि मुझपर हार्दिक स्नेह और मेरे निर्णयमें विश्वास होनेके कारण आप गलतीसे ऐसे समझौतेका अनुमोदन कर बैठे जिसके बारेमें [बादमें] यह पता चला कि उससे बंगालके साथ भारी अन्याय हुआ है। मेरे यह कहनेसे अब कोई लाभ नहीं है कि मुझपर आपका जो स्नेह है उससे आपका निर्णय प्रभावित होना नहीं चाहिए था, या मेरे निर्णयमें आपका जो विश्वास है उसके कारण आपको ऐसा समझौता स्वीकार करना नहीं चाहिए था जिसके बारेमें अपने स्वतन्त्र निर्णयपर पहुँचनेके लिए आपके पास पर्याप्त साधन थे। कारण, कि आपके अति उदार स्वभाव को मैं जानता हूँ। आपने जो किया उससे भिन्न आप कर ही नहीं सकते थे और यह पता लग जानेके बाद भी कि आपने भारी गलती की है, यदि फिर अवसर आये तो आप ऐसी ही गलती फिर करते रहेंगे।

परन्तु मुझे इसपर बिलकुल विश्वास नहीं है कि कोई गलती हुई है। जैसे ही समझौतेमें संशोधनका आन्दोलन शुरू हुआ मैंने अपना दिमाग उधर लगाया, जानकार मित्रोंके साथ उसपर विचार-विमर्श किया, और मुझे यह यकीन हो गया कि बंगालके साथ कोई अन्याय नहीं हुआ है। जिन्होंने अन्यायकी शिकायत की थी उनके साथ मेरा पत्र-व्यवहार हुआ। परन्तु वे भी, रामानन्द बाबू समेत, मुझे किसी अन्यायका यकीन नहीं दिला सके। निस्सन्देह, हमारे दृष्टिकोणोंमें अन्तर था। मेरे विचारमें इस प्रश्नके प्रति जो रुख अपनाया गया, वह भी गलत था।

आपसी फैसलेसे हुए किसी समझौतेको, समझौता करनेवाले पक्षोंकी स्वीकृति बिना, ब्रिटिश सरकार बदल नहीं सकती। परन्तु इस तरहकी स्वीकृति प्राप्त करनेके

१. देखिए परिशिष्ट १०। रवीन्द्रनाथ ठाकुरने गांधीजी को इस सन्देशकी एक प्रति अपने एक पत्रके साथ २८ जुलाई, १९३३ को भेजी थी; देखिए "पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको", ७-८-१९३३ ३१६-९ पा० टि० १।

लिए कोई गम्भीर प्रयत्न किया गया हो, ऐसा नहीं लगता। इसलिए, शिकायत करने-वालोंके मंचपर आपके आविर्भावका कम-से-कम मैं इस आशासे स्वागत करता हूँ कि इससे ब्रिटिश सरकारसे व्यर्थ अपील करनेकी बजाय आपसमें विचार-विमर्श होगा। इसलिए, यदि आपने इस विषयका स्वयं अध्ययन किया है और जो मत अब आपने घोषित किया है आप उसपर पहुँचे हैं, तो मैं चाहूँगा कि आप मुख्य पक्षोंकी एक सभा बुलायें और उन्हें यह यकीन दिलायें कि बंगालके साथ भारी अन्याय हुआ है। यदि यह सिद्ध किया जा सके तो मुझे इसमें सन्देह नहीं है कि बंगालके साथ जो अन्याय हुआ बताया जाता है, उसे दूर करनेके लिए समझौतेपर पुन: विचार किया जायेगा और उसे सुधारा जायेगा। यदि मुझे यह विश्वास हो गया कि, जहाँतक बंगालका सम्बन्ध है, निर्णयमें गलती हुई है, तो मैं उस गलतीको ठीक करानेमें कोई कोशिश उठा नहीं रखूँगा। आपको यह मालूम ही होगा कि समझौतेकी सफाईमें सार्वजनिक रूपसे कुछ कहनेसे मैंने अभी अपने-आपको आग्रहपूर्वक रोके रखा है। यदि कुछ कहा है तो वक्तव्यके साथ प्रकट की गई अपनी इस रायको दोहरानेके लिए ही कहा है कि यदि अन्याय सिद्ध किया जा सका तो वह दूर कर दिया जायेगा। इसलिए मैं पूर्णतया आपकी सेवाको तैयार हूँ।

अभी तो मै आश्रमको भंग करने और सार्वजनिक उपयोगके लिए जितना-कुछ भी उपयोगी हो उसे बचानेके उपाय खोजनेमें व्यस्त हूँ। इसलिए, मेरी सेवाएँ आपको मेरे जेलमे पहुँचनेके बाद ही, जो घटना इस महीनेके समाप्त होनेपर किसी भी दिन घट सकती है, उपलब्ध होंगी। आशा है, आप बिलकुल स्वस्थ होंगे।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

डॉ० रवीन्द्रनाथ ठाकुर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६३९)से।

३६५. पत्र : आर० वी० शास्त्रीको

२७ जुलाई, १९३३

प्रिय शास्त्री,

जैसे ही मैंने तुम्हारे ज्वरकी बात सुनी, मैं तुम्हारे लिए कुछ लिखवाना चाहता था। पर कोई फायदा न था। अभी मेरे पास कुछ मिनट हैं और मैं उनका लाभ उठाते हुए कुछ पंक्तियाँ लिखवा रहा हूँ।

बेशक, तुम्हें स्वास्थ्य-लाभके लिए मद्रास जाना है। मुझे आशा है कि श्रीमती शास्त्री और उनकी माताकी तरह, मद्रासका जलवायु-परिवर्तन ही तुमपर जादूका-सा असर डालेगा और इस पत्रके पहुँचनेतक तुम ज्वरसे मुक्त हो गये होगे। परन्तु तुम्हें जो समय मिला है उसका उपयोग तुम्हें श्रीमती शास्त्रीसे रसोईकी सीधी-सादी

कला सीखनेके लिए करना चाहिए और जब पूना लौटो तो तुम्हारे सामानके साथ अच्छी किस्मका चावल भी होना चाहिए। पूनामें रहने और पूर्ण स्वस्थ रहनेका संघर्ष तुम छोड़ नहीं सकते। सैकड़ों तमिल लोगोंके लिए जो चीज सम्भव हो सकी है, वह तुम्हारे लिए भी अवश्य सम्भव होनी चाहिए। मुझे नियमित रूपसे पत्र लिखते रहना। महादेवने तुम्हें यह लिखा ही होगा कि तुम्हारी जगहपर आनन्द हिंगोरानी भेजे गये है। परन्तु, जैसे ही तुममें फिरसे शक्ति आ जाये तुम्हें यहाँ लौटना है — लेकिन उससे पहले नहीं लौटना है। तुम्हें न केवल अपनी शक्ति फिरसे प्राप्त करनी है, बल्कि उसे बनाये रखनेकी कला भी सीखनी है। बेशक, तुम्हें जितनी जरूरत हो 'हरिजन' कोष से ले लो। यदि तुम चाहो तो मैं पटवर्धन[1] को इस विषयमें लिख दूँगा, या समय बचानेके लिए, तुम इस पत्र या इसके प्रासंगिक अंशका भी उपयोग कर सकते हो।

श्रीमती शास्त्री और बच्चोंको मेरी ओरसे प्यार।

हृदयसे तुम्हारा,

श्रीयुत् आर० वी० शास्त्री

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१२५) से।

३६६. पत्र : एस० सदानन्दको

२७ जुलाई, १९३३

प्रिय सदानन्द,

मगनभाईसे मैंने वह फाइल पढ़नेको कहा था जो आप छोड़ गये थे और उसने जल्दीमें कुछ कामचलाऊ नोट्स तैयार करके मुझे दिये है जो मेरे पास पिछले दो दिनोंसे पड़े हुए हैं। उनका कहना है कि शीर्षक प्रायः ऐसा भाव पैदा करते हैं जो उनके अन्तर्गत दी गई विषयवस्तुसे बिलकुल भिन्न होते है। अकसर ऐसी बातें निकलती है जिनका वस्तुतः कोई आधार नहीं होता। समाचारपत्र पढ़नेके लिए मैं अपने को जो थोड़ा-सा समय देता हूँ, उसमें अभी-अभी मैं 'फ्री प्रेस' पढ़ रहा था। मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि उसे पढ़कर मुझे खुशी नहीं हुई। ऐसा लगता है कि आपके रिपोर्टर वास्तविकताओंसे अधिक गपशपपर फूलते-फलते हैं। इसीलिए उनकी बतायी बहुत-सी बातें विश्वसनीय नहीं लगतीं। मैं यह चाहूँगा कि आप लोगोंको केवल ऐसे समाचार दें जिनका कोई अच्छा आधार हो, और जहाँ समाचारमें आगामी घटनाओंकी भविष्यवाणी की गई हो, वहाँ रिपोर्टरोंके पास अपनी भविष्यवाणीके लिए ठोस आधार होना चाहिए। मेरे ध्यानमें एक ऐसी भविष्यवाणी आ रही है जो यदि सच हो जाये तो मै निश्चय ही आपको और

१. अनन्त विनायक पटवर्धन, **हरिजन** के मुद्रक एवं प्रकाशक।

आपके रिपोर्टरोंको बधाई दूँगा। हर हालतमें, आपको यह मालूम है कि पाबन्दी अब नहीं रही है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० सदानन्द
सम्पादक 'फ्री प्रेस जर्नल'
दलाल स्ट्रीट, फोर्ट, बम्बई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१२६) से।

३६७. एक प्रमाणपत्र

२७ जुलाई, १९३३

आश्रममें अब्बास द्वारा किया गया काम सबको अच्छा लगा है। उसने मुझे पिंजाई-सम्बन्धी कई बातें सिखाई हैं। और अन्य प्रकारसे भी सेवा की है। जहाँ भी रहेगा आश्रमके नियमोंका पालन करेगा और सेवा-कार्यमें जुटा रहेगा, यह मेरी आशा है और आशीर्वाद भी।

मोहनदास गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३०८) से।

३६८. पत्र : बलीबहन एम० अडालजाको

२७ जुलाई, १९३३

चि० बली[1],

तेरा पत्र मिला है।

मैंने तो मनु[2]को बहुत समझाया, पर उसे पूना जानेमें लाभ दिखाई दिया है और वह तुम्हारे पास नहीं आना चाहती। मैं उससे जबर्दस्ती किस प्रकार करूँ? उसका मन अध्ययनमें है। पूनामें पढ़ाई ज्यादा अच्छी है, इसलिए उसे वहाँ जानेका लोभ हो रहा है। इसलिए मैं तो यह चाहता हूँ, कि तू खुश होकर उसे आज्ञा दे दे। जबतक तेरी अनुमति न मिले तबतक उसे पूना भेजनेकी हिम्मत मैं नहीं कर सकता। तुझे आना हो तो आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५२४) से; सौजन्य: मनुबहन एस० मशरूवाला।

१. हरिलाल गांधीकी साली।
२. हरिलाल गांधीकी पुत्री।

३६९. भेंट : 'डेली हेरॉल्ड' के प्रतिनिधिको[1]

२७ जुलाई, १९३३

उपवास तोड़नेके बादसे मुझे हजारो स्त्री-पुरुषोंके जिन बलिदानों और कष्टोंकी जानकारी मिली है, उनके सामने मेरा मात्र जेल जाना कोई पर्याप्त बलिदान नहीं है। आश्रमके पास तीन लाखकी अचल सम्पत्ति, यानी जमीन और मकान है, और कोई दो लाखकी चल सम्पत्ति है, जिसमें ११,००० पुस्तकोंका एक बड़ा पुस्तकालय भी शामिल है। इन पुस्तकोंका मूल्य, हमारे अनुमानसे, कम-से-कम ४०,००० रुपये है। आश्रमके सदस्य और मैं, इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि जब अन्य लोगोंको उन चीजोंसे वंचित कर दिया गया है जो उनके लिए उतनी ही मूल्यवान थीं जितनी कि आश्रमवासियोंके लिए आश्रमकी चीजें, तो हमें भी अब इन चीजोंका उपभोग नही करना चाहिए। इसके अलावा, आश्रमके बहुत-से सदस्योंने क्योंकि व्यक्तिगत सत्याग्रह करनेका निश्चय कर लिया है, इसलिए सरकारसे यह अपेक्षा करना कि वह आश्रमके साथ इसी प्रकार प्रभावित अन्य सम्पत्तियोंसे भिन्न व्यवहार करेगी, गलत होगा। निस्सन्देह, एक मौलिक अन्तर है। आश्रम एक सार्वजनिक ट्रस्ट है जिसके सुस्पष्ट उद्देश्य है, और इस तरहकी सार्वजनिक संस्थाके सदस्य यदि कोई ऐसा रवैया अपनाते हैं जिससे कानून, अच्छा या बुरा, उनपर कड़ाईसे लागू होता हो, तो ट्रस्टकी सम्पत्ति उससे आसानीसे प्रभावित नहीं हो सकती। इस कारण हमने यह निश्चय किया है कि हमें सम्पत्तिपर कब्जा स्वेच्छासे सरकारको सौंप देना चाहिए। अतः आश्रमको भंग करनेका कदम उठाया गया है।

अनुपूरक प्रश्नोंका उत्तर देते हुए महात्मा गांधीने कहा :

अचल सम्पत्ति सरकारके पास चली जायेगी। चल सम्पत्ति सार्वजनिक संस्थाओं को दे दी जायेगी। पर, सरकार क्या कहती है यह देखना है।

गांधीजी ने बताया कि व्यक्तिगत सत्याग्रह करनेका अपना ढंग उन्होंने अभी अन्तिम रूपसे निश्चित नहीं किया है। उन्होंने आगे कहा :

सरकारको पहले सूचित किये बिना मैं कानून भंग करनेकी कोई खुली कार्यवाही नहीं करूँगा। मेरी योजना पहली अगस्ततक तैयार हो जायेगी।

जब उनसे आम तौरपर प्रचलित इस तरहकी खबरोंके बारेमें पूछा गया कि वे एक और कूचकी बात सोच रहे हैं, तो गांधीजी ने कहा :

वह सब गली-बाजारकी गप्प है। मैंने अभीतक कुछ निश्चित नहीं किया है। एक और कूच हो भी सकता है और नहीं भी। मैं अभी कुछ कह नहीं सकता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २८-७-१९३३

१. यह भेंट "एक विशेष प्रतिनिधि" ने ली थी।

३७०. भेंट : 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको

२७ जुलाई, १९३३

गांधीजी ने आज एक एकान्तिक भेंटमें मुझे बताया कि नी०, डॉ० स्पीगल और एक और अंग्रेज डंकन ग्रीनलीज़, जो आश्रममें हैं, सामान्यतः राजनीतिमें और विशेषकर सविनय अवज्ञामें भाग न लेनेके लिए वचनबद्ध हैं। गांधीजी ने कहा :

वे सब अपनेको हरिजन-सेवाके योग्य बना रहे हैं। इसलिए मैं उन्हें, यदि सम्भव हो तो, वर्धा भेजनेकी व्यवस्था कर रहा हूँ, जहाँ वे अपना काम जारी रखेंगे।

अन्य आश्रमवासी, जो सत्याग्रह आन्दोलनमें भाग नही लेंगे अपने घरोंको चले जायेंगे और कुछ पुराने कार्यकर्त्ता और उनके बच्चे ऐसे स्थानोंपर भेज दिये जायेंगे जहाँ उनके रहने या शिक्षण आदिमें सबसे अधिक सुविधा होगी। आश्रमकी जमीन, इमारत और चल सम्पत्तिका निपटारा ज्यादातर, जैसा सरकारका इरादा होगा, उस तरह होगा।

यह पूछनेपर कि सविनय अवज्ञा स्थगित रखनेकी अवधि समाप्त हो जानेपर वे पहले-पहल कानून किस तरह तोड़ेंगे, गांधीजी ने कहा :

सरकारको पहले सूचित किये बिना कोई कदम नही उठाया जायेगा। ठीक-ठीक क्या कदम उठाये जायेंगे, यह अभी मैं फैसला नही कर पाया हूँ। निस्सन्देह, सरकार मेरी सारी योजनाओंको, उनका पहले से ही अन्दाजा लगाकर, विफल कर सकती है। पर, यह तो १९०६ में सत्याग्रहका आविष्कार होनेके समयसे ही मेरी जिन्दगी रही है।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया, २८-७-१९३३

३७१. सन्देश: दास-प्रथा उन्मूलनकी शताब्दीपर[1]

[२८ जुलाई, १९३३ से पूर्व][2]

भारतको दास-प्रथा उन्मूलनके वीरोंसे बहुत-कुछ सीखना है, क्योंकि हमारे यहाँ ऐसी दास-प्रथा है जो धर्मानुमोदित मानी जाती है और पाश्चात्य दास-प्रथासे ज्यादा जहरीली है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
अमृत बाजार पत्रिका, २९-७-१९३३

३७२. वक्तव्य

[२८ जुलाई, १९३३][3]

श्री डंकन ग्रीनलीजने, जो इस समय आश्रममें ठहरे हुए हैं, मुझसे कहा है कि उन्हें, एक ब्रिटिश नागरिकको, नी० और डॉ० स्पीगल इन दो विदेशियोंके साथ जोड़कर मैंने उनकी स्थिति[4] सही ढंगसे पेश नहीं की है। यद्यपि मेरी प्रार्थनाको मानते हुए, आश्रमके अनुशासनके अनुसार, उनका विचार वर्तमान सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लेनेका नहीं है, पर स्वाभाविक रूपसे वे अपनेको किसी विशेष प्रकारके भावी आचरणके लिए पहलेसे प्रतिबद्ध नहीं कर सकते। वे कहते हैं कि ऐसा समय आ सकता है जब वे एक नागरिककी हैसियतसे राजनीतिमें यथोचित भाग लें।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५४४) से।

१ और २. "कलकत्ता, २८ जुलाई", तारीखमें प्रकाशित हुआ था, और यह तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुरका सन्देश, दोनों **इंडिया एण्ड द वर्ल्ड** के सम्पादक कालिदास नाग द्वारा जारी किये गये थे। इस, इंग्लैण्डमें शताब्दीका अन्तर्राष्ट्रीय समारोह मनानेके लिए २९ जुलाईका दिन निश्चित किया गया था और उसी दिन विल्बरफोर्सकी निधन शताब्दी भी पड़ रही थी।"

३. एस० एन० रजिस्टरके अनुसार।

४. देखिए पृ० ३३०।

३७३. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२८ जुलाई, १९३३

चि० हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला है। मुझको मिलनेसे क्या ज्यादा हो सकता है? हम सच-मुच गरीब बन जाय तो हमारे पास एक कोडी भी न होनी चाहिये। ऐसी हालतमें हम क्या करें। हमारा धर्म इतना हीं है कि हम यथाशक्ति स्वधर्मका पालन करे। तुमारा कार्य खादी सेवा और उसीके अंगमे सोदपुर आश्रम बनाने है। इतना होनेसे तुमारा कार्य पूर्ण होता है और उसीमें तुमारे लिये रामदर्शन है।

अरुणको सोदपुरके बाहर कहीं नहि रख सकती है? अथवा अरुण और तुम अरुणके सोदपुरमें ही रहकर जो उपचार शक्य है इतनेसे संतुष्ट हो?

मैं जो परिवर्तन कर रहा हुं वह सब समजमें आये होंगे। उस विषयमें अधिक लिखनेका समय नहि मिलता है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०४) से।

३७४. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

अहमदाबाद,
२८ जुलाई, १९३३

एसोसिएटेड प्रेसके एक प्रतिनिधिने गांधीजी से जब यह पूछा कि वे आश्रम किस तरह खाली करेंगे और उसका भार कौन सँभालेगा, तो उन्होंने कहा कि यह ऐसा सवाल है जिसका जवाब सरकार उनसे ज्यादा अच्छी तरह दे सकती है, क्योंकि जब आश्रमके सदस्य उस सम्पत्तिको छोड़ देंगे, तो स्वाभाविक रूपसे, वह सरकारकी देखरेखमें चली जायेगी। परन्तु यह प्रश्न अभी कुछ असामयिक है। आश्रमकी सम्पत्तिका क्या होगा, यह कुछ दिनमें ही उन्हें पता लग जायेगा।

यह पूछनेपर कि क्या यह बात चल सम्पत्तिपर भी लागू होती है, गांधीजी ने कहा कि उन्हें ऐसी आशा नहीं है। इस सवालका भी दो-तीन दिनमें फैसला हो जायेगा।

ऐसा समझा जाता है कि गांधीजी ने इस सिलसिलेमें बम्बई सरकारको एक पत्र लिखा है[1], जिसके उत्तरकी वे प्रतीक्षा कर रहे हैं।

समाचारपत्रोंमें प्रकाशित इस अफवाहके बारेमें उनका विचार पूछा गया कि यदि वे जेल गये तो सरकार इस बार उन्हें वे सुविधाएँ नहीं देगी जो उन्हें पहले दी गई थीं। गांधीजी ने कहा कि वे इस अफवाहपर कतई विश्वास नहीं करते। उन्हें इसमें रत्ती-भर भी सन्देह नहीं है कि सरकारने सोच-समझकर जो नीति अपनाई है — जो नीति यरवदा-समझौतेमें अन्तर्निहित है — वह उससे पीछे नहीं हटेगी, क्योंकि, जहाँतक उन्हें मालूम है, स्वयं उन्होंने इसके लिए कभी जरा-सा भी कारण पैदा नहीं किया है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-७-१९३३

३७५. टिप्पणियाँ

एक उल्लेखनीय दान

एक ब्राह्मण सज्जनने, जिनकी बहन और भांजीका स्वर्गवास हो गया है, मेरे पास १७५० रुपयेका एक चेक भेजा है और मुझे लिखा है कि यह रकम पूँजीके रूपमें कहीं लगा दी जाये और इसका ब्याज, मेरी इच्छानुसार, हरिजन-कल्याणके लिए खर्च किया जाये। पत्रमें वे लिखते हैं :

> अपनी बहन और भांजीका स्वर्गवास हो जानेके बाद मैंने २००० रुपयेके दानका संकल्प किया था। आजतक उसमें से २५० रुपये तो मैं इसी स्थानपर दे चुका हूँ। बाकी रुपया मैं आपके पास हरिजन-कल्याणके निमित्त भेज रहा हूँ। मेरी अपनी राय यह है कि यह रकम पूँजीके रूपमें कहीं लगा दी जाये, जिससे कि यह एक स्थायी निधिका केन्द्र बन सके और इसका केवल ब्याज हरिजन-कल्याणमें खर्च किया जाये। पर आपको यह स्वतन्त्रता है कि यदि उचित जान पड़े तो मूलधनको ही हरिजन-सेवामें अपनी इच्छानुसार खर्च कर सकते हैं। एक बात और। मैं अपना नाम प्रकट करना नहीं चाहता हूँ।

दानी सज्जनकी इन दोनों इच्छाओंका आदर करते हुए मैं यह चेक हरिजन सेवक संघकी गुजरात-शाखाको दे रहा हूँ। संघको मैं यह आदेश दे रहा हूँ कि यह रकम पूँजीके रूपमें कहीं लगा दी जाये और इसका ब्याज, जहाँतक सम्भव हो, मेरी स्वीकृति लेकर हरिजन-कल्याणमें खर्च किया जाये। मुझे आशा है कि दूसरे लोग भी इस उदाहरणका अनुकरण करेंगे।

१. देखिए पृ० ३१६-९।

एक ओवरसियरका प्रायश्चित्त

मेरे उपवासका कितने ही कार्यकर्त्ताओंपर जो परोक्ष प्रभाव पड़ा है, उसके सम्बन्धमें अब भी मेरे पास पत्र आते रहते हैं। गुजरातके एक ऐसे ही कार्यकर्त्ताने मुझे गुजरातीमें जो करुण पत्र लिखा है, उसे मैं संक्षेपमें नीचे देता हूँ:

> जब आप पूनामें थे, तो आपको पत्र लिखनेके लिए कई बार मैंने कलम उठाई, पर लिखनेकी हिम्मत नही पड़ी। लेकिन आज बड़े सवेरे उठकर मैंने अपने मनमें कहा कि जब आप इतने नजदीक हैं तो मैं अपना पाप प्रकट कर ही दूँ और आपको बता दूँ कि मैंने गरीब आदमियोंको किस तरह लूटा था। बात यह थी। आपको शायद याद हो कि १९०० मे एक भारी अकाल पड़ा था। उस समय अकाल-सहायताका काम चल रहा था। वहाँ मैं मजदूरोंके कामकी देखरेख किया करता था यानी, एक ओवरसियरके पदपर था। तब मैं लड़का ही था, इसलिए मजदूरोकी मजदूरीमें से पैसे काट-काटकर अपनी जेब भरनेमे मैं कोई पाप नहीं समझता था। शायद इस तरह मैंने करीब १०० रुपये कमाये। वह नौकरी मैंने आठ महीने की। सबसे दुःखकी बात यह है कि वे सब मजदूर हरिजन थे और उन्हें मैंने ही काम दिलवाया था। वैसे मैं उनपर मेहरबान था और वे लोग भी मुझसे खुश थे। लेकिन हरेककी मजदूरीमें से एक पैसा मै काट लिया करता था, जबकि उन्हें दिन-भरकी मजदूरीके सिर्फ ८ पैसे ही मिलते थे। मेरी नीचता इतनी बढ़ गई कि एक ६ सालके बच्चेकी मजदूरीमें से भी मैंने एक पैसा काट लिया! यह सोचकर मुझे अपना अपराध और भी बड़ा लगता है कि वह बच्चा मजदूरोंको पैसे बाँटनेमे मेरी बहुत मदद किया करता था। अपनी अन्तरात्माको मैंने दबा दिया और अपने मनको समझा लिया कि इनसे पैसा लेनेमें कोई पाप नही है, क्योंकि मैंने ही तो इन्हें काम दिलवाया है। मेरे नीचे कुछ ऐसे भी मजदूर थे जो हरिजन नहीं थे। उन्हें इस तरह फी मजदूर एक पैसा कटवाना पसन्द नहीं था, इसलिए मुझे उन्हें बर्खास्त करा देनेकी धमकी देनी पड़ती थी। लेकिन गरीब हरिजनोंने विरोधमें कभी मुँहसे एक शब्द भी नहीं निकाला, और मैं बराबर, उपरोक्त ढंगसे, नित्य पैसे चुरा-चुराकर अपनी जेब भरता रहा।
>
> मेरी इस पाप-कथाका यहीं अन्त नहीं होता। मजदूरनियोंके साथ अपना सम्बन्ध भी मै पाक-साफ नहीं रख सका।
>
> यद्यपि मुझे अपने बचावमें कुछ कहना नहीं चाहिए, फिर भी मुझे आपको यह अवश्य बताना है कि मेरे चारों ओरका सारा वातावरण ही तब अन्तरात्माको पतनकी ओर ले जानेवाला था। हाँ, एक पारसी इंजीनियर जरूर वहाँ ऐसा था जो निष्कलंक कहा जा सकता था।

अपने उन पाप-कर्मोंके किंचित् प्रायश्चित्त-स्वरूप, इस पत्रके साथ मैं २५० रुपयेके नोट भेज रहा हूँ। इनमें से ५० रुपये हरिजनोंपर नीचे लिखे अनुसार खर्च किये जायें :

२० रुपये उनकी शिक्षापर,

२० रुपये उनके लिए पानीका प्रबन्ध करनेपर,

१० रुपये प्रचार-कार्यपर।

शेष २०० रुपये आप अपनी इच्छानुसार खर्च कर सकते हैं।

इस नौजवानने १९०० में जो किया, वह किसी ओवरसियरके लिए, निस्सन्देह, एक आम बात थी और मुझे भय है कि यह सब अभी भी चलता है। बेचारे हरिजनोको जब काम नही मिलता, तो उन्हें मजबूरीमें चुपचाप सन्तोष करना पड़ता है। यही नहीं, बल्कि अपने लूटनेवालोंका वे एहसान भी मानते हैं। उन्हें यह भय रहता है कि अगर उन्होंने इस लूटका विरोध किया, तो उस तुच्छ मजदूरी से भी कहीं उन्हें हाथ न धोना पड़े। लेकिन उनके गाढ़े पसीनेकी कमाईमें से इस तरह नियमित लूट-खसोट एक दु:खद स्मृति छोड़े बिना कैसे रह सकती है। पत्र-लेखकको मैं उसकी स्पष्टवादिता और प्रायश्चित्तके लिए धन्यवाद देता हूँ। आशा है, यह पत्र सभी हरिजन-सेवकोंके लिए एक चेतावनी होगा और उन्हें शुद्ध करनेमें सहायक सिद्ध होगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-७-१९३३

३७६. कुछ खतरनाक बहम

अंग्रेजी भाषाके एक प्राध्यापक लिखते हैं :[१]

कोचीन और त्रावणकोरकी स्थितिके अध्ययनसे मुझे लगता है कि अगर आप इस प्रान्तमें हरिजनोंका मन्दिर-प्रवेश कराना चाहेंगे, तो यहाँ भारी फूट पड़ जायेगी। हाँ, अगर लोग यह मानने लगें कि आपमें अपने तपोबलसे हमारे मन्दिरोंका गूढ़ रहस्य समझनेकी शक्ति आ गई है, तो अलग बात है। हरिजनों तकको यह विश्वास नहीं है कि आप श्री नारायण गुरुका कार्य पूरा कर रहे हैं, क्योंकि उन्होंने तो हरिजनोंके लिए पृथक् मन्दिर बनवाये थे। आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप स्वयं केरल प्रान्तके एक-दो मन्दिरोंको आकर देखें और हो सके तो मालवीयजी को भी अपने साथ लायें।

मैं खुद एक निष्ठावान सनातनी हूँ। सनातन धर्ममें मेरी इतनी श्रद्धा है कि मुझे अन्धविश्वासीतक कहा जा सकता है। आपके उपवाससे मैं व्याकुल

१. यहाँ उसके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

हो गया था और मैंने भी उपवास करके भगवानसे सच्ची राह दिखानेकी प्रार्थना की थी। तब मुझे लगा कि आपकी आयुके लिए मुझे चोट्टनिकारीके मन्दिरमें जाकर प्रार्थना करनी चाहिए। वहाँ मुझे एक ब्राह्मण भक्त मिले जिनके विषयमें मैं एक बार लिख चुका हूँ। उनके साथ मैं कई दिन इस विषयपर चर्चा करता रहा, पर हम एकमत न हो सके। सातवें दिन मुझे यह आभास हुआ कि आपका उपवास निर्विघ्न समाप्त हो जायेगा।

उस मन्दिरमें मैंने अपनी आँखोंसे दो मनुष्योंको ऐसी व्याधियोंसे मुक्त होते देखा जिन्हें नवीन मनोविज्ञान उन्माद या बहुरूपी व्यक्तित्वकी संज्ञा देगा। मानसिक और स्नायविक रोगोंका उपचार बहुत-से मन्दिरोंमें आम बात है . . .

पुराने विचारोंके लोगोंको भय है कि मन्दिरोंमें जो प्रथाएँ प्राचीन कालसे चली आ रही हैं, उन्हें भंग करनेसे मन्दिरोंकी पवित्रता कम हो जायेगी। इस प्रकारके उपचारके लिए एक कैथोलिक ईसाई गिरजाघर भी किसी जमानेमें प्रसिद्ध था। लोग यह मानते हैं कि कैथोलिक लोगोंने वर्ण-व्यवस्थाका ठीक-ठीक पालन नहीं किया, इसीसे उसकी शक्ति घट गई। इस तरहकी मान्यता हास्यास्पद है, यह बात लोगोंको समझाना असम्भव है। ये लोग कूपमण्डूक-जैसे हैं।

मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नसे फूट पड़नेका जो भय है उसकी मुझे उतनी चिन्ता नहीं है। पर जिन भयानक वहमोंका इस प्राध्यापकने जिक्र किया है, उनकी मुझे अधिक चिन्ता है। मुझे सिर्फ इतना ही कहना है कि फूट रोकनेका मैं पूरा-पूरा प्रयत्न करूँगा। परन्तु मेरा लक्ष्य बिलकुल स्पष्ट है। हरिजनोंको हिन्दू-समाजके अन्दर या बाहर एक पृथक् समूहके रूपमें रखना मेरा लक्ष्य नहीं है। आजकल जैसी अस्पृश्यता चल रही है, उसका जबतक नाश नहीं होगा, मुझे सन्तोष नहीं होगा। परन्तु प्राध्यापक महोदयने जिन वहमोंका जिक्र किया है, वे बहुत ही भयानक हैं। मनुष्यकी कल्पना ही उससे बहुत-से काम कराती है और उसे बहुत-से काम करनेसे रोकती है। रस्सीको सर्प मानकर भयसे मर जानेवालोंके उदाहरण हमें मालूम हैं। पर ऐसे काल्पनिक विश्वासोंको मनमें पालनेकी आदत नितान्त अयुक्त ही कही जा सकती है।

अतः प्राध्यापक महोदयकी रोगियोंके अच्छे होनेकी साक्षीके बावजूद, मैं उनका यह निष्कर्ष मान नहीं सकता कि मलाबारके कुछ मन्दिरोंकी कुछ मूर्तियोंमें रोगनष्ट करनेकी शक्ति होनेका मलाबारके लोगोंका वहम न्यायोचित है। उन लोगोंमें शिक्षाका प्रचार करके इन सारे वहमोंको दूर कर देना चाहिए। इन वहमोंसे मन निरोग नहीं रह सकता। हर हालतमें, हरिजनोंके प्रवेशसे मन्दिर और उनमें प्रतिष्ठित मूर्तियाँ कैसे अपवित्र हो जाती हैं, यह मेरी समझमें नहीं आता। इतना तो स्पष्ट है कि रोगनष्ट करनेकी या कोई अन्य शक्ति देवी-देवताओंसे नहीं मिलती। मन्दिरों या उनके देवताओंमें मनुष्यकी अपनी श्रद्धा ही फल देनेवाली होती है। निस्सन्देह, आजतक इन मन्दिरोंमें बहुत-से हरिजन अज्ञात रूपसे प्रवेश कर चुके होंगे, तो भी इन मन्दिरोंके देवी-देवताओंकी शक्तिमें कुछ कमी नहीं आई। अतः मलाबारके

प्रत्येक शिक्षित भाई-बहनसे मेरा नम्र निवेदन है कि पत्र-लेखकने जिन वहमोंका जिक्र किया है, हिन्दू-धर्मको उनसे मुक्त करनेकी वे जी-तोड़ कोशिश करें। कैथोलिक गिरजाघरोंमें भी अस्पृश्यताके जहरका प्रवेश हो गया है, यह बात कोई प्रसन्नताकी या अभिनन्दनीय नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-७-१९३३

३७७. अनुकरणीय उदाहरण

यूरोपसे एक मित्र लिखते हैं:[1]

. . . जिन मुद्दोंकी चर्चा 'हरिजन' में होती रहती है उनके बारेमें मैं यह पत्र नहीं लिख रहा हूँ। मैं तो आपका ध्यान अमेरिकाकी हैम्पटन और टस्केजी संस्थाओंकी ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ कि वे वहाँके नीग्रो लोगोंकी कैसी सेवा कर रही हैं। (अथवा मैं आपको उनका केवल स्मरण कराना चाहता हूँ, क्योंकि उनके सम्बन्धमें आप सुन तो चुके ही हैं।) अमेरिकी नीग्रो सन् १८६५ में दासतासे मुक्त हुए थे। उस समय उनके सामने जो प्रश्न था, लगभग वैसा ही प्रश्न आज आपके भारतीय हरिजनोंके सामने है। अमेरिकाके सहृदय गोरे लोगोंने इस प्रश्नको किस प्रकार सुलझाया, इसकी कथा 'स्टोरी ऑफ हैम्पटन' में दी गई है। बुकर टी० वाशिंगटनने जो पुस्तकें लिखी हैं, उनमें अमेरिकाके सहृदय काले लोगोंके उन तमाम कामोंका वर्णन है जो उन्होंने अपनी जातिके लिए, और न केवल अपनी जातिके लिए बल्कि दूसरी जातियोंके लिए भी किये हैं। उदाहरणके लिए टस्केजीके खेतीके वैज्ञानिक प्रयोगोंसे आसपासका सारा प्रदेश लाभ उठा रहा है। मैं तो यहाँतक कह सकता हूँ कि हरिजनोंकी शिक्षा जिन लोगोंके हाथोंमें है, उनमेंसे कुछ यदि अमेरिकाकी इन संस्थाओंका निरीक्षण कर लें तो बड़ा अच्छा हो। अमेरिकाके नीग्रो लोगोंने अपूर्व उन्नति की है। निस्सन्देह, व्यावसायिक शिक्षणपर कभी इतना जोर नहीं देना चाहिए कि साहित्य और कलाकी उच्च शिक्षाकी उपेक्षा ही होने लगे। दोनों साथ-साथ चलनी चाहिए। मेरा आदर्श तो यह है कि प्रत्येक मोची विश्वविद्यालयका स्नातक हो और विश्वविद्यालयके प्रत्येक स्नातकको एक-न-एक उद्योग-धन्धा आता हो। इस तरह और केवल इसी तरह वर्णाश्रम किसीके लिए बुरा नहीं रहेगा। परन्तु, साथ ही, इस तरह वर्णाश्रमका कोई अर्थ भी नहीं रह जायेगा।

१. केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

मुझे मालूम हुआ है कि आपने यह सलाह दी है कि धनी लोग नये मन्दिर बनायें। पर क्या मन्दिर बनानेके लिए धनियोंका होना जरूरी है? हिन्दू-धर्मको शुद्ध करना क्या सुधारकोंका कर्त्तव्य नहीं है? हरिजन और सुधारक क्या अपने-आप ऐसे मन्दिर नहीं बना सकते?

हैम्पटन सस्था या टस्केजी सस्थासे मैं अपरिचित नहीं हूँ, पर 'हरिजन' के हिन्दुस्तानी पाठकोंको शायद इनकी खबर न हो। हैम्पटन संस्थामें आर्मस्ट्रांगने और टस्केजीमें बुकर टी० वाशिंगटनने जो काम किया, उसका हमारे हरिजन-सेवकों और हरिजनोंको अध्ययन करना चाहिए। तो भी, नीग्रो लोगोंका सवाल और हरिजनोंका सवाल सब तरहसे एक-सा नहीं है। हैम्पटन सस्थामे गोरे लोगों द्वारा किया गया कार्य, हरिजनोंके बीच सवर्ण हिन्दुओ द्वारा किये गये कुछ कार्यके समान है। फिर भी मेरा यह विश्वास है कि अमेरिकाके नीग्रो लोगोंके प्रति वहाँके गोरे लोगोका जो कर्त्तव्य था, उससे कहीं बढ़कर यहाँके सवर्णोंका हरिजनोंके प्रति कर्त्तव्य है। क्योकि हमने तथाकथित उच्च वर्णोंकी कृत्रिम और कल्पित श्रेष्ठताको धर्मका रूप दे रखा है। इसलिए भारतके हिन्दू सुधारकोंका कार्य अमेरिकाके गोरे सुधारकोंके कार्यसे कही अधिक अत्यावश्यक और कठिन है। फिर भी हमारे पास भारतमें हैम्पटन सस्था-जैसी एक भी संस्था नहीं है। यह संस्था एक जबर्दस्त साहसिक उपक्रम है और थोड़े-से गोरे सुधारकोंके अथाह उत्साह, ज्ञान और उद्योगका एक सुन्दर स्मारक है। टस्केजी संस्था हरिजनोंके लिए एक आदर्श संस्था है। दलित जातिका कोई व्यक्ति अपार संकटोंका सामना करता हुआ जगतकी जितनी सेवा कर सकता है, उतनी सेवा बुकर टी० वाशिंगटनने की। वे अपनी अपार श्रद्धा और अपार लगनसे ही टस्केजीके भव्य भवनका निर्माण कर पाये। ये दोनों संस्थाएँ हरिजनों और हरिजन-सेवकोंके लिए तो विशेष उपयोगी हैं ही, पर शिक्षाविद्की आम दृष्टिसे भी बहुमूल्य हैं। अतः किसी दिन इन दोनों संस्थाओंके सेवा-कार्योंका साराश मैं 'हरिजन' में दूँगा। इस बीच पाठक इतना तो जान ही लें कि दोनों संस्थाओंमे शारीरिक श्रमके गौरवपर बहुत जोर दिया जाता है और विद्यार्थियोंकी सर्वोत्तम वृत्तियोंके विकासका प्रयत्न किया जाता है।

पत्र-लेखक वर्णाश्रमके विषयमे लिखते हुए भारी भूल कर गये है, कारण कि वर्णधर्मका मैने जो अर्थ किया है, उसके अनुसार ऊँचे-से-ऊँचे मानसिक विकासपर वर्णधर्म किसी प्रकारका कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाता। अधिक कमानेके लिए पैतृक धन्धेको छोड़नेकी जो खराब और विनाशकारी प्रतिस्पर्धा आजकल चल रही है और जो जीवनके आनन्द और सौन्दर्यको नष्ट कर रही है, उसपर वर्णधर्म अवश्य प्रतिबन्ध लगाता है। पर वह प्रतिबन्ध केवल नैतिक है।

मन्दिरोंका जहाँतक सवाल है, पाठक 'आदर्श मन्दिर' के मेरे विवरण[1] को कृपया देखें। मैं यह मानता हूँ कि मेरा आदर्श मन्दिर पत्र-लेखककी अपेक्षाओंसे कहीं अधिक सन्तोषजनक है। इस पत्रका नवीन मन्दिर-सम्बन्धी उद्धरण मैने सिर्फ यह बतानेके

१. देखिए पृ० ६२-४ और पृ० ७३-४।

लिए दिया है कि पश्चिमके विचारक अस्पृश्यता-निवारणके आन्दोलनको बड़े ध्यानसे देख रहे हैं और उनकी इच्छा है कि हम केवल बाह्य रूपका नाश करके ही सन्तुष्ट न हो जाये, बल्कि बहुत-से गहरी जड़ोवाले पुराने विचारोंमें क्रान्ति करके सर्वतोमुखी सुधार करें, और इस तरह हिन्दू-समाजको इतना शुद्ध कर दें कि उसका सत्प्रभाव समस्त मानव-जातिपर पड़े।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-७-१९३३

३७८. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

अहमदाबाद,
२९ जुलाई, १९३३

एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिके यह पूछनेपर कि कुछ क्षेत्रोंमें यह भय है कि कांग्रेस समितियोंको निष्क्रिय करनेसे देशमें अव्यवस्था फैल जायेगी, इसके बारेमें उन्हें क्या कहना है, गांधीजी ने कहा कि इस प्रश्नका कारण परिस्थितिके बारेमें एक गम्भीर मिथ्या धारणा है। प्रश्नमें पहले ही यह मान लिया गया है कि देश-भरमें कानूनी ढंगसे काम करनेवाले कांग्रेस संगठन थे, जिन्हें कार्यवाहक कांग्रेस अध्यक्षने भंग कर दिया है। तथ्य यह है कि इस तरहके सभी संगठन गैर-कानूनी घोषित कर दिये गये थे। इसलिए जो काम कर रहे थे, वे गुप्त संगठन और छाया-मन्त्रिमण्डल थे, और यह चीज अव्यवस्था पैदा करनेवाली समझी गई। उस परिस्थितिका पहलेसे अन्दाजा लगा लिया गया और कार्यवाहक अध्यक्षकी कारंवाईसे वह रोक दी गई। यदि अब कोई अव्यवस्था है तो वह व्यक्तियोंतक ही सीमित रहेगी।

गांधीजी ने कहा कि श्री अणेकी कार्यवाहीकी आलोचनाओंको वे जितना ही पढ़ते हैं उतना ही उन्हें यह विश्वास होता जाता है कि जैसे-जैसे समय गुजरेगा, लोग इस कार्यवाहीकी जरूरत और इसकी खूबसूरतीको भी समझ जायेंगे। कांग्रेस, राष्ट्रीय सम्मान और जन-साधारणमें जगी राष्ट्रीय भावनाको बचानेके लिए केवल यही एक कार्यवाही सम्भव थी।

यह पूछनेपर कि, जैसाकि समाचारपत्रोंमें संकेत है, क्या यह खबर सच है कि उन्होंने यह सोचकर ही कि आश्रम जब्त कर लिया जायेगा, सरकारसे उसे अपने अधिकारमें ले लेनेको कहा है, गांधीजी ने कहा : 'नहीं'। उन्होंने लोगोंसे अपील की कि वे घटनाओंकी पहलेसे अटकल लगानेकी बजाय धैर्यसे उनकी प्रतीक्षा करें।[1]

१. यह अनुच्छेद **हिन्दुस्तान टाइम्स**, ३०-७-१९३३ से लिया गया है।

यह पूछनेपर कि क्या उन्होंने सत्याग्रहकी अपनी योजना निश्चित कर ली है, गांधीजी ने कहा कि बेशक, उनके दिमागमें बहुत-सी योजनाएँ घूम रही हैं, जिन्हें बतानेसे कोई उद्देश्य पूरा नहीं होगा। लेकिन जैसे ही कोई चीज निश्चित रूप लेगी, वे खुशीसे उसे लोगोंको बतायेंगे। लेकिन पहले वे उसे सरकारको बतायेंगे। उन्होंने कहा कि हरिजन उनके लिए मित्रसे कहीं अधिक हैं और शायद वे उन्हें अपने साथ उसमें भाग लेनेको आमन्त्रित न करें।[1]

यह पूछनेपर कि क्या वे अपना सत्याग्रह पहली अगस्तको शुरू करेंगे और क्या किसीको अपने साथ उसमें भाग लेनेको कहेंगे, गांधीजी ने कहा कि वह पहली अगस्तको होगा या कब होगा, वे कह नहीं सकते।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ३०-७-१९३३; **हिन्दू**, ३१-७-१९३३ भी।

३७९. वक्तव्य : सेनगुप्त-दिवसपर

अहमदाबाद,
३० जुलाई, १९३३

कलकत्ताके मेयर श्री सन्तोष वसु और अन्य लोगोंकी ओरसे मुझे एक सन्देश मिला है, जिसमें मुझसे ६ अगस्त अखिल भारतीय सेनगुप्त-दिवस घोषित करनेको कहा गया है। इसी सिलसिलेमें मैंने श्री अणेकी अपील भी देखी है। कांग्रेसके कार्यवाहक अध्यक्षकी अपीलमें मैं अपना हार्दिक योग देता हूँ और आशा करता हूँ कि [इस अवसरपर] जो सार्वजनिक सभाएँ आयोजित की जायेंगी उनमें दिवंगत देशभक्तके जीवनकी अद्भुत विशेषताओंका स्मरण किया जायेगा और सब लोग उन्हें अपने जीवनमें उतारनेका प्रयत्न करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १-८-१९३३

१. यह वाक्य **हिन्दुस्तान टाइम्स**, ३०-७-१९३३ से लिया गया है।

३८०. वक्तव्य : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको[1]

३० जुलाई, १९३३

मेरे लिए जो शायद अबतकका सबसे बड़ा समर्पण है, उसकी इस पूर्व-सन्ध्यामें मैं सभी कांग्रेसियोंसे यह आग्रह करना चाहूँगा कि वे अपनी शक्ति कार्यवाहक अध्यक्षके व्यक्तिगत सत्याग्रह-सम्बन्धी फैसलेपर बहस करनेमे नष्ट न करें। एक विशेषज्ञकी हैसियतसे, मै अपनी इस रायको फिर दोहराता हूँ कि यह फैसला ही अकेला सही मार्ग है जो अपनाया जा सकता है। मेरे विचारमें यह वैज्ञानिक भी है। हर कांग्रेसी से मै यह आग्रह करूँगा कि वह मेरे वक्तव्य[2] को ध्यानसे पढ़े, और वह यह देखेगा कि यदि कार्यक्रम उत्साहके साथ अमलमें लाया जाये तो कांग्रेस ऐसी शक्तिशाली संस्था बन जायेगी जैसीकि वह अबतक कभी नहीं रही थी। सत्याग्रहके बिना न सुरक्षा है और न स्वतन्त्रता। सत्याग्रह केवल मेरे बताये ढंगसे ही अभेद्य बन सकता है।

गैरकांग्रेसियोंसे मैं कहूँगा : देशके इस सबसे बड़े संगठनकी हर तरहसे, जितनी भी कर सकते हो, सहायता करो। यह किसी एक वर्गका संगठन नहीं है। यह पूरे अर्थोमें राष्ट्रीय है।

अंग्रेजोंसे, चाहे वे सरकारी नौकर हों या अन्य, मैं कहूँगा : यदि आप देशमें शान्ति और भारतसे सच्ची मित्रता रखना चाहते हैं, तो उसका तरीका आर्डिनेंस राज्य नहीं है, कांग्रेसका तरीका ही एकमात्र तरीका है। मैं यह बात अंग्रेजोंके मित्रकी हैसियतसे कह रहा हूँ। आपमें से कुछ, हो सकता है, आज मुझे अपना शत्रु समझते हों। परन्तु मैं यह भविष्यवाणी कर सकता हूँ कि एक दिन ऐसा आयेगा जब धुँध छँट जायेगी और आप मेरे दावेको स्वीकार करेंगे।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१५४१) से।

१. यह वक्तव्य **हिन्दू**, ३१-७-१९३३ और **हिन्दुस्तान टाइम्स**, १-८-१९३३ में प्रकाशित हुआ था।
२. देखिए पृ० ३१०-५।

३८१. तार : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

३० जुलाई, १९३३

सचिव
गृह-विभाग
पूना

आशा है मंगलवारको प्रातः मै आश्रम छोड़ दूँगा। यदि स्वतन्त्र रहा तो अपने साथियों सहित, छोटी-छोटी मंजिलें तय करता, फिलहाल, रासतक जाऊँगा। उद्देश्य है, जिन ग्रामवासियोंको सबसे ज्यादा कष्ट उठाने पड़े हैं उनके साथ सहानुभूति प्रकट करना। ग्रामवासियोंको सामूहिक सत्याग्रहके लिए आमन्त्रित करनेकी [मेरी] कोई इच्छा नहीं है। परन्तु कांग्रेसके प्रस्तावके अनुसार, व्यक्तियोंसे सत्याग्रहके लिए कहा जायेगा। हम ग्रामवासियों से शराब छोड़नेको, शराबके दूकानदारोंसे शराबका धन्धा छोड़नेको, विदेशी कपड़ेके व्यापारियोंसे सिर्फ खद्दरका व्यापार करनेको, और सभीसे कांग्रेसका रचनात्मक कार्यक्रम अमलमें लानेको कहेंगे। हिन्दुओंसे अस्पृश्यताको मिटानेको कहा जायेगा। मैं और मेरे साथी बिना पैसे कूच करेंगे और ग्रामवासी जो कुछ देंगे वही खायेंगे। यदि मुझे पहले ही गिरफ्तार कर लिया गया तो मेरे ३२[1] साथी, जिनमें सोलह महिलाएँ हैं, कूच करेंगे।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१५४२) से।

३८२. अपील : गुजरातके लोगोंसे[2]

३० जुलाई, १९३३

आश्रमके त्यागका फैसला करना आसान नहीं था। परन्तु प्रत्येक आश्रमवासीके सामने यह चीज बिलकुल स्पष्ट थी कि यह त्याग अनिवार्य है। कर्नाटक, मिदनापुर और कैरा, यू० पी० और सीमाप्रान्तके किसानोंने जो कष्ट सहा है और जो त्याग किया है, उसके सामने यह त्याग कुछ नही है। अबतक उन्हें गुप्त सहायता दी जा रही थी, जो अब बन्द हो गई है या हो जायेगी और हो जानी चाहिए। पर

१. "अपील : गुजरातके लोगोंसे", ३०-७-१९३३ में यह संख्या ३३ है। देखिए अगला शीर्षक।
२. समाचारपत्रोंकी रिपोर्टोंमें इसका पहला और तीसरा अनुच्छेद नहीं दिया गया था।

इसका अर्थ यह नहीं है कि जो भूखों मर रहे हैं उन्हें, केवल इसलिए कि वे सत्याग्रही हैं, सार्वजनिक सहायतासे वंचित कर देना चाहिए। मुझे आशा है कि जो भी किसान संकटमें है उन सबको जन-साधारणसे आवश्यक सहायता मिलेगी, और यदि सरकार इस तरहकी सहायतापर प्रतिबन्ध लगाती है तो सहायता देनेवाले उसका प्रतिरोध करने और उसके परिणामोको भोगनेकी क्षमता दिखायेंगे। लेकिन उनमें वह क्षमता चाहे हो या न हो, मेरे सामने रास्ता साफ है। मैंने अपना सब-कुछ त्याग दिया है।

मंगलवारको प्रातः, यदि ईश्वरने चाहा तो, मेरा इरादा ३३ साथियोंके साथ आश्रमसे कूच करनेका है। इनमें से कुछ शारीरिक रूपसे मुझसे भी कमजोर हैं, क्योंकि इस बार मेरे साथ जितने पुरुष है लगभग उतनी ही स्त्रियाँ हैं। लेकिन मैं उन लोगोंकी आत्मत्यागकी इच्छाका प्रतिरोध नहीं कर सका। उनके लिए यह ऐसा आह्वान था जिसका वे प्रतिरोध नहीं कर सके। हमारी यही आशा और प्रार्थना है कि ईश्वर अपना प्रण पूरा करनेमें सहायता करे। फिलहाल हमारा लक्ष्य रास है। यदि हमें वहाँ पहुँचने दिया गया तो हम और आगे जायेंगे। पर यह बिलकुल सम्भव है कि कूच करते हुए हम सभी गिरफ्तार कर लिये जायें। यदि हमें इस तरह गिरफ्तार नहीं किया गया, तो हमारी योजना गाँवके घर-घरमें निर्भयताका सन्देश ले जानेकी है।

हम उनसे सामूहिक सत्याग्रह करनेको नहीं कहेंगे। परन्तु हम ऐसे लोगोंसे जो तैयार हों निश्चय ही व्यक्तिगत सत्याग्रह करनेको कहेंगे। जो शराब पीते हैं उनसे हम उसे छोड़नेको कहेंगे, शराबके दूकानदारोंसे हम वह धन्धा छोड़नेको कहेंगे, विदेशी कपड़ेके व्यापारियोंसे हम केवल खद्दरका व्यापार करनेको कहेंगे, और हम घर-घरमें हाथ-कताईका सन्देश ले जायेंगे। तथाकथित उच्च वर्गके लोगोंसे हम कहेंगे कि वे अस्पृश्यताका त्याग करें और हरिजनोंसे मित्रता स्थापित करें। हरिजनोंसे हम कहेंगे कि वे स्वच्छताके नियमोंका पालन करें और मुर्दा पशुओंका मांस न खायें, और हम सभी सम्प्रदायोंसे यह अपील करेंगे कि वे साम्प्रदायिक एकता कायम करें और इस प्रकार कांग्रेसके समूचे रचनात्मक कार्यक्रमको पूरा करें[1]।

जिन गाँवोंमें हम जा रहे हैं उनसे हम क्या अपेक्षा रखते है, यह मैं संक्षेपमें बता दूँ। हमारे पास एक भी पैसा नहीं होगा। ग्रामवासी हमें जो भी रूखा-सूखा देंगे वह हम प्रसन्नतासे और कृतज्ञताके साथ स्वीकार करेंगे। प्रेमसे परोसा गया रूखा-सूखा भोजन भी हमारे लिए सर्वोत्तम व्यंजन होगा। यह बरसातका मौसम है, इसलिए हमें ठहरनेको यदि छतवाली कोई झोंपड़ी मिल जाये तो हम आभारी होंगे। हम थोड़ा-थोड़ा रास्ता तय करते हुए कूच करेंगे, क्योंकि हममें बहुत-से व्यक्ति शरीरसे तगड़े नहीं हैं, और हमारा कार्यक्रम कड़ा नहीं होगा। हमारी टाँगें जब भी हमें आगे ले जानेमें असमर्थ हो जायेंगी, तभी हम रुक जायेंगे। परन्तु हमारा इरादा एक स्थानपर एक रातसे ज्यादा ठहरनेका नहीं है।

१. इससे आगेका अंश फोटो-नकलसे लिया गया है।

यह सम्भव है कि सरकार मुझे मंगलवारसे पहले ही पकड़ ले। तो भी जब तक कूच करनेवाला एक भी साथी स्वतन्त्र रहेगा, कूच जारी रहेगा। मुझे विश्वास है कि हम जो त्याग कर रहे हैं यदि वह शुद्ध है, तो उससे अहिंसाकी शक्ति उत्पन्न होगी जो हमें स्वराज्यके निकट पहुँचायेगी, जिसके लिए कि हम लाखों-करोड़ों लोग लालायित हैं।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५४९) से। फोटो-नकल (एस० एन० २१४१६) से भी।

३८३. पत्र : आनन्द टी० हिंगोरानीको

३० जुलाई, १९३३

प्रिय आनन्द,

आपके पत्रकी प्राप्ति-स्वीकृतिमे मात्र एक पंक्ति लिख रहा हूँ। मै विद्या[1] के बहुत पास आ गया हूँ। वह जानती है कि उसे क्या करना चाहिए, परन्तु उसमें इतना हौसला नही है कि वह उस कामको खुशीसे शुरू कर दे। फिर भी वह बड़ी बहादुरीसे संघर्ष कर रही है और मेरा विचार है कि उसमें उसे सफलता भी मिल रही है। जितनी देर मैं आश्रममें रहता हूँ वह मेरे पास बैठी रहती है। परन्तु कल उसके मुझसे मिलनेकी सम्भावना नही है। और सम्भवत: वह कल रात वर्धाके लिए रवाना हो जायेगी। आपको उसके बारेमे चिन्ता करनेकी जरूरत नही है।

मुझे नहीं मालूम कि अगले हफ्ते आपको क्या भेजा जा सकता है। किसी भी हालतमें अगर मुमकिन हुआ तो मै कुछ तो जरूर ही भेजूंगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द टी० हिंगोरानी।

१. विद्या हिंगोरानी, आनन्द टी० हिंगोरानीकी पत्नी।

३८४. पत्र : ग० वा० मावलंकरको

३० जुलाई, १९३३

भाई मावलंकर,

तुम्हारा नाम तो रोज जपता ही रहता हूँ, पर पत्र किस समय लिखूँ! आज इतना लिखनेका निश्चय कर ही लिया है। तुम्हारे सकुशल होनेके समाचार मिलते रहते हैं। तुम्हारा अपनी जगह छोड़कर वहाँ चले जाना मैंने ठीक माना है। इतना आराम तुम्हें कभी नहीं मिल सकता था। यों दुनिया तो हमारी परवाह किये बिना चलती ही रहेगी। इसलिए जो समय आसानीसे मिल गया है उसका उपयोग अपना स्वास्थ्य सुधारनेमें करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२३७) से।

३८५. पत्र : मैत्री गिरिको

३० जुलाई, १९३३

चि० मैत्री,

तुम्हारा पत्र मिला। उससे बहुत प्रसन्नता हुई। अब तो आश्रमकी शोभा खूब बढ़ाना। बचुभाई[1] तो त्यागी है ही। उससे बहुत-कुछ सीखा जा सकता है। खूब सीखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२४१) से।

१. बचुभाई रामदास, गंगाबहन वैद्यका भतीजा।

३८६. पत्र : कृष्णमैयादेवी गिरिको

३० जुलाई, १९३३

चि० कृष्णमैया देवी,

तुम्हारा पत्र मिला। प्रसन्नता हुई। तुम वहाँ जो परिश्रम करती हो, उसमें भलाई ही है। अब तो आश्रमको भंग कर रहे हैं, इसलिए तुम सबपर आश्रमको शोभान्वित करनेका भार आ पड़ा है।

अब तुम सब नियमोंका पालन करके शोभा बढ़ाना।

दुर्गा और सत्यदेवीको भेज रहा हूँ। ध्यान रखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२१४) से।

३८७. पत्र : खुशालचन्द गांधीको

३० जुलाई, १९३३

पूज्य भाई,

चि० नारणदास आन्दोलनमें शामिल हो रहा है इसके लिए आप, भाभी या अन्य व्यक्ति दुखी होनेके बजाय प्रसन्न ही हों, यही मैं चाहता हूँ। मेरी दृष्टिमें यह कार्य अत्यन्त पवित्र है। आपके सभी लड़के इस बलिदानमें भाग ले रहे हैं, यह तो आपका सौभाग्य है। इसके बारेमें मेरे मनमे तनिक भी शंका नही है। नारणदास जहाँ भी रहेगा वहाँ कुशलसे ही रहेगा, मनमे ऐसा विश्वास रखें। फिर वह अकेला नही है, बहुत-सी बहने भी इस यात्रामें भाग ले रही है, और उनमें से कितनी ही तो अपंग-सी हैं। हम सबके जानेसे हजारों लोगोंका दुःख दूर होगा और उनके जीवनमें प्रसन्नताका संचार होगा, ऐसा निश्चित माने और नारणदास तथा सारे दलको आप दोनों अपना आशीर्वाद भेजें।

आप दोनोंको
मोहनदासके दण्डवत् प्रणाम

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३८८. पत्र : महावीर गिरिको

३० जुलाई, १९३३

चि० महावीर,

तू अच्छा काम करता दिखाई देता है। इसी प्रकार काममें सुधार करते जाना और सच्ची लगनसे कामकर सबपर अच्छा प्रभाव डालना। आश्रमकी शोभा बढ़ाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२४०) से।

३८९. पत्र : तोताराम सनाढ्यको

३० जुलाई, १९३३

भाई तोतारामजी,

तुमारा और चि० हरिप्रसादका खत मिला है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि जहाँ होंगे वहाँ आश्रमके नियमोंका पालन करते हुए रहोगे।

आश्रमकी जमीनका कब्जा सरकार न लेवे तबतक देखते रहो और फलादिका उपयोग करते रहो। वणकर भाइयोंको भी देना।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५३६) से।

३९०. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

३० जुलाई, १९३३

समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंसे अपनी भेंटमें गांधीजी ने कहा कि समाचारपत्रोंकी इस रिपोर्टमें कोई सचाई नहीं है कि उन्होंने वाइसरायको भेजनेके लिए एक पत्र तैयार किया है। उन्होंने कहा कि वे जीवनमें केवल एक ही चीज ऐसी जानते हैं जिसपर उनकी अन्धश्रद्धा है, और वह है सत्य, और उसपर अंधश्रद्धा रखनेके लिए उन्हें कोई खेद नहीं है।

उनके विचारमें मन, वचन और कर्मकी शुद्धतासे प्रतिष्ठा अपने-आप और बिना माँगे आती है। जबसे उन्होंने सार्वजनिक जीवनमें पाँव रखा है, उनकी कोशिश उसे इन तीन स्वर्णनियमोंसे ही शासित करनेकी रही है।

इस प्रश्नका उत्तर देते हुए कि क्या वाइसरायसे भेंट की उनकी प्रार्थनामें सत्याग्रहकी धमकी भी थी, गांधीजी ने घोषणा की कि भेंटकी प्रार्थनामें प्रत्यक्ष या परोक्ष, खुली या छिपी, किसी भी तरहकी कोई धमकी नहीं थी।

धमकीका जरा-सा भी सन्देह न हो, इसी आशयसे अनौपचारिक सम्मेलनकी कार्यवाहियाँ गुप्त रखी गई थीं। यह जन-साधारणका दुर्भाग्य ही है कि समाचारपत्रोंकी आजकलकी आचार-संहिता उन्हें न केवल गुप्त सूचनाको उल्टे-सीधे सभी तरीकोंसे पाने और प्रचारित करनेकी अनुमति देती है, बल्कि वह उसकी सराहना करती भी लगती है।

भेंटकी स्वीकृति न मिलनेपर या यदि स्वीकृति मिल गई तो उसके विफल होनेपर क्या-क्या सम्भावनाएँ हो सकती हैं, इस सिलसिलेमें यदि एक अनौपचारिक सम्मेलनमें बहुत-सी बातें कही गईं, तो उसका अर्थ किसी भी तरह धमकी नहीं लगाया जा सकता। संगत तथ्य यह है कि भेंटकी उनकी प्रार्थनामें कोई शर्त नहीं थी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-७-१९३३

३९१. पत्र : मीराबहनको

३० जुलाई, १९३३

चि० मीरा,

यह पत्र आश्रमसे लिख रहा हूँ। इस समय रातके पौने नौ बजे हैं। आशा है, तुम मुलाकात[1] के बाद बहुत ज्यादा परेशान नहीं रही होगी। तुम्हें स्वस्थ रहकर वजन बढ़ाना होगा।

अब चूँकि आश्रम तोड़ दिया गया है, तुम्हें अपनी जरूरतें रणछोड़भाईसे पूरी करानी होंगी। मैंने उनसे कह दिया है।

मैं अधिक नहीं लिखूँगा, क्योंकि मेरे पास समय नहीं है और मेरी उंगलियाँ अब ज्यादा काम नहीं देतीं।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८४) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७५० से भी।

१. कुछ दिन पहले गांधीजी मीराबहनसे साबरमती जेलमें मिले थे।

३९२. तार : सीलमको

[३१ जुलाई, १९३३ से पूर्व][1]

श्री सीलम
मंत्री, लोकमान्य स्मारक समिति

हार्दिक खेद है कि मूर्तिका अनावरण स्वय नही कर सकता। जिसने हमें स्वराज्य मन्त्र दिया आज उसके लिए कोई भी श्रद्धाजलि बहुत बड़ी नही है।

गांधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१४१७) से।

३९३. पत्र : न० रा० मलकानीको

३१ जुलाई, १९३३

प्रिय मलकानी,

मैं एकदम न तो 'हाँ' कह सकता हूँ और न 'ना'। तुम्हें खुद तय करना होगा कि कब आगमें कूदे बगैर रहा नहीं जा सकता। इसलिए तुम्हें हमेशा अपना स्थान ले सकनेवाला एक योग्य व्यक्ति तैयार रखना चाहिए। क्या मेरी बात पूरी तरह समझ गये?

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८९९) से।

१. यह तार **गुजरात समाचार**, ३१-७-१९३३ में प्रकाशित हुआ था।

३९४. पत्र : अब्बास तैयबजीको

३१ जुलाई, १९३३

प्रिय भुर्रर्र[1],

यह क्या बकवास है! तुमने खंडन किया सो ठीक है। तुम्हें उसका पूरा हक था। वाद-विवाद जरूर इतना लम्बा था कि किसीको भी परेशान कर देता। परन्तु समय पड़नेपर सहन करनेकी तुम्हारी क्षमता और इच्छापर मुझे कभी सन्देह नही था। पूरा आराम लो और जब समय आये कूद पड़ो। इस बार यह मसला लम्बा खिंचेगा। इसकी कोई परवाह नहीं। इससे व्यक्तिको दम ले लेनेका मौका मिल जाता है। एक बार मैदानमें उतरे कि फिर कोई आराम नहीं लेना चाहिए। यही आदर्श बात है।

तुम सबको स्नेह।

तुम्हारा,

मो० क० गांधी

[पुनश्चः]

अलविदा। उम्मीद है कि कल सुबह होनेसे पहले ही मैं महामहिमका मेहमान होऊँगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५८५) से।

३९५. पत्र : नारणदास गांधीको

[३१ जुलाई, १९३३][2]

चि० नारणदास,

तुम्हारी जिम्मेदारीकी कोई सीमा नहीं। किन्तु ईश्वर तुम्हें शक्ति दे रहा है।

भाई आप्टेका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। शारजाके साथ कुछ पत्र-व्यवहार चल रहा है, इतना मुझे मालूम था। शारजाने स्वतन्त्र होनेकी माँग की है। शारजाके साथ बात करके यदि उसकी जिम्मेदारी ले सको, तो ले लो। यदि वह नियमोंका पालन करती हो तो उसकी जिम्मेदारी लेनेमे मुझे कोई हानि नहीं दिखाई देती।

१. यह गांधीजी और अब्बास तैयबजीके बीच अभिवादनकी पद्धति थी।

२. **बापूना पत्रो – ९: श्री नारणदास गांधीने,** भाग २के अनुसार गांधीजी ने यह पत्र उसी दिन मध्यरात्रिको गिरफ्तार होनेसे पूर्व लिखा था।

महादेवके भी मेरे साथ ही पकड़े जानेकी सम्भावना है। ऐसा हो तो भी जो कार्यक्रम है वह तो रहेगा ही। कल जो भी [बाहर] रहे वह जमनालालके साथ पूरी बात कर ले। जमनालालको अभी आन्दोलनमें नहीं पड़ना है। वह आश्रमके धनको अपने हाथमें ले ले। छुपा हुआ कुछ धन हो और वह उसके हाथमें आ जाये तो वह उसे खुले तौरपर रखे। हिसाबकी जाँच करनेपर देखता हूँ कि ऐसी एक भी रकम नहीं है जिसे जब्त किया जा सके। जो धन जब्त किया जा सकता था, वह सारा खर्च हो चुका है और वह था सत्याग्रहियोंका कोष। तो भी सरकारको जो जब्त करना हो मजेसे करे। सारा धन किसी-न-किसी कार्यके लिए निश्चित है।

बली आये तो उसके साथ स्पष्ट बात कर लेना। अनसूयाबहनको तनिक भी संकोच हो तो मनु वर्धा जाये। यदि उसे राजकोट जाना ही हो तो जरूर जाये।

जहाँतक मैं समझ पाया हूँ, केशु तो वर्धा जायेगा ही। संतोककी भी वही जानेकी इच्छा है। राधाको साथ ले जाकर वह वहाँ, जमनालालजी जो काम सौंपें, उसे यथाशक्ति कर पानेकी आशा करती है। उसके साथ बात कर लेना।

बलभद्रको दक्षिणामूर्ति भेज देना। धीरू जोशीको रमा जोशीने आज्ञा नहीं दी, इसलिए उसे जहाँ रखना ठीक हो, वहीं रखो। शायद तबतक रामनारायण देखभाल कर पायेगा। रमा जोशीको पूना जानेके लिए पैसा देना होगा और आनेका भी देना चाहिए। उससे पूछ लेना चाहिए, वह नाराज न हो।

तोतारामजी कुछ दिन आश्रमकी देखभाल करें। बादमें सरकार कब्जा न भी करे तो भी छोड़ दे।

प्रभावतीको बनारस या बिहार जानेके लिए जितने धनकी जरूरत हो उतना दे देना है।

इसके अतिरिक्त इस समय और कुछ याद नहीं आता। तुम्हे पूछना हो तो पूछ लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

३९६. वक्तव्य : अहमदाबादके जिला-मजिस्ट्रेट[1] के समक्ष

१ अगस्त, १९३३

मैं समझता हूँ, सार्वजनिक शान्ति भंग करनेकी मेरी कभी कोई इच्छा नहीं रही है। मेरी अपनी रायमें मैंने जान-बूझकर कभी ऐसा कोई काम नहीं किया है जिससे जनताकी शान्ति भंग हो। बल्कि मैं तो यह कहनेका साहस करता हूँ कि मैंने जनताके बीच यथा सम्भव शान्ति बढ़ानेके लिए अधिक-से-अधिक प्रयत्न किया है और मैं ऐसे कई दृष्टान्त दे सकता हूँ जब मैंने जनतामे शान्ति कायम रखने और उसे बढ़ानेमें सफलता हासिल की है। जीवन-भर शान्तिका प्रेमी होनेके नाते शान्ति भंग करनेके विचारसे ज्यादा दूर कोई बात मेरे लिए हो ही नही सकती।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (११), भाग २, पृ० २६३-५

३९७. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

सैन्ट्रल जेल,
साबरमती,
१ अगस्त, १९३३

चि० अमला,

तुम्हें अपने विचित्र और परेशानीमें डाल देनेवाले तौर-तरीके बिलकुल छोड़ देने चाहिए। भावुकताका प्रदर्शन सच्ची लगनका लक्षण नही है। सच्ची लगन तो चुपचाप काम करती रहती है। यदि तुम ध्यान नही लगाओगी और ठीक तरहसे अपने हाथोंसे काम लेना नहीं सीखोगी, तो तुम हरिजन-कार्यके लिए उपयुक्त नहीं हो पाओगी। तुम्हारी कताई बहुत भद्दी है। आशा है कि मैं जैसा महसूस करता हूँ मेरे वैसा ही कहने या लिखनेका तुम बुरा नहीं मानोगी। शुद्ध स्नेहको कभी-कभी कठोर होनेकी जरूरत पड़ती है।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. जे० बी० इर्विन; यह वक्तव्य १९३२ के बम्बई अधिनियम १६ की धारा ३ (२) के अन्तगेत दिया गया था।

३९८. पत्र : एफ० मेरी बारको

१ अगस्त, १९३३

आशा है कि अब तुम ठीकसे अपने काम[1] में लग गई हो। तुम परिवारके लोगोंके समीप आनेका इन्तजार न करके स्वयं उनके समीप जाना और सभीके साथ सहज आत्मीय नाता बना लेना। मैं सोचता हूँ कि तुम्हारा नलिनीबहनको अपनी जरूरतें बताना ठीक होगा। तुम अपने स्वास्थ्यपर तो किसी भी हालतमें आँच मत आने देना।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च:]

यह पत्र डंकनको भी पढ़वा देना।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६००४) से। सी० डब्ल्यू० ३३३० से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार।

३९९. पत्र : अडवानीको[2]

१ अगस्त, १९३३

प्रिय मेजर अडवानी,

आप शायद जानते होंगे कि पिछली मईमें अपने उपवासके कारण यरवदा सैन्ट्रल जेलसे जब मैं छूटा, उससे पहले मुझे हरिजन-कार्य करने दिया जाता था और उस सिलसिलेमें मैं आजादीके साथ मुलाकातियोंसे मिल सकता था, पत्र प्राप्त कर सकता था और पत्र लिख सकता था। मुझे टाइपिस्ट रखनेकी अनुमति दे दी गई थी और अखबार, पत्रिकाएँ तथा अन्य साहित्य भी मुझे दिया जाता था। मैं आशा करता हूँ कि ये सब सुविधाएँ मुझे अब भी दी जायेंगी। मैं आपको बता दूँ कि पूनासे 'हरिजन' नामका एक साप्ताहिक पत्र निकलता है, उस पत्रके लिए सामग्री भेजना और उसके सम्पादकको दूसरी हिदायतें देना मेरे लिए जरूरी है। पूनासे

१. साबरमती आश्रमके भंग होनेपर एफ० मेरी बार वर्धा आश्रममें चली गई थी।

२. अहमदाबाद सैन्ट्रल जेलके सुपरिंटेंडेंट।

जिस टाइपिस्टको मैं लाया था, उसे मैंने अहमदाबादमें ही रखा है। आपसे मुझे मालूम हुआ कि इस मामलेमें अभीतक सरकारकी तरफसे आपको कोई आदेश नहीं मिला है। क्या आप तारसे आवश्यक आदेश मँगानेकी कृपा करेंगे[1]?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९३) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ८५ से भी।

४००. पत्र : रमाबहन जोशीको

१ अगस्त, १९३३

चि० रमा,

तुमसे दूसरी बार मिल नही सका, इसका मनमें दुःख रह गया। आश्रममें बहनें नहीं हैं, इसलिए वीणाबहन[2] से तुम्हारी सेवाके लिए पक्का बन्दोबस्त करनेके लिए कहा और आशा है, इसलिए सब काम ठीक चल रहा होगा। मुझे पत्र लिखवाना। धीरूके बारेमें मैंने जो सन्देश भेजा है वह कुछ कठोर अवश्य था, किन्तु और कोई उपाय नहीं था। अपने यात्रा-सम्बन्धी खर्चके बारेमें चिमनलालसे पूछना। मुझे आशा है कि कोई कठिनाई नहीं होगी।

धीरू और बलभद्र भावनगर गये हैं। वहाँ अच्छी तरह रहेंगे, ऐसी आशा तो करता ही हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

आनन्दी, बचु, शारदा और वनमालाको भी तुम्हें देख आनेके लिए संदेश भेजे हैं।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५५) से।

१. यह पत्र और इसके बाद १६ अगस्त, १९३३ तक जो पत्र-व्यवहार हुआ, वह सारा **हिन्दू**, १९-८-१९३३ में प्रकाशित हुआ था।

२. एक जर्मन महिला जो वी० एस० अस्पताल, अहमदाबादमें एक नर्सके रूपमें काम कर रही थीं।

४०१. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

यरवदा सैन्ट्रल जेल,
३ अगस्त, १९३३

बम्बई सरकारके सचिव
गृह-विभाग

प्रिय महोदय,

इसी २ तारीखके 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित एक रिपोर्टमें, जो प्रामाणिक बताई जाती है, कहा गया है कि मुझे यह आदेश[1] जारी करनेके बाद रिहा कर दिया जायेगा कि मेरी हलचलें पूनामें ही सीमित रहनी चाहिए और मुझे सविनय अवज्ञा आन्दोलनसे सम्बन्धित किसी भी गतिविधिमें भाग नहीं लेना चाहिए। उसमें आगे कहा गया है: "यदि वे इस आदेशकी उपेक्षा करेंगे तो उन्हें फिर गिरफ्तार कर लिया जायेगा।" यदि यह रिपोर्ट सही है तो मैं, सरकारको सम्भावित अनावश्यक परेशानीसे बचानेके लिए और उपवास तोड़नेके बादसे मुझमें फिरसे जो शक्ति आती जा रही है उसे बचानेकी दृष्टिसे, यह कहना चाहूँगा कि सविनय अवज्ञामें अपने विश्वासके अनुरूप, मैं इस आदेशका, जो विचाराधीन बताया गया है, पालन नहीं कर सकूँगा। यदि इसका उद्देश्य मेरे विश्वासको जकड़ना हो तो निस्सन्देह सरकार, उपरोक्त रिपोर्टमें बताई गई कष्टदायक प्रक्रियाको अपनाये बिना भी, जो व्यापक अधिकार उसके हाथमें हैं उन्हींसे ऐसा कर सकती है।

सरकारने श्रीयुत महादेव देसाईको मेरे साथ रखा है, यह बात मैं कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करता हूँ। इसीलिए वे मेरे द्वारा यह कहना चाहते हैं कि सविनय अवज्ञा उनका भी उतना ही जीवन-सिद्धान्त है जितना कि मेरा है, और मेरी तरह वे भी उसके प्रचार या पालनसे बाज नही आ सकते।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९४) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डेपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ३७से भी।

१. देखिए परिशिष्ट ११; अगला शीर्षक।

४०२. वक्तव्य : पूनाके जिला-मजिस्ट्रेटके समक्ष[1]

३ अगस्त, १९३३

मैं इस विषयपर गृह-विभागके सचिवके नाम एक पत्र[2] आज सुबह यरवदा सैन्ट्रल जेलके सुपरिंटेंडेंट, कर्नल मार्टिनको दे चुका हूँ। उसमें इस विषयपर मेरे विचार दिये गये हैं। मुझे उससे अधिक कुछ नहीं कहना है।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९७२४) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ७५से भी।

४०३. वक्तव्य :[3] प्रतिबन्ध आदेशको अमान्य करते हुए

४ अगस्त, १९३३

मुझे इस आदेश[4] की प्रति मिली है। खेद है कि मैं इसका पालन नहीं कर सकूंगा।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ६७।

१. पूनाके जिला-मजिस्ट्रेट डी० मैकलाखलनने गांधीजीको १९३२के अधिनियम १६की धारा ४ पढ़कर सुनाई थी। इसके अन्तर्गत जारी किये जानेवाले आदेशोंको सुननेके बाद गांधीजी ने उक्त वक्तव्य दिया था।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. यरवदा सैन्ट्रल जेलके सुपरिटेंडेंट आर० वी० मार्टिनके समक्ष दिया गया था।

४. देखिए परिशिष्ट ११। गांधीजी ने तुरन्त आदेशका उल्लंघन किया और वे फिर गिरफ्तार करके यरवदा जेल वापस भेज दिये गये। देखिए अगला शीर्षक भी।

४०४. पूनामें मुकदमा[1]

४ अगस्त, १९३३

मजिस्ट्रेट जब मुकदमेकी परिस्थितियोंपर प्रकाश डाल चुके, तो गांधीजी ने यह सुझाव रखा कि वे अपनेको दोषी स्वीकार कर लेना चाहते हैं, इसलिए गवाहियाँ न ली जायें। परन्तु मजिस्ट्रेटने गांधीजी को बताया कि कानूनी कार्यविधिके लिए कुछ गवाहियाँ जरूरी हैं।

गांधीजी: १९२२ में जब मैंने अपनेको दोषी स्वीकार कर लिया था तो, मेरा खयाल है, गवाहियाँ छोड़ दी गई थीं।

मजिस्ट्रेट: यह आपकी शालीनता है। आप जो कह रहे हैं, वह मैं समझता हूँ। निस्सन्देह, इससे काम आसान हो जायेगा। पर मेरा यह कर्त्तव्य है कि कुछ गवाहियाँ लूँ। लेकिन मैं उन्हें, यथासम्भव, कम ही रखूँगा . . .[2]

अदालतके यह पूछनेपर कि क्या वे गवाहसे कुछ पूछना चाहते हैं, गांधीजी ने कहा: नहीं . . .[3]

गांधीजी ने इस गवाह[4] से भी कुछ पूछना नहीं चाहा और कहा: नहीं, धन्यवाद।

अदालतके पूछनेपर गांधीजी ने बताया कि उनकी उम्र ६४ साल है और उनकी जाति हिन्दू है।

मजिस्ट्रेट: आपका पेशा क्या है?

गांधीजी: [सकुचाते हुए] मैं पेशेसे कताई करनेवाला, बुनकर और काश्तकार हूँ।

१. गांधीजी को प्रातः ९ बजे रिहा होनेपर यह आदेश मिला था कि वे पूना शहरकी सीमाओंके अन्दर ही रहें। इस आदेशको तोड़नेपर उन्हें एक घंटेके अन्दर ही फिर गिरफ्तार कर लिया गया और मुकदमा चलानेके लिए यरवदा जेल भेज दिया गया। मुकदमा तीसरे पहर सवा तीन बजे पूनाके अतिरिक्त जिला-मजिस्ट्रेट ह्याम एस० इजरेलके सामने शुरू हुआ।

२. इसके बाद अभियोग पक्षके पहले गवाह और पुलिसके जिला-सुपरिटेंडेंट एफ० डब्ल्यू० ओ'गॉर्मनने वे घटनाएँ बताईं जिनके कारण गांधीजी को गिरफ्तार किया गया था।

३. दूसरे गवाह यरवदा जेलके सुपरिटेंडेंट, लेफ्टिनेंट कर्नल मार्टिनने बताया कि गांधीजी को सरकारी आदेश उन्होंने ही सुनाया था। इसके बाद तीसरे गवाह, पुलिसके सहायक सुपरिटेंडेंटने बताया कि गांधीजी और महादेव देसाई प्राइवेट टैक्सीमें जेलसे बाहर जानेके बाद प्रातः ९.४० पर भी यरवदाकी सीमाओंके अन्दर ही थे। उनसे तुरन्त वहाँसे चले जानेको कहा गया, पर उन्होंने ऐसा करनेसे इनकार कर दिया। दस मिनट बाद उन्हें फिर उस आदेशकी याद दिलाई गई। उसे माननेसे इनकार करनेपर, उन्हें फिर गिरफ्तार करके यरवदा जेल वापस ले आया गया।

४. जिस टैक्सीमें गांधीजी गोल्फ लिंक गये थे, उसका ड्राइवर आखिरी गवाह था। उसने अन्य गवाहोंके बयानकी पुष्टि की।

मजिस्ट्रेट : आपका निवास-स्थान ?

गांधीजी : इस समय यरवदा जेल है। (हँसी)

मजिस्ट्रेट : इस समय तो जरूर है, पर वैसे ?

गांधीजी : वैसे अहमदाबादमें साबरमती।

मजिस्ट्रेट : अभियोग-पक्षकी ओरसे जो गवाहियाँ हुई हैं, क्या उनके विषयमें आपको कुछ कहना है ?

गांधीजी : अभियोग पक्षके कई गवाहोंने जो बयान दिये हैं, मैं समझता हूँ कि वे बिलकुल ठीक हैं।

गांधीजी ने आगे कहा कि उन्होंने आदेश क्यों तोड़ा, इस बारेमें वे एक छोटा-सा बयान देना चाहते हैं। अदालतकी स्वीकृति मिल जानेपर उन्होंने तभी धीमे और संयत स्वरमें एक छोटा-सा बयान दिया। उन्होंने कहा :

बम्बई सरकारका आदेश मैंने जान-बूझकर और इरादतन ही तोड़ा है। मैंने ऐसा क्यों किया, यह मैं थोड़ेमें बताऊँगा। वैधानिक रूपसे गठित किसी सत्ताके आदेशोंको तोड़नेसे मुझे कोई खुशी नहीं होती। मैं शान्ति चाहनेवाला व्यक्ति हूँ। और अपने-आपको, जिस राज्यमें रहता हूँ, उसके कानूनोंका स्वेच्छासे पालन करनेवाला एक अच्छा नागरिक मानता हूँ। पर एक नागरिकके जीवनमें कुछ अवसर ऐसे आते हैं जब राज्यके कानूनों और आदेशोंको तोड़ना उसका दुःखद कर्त्तव्य हो जाता है। सभी जानते हैं कि १९१९मे मेरे सिरपर ऐसा ही दुःखद कर्त्तव्य आ पड़ा था। मुझे तब न केवल स्वयं सत्याग्रह करना, बल्कि औरोंको भी वैसा करनेके लिए कहना अपना कर्त्तव्य जान पड़ा था।

जिस कानून या अधिनियमके मातहत मुझपर मुकदमा चलाया जा रहा है, वही प्रत्यक्ष रूपसे मेरे इस आक्षेपको सिद्ध कर देता है कि भारतमें इस समय जो शासन-व्यवस्था है वह केवल अन्यायी ही नहीं है, बल्कि देशका आर्थिक और नैतिक अधःपतन करनेवाली भी है।

इन दिनों मुझे थोड़ा समय जेलसे बाहर रहनेको मिला। उस अरसेमें मैं बहुत-से स्त्री-पुरुषोंके सम्पर्कमे आया। इस बीच मैंने जो खोज की, वह मुझे अत्यन्त दुःखद लगी। मुझे लगा कि इस देशमें रहनेवाले तमाम लोग — बड़े और छोटे, पढ़े-लिखे और अनपढ़, गरीब और अमीर, सभी — दब गये हैं, और उन्हें अपनी आजादी तथा जमीन-जायदादके छिन जानेका सदा भय रहता है।

ऐसे वातावरणमे रहना मेरे लिए एक कड़ी परीक्षा थी। बचपनसे ही स्वभावतः मैं अहिंसात्मक तरीकोंमे दृढ़ विश्वास रखता आया हूँ। इसलिए मैंने इस तरीकेका सहारा लिया कि अपने भाग्यमें जो कष्ट सहना लिखा हो उसे स्वेच्छासे सहन किया जाये। जिस वेदनासे मेरा अन्तर जल रहा था, उसे किसी हदतक कम करनेका मेरे पास यही एक उपाय था।

इन्हीं कारणोंसे मैं इस शासन-व्यवस्थाका, जितना मुझसे हो सकता है और जितना मेरे-जैसा शान्ति चाहनेवाला मनुष्य कर सकता है, विरोध कर रहा हूँ।

एक बात और। मेरा खयाल है कि आप या सरकार मुझे सजा देनेके बाद जेलमें किसी खास श्रेणीमें रखेगी। मैं यह कह देना चाहता हूँ कि कैदियोंको 'ए', 'बी' और 'सी' श्रेणीमें रखनेकी पद्धति मुझे बहुत ही नापसन्द है। जो विशेष सुविधाएँ दूसरे कैदियोको न मिल सकती हों, उन्हें भोगनेकी मेरी कतई इच्छा नहीं है। इसलिए सरकार जिन्हें नीचे-से-नीचा मानती हो, ऐसे कैदियोंकी श्रेणीमें ही रहना मै चाहूँगा। अन्तमें मैं यह कहना चाहता हूँ कि इन दो-तीन दिनोंमें मैं जिन अधिकारियोंके सम्पर्कमें आया हूँ, वे मेरे साथ बहुत ही विनय और आदरसे पेश आये हैं। इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

उपरोक्त बयान दे चुकनेके बाद, गांधीजी ने मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित अपने बयानको पढ़ा और बताया कि वह बिलकुल ठीक है।

मजिस्ट्रेटने तब बॉम्बे विशेष अधिकार अधिनियम, १९३२ की धारा १४ के अधीन यह अभियोग लगाया कि सरकारने इसी अधिनियमके अधीन उन्हें यह आदेश दिया था कि वे, अन्य बातोंके अलावा, प्रातः ९.३० से पहले-पहले यरवदा गाँवकी सीमाके बाहर चले जायें, जिस आदेशको उन्होंने जान-बूझकर तोड़ा है। मजिस्ट्रेटके यह पूछने पर कि क्या वे अपना दोष स्वीकार करते हैं, गांधीजी ने 'हाँ' में जवाब दिया।

गांधीजी ने यह भी कहा कि वे अपने बचावमें कोई गवाह पेश करना नहीं चाहते। तब पुलिस अभियोक्ताने कहा कि गांधीजी की उम्रका खयाल रखते हुए वे उनके वास्ते निवारक दण्डके लिए आग्रह नहीं करेंगे।

मजिस्ट्रेटने अपना फैसला सुनाते हुए कहा कि यह सिद्ध हो गया है कि गांधीजी ने सरकारके आदेशको तोड़ा है। इसलिए बॉम्बे विशेष अधिकार अधिनियम, १९३२ के अधीन वे उन्हें दोषी ठहराते हैं और एक सालकी साधारण कैद की सजा देते हैं . . .

मजिस्ट्रेट : आपकी उम्र और सेहतका खयाल रखते हुए और इसलिए भी कि अभियोग-पक्षने निवारक दण्डके लिए आग्रह नहीं किया है, मैं आपको हल्की सजा दे रहा हूँ।

इस तरह मुकदमा समाप्त हो गया और गांधीजी मजिस्ट्रेटका अभिवादन करनेके बाद उठ गये। जेलर उन्हें उनकी कोठरीमें ले गया। गांधीजी को 'ए' श्रेणीमें रखा गया है।[1]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-८-१९३३

१. इसके बाद महादेव देसाई मजिस्ट्रेटके सामने लाये गये। उन्हें एक सालकी साधारण कैदकी सजा दी गई और 'बी' श्रेणीमें रखा गया।

४०५. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

यरवदा सैन्ट्रल जेल
४ अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग

प्रिय महोदय,

अहमदाबाद सैन्ट्रल जेलमें जिस दिन मुझे लाया गया उसी दिन मैंने, वहाँ के सुपरिंटेंडेंटकी मारफत, यह प्रार्थना की थी[1] कि अपने पिछले उपवाससे पहले मैं जिस ढंगसे अस्पृश्यता-निवारणका काम कर रहा था, उसी तरह फिर करनेकी मुझे इजाजत दी जाये। उसका मुझे अभीतक कोई जवाब नहीं मिला है। सरकार जानती है कि साप्ताहिक पत्र 'हरिजन' और उसके गुजराती-संस्करण तथा किसी हदतक हिन्दी-संस्करणकी भी नीतिका मैं संचालन करता हूँ। यरवदा-समझौतेके एक अभिन्न अंगके रूपमें मैंने अपने-आपसे और हरिजनोंसे जो प्रतिज्ञा की है उसके पालनके लिए किये जा रहे अस्पृश्यता-निवारण कार्यका यह केवल एक अंश है। मेरे जीवनको खतरेमें डाले बिना यह कार्य रोका नही जा सकता। इसलिए मैं प्रार्थना करता हूँ कि अगले सोमवारतक मुझे जवाब मिल जाये, ताकि मैं अगले सप्ताहके 'हरिजन' का काम और दूसरे कई जरूरी मामले, जो मेरी गिरफ्तारीके समयसे लटके हैं, निपटा सकूं।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९५) से।

१. देखिए पृ० ३५४।
२. देखिए पृ० ३६५-६ भी।

४०६. उपवासकी नैतिकता

पश्चिमके एक विद्वान् मेरे हालके उपवासके बारेमें लिखते हैं:

> **अपने उपवासकी नैतिकताके सम्बन्धमें एक पत्र-लेखकके प्रश्नका आपने जो उत्तर दिया था,[1] वह मैं पढ़ चुका हूँ। आपका आशय मैं भली-भाँति समझ नहीं सका। आपके कष्ट-सहनसे इस तरहके कार्यका तमाम दोष दूर हो जाता है, ऐसा आपका विचार प्रतीत होता है। परन्तु हर दोषीको कष्ट तो सहना ही पड़ता है, अतः आपके तर्कानुसार दोष-जैसी कोई चीज ही नहीं है। यदि अपनेको और अपने शरीरको एक समझनेके बजाय, आप एक क्षणके लिए अपने शरीरको वस्तुपरक दृष्टिसे देखें, तो क्या यह स्पष्ट नहीं हो जाता कि उस शरीरके साथ हिंसा अथवा अस्वाभाविक बर्ताव करनेसे अहिंसाका नियम उतना ही भंग होता है जितना कि किसी अन्यके साथ अस्वाभाविक अथवा हिंसाका बर्ताव करनेसे हो सकता है? यह कहना कोई तर्क नहीं है कि प्राचीन कालमें अनेक साधु पुरुष ऐसे उपवासोंकी मीमांसा कर चुके हैं और उन्होंने ऐसे उपवास किये भी हैं।**

यह तर्क पहले भी दिया गया है, किन्तु इस पत्र-लेखककी तरह किसीने इसे इतनी गम्भीरतासे नहीं रखा था। मैं मानता हूँ कि उपवास शुद्धिका जबरदस्त साधन है और मानव-समाजके जीवनमें इसका महत्त्वपूर्ण स्थान होना चाहिए। अतः इस तर्ककी जाँच उचित है।

दोषीके उपवास करनेपर भी उसका दोष मिट नहीं जाता, और जब उपवास दूसरोंके लिए होता है, तब तो वह और भी कम मिटता है। उपवास दोषकी पुनरावृत्ति रोकनेमें ही सहायक होता है। अगर सब नहीं तो ज्यादातर दोष शरीरकी आसक्तिसे ही उत्पन्न होते हैं। अतः देह-दमनसे आसक्तिका घटना सम्भव है। निस्सन्देह, आसक्तिका घटना उपवासके प्रयोजनपर निर्भर करता है। इस सूत्रमें बहुत-कुछ सत्य है कि मनुष्य जैसा आहार लेता है, वैसा ही बनता है। जितना स्थूल आहार होगा उतना ही स्थूल शरीर हो जायेगा। सादा जीवन और उच्च विचार साथ-साथ चलते हैं। लेकिन सादा जीवन और उपवासके बीच बहुत ही थोड़ी दूरी है। सादा जीवन स्वयं एक प्रकारका उपवास कहा जा सकता है। 'हम लोग सिर्फ भोजन करनेके लिए ही दुनियामें नहीं आये हैं', इस बातका ठीक-ठीक भान करना हो तो पूर्ण अनशन एक प्रभावोत्पादक साधन है।

१. देखिए पृ० २९८-३०१।

पत्र-लेखक पूछ सकता है कि — "मान लीजिए दोषीके उपवासकी आपकी दलीलमें कुछ दम हो भी, लेकिन दूसरोंके लिए किये गये उपवासके बारेमें आप क्या कहेंगे?" इसका उत्तर यह है कि जैसे आत्मा एक ही है, वैसे ही प्रकृति भी एक ही है और, तत्त्वतः, ये दोनों पृथक् नहीं किये जा सकते। सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रकृति ही आत्मा है। अतः एक शरीरपर जो-कुछ होगा, उसका प्रभाव अखिल प्रकृति और अखिल आत्मापर अवश्य पड़ेगा। हम सबको इसका अनुभव है कि कुमार्गियोंपर मित्रों और सम्बन्धियोंके स्नेहपूर्ण कृत्योंका प्रायः प्रभाव पड़ता है, खासकर तब जब वे अपने मित्रों और सम्बन्धियोंको अपनेसे श्रेष्ठ समझते हैं। प्रियजनोंके लिए किया गया उपवास प्रेमकी एक जबर्दस्त और अचूक अभिव्यक्ति है, और इसीलिए जिन लोगोंके लिए वह किया जाता है उनपर उसका असर पड़ता है। जिनका प्रेम समस्त प्राणियोंके लिए है, वे अपने प्रेमके सर्वोच्च कृत्य द्वारा समस्त सृष्टिको प्रभावित करते हैं।

उपवासकी उपयोगिता एक बार स्वीकार कर ली जाये, तो यह दलील कि उपवास अप्राकृतिक है और अपने शरीरके प्रति हिंसाका एक कृत्य है, चूर-चूर हो जाती है। गिरे हुए स्वास्थ्यको पुनः प्राप्त करनेके लिए जैसे उपवास न तो अप्राकृतिक है और न पापपूर्ण आत्मयन्त्रणा ही है, उसी प्रकार अपनी और दूसरोकी आत्मशुद्धिके लिए किया गया उपवास भी अप्राकृतिक और पापपूर्ण आत्मयन्त्रणा नहीं है।

किन्तु व्यवहारसे यदि यह सही सिद्ध न होता हो तो मेरा सारा तर्क बेकार है। और अगर इस तर्कमे कुछ सार है, तो ऋषियों और दूसरे लोगों द्वारा अनादि कालसे निरन्तर किये जाते रहे प्रयोगोंसे वह और भी दृढ़ हो जाता है। परन्तु संशयात्माओंको तर्क और प्राचीन कालके प्रमाणोंपर विश्वास करनेकी जरूरत नहीं है। आत्मशुद्धिके लिए उन्हें उपवासके नियमों और विज्ञानसे परिचित होकर उसको स्वयं कसौटीपर कसना चाहिए। जो लोग चकाचौंध पैदा करनेवाले भौतिकवादमें पले हैं, उन्हें उपवास आकर्षित नहीं करता। परन्तु इसलिए यह और भी वाछनीय है कि पत्र-लेखक-जैसे व्यक्ति आत्मशुद्धि और प्रायश्चित्तके इस अत्यन्त शक्तिशाली साधनको इस तरह सरसरी नजरसे ही रद्द न करें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ५-८-१९३३

४०७. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

५ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

आपने आज प्रातः मुझे यह बतानेकी कृपा की कि कैदियोंके लिए आम तौरपर निर्धारित स्तरसे बाहरके किसी खाद्य पदार्थकी यदि मुझे जरूरत हो, तो नियमानुसार मुझे उसके लिए पैसे देने होंगे। इसलिए मैं आपको यह बता देना चाहता हूँ कि अपनी कम-से-कम जरूरतें मैं क्या समझता हूँ। पहली बात तो मैं यह कह सकता हूँ कि अपने लिए जरूरी किसी अतिरिक्त खाद्य पदार्थके लिए मैं पैसे खर्च करना नहीं चाहता। १९२२ में मुझे दंडितकी हैसियतसे जेलमें दाखिल किया गया था और मुझसे खानेकी या किसी अन्य चीजके लिए पैसे देनेको नहीं कहा गया था। परन्तु मैं यह स्वीकार करता हूँ कि सरकार इस बार एक भिन्न नीति अपना सकती है, और यदि वह ऐसा करती है तो वह मेरे लिए शिकायतका कारण नहीं होगा। कई वर्षोंसे मैं जिन [भोजन-सम्बन्धी] प्रतिबन्धोंका पालन करता आ रहा हूँ यदि उनमें बाधा न पड़े, तो जो भी भोजन मुझे दिया जायेगा उसीसे मैं सन्तुष्ट रहूँगा। जिस भोजनकी मुझे जरूरत है और जो अभीतक जेल अधिकारियों द्वारा मुझे दिया गया है, वह है — बकरीका दूध, ताजे और सूखे फल, हरी सब्जियाँ और, जब भी मुझे जरूरत पड़ी है तब, रोटी।

आपने मुझसे यह भी पूछा है कि समाचारपत्रों आदिके रूपमें मुझे क्या सुविधाएँ चाहिए, यह मैं आपको बताऊँ। इस मामलेमें चुनावकी मुझे कोई स्वतन्त्रता है, मुझे नहीं मालूम। इसलिए सरकार किस-किसकी अनुमति देगी यह फैसला मुझे सरकारपर ही छोड़ देना चाहिए। परन्तु, पत्र-व्यवहार और मुलाकातोंका जहाँतक सम्बन्ध है, मुझे आश्रम भंग करने, स्वर्गीय डॉ० पी० जे० मेहताकी जागीरके मामलों और अन्य सामाजिक व धार्मिक दायित्वोंके सिलसिलेमें कुछ कारोबारी पत्र लिखने हैं और सम्बन्धित लोगोंसे मुलाकात करनी है। मैं चाहूँगा कि सरकार मुझे वही सुविधाएँ दे जो वह अबतक देती आई है।

परन्तु दो चीजें ऐसी हैं जो उतनी ही जरूरी हैं जितना कि शरीरके लिए भोजन। उनमें से एक अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनका संचालन है, जिसके बारेमें मैं सरकारको पहले ही लिख चुका हूँ। दूसरी है, मेरे साथ कैद अपने साथियोंसे मानवीय सम्पर्क। यह अन्तिम सुविधा दण्डितकी हैसियतसे मेरे पहले कारावासमें भी मंजूर कर

ली गई थी और तबसे बराबर जारी रही है। मुझे आशा है कि यह इस कारावासमें भी उसी तरह जारी रहेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९६) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ८७-९ से भी।

४०८. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

६ अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग
पूना

प्रिय महोदय,

अस्पृश्यता-निवारणका काम फिर शुरू करने देनेकी मेरी प्रार्थना[1] पर सरकार विचार कर रही है, पर अगले सोमवारतक वह उसका निर्णय नहीं कर सकेगी, सरकारका यह उत्तर अभी-अभी (सवेरे १० बजे) मेरे पास पहुँचाया गया है।

सरकारको इस उत्तरके लिए धन्यवाद देते हुए मैं इतना बता देना चाहता हूँ कि मेरे कामको गम्भीर हानि न पहुँचने देना हो, तो तीन बातें ऐसी हैं जिनके बारेमें देर करनेसे काम नहीं चलेगा। 'हरिजन' पत्रके प्रधान सम्पादक श्री शास्त्री अभी बीमार हैं और बीमारीकी छुट्टी लेकर मद्रास गये हैं। यह पत्र अभी इस कामका अनुभव न रखनेवाले दो व्यक्तियोंके सुपुर्द है। पिछले सप्ताहके अंकके लिए तो मैंने पहलेसे व्यवस्था कर दी थी और पिछले सोमवारको साबरमतीसे कुछ लेख भेज दिये थे। इसलिए जबतक सरकार मेरी प्रार्थनापर विचार करे मुझे जिन दो व्यक्तियोंके सुपुर्द यह पत्र है उनमें से श्री आनन्द हिंगोरानी या काका कालेलकर, किसी एकसे मिलनेकी और आगामी सप्ताहके अंकके लिए लेख भेजनेकी अनुमति मिलनी चाहिए।

दूसरी बात डॉ० टैगारके पत्र[2] के सम्बन्धमें है जो मुझे पिछले सप्ताह दिया गया था। वह मैं इसके साथ भेज रहा हूँ। उसका तुरन्त उत्तर देना जरूरी है।

तीसरी बात उन चार यूरोपियनोंके बारेमें है जो मेरी देखरेखमें हरिजन-सेवाका प्रशिक्षण पा रहे हैं। वे साबरमती आश्रममें थे। उनके नाम हैं: मिस मेरी बार, नी०, डॉ० मार्गरेट स्पीगल और मि० डंकन ग्रीनलीज। उन्हें वर्धा भेजा गया है,

१. देखिए पृ० ३५४।
२. २८ जुलाई, १९३३ का; देखिए पाद-टिप्पणी १, पृ० ३६७।

जहाँ का परिवेश उनके लिए अपरिचित है। नी० और डॉ० स्पीगल हिन्दुस्तानमें अपेक्षाकृत अजनबी हैं और वैसे भी उनकी सावधानीसे देखरेख जरूरी है। मै चाहूँगा कि उन्हें और श्री विनोबाको, जो वर्धा आश्रमके संचालक हैं और उनकी देखरेख करनेवाले है, पत्र लिखनेकी मुझे स्वीकृति मिले।

और भी कई बातें है जो कम महत्त्वकी नहीं है, पर उनके बारेमें थोड़ी देर हो तो चल सकती है। इसलिए मै आशा करता हूँ कि जहाँ सरकारके निर्णयमें कुछ देर है, वहाँ उपरोक्त तीन बातोंके लिए तो मुझे कलतक ही सुविधाएँ दे दी जायेंगी।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९७) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५ पृ० ८९-९१ से भी।

४०९. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

यरवदा सैन्ट्रल जेल,
७ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

कल रात सरकारका जो उत्तर मुझे पढ़कर सुनाया गया, क्या आप मुझे उसकी एक नकल देने या करने देनेकी कृपा करेंगे?

पहली प्रार्थनाके उत्तरके अनुरूप, अब 'हरिजन' की पाण्डुलिपि मेरे पास तैयार है। इसलिए क्या आप सर्वेण्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके श्रीयुत कोदण्डरावको टेलीफोनपर यह कहनेकी कृपा करेंगे कि वे काकासाहब कालेलकरको, और यदि वे मौजूद न हों तो श्रीयुत आनन्द हिंगोरानीको, आज ३ बजे भेज दें, जिससे कि मैं पाण्डुलिपि और हिदायतें उन्हें दे सकूँ?

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल सं० २०-१३, १९३३

४१०. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

७ अगस्त, १९३३

प्रिय गुरुदेव,

आपका २८ जुलाईका पत्र,[1] जिसके साथ यरवदा-समझौतेके बारेमें सर नृपेन सरकारके नाम आपके तारकी एक नकल भी थी, यहाँ मुझे इसी ४ तारीखको दिया गया है। जाहिर है कि आपका पत्र और मेरा पत्र, जो मैंने अहमदाबादमें रहते हुए लिखा था,[2] दोनों एक ही समय चले थे। परन्तु अभी मैं केवल उसकी प्राप्तिकी स्वीकृतिके सिवा आपको और कुछ नहीं भेज सकूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६४०) से।

४११. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

८ अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग, पूना

प्रिय महोदय,

६ तारीखके अपने पत्रमें मैंने जो तीन प्रार्थनाएँ की थीं, उनका तुरन्त उत्तर देनेके लिए मैं आपका आभारी हूँ। हरिजन-कार्य-सम्बन्धी मेरी साधारण प्रार्थनाके बारेमें सरकारका आदेश आनेतक, मेरी पहली प्रार्थना मान ली गई है और दूसरी

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुरने लिखा था: "यह उस सन्देशकी नकल है जो मैंने बहुत ही पीड़ा और अनिच्छाके साथ सर नृपेनको भेजा है। इससे आप यह जान लेंगे कि पूना-समझौतेके बारेमें मैं क्या महसूस करता हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यदि यह बिना किसी परिवर्तनके स्वीकार कर लिया गया, तो यह हमारे प्रान्तमें बराबर साम्प्रदायिक ईर्ष्याका स्रोत बना रहेगा, शान्तिमें निरन्तर बाधक होगा और पारस्परिक सहयोगकी भावनाके लिए घातक सिद्ध होगा।" (गृह-विभाग, मुद्रित राजनैतिक फाइल सं० ३/१७/३३, १९३३, पृ० १६-७; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार)। सर नृपेन्द्रनाथ सरकारको भेजे गये रवीन्द्रनाथ ठाकुरके तारके लिए देखिए परिशिष्ट १०।

२. देखिए पृ० ३२६-७।

और तीसरी प्रार्थनाओंके बारेमें मुझे बहुत सीमित अनुमति दी गई है। मैंने उनसे साभार लाभ उठाया है। पर मैं इतना बता दूँ कि मैंने ये प्रार्थनाएँ इसलिए नहीं की हैं कि मुझे 'ए' वर्गका कैदी माना गया है। जब मेरा मुकदमा चला तब मैंने कैदियोंके वर्गीकरणपर आपत्ति की थी। इसलिए इस वर्गीकरणको मै अनावश्यक महत्त्व न तो देता हूँ और न देना चाहता हूँ। मैं जानता हूँ कि 'ए' वर्गके कैदियोंको जो रियायते दी जाती हैं, उनमें से किसी भी रियायतसे अगर मुझे फायदा न उठाना हो, तो वैसा करनेकी मुझे आजादी है। इसके अलावा, मैं इस बातसे भी अच्छी तरह भिज्ञ हूँ कि दूसरे 'ए' वर्गके कैदियोंको भी सरकार जो शारीरिक सुविधाएँ नहीं देती, वे सुविधाएँ मैं भोग रहा हूँ। वे सुविधाएँ मैं इसलिए नहीं भोग रहा हूँ कि मुझे 'ए' वर्गमे रखा गया है, बल्कि इसलिए भोग रहा हूँ कि शारीरिक या डॉक्टरी दृष्टिसे वे मेरे लिए जरूरी हैं। पर मुझे अन्य सुविधाओंकी जरूरत है, जो इनसे ऊँचे दर्जेकी हैं और जिनके बिना जीवन मेरे लिए असह्य भार हो जाता है। वे आत्माकी लालसासे पैदा होती हैं। पर कैदीकी हैसियतसे मैं सरकारके साथ वाद-विवादसे बचना चाहता हूँ। इसलिए, सरकारसे मैं इतनी ही प्रार्थना करता हूँ कि मेरी शारीरिक आवश्यकताओंकी वह जितनी चिन्ता करती है, उतनी ही चिन्ता वह मेरी आत्माकी आवश्यकताओंकी भी करे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९८) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ९३ से भी।

४१२. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

१० अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग
पूना

प्रिय महोदय,

हरिजन-कार्यके बारेमें मैने आपको जो पत्र लिखे है, उनकी याद दिलाते हुए मुझे अफसोस होता है। काकासाहब कालेलकरने, जो पिछले सोमवारको मुझसे मिले थे, मुझे बताया कि डाकमें मेरे लिए कुछ जरूरी पत्र आये हुए हैं। कुछ जरूरी हरिजन प्रश्न भी ऐसे हैं जिनपर मुझे तुरन्त ध्यान देना चाहिए। इसलिए, मैं आशा करता हूँ कि आप अधिक-से-अधिक अगले सोमवारतक या उससे पहले ही मुझे आखिरी निर्णय बता देनेकी कृपा करेंगे।

इसके साथ मैं इस मामलेमें भारत सरकारके आदेशोंकी नकल[1] भेज रहा हूँ। मेरी विनम्र रायमें वे असंदिग्ध हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९९) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ९५ से भी।

४१३. सच्ची अन्तर्दृष्टि

एक आर्यसमाजी भाईने हिन्दीमें एक लम्बा पत्र भेजा है, जिसका साराश नीचे दिया जाता है:

(१) समाजमें उच्च स्थान प्राप्त करनेके लिए हरिजन, हिन्दू ही बने रहें अथवा मुसलमान या ईसाई बनकर भी वे ऊँचा स्थान प्राप्त कर सकते हैं?

(२) किसी व्यक्तिकी अस्पृश्यता क्या उसकी जातिके नामसे नही जानी जाती है?

(३) यदि हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यताको मिटाना है, तो अस्पृश्योसे आर्यसमाजी बननेके लिए क्यों न कहा जाये?

(४) हिन्दू-धर्ममे ऐसी कौन-सी विशेषता है जिससे हिन्दू इसी धर्ममे चिपटे रहे?

इन प्रश्नोंसे मुझे मालूम होता है कि हम जो सुधार करना चाहते हैं, उसका सच्चा स्वरूप प्रश्नकर्त्ताकी समझमे नही आया है। 'हरिजन' के पृष्ठोंमें प्रति सप्ताह यह बात स्पष्ट की जा रही है कि सुधार तो तथाकथित उच्च जातियोंको अपना ही करना है। अस्पृश्यताकी भावना और ऊँच-नीचका भेद उन्हे अपने दिलसे निकाल देना है। उन्हे प्रायश्चित्त करना है और आत्मशुद्धि करनी है। उन्हें हरिजनोंके कल्याणके लिए और उनके संरक्षकके रूपमे नही, बल्कि अपने कल्याणके लिए और उनके सेवकके रूपमे हरिजनोंके ससर्गमे आना है। अत: हरिजनोंके हिन्दू-धर्म छोड़ देनेसे यह उद्देश्य पूरा नही हो सकता।

मेरे विचारमें, प्रश्नकर्त्ता जितना समझते हैं, धर्म उससे कहीं अधिक गहरी वस्तु है। धर्मका उद्देश्य सुख-सुविधा अथवा मनुष्यकी सामाजिक या आर्थिक स्थितिको सुधारना नही है। ऐसे लोगोंके उदाहरण मिलते हैं जो सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक विनाश और उससे भी विकट परिस्थितियोंका सामना करते हुए भी अपने धर्मपर अटल रहे हैं। भारी-से-भारी संकटमे हमारा धर्म ही हमे सत्यपर स्थिर रखता है। इहलोक और परलोकमें मनुष्यकी आशाओंका सबसे दृढ़ आधार धर्म ही है।

१. गांधीजी को यह ३ नवम्बर, १९३२ को मिली थी; देखिए खण्ड ५१, पृ० ३५६-७।

अन्य सब अवलम्बोंसे अधिक ईश्वरमें, सत्यमें धर्म ही मनुष्यकी श्रद्धा कायम रखता है। इसलिए हरिजनोंका कल्याण किसमे है, यह तो हरिजन ही निश्चित कर सकते है, लेकिन उनके स्थानपर यदि मैं होऊँ, तो धर्मान्तरसे मुझे तो कभी सन्तोष न हो। व्यावहारिक दृष्टिसे विचार करनेपर मुझे प्रतीत होता है कि हरिजन और सवर्ण एक-दूसरेके साथ इतने अधिक घुले-मिले हैं कि अधिकांश हरिजन हिन्दू बने रहनेके सिवा और कुछ कर ही नही सकते। हरिजनोंकी इस लाचारीके कारण ही सवर्णोंपर इस बातकी दूनी जवाबदेही आ पड़ी है कि वे हरिजनोंको, उनमें कुछ बुरी आदतें होते हुए भी, हिन्दू-समाजमे प्रतिष्ठाका स्थान दे और युगोंसे उनके साथ होते आ रहे अन्यायोंको अब धोकर बहा दे। वास्तवमें, हरिजनोमें जो भी बुरी आदतें दिखाई देती हैं, उनका कारण सवर्णोकी उनके प्रति उपेक्षा ही है। उन दोषोंको तुरन्त दूर करनेका उपाय केवल यही है कि अस्पृश्यता मिटायी जाये और हरिजनोंको, जैसे वे है वैसे ही, पूरी तरहसे हिन्दू-रूपमे अपना लिया जाये।

दूसरे प्रश्नका जवाब 'हाँ' में दिया जा सकता है। इस प्रश्नसे यही प्रकट होता है कि अस्पृश्यता कितनी बे-बुनियाद चीज है। अगर हरिजन अपनी जातिका नाम छिपाकर अपनेको केवल हिन्दू ही बतायें, तो वे अपने गाँव और पड़ोसके सिवा और सब कही बड़े आरामसे सामान्य हिन्दूकी तरह रह सकते हैं और बहुधा वे ऐसा करते भी हैं। किन्तु जो दृष्टिकोण मैंने सुझाया है उसके अनुसार तो इस तरहकी चालाकी हरिजनोंके सन्तापको और भी अधिक दिनोंतक कायम रखेगी, क्योंकि इस तरह सवर्णोके हृदयसे 'उच्चता' और छुआछूतका भूत कभी दूर नहीं हो सकता।

अब मै तीसरे प्रश्नपर आता हूँ। मैं जो-कुछ ऊपर लिख चुका हूँ, उससे स्पष्ट हो जाता है कि हरिजनोंको आर्यसमाजी बनानेसे कठिनाई हल नहीं होती। हरिजनोंके आर्यसमाजी हो जानेसे, उन करोड़ों लोगोंका, जो आर्यसमाजी नहीं हैं, हृदय द्रवित नही हो सकता। आवश्यकता इस बातकी है कि 'उच्च' हिन्दूका हृदय द्रवित हो। पूरे हिन्दू-धर्मकी शुद्धि जरूरी है। मैं जो-कुछ करना चाहता हूँ और हरिजन सेवक संघ जो-कुछ करना चाहता है, वह इस युगका महानतम सुधार है। इस कार्यमें पूरी सफलता मिलनेमें देर लग सकती है, पर उसकी कोई चिन्ता नही है। कैसी भी कठिनाईसे न घबरानेवाले और अपने आदर्शको किसी भी कारण नीचे न गिरानेवाले सुधारक यदि काफी संख्यामें हो, तो यह सुधार अवश्य सफल होगा। सुधारकोंके मनमे अगर यह बात बैठ जाये कि हिन्दू-धर्मको जीवित रखनेके लिए अस्पृश्यताका अन्त अनिवार्य है, तो वे न तो कभी घबरायेंगे और न अपने आदर्शको ही नीचे गिरने देंगे।

चौथा प्रश्न द्वेषपूर्ण है। इसकी चर्चासे शायद कोई लाभ भी नहीं है, तो भी मेरे लिए इसका जवाब देना ठीक होगा। कारण, कि मैं धर्मका क्या अर्थ करता हूँ, कम-से-कम यह तो स्पष्ट कर ही सकूँगा। धर्मके लिए सबसे सही, यद्यपि बहुत ही अधूरी, उपमा मै विवाहकी दे सकता हूँ। विवाह-सम्बन्ध अटूट है या हुआ करता था। धर्मका सम्बन्ध उससे भी अधिक अटूट है। पतिकी पत्नीमें और पत्नीकी पतिमें निष्ठा

इस कारण नहीं है कि पति अपनी पत्नीको तमाम स्त्रियोंसे श्रेष्ठ मानता है या पत्नी अपने पतिको तमाम पुरुषोंसे श्रेष्ठ मानती है। उसके मूलमें कोई अवर्णनीय और अटूट आन्तरिक आकर्षण होता है। इसी प्रकार मनुष्यकी अपने धर्ममें निष्ठा होती है, जो किसी भी तरह दूर नहीं की जा सकती। ऐसी निष्ठामें ही मनुष्यको पूर्ण सन्तोष मिलता है। और जैसे पतिको पत्नीमें निष्ठा रखनेके लिए अन्य स्त्रियोंको उससे हीन माननेकी आवश्यकता नहीं होती, वैसे ही अपने धर्ममें निष्ठा रखनेवालेके लिए अन्य धर्मोको उससे हीन माननेकी आवश्यकता नहीं है। इसी उपमाको और अधिक विस्तृत करते हुए कहा जा सकता है कि पतिको अपनी पत्नीमे निष्ठा रखनेके लिए जैसे उसके दोषोंसे अनभिज्ञ रहनेकी आवश्यकता नहीं है, वैसे ही व्यक्तिको अपने धर्ममें निष्ठा रखनेके लिए उसके दोषोंसे अनभिज्ञ रहनेकी आवश्यकता नहीं है। वस्तुत:, यदि अपने धर्मपर अन्धविश्वास नहीं, बल्कि सच्ची निष्ठा रखनी हो, तो अपने धर्मके दोषोंका तीव्र बोध होना चाहिए और उन दोषोंके समुचित उपचार की उत्कट इच्छा होनी चाहिए। धर्मके विषयमें मेरा ऐसा विश्वास होनेके कारण, हिन्दू-धर्मकी खूबियोंकी जाँचकी यहाँ आवश्यकता नहीं है। पाठक विश्वास रखें कि यदि मै इस धर्मकी बहुत-सी खूबियोंसे भिज्ञ न होता तो अबतक हिन्दू न रहता। पर ये खूबियाँ मेरे ही धर्ममें है, अन्य धर्मोमें नही हैं, यह मै नही मानता। इसलिए, अन्य धर्मोका अध्ययन मैं छिद्रान्वेषी आलोचककी दृष्टिसे नही, बल्कि एक जिज्ञासु भक्तकी दृष्टिसे करता हूँ। अन्य धर्मोमे अपने धर्मकी-सी खूबियाँ देखने और जो अच्छाई अपने धर्ममें न हो और अन्य धर्मोमे हो, उसे अपने धर्ममे शामिल करनेकी आशासे ही मैं अन्य धर्मोका अध्ययन करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-८-१९३३

४१४. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

१४ अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग
पूना

प्रिय महोदय,

आज सोमवारका दूसरा पहर भी हो गया और उपवाससे पहले जिन शर्तोपर मैं हरिजन-कार्य करता था, उन्हीं शर्तोपर वह काम करने देनेकी मेरी प्रार्थनाका अभीतक मुझे कोई जवाब नहीं मिला है। मैंने यह प्रार्थना अहमदाबाद सैन्ट्रल जेलसे १ तारीखको की थी; उसके बाद मैं और तीन बार[1] यहीं प्रार्थना कर चुका हूँ।

१. ४, ६, ८ और १० अगस्तको; देखिए पृ० ३६१, ३६५-६ और ३६७-८।

इस कामसे वंचित रखनेके कारण मेरे मनपर जो बोझ पड़ रहा है, वह असह्य है। इसलिए अगले बुधवारकी दोपहरतक यदि मुझे अनुमति न मिली, तो उसी वक्तसे मैं पानी और नमकके सिवाय और किसी प्रकारका आहार लेना बन्द कर दूँगा। अपनी प्रतिज्ञाका पालन करने और उपरोक्त बोझको कुछ हल्का करनेका यह एक ही रास्ता है। आहार बन्द करनेकी जो बात मैं कह रहा हूँ, मैं नहीं चाहता कि उससे सरकारपर किसी भी तरहका दबाव पड़े। हरिजन-सेवा यदि मैं बिना रोकटोकके न कर सकूँ, तो फिर जीवनमें मुझे कोई दिलचस्पी ही नहीं रह जाती। जैसाकि मैंने पहलेके अपने पत्र-व्यवहारमें स्पष्ट कर दिया है, और जैसाकि भारत सरकार स्वीकार कर चुकी है, उक्त सेवा करने देनेकी अनुमति यरवदा-समझौतेमें निहित ही है और ब्रिटिश सरकार जिस हदतक उसकी स्वीकृति जरूरी थी, उस हदतक उसे स्वीकार करनेवाला दूसरा पक्ष है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि अनुमति मुझे तभी मिले जब सरकार यह मानती हो कि मुझे अनुमति देनेमें न्याय है। मुझे केवल इसलिए अनुमति न दी जाये कि यदि न दी गई तो मैं उपवास करूँगा। उपवास करनेकी बात तो सिर्फ मेरे अपने सन्तोषके लिए है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०१) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४) भाग ५, पृ० ९७ से भी।

४१५. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

१४ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

सहपत्र[1] पढ़कर जितनी जल्दी हो सके उसे उपयुक्त स्थानपर भेजनेकी कृपा करें। निश्चय ही, अगर हरिजन-कार्यके सम्बन्धमें मेरी प्रार्थनाका अबतक कोई जवाब न मिला हो, तभी यह जरूरी है।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल सं० २०–१३, १९३३

१. देखिए पिछला शीर्षक।

४१६. पत्र : आर० बी० मार्टिनको

१५ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

सरकारकी तरफसे आपको जो दो पत्र मिले हैं, उनके बारेमें मुझे यह कहना है :

(१) सरकारको मैंने १० तारीखको जो पत्र[1] लिखा था, उसके उत्तरमें 'हरिजन' के लेख उसके कार्यवाहक सम्पादकको देने और उसी सिलसिलेमें उन्हें हिदायतें देनेकी मुझे अनुमति दे दी गई है, इसके लिए मैं आभारी हूँ। पर यह अनुमति मेरी तात्कालिक आवश्यकताओंको पूरा नहीं करती। रोज आनेवाले पत्रोंसे सम्पर्क रखे बिना, 'हरिजन' के लिए कुछ भी उपयोगी लिखना मुश्किल है। अस्पृश्यताके बारेमें पत्र-व्यवहार करनेवालोंके साथ सम्पर्क रखना भी 'हरिजन' के सम्पादन जितना ही जरूरी है। उदाहरणके लिए, एक हरिजन पाठशालाके विषयमें मेरी देखरेखमें एक कठिन प्रयोग चल रहा है। उस पाठशालाको सफल बनानेके लिए उसके शिक्षकके साथ मेरा बराबर सम्पर्क जरूरी है। आश्रमकी कुछ लड़कियों और लड़कोंको मैंने एक हरिजन छात्रालयमे रखा है। इस प्रकारका शायद यह पहला ही प्रयोग है। मैं इसपर बराबर ध्यान न दूँ तो यह चल नहीं सकता। यह उसी दिन शुरू किया गया था जिस दिन कि मैं पकड़ा गया। जिन मामलोंपर मेरा खुद ध्यान देना जरूरी है उनके बहुत-से उदाहरणोंमें से मैंने यहाँ सिर्फ दो ही दिये हैं।

इसलिए कम-से-कम इतना तो मै तत्काल चाहता हूँ :

(क) आपके पास मेरे जो पत्र हों, वे मुझे सौंप दिये जायें और उनमें जितना कुछ अस्पृश्यता-सम्बन्धी हो, उसका जवाब देनेकी मुझे अनुमति दी जाये;

(ख) 'हरिजन' कार्यालयमें जो पत्र आयें, वे मुझे दियें जायें और उनके सम्बन्धमें जो-कुछ कर्त्तव्य है वह करने दिया जाये;

(ग) आपके पास और 'हरिजन' कार्यालयमें मेरे लिए जो अखबार आयें वे मुझे दिये जायें, ताकि उनमें अस्पृश्यताके प्रश्नोंपर जो चर्चा हो, उसके बारेमें मैं उचित कार्यवाही कर सकूँ।

मेरी प्रार्थनाके बारेमे अन्तिम आदेश तो अभी विचाराधीन है, पर यदि इस बीच उपरोक्त तीन बातोंकी अनुमति मुझे मिल जाये, तो कल सरकारको लिखे पत्र[2] के अनुसार मुझे कल दोपहरसे उपवास करनेकी जरूरत नहीं होगी। यह अनुमति यदि आज प्राप्त की जा सके, तो मैं काकासाहब कालेलकर या आनन्द हिंगोरानीसे आज ही मिलना चाहता हूँ। काम जारी रखनेके लिए कुछ लेख तब मै उन्हें दे सकूँगा।

१. देखिए पृ० ३६८-९।

२. देखिए पृ० ३७१-२।

(२) आपके पास मेरे नाम आये जो पत्र हैं, उनको निपटानेके बारेमें सरकारके पत्रमें जो-कुछ कहा गया है उसका जवाब उपरोक्त में ही आ जाता है। वर्गीकरणके नियमोंके अनुसार मुझे पखवाड़ेमें एक पत्र मिल सकता है, जिसे लेनेकी मेरी इच्छा नहीं है। मेरे नाम आये पत्रोंमें से ज्यादातर अस्पृश्यतासे ही सम्बन्ध रखनेवाले होंगे, और उनपर मुझे खुद ही ध्यान या हिदायतें देनी होंगी। मेरे नाम आये पत्र यदि मुझे दे दिये जाये तो जो अस्पृश्यतासे सम्बन्धित नहीं होंगे, उन्हें मैं खुशीसे लौटा दूँगा। इन पत्रोंमे कुछ कारोबारी हो सकते हैं। इस तरहके पत्रोंके बारेमें मै सरकारसे हिदायतें माँगूँगा। हकीकत यह है कि राजनैतिक मामलोंके अलावा मेरे बहुत-से सार्वजनिक कार्य हैं। इसलिए, जैसाकि मैंने आज सुबह आपको बताया था, मेरे साथ व्यवहारका न्यायोचित मार्ग यही है कि सविनय अवज्ञामें मै प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी भी रूपमें भाग नही लूँगा — यह आश्वासन मुझसे ले लेनेके बाद, ५ तारीखके पत्र[1] में मैंने जो सुविधाएँ माँगी हैं वे सब मुझे दे दी जायें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०२) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ९९-१०१ से भी।

४१७. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

१६ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

चूँकि मेरे कलके पत्रमें की गई प्रार्थनाका कोई जवाब नही मिला है, मेरा उपवास, जैसाकि पत्रमें पहले ही सूचित कर दिया गया है, आज दोपहरसे शुरू होता है। इसलिए दूध दोहनेके लिए बकरियाँ न भेजने और मीठे व खट्टे नीबू लानेके लिए किसीको बाजार न भेजनेके आवश्यक आदेश देनेकी कृपा करें।

मैं उपवास शुरू कर रहा हूँ, फिर भी यदि कोई आपत्ति न हो तो कृपया काकासाहब कालेलकरको फोन कर दीजिये कि आज वे जितनी जल्दी आ सकते हों आ जायें ताकि मैं उन्हें 'हरिजन' के लिए वह पाण्डुलिपि जो पहले ही तैयार हो चुकी है, सौंपकर उन्हें निर्देश दे दूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०३) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० १०१ से भी।

१. देखिए पृ० ३६५-६।

४१८. पत्र : आर० बी० मार्टिनको

१६ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

मुझे लगता है कि मैंने बेवकूफी और जल्दबाजीमें आपसे बकरियाँ मुझे फिरसे वापस कर देनेको कह दिया। इससे पता चल जाता है कि अनशन न करनेकी मेरी इच्छा कितनी प्रबल है। परन्तु आप आदेशोंकी जो टिप्पणियाँ[1] मेरे पास छोड़ गये हैं उन्हें पढ़नेपर मुझे लगा है कि वे भारत सरकार द्वारा दिये गये पहलेके मूल आदेशों तथा मेरी अपेक्षासे बहुत घटकर हैं और इसलिए मुझे जल्दबाजी करके उपवास तोड़ नहीं देना चाहिए। यदि सरकार अपने उन आदेशोंसे मुकरना चाहती है, तो मुझे इस बातका खेद होगा। परन्तु शायद मैं इन नये आदेशोंके अधीन काम नहीं करूँगा। ये मूल आदेशोंसे स्पष्ट रूपमें भिन्न हैं, और फिर ऐसा लगता है कि इतना भी अनिच्छासे स्वीकार किया गया है। मै देख रहा हूँ कि जो पत्र आपके पास है, आप भी मुझे नहीं देना चाहते और आप यह भी नहीं चाहते कि पाण्डुलिपि इस सप्ताहके 'हरिजन'के लिए कार्यवाहक सम्पादकको दी जाये। यह पत्र लिखनेमें मुझे बड़ा दुःख हो रहा है; लेकिन अगर मैं इस वक्त उपवास तोड़ दूँ और फिर बहुत-से उन मामलोंमें जिनके स्पष्टीकरणकी आवश्यकता है, सरकारके साथ लम्बे अरसेतक चलनेवाले झगड़ेमें पड़ूँ, तो मुझे और भी ज्यादा कष्ट होगा। जिस सावधानीसे मैं जेलके अनुशासनका पालन करनेकी कोशिश कर रहा हूँ और कैदी होते हुए भी मैं जो सहयोग देता हूँ, उसके प्रति सरकारकी सही प्रतिक्रियाका अभाव मुझे खटकता है। जेलकी दीवारोंसे बाहर एक नागरिककी हैसियतसे इस तरहके सहयोगका हाथ न बढ़ाना मैं अपना धार्मिक कर्त्तव्य मानता हूँ। मैंने आपकी टिप्पणियाँ तीन बार पढ़ी हैं और हर बार यह देखकर मुझे और ज्यादा दुःख हुआ है कि सरकार इस बातको सही ढंगसे नहीं समझ पा रही कि मुझे किसी सुविधा या रुकावट की परवाह किये बिना हरिजन-कार्य करनेकी कितनी ज्यादा जरूरत है। इसलिए

१. १६ अगस्तको गांधीजी को सूचना दी गई थी कि केवल अस्पृश्यता-विरोधी कामके लिए ही उन्हें निम्नांकित सुविधाएँ दी जायेंगी :

"(१) उन्हें समाचारपत्र और पत्रिकाएँ मिल सकती है परन्तु उन्हें समाचारपत्रोंमें छपनेके लिए समाचारपत्रोंके संवाददाताओंसे या किन्हीं दूसरे लोगोंसे भेंटकी अनुमति नहीं दी जा सकती। (२) दिनमें दो मुलाकातियोंसे मिल सकते हैं, दो से ज्यादा नहीं (३) वे **हरिजन** के सम्पादकको सप्ताहमें केवल तीन बार आदेश या लेख वगैरह दे सकते हैं और दूसरे संवाददाताओंको भी एक सीमित संख्यामें पत्र दे सकते हैं (४) जिनकी हरिजन-कार्यके लिए जरूरत हो ऐसी पुस्तकें और समाचारपत्र और एक कैदी टाइपिस्ट उनके पास रह सकता है।" (**हिन्दू**, १९-८-१९३३) देखिए अगला शीर्षक भी।

हालांकि मैं उपवास जारी रखनेका इच्छुक नहीं हूँ, फिर भी मैं महसूस करता हूँ कि यदि मैं हरिजन-कार्य उन जबरदस्त रुकावटोंके बगैर नहीं कर सकता जो मुझे लगता है आपके आदेशोंसे पड़ रही हैं, तो मुझे उपवास-कष्टको झेलना ही पड़ेगा।

इसलिए मुझे जो दूध और फल मिल चुके है आप कृपया उन्हे वापस मँगवा ले और मैने जो जल्दबाजीमे आपसे उपवास तोड़नेके लिए कह दिया था, उसके लिए मुझे क्षमा करे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०४) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० १०३ से भी।

४१९. पत्र : आर० बी० मार्टिनको

१७ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

आज सुबहकी हमारी बातचीतके सन्दर्भमे, मेरे उपवास तोड़नेसे पहले नीचे लिखे मुद्दोंका समाधान हो जाना चाहिए :

१. काकासाहब कालेलकर या श्रीयुत आनन्द हिंगोरानीसे, उन्हे पाण्डुलिपि और हिदायतें देनेके लिए, आज दोपहर बारह बजेसे पहले मेरी मुलाकात होनी चाहिए।

२. आपके पास जितने भी पत्र और समाचारपत्र है वे, १५ तारीखके मेरे पत्रमें उल्लिखित शर्तके साथ, मुझे मिलने चाहिए।

३. आपने जो टिप्पणियाँ[1] मुझे दिखाई वे मुझे इस चीजके लिए बाध्य करती है कि भेंटें समाचारपत्रोंमे प्रकाशित नहीं होनी चाहिए। यह भौतिक रूपसे असम्भव है, क्योंकि जो लोग मुझसे मिलने आते है उनपर मैं नियन्त्रण नहीं रख सकता। मैं केवल उन्हींसे मुलाकात करूँ जो मेरा अनुशासन मानें, यह अपेक्षित नही है। मित्रोंकी अपेक्षा शायद कट्टर विरोधियोंसे ही मुझे अधिक मुलाकात करनी होगी।

४. इन टिप्पणियोंमें प्रतिदिन दो मुलाकातियोंकी बात कही गई है। यदि मुझपर इस तरह नियन्त्रण रखा गया, तो मैं आन्दोलनका कभी भी संचालन नही कर सकूँगा। यदि मुझे लोगोंको प्रभावित करना है, तो जितने भी मुलाकाती आयें उन सबसे मुझे मिलना होगा।

५. एक ऐसे पत्रकारकी हैसियतसे जो इस धन्धेमे २९ वर्षोंसे है, मैं यह कह सकता हूँ कि सम्पादकको सप्ताहमें तीन बार हिदायतें भेजनेका जो प्रतिबन्ध है वह

१. देखिए पिछला शीर्षक।

बिल्कुल अव्यावहारिक है। साथ ही यह चीज भी साफ नही है कि सम्पादक या सम्पादकोंको खुद मुझसे मिलनेकी अनुमति है या नहीं।

६. इन टिप्पणियोंमें यह भी अपेक्षित है कि अन्य संवाददाताओंको सीमित संख्यामें ही पत्र भेजे जाये। मुझे नही मालूम की 'सीमित' शब्दसे सरकारका क्या अभिप्राय है। पिछली छूटमें मुझे औसतन प्रतिदिन कोई तीस पत्र भेजने पड़ते थे।

७. इन नोटोमे पत्रोंके बारेमें कुछ नही है। मै यह माने लेता हूँ कि यह चीज जान-बूझकर नहीं छोड़ी गई है और मुझे सभी पत्र और समाचारपत्र, चाहे वे आपको मिलें या 'हरिजन' कार्यालयको, मिलते रहेंगे। पर, उनपर मेरा कार्य कड़ाईसे अस्पृश्यतातक ही सीमित रहेगा।

अब आप यह देख सकेंगे कि मेरी अपेक्षाओं और जो रियायतें सरकार मंजूर करनेको तैयार है उनके बीच एक खाई रहती है। यदि सरकार मुझे अस्पृश्यता-निवारणके इस जबर्दस्त आन्दोलनको, जो लाखों मानव प्राणियोंको प्रभावित कर रहा है, चलानेकी अनुमति देना चाहती है, तो पिछली छूटके अधीन जारी किये गये भारत सरकारके आदेश पूरी तरह लागू होने चाहिए। उनमें मेरा निवेदन साफ-साफ स्वीकार कर लिया गया था और इसलिए उसका उनमे पूर्ण उत्तर था। इन नोटोंमे वह मुझे बिलकुल नही मिलता। जहाँतक मुझे मालूम है, मैने इस नीति-परिवर्तनके लिए कोई कारण पैदा नही किया है। मैने जो प्रार्थना की है यदि उसकी अनुमति मुझे दे दी गई, तो मै इस बातका पूर्ण आश्वासन दे सकता हूँ कि मै उससे कोई अनुचित लाभ नही उठाऊँगा, मै अपने-आपको कड़ाईके साथ अस्पृश्यता-निवारणके कार्यतक ही सीमित रखूँगा और, अपनी योग्यतानुसार, जेलके कर्मचारियोंकी सुविधाका अधिक-से-अधिक खयाल रखनेकी कोशिश करूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

मै यह माने लेता हूँ कि कैदी टाइपिस्ट आशुलिपिक भी है और यदि हर चीज सन्तोषजनक रूपसे हल हो गई तो, पहलेकी तरह, मुझे श्रीयुत महादेव देसाई और छगनलाल जोशीकी सहायता मिलने लगेगी।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०५) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० १०५-७ से भी।

४२०. गुण बनाम परिमाण

इसमें शक नही कि किसी ध्येयमें लगे कार्यकर्त्ता अपने परिश्रमके परिणामोंमें गणकी अपेक्षा परिमाणकी ओर ही अधिक आकर्षित होते है। हरिजन सेवक संघ द्वारा अस्पृश्यता-निवारणका जितना काम पूरे भारतमें हुआ है, वह कुल मिलाकर किसी तरह असन्तोषजनक नहीं है। मगर हम उसे जब प्रत्येक प्रान्तमे अलग-अलग फैलाकर देखते है, तो वह कार्य मानो 'मनमें कण' के समान दिखाई देता है। हमारा लक्ष्य हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यता अर्थात्, ऊँच-नीचकी भावनाका मूलोच्छेदन करना है। इस लक्ष्यकी पृष्ठभूमिमें देखनेपर तो हमारा अबतकका कार्य और भी क्षुद्र मालूम होता है। इसीलिए अपने अन्तिम-उपवासके बाद जिन दिनों मै आरोग्य लाभ कर रहा था, उन दिनों आयोजित हरिजन सेवकोंकी सभाओंमे निराशा साफ झलकती थी। पर मुझमें स्वयं कोई निराशा नहीं थी। कारण कि मेरा मन केवल गुण ही देखता था, जबकि मेरे साथी, जाने या अनजाने, परिमाणका विचार कर रहे थे।

पचास उदासीन शिक्षकोंकी अपेक्षा मैं एक श्रेष्ठ शिक्षकको अधिक पसन्द करूँगा। यदा-कदा पाठशालामें आनेवाले पचास बालकोंसे पाँच बालकोंकी नियमित उपस्थिति मुझे अधिक सन्तोष देगी। चुने हुए छोटे-छोटे व्यवस्थित क्षेत्रोंपर पाँच सेवकोंका पूरी तरह ध्यान देना मैं ज्यादा अच्छा समझता हूँ, बजाय इसके कि वे किसी विशाल क्षेत्रको लेकर तो बैठ जायें, पर उसपर पूरी तरह ध्यान न दे पायें।

किसी भी आन्दोलनमें गुणपर अधिक ध्यान देना अच्छा होता है। और अस्पृश्यता-निवारण-जैसे विशुद्ध धार्मिक आन्दोलनमें तो यह बात खास तौरपर जरूरी है। गुणकी उपेक्षासे धर्ममें विनाशतककी सम्भावना हो सकती है। यदि शिक्षक सिर्फ कामचलाऊ हों, बच्चे मनमौजी हों और कार्यकर्त्ता हरिजनोंसे व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित किये बिना जगह-जगह यों ही चक्कर लगाते फिरें, तो पता चलेगा कि दस वर्षके प्रयत्नके बाद भी हरिजनों और सवर्ण हिन्दुओंके हृदय द्रवित नहीं हुए हैं, और उसका नतीजा यह हो सकता है कि हरिजन और सवर्ण दोनों ही इस आन्दोलनके विरोधी हो जायें।

धार्मिक आन्दोलनमें श्रद्धाका स्थान बड़े महत्त्वका होता है। अतः कई तत्त्व अज्ञात और अज्ञेय ही रहते है। धार्मिक आन्दोलनकी समय-समय पर उस तरह माप-जोख नही की जा सकती जैसेकि साधारण आन्दोलनोंकी की जा सकती है, कारण कि उन आन्दोलनोंके तत्त्व अधिकांशमें जाने हुए और अपने अधिकारमे होते हैं। अगर मुझे दस लाख गज खादी तैयार करनी हो, तो रुई और कातने-बुननेवालोंके मौजूद होनेपर मैं कह सकता हूँ कि वह माल कबतक तैयार हो जायेगा। पर यदि मुझे पाँच हिन्दुओंके हृदय द्रवित करने हों और उन्हें अस्पृश्यतासे मुक्त करना हो,

तो मैं नहीं बता सकता कि वह कार्य कबतक पूरा हो सकेगा, या कभी पूरा हो भी सकेगा या नहीं। मुझे तो केवल इसी विश्वाससे काम करना होगा कि मेरा कार्य न्यायोचित है और यदि इस कार्यके लिए मैं मन, वचन और कर्मसे पवित्र हूँ, तो जिन पाँच हिन्दुओंके बीच मुझे कार्य करना है उनके मैं हृदय द्रवित करके ही रहूँगा। अतः अपने कार्यके विषयमें मै निराश नहीं हो सकता, अपना कार्यक्षेत्र भी मै बदल नहीं सकता और न महत्वाकांक्षावश, अपनी शक्तिके बाहर अपना कार्यक्षेत्र ही बढ़ा सकता हूँ। इसके विपरीत, मुझमें यह विश्वास होना चाहिए कि धैर्य और विनम्रतासे मैं केवल इन पाँच हिन्दुओंको ही प्रभावित नहीं कर सकूँगा, बल्कि पाँचमें सफल होनेके वाद पचास लाखको प्रभावित करनेमे भी मुझे बहुत समय नही लगेगा। "श्रद्धा पर्वतोंको भी हिला सकती है" अथवा "जो लोग मेरे लिए और योगयुक्त होकर काम करते है, उन्हें मै सदा विजय-लाभ कराता हूँ," इन वचनोका यही अर्थ है, दूसरा नहीं।

इसलिए हमे जिस चीजकी आवश्यकता है, वह है अपरिमित श्रद्धा और उसे अनुप्राणित करनेवाला निष्कलंक चरित्र। मलिन मन धार्मिक भावनासे मेल नही खाता। चरित्रकी निष्कलंकतासे यहाँ अभिप्राय है मन, वचन और कर्ममें सत्य, प्रेम और शुचिताका होना। हममें यदि ये गुण नही हैं तो हमारा प्रभाव न तो सवर्णो पर पड़ेगा और न हरिजनोंपर। अगर हममें यह त्रिविध शुद्धि नहीं है, तो हम दोनोंमें से किसीका भी हृदय जीत नही सकेंगे और इस तरह अपनेको ही नहीं, बल्कि अपने इस महान सेवा-कार्यको भी बदनाम करेंगे।

इसलिए यह कहनेमें मुझे तनिक भी हिचकिचाहट नही है कि अपने इस अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनमें यदि हम गुणपर ध्यान रखें, तो परिमाण तो अपने-आप बढ़ जायेगा। यह बतानेकी आवश्यकता नहीं है कि गुणके विषयमे जो-कुछ ऊपर कहा गया है, वह सवर्ण कार्यकर्त्ताओं और हरिजन कार्यकर्त्ताओं दोनोंपर ही लागू होता है। अगर हरिजन कार्यकर्त्ता अपने समाजमें नैतिक सुधार — पहले मै क्रान्ति कहना चाहता था — करना चाहते हैं, तो वे ऐसे निष्कलंक और सच्चे कार्यकर्त्ता उत्पन्न करें जो परिमित क्षेत्रोंमें एकाग्रचित्त सेवाकार्य करते हुए लोगोंसे निजी सम्पर्क स्थापित कर सकें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-८-१९३३

४२१. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

१९ अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग
पूना

प्रिय महोदय,

कर्नल मार्टिनने मुझे उनके नाम १७ तारीखके मेरे पत्र[1] के उत्तरमें आपके पत्र[2] की एक नकल देनेकी कृपा की है। मुझे यह कहते दुःख होता है कि आपका उत्तर मेरे बुरे-से-बुरे भयोंको सच सिद्ध करता है। जहाँ मै यह सोचता था कि कुछ मुद्दोंकी और भी अनुकूल व्याख्या सम्भव है, वहाँ आपके उत्तरसे अब यह स्पष्ट हो जाता है कि इस तरहकी व्याख्याका मुझे कोई अधिकार न था। इसलिए आपके पत्रके विविध मुद्दोंकी चर्चा करना मेरे लिए अनावश्यक है।

लेकिन श्री एन्ड्र्यूजके द्वारा मैं अब यह समझा हूँ कि भारत सरकारके जिन आदेशोंका मैं पहले उल्लेख कर चुका हूँ, उनकी पूर्ति में सरकारके सामने कठिनाई यह है कि मै अब राजबन्दीकी बजाय एक दण्डित बन्दी हूँ। वह [पिछली] नीति सरकारने स्पष्ट रूपसे निर्धारित की थी, और वह रियायतके तौरपर नहीं बल्कि, जैसा कि भारत सरकारने स्वीकार किया था, इसलिए निर्धारित की थी "क्योंकि यह आवश्यक है कि उन्हें (मुझे) ऐसे मामलोंपर जो कड़ाईसे अस्पृश्यता-निवारण तक ही सीमित हों, मुलाकातियों और पत्र-व्यवहारकी स्वतन्त्रता होनी चाहिए," "क्योंकि प्रकाशनपर कोई प्रतिबन्ध नहीं है।" उस नीतिको बिलकुल छोड़ देनेका कारण यदि यही हो, तो यह बात मेरी समझमें नहीं आती कि जो मेरे लिए [पहले] आवश्यक समझा गया था, वह मेरे दण्डित बन्दी होनेके कारण अब उतना आवश्यक क्यों नही रहा। मै यह कहता हूँ कि जिस तरह सरकारने, मेरे दण्डित बन्दी होनेके बावजूद, मेरी भौतिक आवश्यकताओंको स्वीकार किया है और पूरा किया है, उसी तरह सरकारको अस्पृश्यता-सम्बन्धी मेरी आत्मिक आवश्यकताओंको भी पूरी तरह स्वीकार करना चाहिए।

आपके पत्रके अन्तिम अनुच्छेदसे मुझे कष्ट पहुँचा है। उसमें जो बात स्मरण कराई गई है उससे मेरे आहत मनको और चोट लगी है। कारण, कि मैं सरकारसे अनेक

१. देखिए पृ० ३७६-७।

२. १८ अगस्तको वाइसराय द्वारा राज्य-मंत्री, लंदनको भेजे गये तारमें इसका सारांश है; देखिए परिशिष्ट १२।

बार यह कह चुका हूँ कि सत्याग्रह, आजकी परिस्थितियोंमें, मेरे धार्मिक विश्वासका अंग है। परन्तु मैं यह स्वीकार करता हूँ कि जिसे मैं पूर्णतया न्यायोचित और नैतिक कार्य समझता हूँ, सरकार उसे न्यायविरुद्ध और शायद अनैतिकतक समझती है। इसलिए मुझे न केवल वर्तमान कारावासकी स्वाभाविक अवधिके लिए, बल्कि जब तक भारत स्वतन्त्र न हो जाये तबतकके लिए उसका बन्दी होनेको तैयार रहना चाहिए। बेशक, यह तभी सम्भव है जब मैं उस दिनको देखनेतक जीवित रह सकूँ, यानी, यदि इस बातकी कोई सम्भावना अभी भी बाकी हो कि सरकार अपने पवित्र दायित्वको पूरा करेगी और मैं जिस अग्निपरीक्षामें से गुजर रहा हूँ उसमें सही-सलामत पूरा उतर पाऊँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०६) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० १०९-११ से भी।

४२२. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

१९ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

पिछले तीन-चार दिनसे आप मुझे 'टाइम्स ऑफ इंडिया' की कटी-छँटी प्रतियाँ भेज रहे हैं। मेरा अनुमान यह है कि यह काट-छाँट मेरे उपवासके उल्लेखोंके कारण है। यदि मेरा अनुमान सही है तो मेरे खयालमें यह काट-छाँट मेरे प्रति न्याययुक्त नहीं है। सरकार द्वारा या उसकी ओर से यदि कुछ कहा गया है, तो वह क्या है कम-से-कम यह तो मुझे पता लगना ही चाहिए, ताकि समाचारपत्रोंमें निकलनेवाले वक्तव्योंमें यदि कुछ ऐसा हो जो मुझे अनुचित लगे, तो मैं सरकारके आगे अपना निवेदन रख सकूँ। सभी सम्बन्धित पक्षोंके प्रति न्याय हो, इस दृष्टिसे मैं यह सुझाव रखूँगा कि मेजर भंडारीके नाम २९ सितम्बर, १९३२ के मेरे पत्र[1] से, जो हरिजन-कार्य करनेकी मेरी प्रार्थनाके बारेमें है, शुरू हुआ सारा पत्राचार यदि अभीतक प्रकाशित नहीं किया गया हो तो अब प्रकाशित कर दिया जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०७) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ११३ से भी।

१. देखिए खण्ड ५१।

४२३. एक मूक हरिजन-सेवक

सन् १९१९ मे जिन दिनों मै मणि भवनमें बीमार होकर बिस्तरपर पड़ा था, एक हृष्ट-पुष्ट सज्जन मुझसे मिलने आये। मुझे कुछ ऐसी याद है कि वे थोड़ा पैसा भी साथ लाये थे। मैंने उनसे पूछा, "आप किसके चिरजीव है?" जवाब मिला, "मै भावनगरके हरिप्रसादका लड़का हूँ।" सुनकर मुझे अपने पिताश्रीका समय याद आ गया। भावनगरके इस प्रसिद्ध कुटुम्बकी बात बचपनमे ही सुनी थी, इसलिए मैंने भाई यशवन्तप्रसादसे कहा, "तब तो हमारा पुराना नाता है। इसलिए मुझे आपको लूटनेका हक है?" यशवन्तप्रसादने जवाब दिया, "बेशक! मेरा जो-कुछ है उसे अपने कामके लिए ही समझिए।" उनके बारसीमें मिल आदि उद्योगोंके बारेमे मैंने सुन रखा था। तबसे जो सम्बन्ध बना वह रोज-रोज बढ़ता चला गया और अन्तमे उसने पिता-पुत्र-जैसे सम्बन्धका रूप ले लिया। मेरी सभी हलचलोंमें उनका भाग रहता ही था। खादी और दूसरी हलचलोंमे वे अपनेको लुटाते रहते थे। मुझे किसी भी दिन उनसे भिक्षा नहीं माँगनी पड़ी। वे स्वय ही जब-तब मेरे हाथमे पैसे रखकर चले जाते थे।

यशवन्तप्रसाद शुद्ध हरिजन-सेवक थे। उन्होंने अपने और हरिजनोंके बीच कभी भेद रखा ही नही। पहले-पहल जब खादीका काम शुरू हुआ तब भी उनकी नजर एकदम हरिजनोंपर गई और बुनाई कामका जीर्णोद्धार करनेका जिम्मा अपने हाथमे लिया। वे जानते थे कि काठियावाड़के बुनकरोंका धन्धा लगभग नष्ट हो गया था और वे बम्बईमें रोजीके लिए भटक रहे थे। यह बात तो हरिजन-सेवा की उनके प्रारम्भिक कालकी हुई। किन्तु जैसी लगनसे उन्होंने आरम्भ किया, अन्ततक वैसी ही लगनसे इस काममें जुटे रहे। अस्पृश्यता उन्होंने कभी मानी ही नहीं। वे प्रथम कोटिके नागर-कुलके सदस्य थे; किन्तु इस बातका अभिमान या मोह उन्हें छूकर भी नही निकला था। वे लम्बी बहसमे कभी नही पड़ते थे। जो सेवा प्राप्त हो गई उसे चुपचाप कर डालना ही उनका मन्त्र था। अभी-अभी उनके निधनका समाचार मिला। उनका जाना उनके कुटुम्बकी हानि तो है ही, मै भी एक सच्चा साथी खो बैठा हूँ और हरिजनोंने एक सच्चा मूक सेवक खो दिया है। प्रभु उनकी आत्माका कल्याण करें और उनके सुपुत्र तथा अन्य कुटुम्बियोंको पारमार्थिक कामोंमें उनके चरण-चिह्नोंपर चलनेकी सन्मति दें।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २०-८-१९३३

४२४. गुजरातके हरिजनोंसे

पिछली बार अहमदाबादमें मुझे हरिजन भाई-बहनोंसे अच्छी तरह मिलनेका अवसर प्राप्त हुआ था। उस समय मै दिल खोलकर उनके साथ बातचीत कर सका। उनसे मैंने जो आशा कर रखी है, उसे यहाँ फिरसे लिखता हूँ: (१) सवर्ण कहानेवाले हिन्दुओंका आपके प्रति जो अपना धर्म है, उसका पालन तो उन्हें बगैर शर्त करना ही है, क्योंकि वह उनका प्रायश्चित्त है। परन्तु वे प्रायश्चित्त करे या न करें, फिर भी आपके लिए स्वतन्त्र रूपसे और बिना किसी शर्तके बहुत-कुछ करनेको बच रहता है। क्योंकि स्वयं मरे बिना कोई स्वर्ग नहीं जा सकता। अपने बन्धन तो इहलोक या परलोकमे खुद अपने छुड़ाये ही छूटेंगे। इसलिए हरिजनोको चाहिए कि वे अपनेको नीच, अशक्त या अपंग न मानें। (२) सवर्ण हिन्दुओंका प्रायश्चित्त आपके उद्धारके लिए नही, उनके अपने उद्धारके लिए है। उनके प्रायश्चित्तमें आपकी सेवा निहित है। वे जो सेवा करें, आप उदारताके साथ उसे स्वीकार कीजिए। उदार भाव रखनेसे आप उनकी सेवामें रहनेवाली त्रुटियोंको सहज ही दरगुजर कर पायेंगे। पर यदि आप कृपण बनेंगे तो त्रुटियाँ-ही-त्रुटियाँ दिखाई देंगी। लेकिन, आप कृपण तो नहीं ही होंगे, यह मुझे विश्वास है। (३) अपने दोषोंको पहाड़के समान बड़े मानें और उन्हें दूर करनेके लिए सतत प्रयत्न करें। जो हक आप चाहते हैं, उनके मिलनेकी कुँजी इसीमे है। ऐसा कभी मत मानिए कि दूसरोंमें भी वैसे ही दोष हैं, इसलिए हमें फिक्र की कोई जरूरत नहीं। दूसरे चाहे जो करते हों, परन्तु आपका तो यह धर्म है कि अपनेमें जो दोष दिखाई दें, उन्हें दूर किया जाये। उन दोषोंकी गिनती करनेकी यहाँ मुझे जरूरत मालूम नहीं पड़ती। आपके सामने मैं उन्हें बहुत बार रख चुका हूँ। पर मुझे या और किसीको उन्हें पेश करनेकी जरूरत ही क्यों होनी चाहिए? जिन्हें आप दोषके रूपमे नहीं देखेंगे, उन्हें दूसरोंके कहनेसे दूर नहीं कर सकते। इसलिए यही कहना ठीक होगा कि जिन दोषोंको आप देख सकें उन्हींको दूर कीजिए।

सवर्ण हिन्दूकी हैसियतसे मै यह सब नहीं लिख रहा हूँ। मेरी समझमे तो आज वर्णधर्मका लोप हो गया है, और आपको वर्णके बाहर रखकर उस धर्मका उद्धार नहीं हो सकता है। परन्तु यदि मेरे जीते-जी वर्णधर्मका उद्धार होनेवाला है, तो जो वर्ण आपका माना जायेगा, वही मेरा भी समझियेगा, क्योंकि मैं अपनेको स्वेच्छासे हरिजन मानता। इस नाते मैंने आपसे जो उपर्युक्त आशा की है, उसे सफल कीजियेगा। यह आप निश्चय समझिए कि मैं आपके दुःखमें दुःखी हूँ और आपके सुखमें ही सुखी होऊँगा।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २०-८-१९३३

४२५. काठियावाड़वालोंसे

सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि जैसे एक कुटुम्बकी आवश्यकताका भार सुव्यवस्थित समाजमे दूसरे कुटुम्बपर नही पड़ता, उसी प्रकार एक प्रान्तके कार्यका बोझ दूसरे प्रान्तपर नही पड़ना चाहिए। इस नियमके अनुसार काठियावाडकी आवश्यकताओंका बोझ काठियावाड़-निवासियोंको ही उठा लेना चाहिए —— फिर वे चाहे काठियावाड़मे रहते हो, या काठियावाड़के बाहर। इसलिए काठियावाड़के हरिजन-कार्यका बोझ काठियावाड़-निवासियोपर ही पड़ना चाहिए। काठियावाड़में चलनेवाली हरिजन-पाठशालाओं और हरिजन-आश्रमोंके सिलसिलेमे, थोड़े समयके लिए मैं अहमदाबाद गया था और वहाँके कार्यकर्त्ताओंसे मिला था। धनाभावसे एक भी पाठशाला या आश्रम बन्द नहीं होना चाहिए। सुव्यवस्था और शक्ति-संग्रहके अभाव अथवा अनावश्यक खर्च रोकनेके लिए किसी संस्थाको बन्द करना पड़े, तो वह दूसरी बात है। मै तो कई बार अपना अनुभव वता चुका हूँ कि कोई भी पारमार्थिक कार्य वस्तुतः धनाभावके कारण बन्द नही होता। जिस कार्यके पीछे तन-मन अर्पण करनेवाले सेवक हों, धन तो उसके पीछे आप ही दौड़ा चला आता है। आशा है कि हरिजन-सेवाका कार्य करनेवाले उसे ऐसी ही श्रद्धासे देखेगे। जगतका यह निरपवाद अनुभव है कि प्रत्येक सस्था और प्रत्येक कार्य अन्ततक जुटे रहनेवाले एक मनुष्यकी तन्मयतापर ही निर्भर करता है। इसका अर्थ यह नहीं कि ऐसा मनुष्य अपने ही हाथों सब कार्य कर सकता है। ऐसा समझना तो अभिमानका चिह्न है। किन्तु विश्वकी व्यवस्था ही ऐसी है कि व्यवस्थापक एक ही व्यक्ति हो सकता है। जगतके अनेक नियन्ता नही, नियन्ता कहे या ईश्वर, एक ही है। उसके अगणित दास-दासियाँ हैं, पर उसने अपने लिए नाम और काम दासानुदासका रखा है। इसी प्रकार हरएक कामके लिए कहा जा सकता है कि उसका नियन्ता, मन्त्री या सम्पादक एक ही हो सकता है; और वह अपनेको यदि सवसे ऊपर न मानकर सेवकोंका सेवक माने, तो उसके हाथका काम उत्तरोत्तर प्रगति करता ही जायेगा। साथ ही यह भी चाहिए कि वह सेवक उस कार्यका अनन्य भक्त हो। मै जानता हूँ कि काठियावाड़मे ऐसी लगनसे काम करनेवाले सेवक हैं। काठियावाड़को धनकी भी कमी नहीं है। चारों ओर फैले हुए काठियावाड़-निवासियोंमे ऐसे स्त्री-पुरुष मेरी नजरमे है जो चाहें तो अकेले ही काठियावाड़मे हरिजन-सेवाका सारा खर्च अपने ऊपर उठा सकते हैं। अत. यह वात मेरी समझमे नही आती कि हरिजन-सेवाकी सस्थाओंमें से एकको भी धनाभावसे क्यों बन्द किया जाये।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २०-८-१९३३

४२६. मेरा जीवन-प्राण

भगवानकी लीला अपरम्पार है! इस बातकी मुझे कल्पना भी न थी कि ऐसी अनहोनी घटना[1] मेरे जीवनमे होकर रहेगी। मेरे इस लम्बे सार्वजनिक जीवनमे अन-होनी लगनेवाली अनेक घटनाएँ घट चुकी है। पर यह घटना तो सबसे अधिक अप्रत्या-शित थी। अब मेरे भाग्यमे क्या है? मै नही जानता कि जेलके बाहर जीवनका उपयोग मैं किस तरह करूँगा, पर इतना तो मै जरूर कहूँगा कि मै चाहे जेलके भीतर रहूँ या जेलके बाहर, 'हरिजन-सेवा' ही मेरे लिए सबसे प्रिय वस्तु रहेगी। वह मेरा जीवन-प्राण है। हरिजन-सेवा मेरे लिए भोजनसे भी अधिक आवश्यक है। भोजनके बिना मै कुछ दिन जीवित रह सकता हूँ, परन्तु हरिजन-सेवाके बिना तो मै एक क्षण भी नहीं जी सकता। भगवानसे मेरी यही निरन्तर प्रार्थना है कि अस्पृश्यताका यह कलक हिन्दू-धर्मसे पूरी तरह दूर हो जाये और करोड़ों सवर्ण हिन्दू सत्यके सूर्यका दर्शन करें। मै एक बार नहीं अनेक बार कह चुका हूँ कि सत्यका सूर्य तो सदैव ही प्रकाशित रहता है। जिस समय हम अपनी आँखोंपर से पर्दा हटा लेगे, उसी क्षण उसका दर्शन हो जायेगा। मै अपना जीवन इस कार्यके लिए अर्पित कर चुका हूँ। इस सत्यकी सिद्धिके लिए मुझे चाहे कितनी ही कठिन तपस्या क्यो न करनी पडे, मैं उसे अधिक नही समझूंगा।

'पर्णकुटी', २३ अगस्त, १९३३, साय ५.३०

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २६-८-१९३३

४२७. तार : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

पूना,
२३ अगस्त, १९३३

गुरुदेव
शान्ति निकेतन

ईश्वरकी कृपा। स्वस्थ हूँ। संतरा लिया[2]।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
विश्वभारती न्यूज, सितम्बर, १९३३, पृ० १७

१. अपने उपवासके, जो १६ अगस्तसे शुरु हुआ था, ८वें दिन गांधीजी बिना शर्तके जेलसे रिहा कर दिये गये थे।

२. रवीन्द्रनाथ ठाकुरका २४ अगस्तका उत्तर इस प्रकार था: "बड़ी सान्त्वना मिली। ईश्वरकी महिमा है। चार्लीको प्यार।"

४२८. तार : जमनालाल बजाजको

पूना,
२४ अगस्त, १९३३

जमनालाल बजाज
वर्धा

बहुत ठीक चल रहा हूँ। शुश्रूषाके लिए किसी मददकी जरूरत नही है।[1]

बापू

[अंग्रेजीसे]
पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ११३

४२९. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

२४ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

जब आपने मुझे सेसून अस्पताल भेजा उस समय मैं अपने साथ कपड़े और कुछ दूसरी चीजें तो ले आया, परन्तु अपनी पुस्तकें और चरखा वगैरह नहीं लाया। आप ये चीजें और जिस दौरान मैं आपके यहाँ जेलमें रहा, उस वक्त आपको मिली ऐसी पुस्तकें जो मुझे न दी गई हों, कृपया काकासाहब कालेलकरके हाथोंमें सौंप दें।

हृदयसे आपका,

लेफ्टिनेंट कर्नल आर० वी० मार्टिन, आई० एम० एस०
सुपरिटेंडेंट, सेन्ट्रल जेल, यरवदा

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल सं० २०-१३, १९३३

१. जमनालाल बजाज द्वारा भेजे गये इस तारके जवाबमें कि उनकी परिचर्याके लिए छोटेलाल जैनको भेजा गया है; देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", २४-८-१९३३।

४३०. पत्र : अब्बास तैयबजीको

२४ अगस्त, १९३३

प्रिय भर्रर्रर,

मेरे जीवनमे कई अद्भुत घटनाएँ घटी है। परन्तु रिहाईकी यह घटना सबसे अद्भुत है। बहरहाल यह घट गई है और मुझे इसे इसी रूपमें स्वीकार करना है। मगर मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि मैं काम क्या करूँ। ईश्वर मेरे लिए रास्ता तैयार करेगा, तबतक प्रतीक्षा कर रहा हूँ। इन परिस्थितियोंमें जितना मजबूत होनेकी आशा की जा सकती है, मैं उतना मजबूत हूँ। इसमें कोई शक नहीं कि आठ दिनोंमे जो ताकत मैंने खोई थी, कुछ दिनोंमें फिरसे हासिल कर लूँगा। मै थोड़े दिन यहाँ हूँ। आशा है कि उसके बाद बम्बई चला जाऊँगा और वहाँ कुछ दिन रहूँगा। मैं रैहानाको अलगसे नही लिख रहा हूँ। उससे कह दें कि उसने जो भजन मुझे भेजा था मैंने अपना उपवास उसके साथ शुरू किया था।

सबको प्यार।

भर्रर . . .

श्रीयुत अब्बास तैयबजी
कैम्प, बड़ौदा

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५८६) से।

४३१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२४ अगस्त, १९३३

चि० अमला,

आशा है कि तुम मेरे उपवासको लेकर पागल नहीं हो गई होगी और तुम वहाँ सबको सन्तुष्ट रखकर पूरी गतिसे काम कर रही होगी। तुम्हारा हिन्दीमें लिखा पत्र आज ही, जिस समय मैं यह पत्र बोलकर लिखवा रहा हूँ, मिला है। तुम्हारे अक्षरोंमें अभीतक काफी सुधारकी गुंजाइश है। बहरहाल, इतनी देर बाद तुम्हारा पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। जेलमें भेजे गये पत्रोंमें से कोई भी पत्र मुझे नहीं मिला।

हो सकता है, अब वे पत्र मुझे मिल जाये। मै आज तुम्हे लम्बा पत्र नही लिख पाऊँगा।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य: नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय।

४३२. पत्र: एफ० मेरी बारको

२४ अगस्त, १९३३

चि० मेरी,

उस दिन ज्यादा बातचीत नही हो पाई और अलग होना पड़ा, इसका मुझे खेद रहा। फिर इतने दिन तुम्हें पत्र न लिख पानेका भी मुझे दुःख है। मै अब फिर लिखने योग्य हो गया हूँ, और अधिक-से-अधिक जितने पत्र बोलकर लिखवा सकता हूँ, लिखवा रहा हूँ। आशा है कि तुम्हे वहाँ बिलकुल घर-जैसा लग रहा होगा। मैं चाहता हूँ कि तुम वर्धा और वहाँके लोगोंके अपने अनुभवके बारेमे सब-कुछ मुझे लिखो। मेरे बारेमे समाचार तो तुम्हें कई सूत्रोंसे प्राप्त हुए होंगे। इसलिए मुझे कुछ कहनेकी जरूरत नहीं है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६००५) से। सी० डब्ल्यू० ३३३१ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार।

४३३. पत्र: मनु गांधीको

२४ अगस्त, १९३३

चि० मनु,

मुझे पत्र नियमपूर्वक लिखती रहना। वहाँ स्वास्थ्य अच्छा रहता होगा और खूब मजेसे रहती होगी। पढ़ाईका क्या बन्दोबस्त है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १५२५) से; सौजन्य: मनुबहन एस० मशरूवाला।

४३४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सरदार वल्लभभाईके लिए
सुपरिंटेंडेंटकी कृपापूर्ण अनुमतिसे[1]

२४ अगस्त, १९३३

भाई वल्लभभाई,

मैं खुद न लिख सकूँ ऐसी मेरी तबीयत नहीं है। मगर आज के दिन यों ही चला रहा हूँ। आपको सब-कुछ पढ़नेको मिला होगा, इसलिए सब समाचार मालूम ही होंगे। यह सब स्वप्नवत् हो गया है। मगर ईश्वर जैसे रखेगा वैसे रहेंगे। हमें तो एक-एक कदम उठाकर चलना है। इसलिए चिन्ता किस बात की? वैसे इस बार यह नहीं लगता कि मार्ग जल्दीसे सूझ जायेगा। मै कह सकता हूँ कि यरवदा मन्दिरमें तो मैं आपकी माला जपता था। इस वियोगके बारेमें सोचा ही नहीं था। रोज अनेक अवसरोंपर हम आपको बहुत याद करते थे। आपके हुक्मोंका अभाव खटकता था।

अच्छी-से-अच्छी [खाली] बोतलें[2] देखकर भेजी थीं। वे सही-सलामत पहुँची होंगी। दूसरा सामान अलग बाँध दिया था। और पुस्तकें या चीजें चाहिए तो लिखें। मेरे साथ मथुरादास हैं। चन्द्रशंकर, बा, मीराबहन, नैयर[3] रात-दिन साथ रहते हैं। ब्रजकृष्ण सारा दिन यहाँ बिताता है। आज गणेशचतुर्थी है, इसलिए आनन्द भी है। काका यहीं हैं। जमनालालका अभी तार आया है कि सेवाके लिए छोटेलाल को भेजा है। मगर मुझमें तो बड़ी तेजीसे शक्ति आ जायेगी। अपने-आप बिस्तरमें बैठ जानेमें कठिनाई नहीं होती। आज काफी फल खाये हैं। चौलाईका रस भी पिया है। इसलिए शक्ति काफी है। डॉक्टर गिल्डर[4] और डॉक्टर पटेल[5] शरीरकी परीक्षा कर गये हैं। उन्हें कोई दोष नहीं दिखा, इसलिए मेरे बारेमें जरा भी चिन्ता न करे। आपकी नाकका क्या हुआ? उसकी क्या हालत है? जो-कुछ लिखा जा

१. यह साधन-सूत्रमें अंग्रेजीमें है। सरदार पटेल जब नासिक जेलमें थे, तब गांधीजी सरदार पटेलको लिखे अपने सब पत्रोंमें यह लिखा करते थे।

२. शहद आदिकी खाली बोतलें, जिनके शहदका उपयोग गांधीजी और सरदार वल्लभभाई पटेल यरवदा जेलमें करते थे।

३. प्यारेलाल नैयर।

४. डॉ० डी० डी० गिल्डर, हृदयरोग-विशेषज्ञ, बादमें बम्बईके स्वास्थ्य-मंत्री।

५. डॉ० पी० टी० पटेल।

सके लिखिए। अभी थोड़े दिन तो पर्णकुटीमें ही हूँ, बादमें कुछ दिन बम्बई रहनेका विचार है। आगेकी राम जाने।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
नासिक

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०-२

४३५. पत्र : विद्या हिंगोरानीको

२४ अगस्त, १९३३

चि० विद्या,

तुम्हारे हाल आनंदसे मिले हैं। मेरी उम्मीद हैं कि तुम्हारा शरीर अच्छा होगा और मानसिक स्थिति भी अच्छी होगी। महादेवकी प्रकृति अच्छी रहती होगी। और सब तुम्हारे साथ कैसे रहते है? मुझे विगतके साथ पत्र लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनंद टी० हिंगोरानी।

४३६. पत्र : जमनालाल बजाजको

पूना,
[२४ अगस्त, १९३३ के पश्चात्][1]

चि० जमनालाल,

तुम्हारा तार मिला। तुम शायद यह मान रहे हो कि मुझे किसी बड़ी सार-सँभालकी जरूरत पड़ती होगी। बात यह है कि खानेके सिवा और कोई सावधानी रखनेका सवाल नहीं है। इस बार शक्ति क्षीण नहीं हुई है। आठ दिनमें हो भी नहीं सकती थी। जितनी गई है, उतनी तुरन्त आ जायेगी। इसलिए छोटेलालको भेजनेकी कोई जरूरत नहीं थी, पर वह आ ही रहा है तो उससे उसको बड़ा सन्तोष होगा, यही सोचकर मुझे सन्तोष मिलेगा। इसके सिवा मीराबहन मेरे पास हैं, यह तो तुम जानते हो। ब्रजकृष्ण तो कहीं भी हो, आकर हाजिर हो ही जाता है।

१. छोटेलालके बारेमें दिये गये तारकी प्राप्तिके उल्लेखसे; देखिए पृ० ३८९। साधन-सूत्रके अनुसार पत्र २६ अगस्त, १९३३ को मिला था।

इसलिए वह भी है ही। दूसरी मदद भी बहुत मिल जाती है। तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी। जो नये लोग आये हैं, उनके जो अनुभव तुम्हें मिले हों, लिखना। तुम्हारा केस पूरा हुआ? रामदासका क्या हाल है? केशू कैसा है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

छोटेलाल अभी-अभी आ गया।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२२) से।

४३७. पत्र : मैडलिन रोलाँको[1]

२५ अगस्त, १९३३

प्रिय बहन,

आपको और ऋषि[2] को मात्र अपना स्नेह देनेके लिए ये दो शब्द लिख रहा हूँ। अभी हालमें हुई आश्चर्यजनक घटना[3] के विषयमें तुम्हें मीरा सब-कुछ बतायेगी। आशा करता हूँ, आप दोनों स्वस्थ और प्रसन्न हैं। एन्ड्रयूज भी आजकल यहीं हैं।

सदैव आपका,

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०५८२) से; सौजन्य : मैडलिन रोलाँ।

४३८. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

२५ अगस्त, १९३३

गांधीजी ने, जो बहुत स्वस्थ दिखाई दे रहे थे, लेडी ठाकरसीके बंगलेके विशाल हॉलमें दिनके १० बजे पत्रकारोंके एक मण्डलका स्वागत किया।

गांधीजी बहुत स्पष्ट और अकसर भावावेशमें बोलते रहे। परन्तु, लगभग एक घंटेके बाद, जब भेंट समाप्त होनेको थी, थकावटके चिह्न दिखाई देने लगे और श्रीमती नायडूके सुझावपर पत्र-प्रतिनिधियोंने आगे और प्रश्न पूछने बन्द कर दिये।

१. मूल पत्र उपलब्ध नहीं है। यह उसके फ्रेंच अनुवादके फिरसे अंग्रेजीमें रूपान्तरका अनुवाद है।

२. रोमाँ रोलाँ।

३. आशय उपवास और अप्रत्याशित रिहाईसे है।

गांधीजी ने अपनी बात शुरू करनेसे पहले सिविल सर्जन कर्नल कैंडी उनके स्टाफ और परिचारिकाओंको इस बातके लिए धन्यवाद दिया कि उन्होंने उनकी देखभाल बड़े ध्यानसे की। उन्होंने यरवदा जेलके सुपरिंटेंडेंट लैफ्टिनेंट कर्नल मार्टिन और उनके स्टाफको भी, जिनका व्यवहार उपवासकी आरम्भिक अवस्थाओंमें उनके प्रति कृपापूर्ण रहा था, धन्यवाद दिया। गांधीजी ने कहा:

मैं चाहूँगा कि जनताको मेरी हालतके बारेमें तसल्ली दे दी जाये। सामान्यत: एक हफ्तेका उपवास मेरे लिए कुछ भी नहीं है। पर क्योंकि मैं पानीकी अपेक्षित मात्रा नहीं ले सका, इसलिए इस बार इस उपवासके दौरान मुझे भयंकर शारीरिक कष्ट हुआ। परन्तु मैं आज उपवास तोड़नेके दूसरे दिन ही यह महसूस करता हूँ कि मैं थोड़े ही समयमें अपनी खोई हुई शक्ति फिरसे प्राप्त कर लूँगा। इसलिए किसी प्रकारकी चिन्ताका कोई कारण नहीं होना चाहिए।

आगे बोलते हुए गांधीजी ने भविष्यकी चर्चा की और कहा:

इस बार मेरी रिहाई बिलकुल अप्रत्याशित रूपसे हुई है। इसलिए मैं स्वीकार करता हूँ कि स्वास्थ्य-लाभ कर चुकनेके उपरान्त मेरी गतिविधि क्या होगी, इसका मुझे अभी कोई अनुमान नहीं है। इसलिए जो बात मैंने अकसर पहले भी कही है, उसे ही मैं ज्यादा जोर देकर कहूँगा — मैं प्रकाश और निर्देशन के लिए लगातार प्रार्थना करता रहूँगा।

मैं जेल जाने या सम्भवत: फिरसे उपवास करनेकी अपेक्षा ज्यादा उत्सुक तो समझौतेकी सम्भावनाके लिए रहूँगा। इसलिए इस अप्रत्याशित रिहाईका उपयोग मैं फिरसे सुलहका मार्ग खोजनेके लिए करूँगा।

बहरहाल, मैं एक बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। यह रिहाई मेरे लिए प्रसन्नताकी बात नहीं है। सम्भवत यह मेरे लिए शर्मकी बात है कि मैं अपने साथियोंको जेल ले गया और स्वयं उपवास रखकर बाहर आ गया। उपवासके बारेमें सरकारके वक्तव्यका पूरी तरह अध्ययन करनेका मुझे वक्त नहीं मिला है। उपवासके दौरान और उससे कुछ दिन पहले इसके बारेमें समाचारपत्रोंमें जो समाचार छपे उनसे मैं वंचित ही रहा।[1]

एक प्रश्नका उत्तर देते हुए गांधीजी ने इस बातपर और ज्यादा प्रकाश डाला और कहा कि इस दौरान उन्हें 'टाइम्स ऑफ इंडिया' दिया जाता था, किन्तु उसमें उपवाससे सम्बन्धित अंश कटे हुए होते थे।[2] गांधीजी ने आगे कहा:

१. **टाइम्स ऑफ इंडिया,** २६-८-१९३३ में लिखा था कि २४ अगस्तको शिमलामें विधानसभामें गांधीजी के उपवाससे सम्बन्धित प्रश्नोंका उत्तर देते हुए यह कहा गया था कि "गांधीको छोड़नेका निर्णय" इसलिए लिया गया कि "यह स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि गांधीजी ने आत्महत्या करनेका निश्चय कर लिया है। सरकार उन्हें जेलमें मरने देना नहीं चाहती थी और उनके जीवनको बचानेके लिए उन्हें जबरदस्ती खिलानेका आदेश देनेको भी वह तैयार नहीं थी।"

२. देखिए "पत्र: आर० वी० मार्टिनको", पृ० ३८१।

इसलिए उपवासके बारेमे समाचारपत्रोमें जो-कुछ कहा गया, वह सब मै नही जानता। रही-सही ताकतके बलपर कल मै जो-कुछ पढ़ सका उससे पता चलता है कि सरकारने मेरे साथ न्याय नही किया है।

यह याद रखना चाहिए कि पिछले सितम्बरमे यरवदामे मैने जब उपवास रखा था तब सरकारने मुझे लोगोंसे मिलने, भेंट देने और अस्पृश्यता-विरोधी कार्यके मामलेमे पत्र लिखनेकी पूरी सुविधाएँ दी थीं — इसलिए नही कि तब मै राजनीतिक कैदी था, परन्तु इसलिए कि सरकार ऐसा मानती थी कि यदि वह मुझे अपनी देखरेखमें रखती है तो मुझे ये सुविधाएँ देना न्यायोचित है। इसलिए यदि सरकारने कोई गलती की तो उस पहले उपवासके अवसरपर की थी। यदि सरकार चाहती तो, जैसाकि उसने २१ दिनके उपवासके दौरान या इस बार किया, उस वक्त भी मुझे बिना किसी शर्त रिहा कर सकती थी। जेलके अनुशासनका प्रश्न उस वक्त भी उतना ही महत्त्वपूर्ण था जितना कि अब है। परन्तु तब उसने ऐसा नही किया। सरकारने इस नीतिको ज्यादा अच्छा समझा कि वह मुझे अपनी देखरेखमें रखकर वे सारी सुविधाएँ दे जिनका मैंने उल्लेख किया है।

पूना-समझौता हो जानेके बाद, दो दिनके अन्दर ही हरिजन-कार्य करनेके लिए दी गई सुविधाएँ अचानक बन्द कर दी गई। तब मैंने तत्काल सादर अपना विरोध प्रकट किया। परन्तु जब उस विरोधकी कोई सन्तोषजनक प्रतिक्रिया नही हुई तो मुझे मजबूर होकर इस आशयका पत्र[1] भेजना पडा कि जबतक सरकार मुझे बिना किसी प्रतिबन्ध व रोकटोकके हरिजन-कार्य करनेकी सुविधा नही देती, मैं जीवनको बचाये रखने योग्य नही मानूँगा। उसके उत्तरमे गत ३ नवम्बरको मुझे निम्नलिखित आदेश[2] दिये गये थे।

ये आदेश मेरी अपेक्षाओंको पूरी तरह ध्यानमे रखते हुए और सितम्बरमें उनसे क्या अभिप्रेत था इसे पूरी तरह जानते हुए पास किये गये थे।

मै एक बार फिर कहता हूँ कि जब सरकारने २१ दिनके उपवासके बाद मुझे फिर कैद किया तो, चाहे सरकारने मुझे राजनीतिक कैदी माना हो या कोई और, उसे बिना किसी बाधाके हरिजन-कार्य करनेकी मेरी प्रार्थनाका सामना करना पड़ा। मेरी रायमे वर्गीकरणका इस प्रश्नसे कोई सम्बन्ध नही है। सितम्बरमे, नवम्बरमें और आज भी एकमात्र प्रश्न यही है कि यदि मेरा जीवन है तो मुझे हरिजन-कार्य भी करना है; और यदि जेलमे हरिजन-कार्य न करने दिया जाये तो मेरी मृत्यु निश्चित है। जबतक मैं जीवित हूँ यही प्रश्न मेरे सामने, सरकारके सामने और जनताके सामने रहेगा। यदि मेरा इस तरह सोचना गलत हो कि चाहे मैं जेलके अन्दर रहूँ या बाहर मुझे अस्पृश्यता-विरोधी कार्यक्रम जारी रखनेकी, जिसे मै अपना पवित्र दायित्व मानता हूँ, पूरी आजादी होनी चाहिए, तो मेरा उपवास धृष्टतापूर्ण

१. देखिए खण्ड ५१ पृ० ३०८-९।

२. देखिए खण्ड ५१, पृ० ३५६ की पाद-टिप्पणी संख्या १।

समझा जाना चाहिए और सरकार या जनताको इसे कोई महत्त्व नही देना चाहिए। परन्तु यदि मैं सही हूँ, तो मेरा उपवास बलिदानकी मुहर माना जाना चाहिए।

एक बात और है। सरकारकी ओरसे यह कहा गया है कि २१ दिनके उपवास के कारण जब मुझे रिहा कर दिया गया था, तो मैंने हरिजन-कार्यकी निस्बत राजनीतिक कार्यकी ओर ज्यादा ध्यान दिया था। मै कल्पना नहीं कर मकता कि तथ्यों को, जो अब सिद्ध किये जा सकते हैं, इससे ज्यादा भी तोड़ा-मरोड़ा जा सकता है। परन्तु मैं कुछ प्रमुख दृष्टान्त ही दूँगा। पूरे २१ दिन और उसके बादके दिनोंमे, जब मैं कुछ भी करनेमें असमर्थ था, मैं केवल प्रार्थना और चिन्तन ही कर सका था और लिखने या बात करनेका कोई काम नही कर सका था। और मै कह सकता हूँ कि इस दौरान सिवाय ईश्वर और ईश्वरके बच्चों — हरिजनोंके अलावा, मैंने और कोई बात नहीं सोची। जब मैं लोगोंसे लगातार वार्तालाप करनेकी स्थितिमें हुआ, तब पहला काम मैंने यही किया कि इसी हॉलमें बिस्तरपर लेटे हुए हरिजन-कार्यकर्त्ताओंकी सभामे भाषण[1] दिया। जब मैं आम जनताके लिए कुछ लिखनेका कार्य करनेमें समर्थ हुआ, तो मेरा पहला लेख[2] 'हरिजन' के लिए था।

यह सच है कि जब मैं पूनामें था तो मैंने अनौपचारिक सम्मेलन[3] में भाग लिया और सविनय अवज्ञाके विषयपर राजनीतिक कार्यकर्त्ताओंसे कई बार बातचीत की। उसमें कोई रहस्य नहीं था और उसकी मुझे कोई शर्म भी नहीं है। सविनय अवज्ञा मेरे जीवनका अभिन्न अग है। परन्तु तथ्य यह है कि मेरे समयका अधिकांश भाग सविनय अवज्ञाके काममे नही लगा। वास्तविकता यह है कि सम्मेलनको दी गई सलाहको ध्यानमे रखते हुए यह जरूरी भी नही था। लोगोंका यह विचार हो सकता है कि जब मैं अहमदाबाद गया, तो आश्रमके त्यागके काममें मेरा बहुत ज्यादा वक्त लगा होगा। परन्तु मैं फिर यह कह सकता हूँ कि मेरे वक्तका बहुत ज्यादा अंश हरिजन-सेवामें ही लगा।

प्रार्थनाके समय हर बार हजारों लोग इकट्ठे हो जाते थे और यदि मै कभी उनके आगे भाषण देता था तो वह भाषण अस्पृश्यता-विरोधपर ही होता था। हर बार उन सभाओंमें मैं पैसा इकट्ठा करता था और लोग प्राय: उदारतासे दान देते थे। उसका एक-एक पैसा हरिजन-निधिमें ही गया। यदि मुझे चुनौती दी जाये तो मैं इस तरहके कई उदाहरण गिना सकता हूँ। इसलिए, मेरी रायमें, यह बात किसी भी व्यक्तिको और किसी सरकारी अधिकारीको तो बिलकुल ही शोभा नही देती कि वह मुझपर ऐसा काम करनेका आरोप लगाये जो मैंने कभी नही किया, और उसके बाद उस प्रक्रियाको उचित ठहराये जो मेरे-जैसे सीधे-सादे आदमीकी नजरमे स्पष्ट और गम्भीर प्रतिज्ञा-भंग है — उस प्रतिज्ञाको तोड़ना है जो अपनी हिरासतमे रखे कैदीके साथ सोच-समझकर की गई थी।

१. देखिए पृ० २४८-९।
२. देखिए पृ० २६६-७०।
३. देखिए पृ० २७४-५ और २७६-८।

जब गांधीजी का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया गया कि गृहमन्त्रीने विधान सभामें यह वक्तव्य दिया है कि गांधीजी दो असंगत नीतियोंको एक-साथ मिलाना चाहते हैं, वे जान-बूझकर कैदी बनना चाहते है और साधारण व्यक्तिकी तरह सामाजिक कार्य करनेकी पूरी स्वतन्त्रता भी चाहते हैं, तो गांधीजी ने उत्तर दिया :

मैं नहीं समझता कि इसमें कुछ भी असंगति है। यदि मैंने जेलकी दीवारोके अन्दरसे सविनय अवज्ञा चलानेकी स्वतन्त्रताकी माँग की होती, तो मेरी माँगमे असंगति होती।

महात्मा गांधीसे तब यह पूछा गया कि क्या उनकी रायमे पिछले कुछ महीनोंके दौरान किये गये राजनीतिक आन्दोलनसे कुछ लाभ हुआ है।[1]

गांधीजी ने उत्तर दिया कि वह इस प्रश्नका उत्तर नहीं दे सकते, क्योंकि लोगोंपर उनके आन्दोलनकी क्या प्रतिक्रिया हुई है इसका अनुमान लगानेका उन्हें अवसर नहीं मिला है। परन्तु उन्होंने कहा कि उनका यह दृढ़ विश्वास है कि इस आन्दोलनसे, जो अन्यायका प्रतिरोध करनेके लिए लोगोंके हाथोंमें अत्यन्त पवित्र शस्त्र है, लोगोंका हित ही हुआ होगा।

यह पूछे जानेपर कि सरकार द्वारा दी गई रियायतें क्या काफी नहीं हैं, गांधीजी ने नहीं में उत्तर दिया और कहा कि अस्पृश्यता-विरोधी कार्यके सम्बन्धमें अभी बहुत काम किया जाना बाकी है। इसका राजनीतिक अंश अत्यन्त कम है। सुधारकोंके समक्ष यह काम है कि हिन्दुओंका हृदय-परिवर्तन किया जाये।

गांधीजी ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा कि उन्हें इस बातसे जो दुःख हुआ है उसका वे वर्णन नहीं कर सकते — इस किस्मके मामलेमें, जिसके बारेमें पिछले नवम्बरमें सरकारके आदेश इतने स्पष्ट थे, उन्हीं अधिकारियोंने पहले तो उन्हें उपवास करनेके लिए बाध्य किया और फिर यह कहा कि मैं डिक्टेटर बनना चाहता हूँ। यह अत्यन्त निर्दय आघात है।

यह पूछे जानेपर कि क्या उदाहरणके तौरपर श्री राजगोपालाचारी, जो पूना-समझौतेमें साथ थे और अब जेलमें हैं, उनकी [गांधीजी की] तरह हरिजन-कार्य करनेकी अनुमति नहीं माँग सकते, गांधीजी ने 'नहीं' में उत्तर दिया और कहा :

श्री राजगोपालाचारीका प्रतिरोध करनेमें मैं सरकारका साथ दूँगा, क्योंकि श्री राजगोपालाचारी गोलमेज परिषदमें उपस्थित नहीं थे। वहाँ मै श्री राजगोपालाचारी और दूसरे कांग्रेसजनोंके एकमात्र प्रतिनिधिके रूपमे उपस्थित था और मैंने यह घोषणा[2] की थी कि मैं अपना जीवन बलिदान करके भी दलित वर्गोंके लिए अलग निर्वाचनका प्रतिरोध करूँगा। इसलिए यह मेरा पवित्र कर्त्तव्य हो जाता है कि मै जेलके भीतरसे भी इस आन्दोलनको चलाता रहूँ।

१. यह और अगला अनुच्छेद **ट्रिब्यून**, २७-८-१९३३ से लिया गया है।
२. देखिए खण्ड ४८, पृ० ३३१।

राजनीतिक स्थितिके बारेमे गांधीजी से पूछा गया कि सुलह-शान्तिके लिए किये जानेवाले उनके प्रयत्नोंका रूप क्या होगा। गांधीजी ने उत्तर दिया कि वह क्या होगा यह फिलहाल उन्हें मालूम नहीं है। वह अभी भविष्यके गर्भमें है। इस वक्त तो उनके लिए गहन अन्धकारके सिवाय और कुछ नहीं है। परन्तु यदि सरकारकी इच्छा सुलह-शान्तिकी हो — और वे यह जानते हैं कि कांग्रेस सुलह-शान्ति चाहती है — तो सुलह-शान्ति हो सकती है। सारे सूत्र आज उनके हाथमे नहीं है, इसलिए सुलह-शान्ति किन शर्तोंपर हो सकती है वह कुछ नहीं कह सकते।

यह पूछे जानेपर कि क्या वे वायसरायको फिर भेंटके लिए कहेंगे, उन्होंने उत्तर दिया कि वह निश्चित रूपसे कुछ नहीं कह सकते, परन्तु यह सम्भव है।

गांधीजी ने अन्तमे कहा कि उन्हें आशा है कि एक हफ्ते या कुछ और दिनोंमें उनकी सेहत पहले-जैसी हो जायेगी। अब वह दूधका आहार ले रहे है और उन्हें कोई पीड़ा या कष्ट अनुभव नहीं होता।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-८-१९३३; **ट्रिब्यून**, २७-८-१९३३ भी।

४३९. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पर्णकुटी, पूना,
२६ अगस्त, १९३३

चि० अमला,

अब जेलसे सब पत्र मुझे मिल गये है।

हाँ, तुम जब चाहो मुझे लिख सकती हो, सिर्फ इतना करना कि दूसरा जो व्यक्ति मुझे लिख रहा हो उसे पत्र दे देना, ताकि डाक खर्च बचे। नियमानुसार, वर्धासे मुझे रोज डाक आती रहती है। अत: तुम्हारे लिए सबसे ज्यादा ठीक यही होगा कि तुम अपने पत्र द्वारकानाथजी[1] को या लक्ष्मीबहन[2] को दे दिया करो।

जब तुम कहती हो कि 'गीता' तुम रोज पढती हो तो मैं सोचता हूँ कि तुम्हारे ऐसा कहनेका क्या अर्थ है। तुम 'गीता' को समझने और उसके अनुरूप आचरण करनेके खयालसे पढो। तुम्हें अब पिछली बाते भूल जाना चाहिए, जो सामने है उस-पर ध्यान देना चाहिए। तुमने कैसा आचरण किया है, इस बातकी बिलकुल चिन्ता न करो। इस बारेमें मै सब-कुछ भूल चुका हूँ और मै समझता हूँ कि वैसा आचरण अत्यधिक प्रेमके कारण हुआ। अनैतिकताकी उसमे कोई बात नहीं थी।

१. द्वारकानाथ हरकरे, एक आश्रमवासी।
२. लक्ष्मीबहन ना० खरे।

मीराके नाम तुम्हारा पत्र नही मिला है। हरिजनोमे सच्चा कार्य करनेके लिए विनोबाका तुमसे भोजन बनाना, हिन्दी और रूईकी सभी प्रक्रियाओंको अच्छी तरह सीखनेके लिए कहना ठीक ही है।

आशा है कि तुम बिलकुल ठीक और तन्दुरुस्त होगी।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

४४०. पत्र : रमाबहन जोशीको

२६ अगस्त, १९३३

चि० रमा,

तुम्हारा पत्र और निर्मलाका भी पत्र मिल गया है। निर्मलाको अलग पत्र नही लिख रहा। तुम चिन्तित नही हो, इससे मुझे खुशी हुई है। वीणाबहनने तुम्हारे स्वास्थ्यके बारेमे खबर दी है। धीरूने भावनगरसे पत्र लिखा है। लगता है, वह मजेमे है। इस बार छगनलालसे मिल ही नही पाया। इस बार तो सारा रग ही बदला हुआ था। किसीको भी पत्र लिखनेकी मुझे अनुमति नही थी। मेरा स्वास्थ्य सुधरता जा रहा है। शक्ति बढ़ती जा रही है। छगनलालको थाना ले गये हैं। वहाँसे कोई पत्र मिला हो तो मुझे लिखना। विमु[1] का कोई समाचार हो तो लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५६) से।

१. रमाबहन जोशीकी पुत्री।

४४१. पत्र : मीठूबहन पेटिटको

२६ अगस्त, १९३३

चि० मीठूबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरी चिन्ता बिलकुल न करना। शक्ति बराबर आती जा रही है। दूध ले सकता हूँ।

आशा है, तुम्हारी तबीयत ठीक रहती होगी। तुम्हारे कामका तो पूछना ही क्या। वह तो चल ही रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मीठूबहन पेटिट
कोलाबा, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७०५) से।

४४२. वह जैसा नचायेगा वैसा नाचूँगा

ईश्वरकी लीला कोई नहीं जान पाया। मैंने स्वप्नमे भी नही सोचा था कि अपने इक्कीस दिनके उपवासके बाद तीन महीनेके भीतर ही दूसरा उपवास करना पड़ेगा और उस उपवासके परिणामस्वरूप मुझे जेलसे बाहर आना पड़ेगा। इस लीलामें ईश्वरकी मर्जी क्या रही होगी, यह कौन जान सकता है। मैं तो नहीं जानता। लेकिन मैं इतना जरूर जानता हूँ कि मै जेलसे बाहर होऊँ या जेलके अन्दर, अपने विचार, वाणी और व्यवहारसे अस्पृश्यताका मैल भारतसे धो-निकालनेका जितना भी प्रयत्न मैं कर सकता हूँ उतना अवश्य करूँगा। अपने इस प्रयत्नमें जब मैंने बाधा डाली जाती अनुभव की तो तत्काल अनशन कर दिया। इतने महँगे दामों खरीदी हुई वस्तु मैं सहज ही हाथसे नहीं जाने दूँगा। किन्तु मै कोई प्रयत्न कर पाऊँगा, यह तो ईश्वर ही जानता है। वह जैसा नचायेगा मैं वैसा ही नाचूँगा। जिस रास्ते चलायेगा उसीपर चलूँगा। मुझे पूर्ण आशा है कि सभी भाई-बहन इस प्रयत्नमें मेरी सहायता करेंगे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २७-८-१९३३

४४३. पत्र : विट्ठलदास वी० जेराजाणीको[1]

२७ अगस्त, १९३३

प्रिय विट्ठलदास,

आप खादीपर मुझसे सन्देश चाहते हैं। मैं क्या सन्देश भेजूँ? जब मैं सुनता हूँ कि खादी और चरखेके प्रति लोगोंका प्रेम घट रहा है तो इनके प्रति मेरा प्रेम और बढ़ जाता है।

मोहनदास गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७८४) से।

४४४. पत्र : गुलाब ए० शाहको

२७ अगस्त, १९३३

चि० गुलाब,

तू घबराती तो नहीं होगी। मुझे नियमपूर्वक पत्र लिखती रहना। दैनन्दिनी लिखती है न? किसीसे बहनापा हुआ है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७३६) से।

१. यह **बॉम्बे क्रॉनिकल**, १६-९-१९३३ में, "महात्माजी का सन्देश" शीर्षकसे निम्नलिखित टिप्पणीके साथ प्रकाशित हुआ था: "अखिल भारतीय चरखा संघके एजेंट श्रीयुत जेराजाणीने गांधी जयंतीके विशेष अवसरपर महात्मा गांधीसे सन्देश देनेके लिए निवेदन किया था। यह उन्होंने गुजरातीमें भेजा था जिसका नीचे अनुवाद दिया जा रहा है।"

४४५. पत्र : मनु गांधीको

२७ अगस्त, १९३३

चि० मनुड़ी,

तुझे अब ज्वर बिलकुल नहीं होता होगा और मजेसे रहती होगी। मुझे ब्यौरेवार पत्र लिखना। अपना कार्यक्रम बताना।

बा मजेमे है। प्रभावतीबहन आज यहाँ आई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती की नकल (सी० डब्ल्यू० १५२६) से; सौजन्य: मनुबहन एस० मशरूवाला।

४४६. पत्र : हीरालाल शर्माको

२७ अगस्त, १९३३

भाई शर्मा,

दस दिनके बाद अवश्य आइये। मैं कहाँ हूंगा उसका पता नहि है। अखबारमे देखोगे। ठहरनेका अलग प्रबन्ध कर लेना। तुमारी तकलीफे दूर हुई होगी।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष (१९३२–४८), पृ० ५२ और ५३ के बीचके अनुचित्रसे।

४४७. पत्र : जमनालाल बजाजको

२८ अगस्त, १९३३

चि० जमनालाल,

मुझमें ताकत ठीक आती जा रही है। ज्ञानसे मिलनेकी तीव्र इच्छा है। वह मुझे मिल जाये तो अच्छा हो। उसका पता लिखना।

कमलाको तो सुन्दर लाभ हुआ लगता है। महामारीका भय न रखकर अभी यहीं रहनेकी सलाह जानकीबहनको दे दी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२२) से।

४४८. पत्र : डॉ० मनोरमाबाई थत्तेको[1]

२९ अगस्त, १९३३

केवल अपने गुण लेकर जाओ और उन देशोंमें, जहाँ तुम जाओ, जो अच्छा हो केवल वही लेकर आओ। ईश्वर तुम्हें सुखी रखे और तुमको सेवाका अधिक उपयुक्त साधन बनाये।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६८०) से।

४४९. तार : जमनालाल बजाजको

पूना,
३० अगस्त, १९३३

जमनालाल बजाज
वर्धागंज

वर्धा जानेको उत्सुक हूँ लेकिन सितम्बरके अन्तिम सप्ताहसे पहले पहुँचना सम्भव नहीं।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ११४

४५०. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

३० अगस्त, १९३३

प्रिय भाई,

मैं आपके पत्रको बहुमूल्य मानता हूँ।[2]

आपने जो-कुछ कहा है, मैं उसका बुरा नहीं मानता। बल्कि आपने जो-कुछ कहा है, उसकी मैं सराहना करता हूँ। तथापि, इसके बाद मैं यह जरूर कहूँगा कि आपने सरकारके आदेशोंकी जो व्याख्या की है, उससे मैं बिलकुल असहमत हूँ। यदि आप सारा पत्र-व्यवहार देखेंगे तो सम्भवतः अपना विचार बदल देंगे। जान-बूझकर

१. यह पत्र श्रीमती थत्तेके इंग्लैंडके लिए रवाना होनेसे एक दिनपूर्व लिखा गया था।
२. २७ अगस्तका; देखिए परिशिष्ट १३।

किसीकी खास वकालत करनेकी मेरी आदत नहीं है। आपने शायद ध्यान नहीं दिया कि सरकारने "शर्तोकी दूसरी किस्त" का विचार अपने-आप छोड़ दिया है। इसके विपरीत, जिसेकि आप "पहली बार दी गई रियायत" कहते हैं, उसके बारेमें सरकारने कहा कि वह देना ही भूल थी; और इस भूलका सम्बन्ध गुणावगुणसे नहीं, उनकी अपनी सुविधासे था।

बहरहाल, मैं अपने वक्तव्यपर आपकी घोषणाके सम्बन्धमे आपसे झगड़ा नही करूँगा। परन्तु, यदि आप ध्यानसे सारे मसलेका अध्ययन करें तो मैं खुशीसे सारा पत्र-व्यवहार आपको भेज दूँगा। मुझे उम्मीद है कि आप स्वयं यह नहीं मानते कि मै केवल दोषारोपणके विचारसे सरकारपर दोष लगाना चाहूँगा या वह कार्य मुझे हरिजन-सुधारके कार्यसे भी ज्यादा प्रिय हो सकता है। मैं समझता हूँ कि मैं सही ढँगसे बातोंमें अन्तर देख सकता हूँ, और इसलिए मैं जानता हूँ कि सरकारका कब व्यवहार उचित या अनुचित होता है। परन्तु इस सबका इस मामलेसे कोई सम्बन्ध नहीं है। जो अब महत्त्वपूर्ण नहीं रहा, उसको लेकर मैंने इतना अधिक आपको यह बतानेकी दृष्टिसे लिखा कि आपने मुझपर जो आरोप लगाया है, मैं उसका दोषी नही हूँ।

अब मै आपके पत्रकी मुख्य बातपर आता हूँ। मै आपसे पूरी तरह सहमत हूँ कि मैं वर्तमान स्थितिमें संविधान बनानेके लिए बिलकुल अनुपयुक्त हूँ। मेरी रायमे अभी वह समय भी नही आया है। वह समय तभी आयेगा जब राष्ट्र उसके लिए उपयुक्त शक्ति अर्जित कर लेगा। इसलिए अभी मै खुशीसे कांग्रेससे हट जाऊँगा और कांग्रेसके बाहर सविनय अवज्ञा चलानेके काममे और हरिजन-कल्याण कार्यमें लग जाऊँगा। सवाल यह है कि यह काम किया कैसे जाये? क्या मैं यह काम कांग्रेससे अलग होकर कर सकता हूँ? अनौपचारिक सम्मेलनके अवसरपर भी मैं इसीके कारण परेशान था और यही सवाल अब भी मेरे सामने है। मैं प्रकाशकी खोजमें रहा हूँ। जैसे ही मुझमें फिरसे काफी ताकत आ जायेगी है, मैं कांग्रेसियोसे इस विषयमें कहूँगा। और यदि कांग्रेससे मेरा अलग होना सम्भव हुआ तो मैं खुशीसे अलग हो जाऊँगा। बहरहाल, मेरी धारणा यह है कि कांग्रेसकी विचारधारा नहीं बदली है। हालाँकि यह सही है कि कांग्रेसियोंमें से बहुत लोग परेशान हो चुके हैं, फिर भी बहुत कम लोग श्वेत-पत्रसे सहमत होंगे या बहुत कम लोग इसमें कुछ संशोधन करवानेका प्रयत्न करेंगे। वे तो आमूल परिवर्तन चाहते है। परन्तु किसी निर्णयपर पहुँचनेकी मुझे कोई जल्दी नहीं है। मैं आपको यह आश्वासन दे सकता हूँ कि जो कदम राष्ट्रके सर्वोत्तम हितमे हों, उन्हें उठानेमें मै किसी चीजको बाधक नही मान सकता। अपने-आपको मिटा देनेका कोई प्रश्न नहीं है। कर्त्तव्य-पालनको मैंने सदैव सुन्दर और आनन्ददायक माना है। फिर भी कर्त्तव्य क्या है, यह जानना बहुधा कठिन होता है।

आप मुझे छोड़ें नहीं, बल्कि मेरा निदेशन करते रहें। यदि आपका आनेको मन हो तो आनेमें भी संकोच न करें। मैं भी जब मुझे आपसे व्यक्तिगत सम्पर्क

और सतत विचार-विनिमयकी जरूरत महसूस होगी, आपको आनेके लिए कहनेमें संकोच नहीं करूँगा।

स्नेह।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

लैटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २६०-२

४५१. पत्र : मार्गरेट स्पीगल

३० अगस्त, १९३३

चि० अमला,

तुम्हारे पत्र मिले। जमनालालजी तुम्हें अच्छे लगे, इसकी मुझे खुशी है। तुम्हें उनकी बात माननी चाहिए और जैसा वे कहें वैसा करना चाहिए। तुम्हारी जो भी परिचर्या की जाये और जो तुम्हारे शरीरके लाभके लिए जरूरी हो, उसे कृतज्ञतापूर्वक करवा लो। आशा है कि तुम्हें अब अपने फोड़े-फुसियोंसे छुटकारा मिल गया होगा।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

४५२. पत्र : जमनालाल बजाजको

३० अगस्त, १९३३

चि० जमनालाल,

तुम्हारे तारका जवाब दिया है।[1] तुरन्त आना अच्छा तो बहुत लगता, पर आ नहीं सकता। बम्बई होकर आना ठीक लगता है। वहाँके वातावरणकी जानकारी प्राप्त करनी है। वहाँका हरिजन-कार्य भी कुछ मन्द-सा है। उसमें तेजी लाई जा सके तो लानी है।

मेरी तबीयत ठीक होती जा रही है। खुराक ठीक लेता हूँ। अपनी तबीयत सँभालना। नी० और अमलाके पत्र साथ हैं। लगता है, नी० थोड़ी अव्यवस्थित हुई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२३) से।

१. देखिए पृ० ४०१।

४५३. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

३१ अगस्त, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

तो तुम अपने समयसे पूर्व बाहर आ गये। आशा है कि तुम्हें मेरा तार मिला होगा। मैंने सोचा था कि माँ इलाहाबाद वापस जा रही है। मैं तुमसे आशा करता हूँ कि पूरे हाल लिखोगे।

इन्दु अकसर मेरे साथ रही है। वह आज शाम फिर आनेवाली है।

यदि हो सके तो हमें अवश्य शीघ्र मिलना चाहिए। यदि माँ की तबीयत खराब बनी रही, तब तो निश्चय ही तुम्हें वहाँ रुकना पड़ेगा। मैं तुमसे पूर्ण पत्रकी आशा करूँगा। उसे रजिस्ट्री द्वारा भेजना बेहतर होगा।

मैं खोई हुई ताकत धीरे-धीरे फिर हासिल कर रहा हूँ। मैं उपवासके विषयमे कुछ नहीं लिख रहा हूँ, क्योंकि मैं आशा करता हूँ कि तुम अब उसके विषयमें सब जानते होगे। अधिक मिलनेपर।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू कागजात, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

४५४. पत्र : तोताराम सनाढ्यको

पर्णकुटी, पूना,
३१ अगस्त, १९३३

भाई तोताराम,

तुम्हारा पत्र मिला है। आश्रमको बेहाल देखते हुए भी बरदास्त करना हमारा कर्त्तव्य है। यदि ईश्वर चाहता है तो उसी जगहका कबजा हम दुबारा लेंगे, और जो कुछ रहा होगा उसमें वास करेंगे। मेरी उम्मीद तो है कि आश्रमका कुछ-न-कुछ उपयोग हो जायगा। तुम्हारी और हरिप्रसादकी शरीरप्रकृति अच्छी होगी। मुझको शक्ति आ रही है। कोई चिंताका कारण नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५२८) से।

४५५. एच० के० हेल्सको लिखे पत्रका अंश

[३१ अगस्त, १९३३ के पश्चात्][1]

मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अपनेको नाहक कैद करवानेकी मुझे कोई इच्छा नहीं है। फिर भी यदि शान्तिकी खोज करते हुए गिरफ्तारी मेरे हिस्सेमें आती है, तो मैं उसे प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करूँगा।[2]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-९-१९३३

४५६. पत्र : अगाथा हैरिसनको

१ सितम्बर, १९३३

प्रिय अगाथा,

सी० एन्ड्रयूजने उसके नाम लिखे तुम्हारे पत्र मुझे भी दिखाये हैं। तुम्हें मैं यह पत्र केवल यह समझानेके विचारसे ही लिख रहा हूँ कि और ज्यादा काम कर सकनेके लिए काफी आराम जरूरी है। 'काल करे सो आज कर' वाली कहावतमें काफी सचाई है।

मुझे अपने शरीरके बारेमें या आशाके प्रतिकूल हुई अपनी रिहाईसे उत्पन्न परिस्थितिके बारेमें कुछ कहनेकी जरूरत नहीं है। मैं जानता हूँ कि दीनबन्धुने इस सबके बारेमें तुम्हें विस्तारसे लिख दिया है।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च:]

बेचारा महादेव! वह बेलगाँव जेलमें अब अकेला है। लेकिन इस अकेलेपनसे उसे लाभ होगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४६७) से।

१. श्री हेल्सके जिस पत्रका यह जवाब है वह ३१ अगस्त का था।

२. ब्रिटिश संसदके कंजर्वेटिव दलके सदस्य श्री हेल्सने लिखा था : "अपने जीवनकी सन्ध्यामें आपको चाहिए कि आप हर मूल्यपर जेलके बाहर ही रहें। आपका एक-एक घंटा बहुमूल्य है। अन्य किसी भी व्यक्तिके मुकाबलेमें आपका महीनों बन्दी रहना, वह भी ऐसे समयमें जब आपकी सलाह इतनी जरूरी है, मुझे तो पाप-जैसा लगता है।" उन्होंने पत्रके अन्तमें प्रार्थना की थी कि "इस बार यदि अपने लिए नहीं, तो अपने मित्रोंकी खातिर बन्दी होनेका लोभ संवरण कीजिए।"

४५७. पत्र : एडमंड और युवान प्रिवाको

१ सितम्बर, १९३३

प्रिय आनन्द और भक्ति,

यह पत्र तुम्हारे प्रेमपत्रकी प्राप्ति स्वीकार करनेके लिए और तुम्हें यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि मैं यथासम्भव स्वस्थ हूँ। शेष हाल तुम्हें मीराके पत्रसे मिलेगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७९६) से।

४५८. टिप्पणी

दोनोंमें भेद

दीनबन्धु एन्ड्रयूजने पिछले सप्ताह दक्षिण आफ्रिकाकी अस्पृश्यतापर लिखा था और वहाँ भी कैसे मन्दिर-प्रवेशका सवाल सामने है, इसपर प्रकाश डाला था। तथापि, इन दोनों जगहोंकी अस्पृश्यताओंमें जो अन्तर है वह ध्यान देने योग्य है। दक्षिण आफ्रिकामें यह रंगभेदपर आधारित है तथा न इसे धर्मकी मान्यता प्राप्त है न कानूनकी। भारतमें दुर्भाग्यवश हिन्दुओंकी बहुत बड़ी संख्याका दावा है कि इसे धार्मिक मान्यता प्राप्त है; और हम देखते हैं कि इसे कानूनी मान्यता भी प्राप्त है। इसलिए, भारतमें प्रचलित अस्पृश्यता दक्षिण आफ्रिकाकी अस्पृश्यतासे कहीं ज्यादा बदतर है। जहाँतक इससे पीड़ित जनोंका सवाल है, निस्सन्देह, दोनों देशोंमें [अस्पृश्यता] समान रूपसे हानिकर है। दोनों समान रूपसे निन्दनीय है। ऐसा लगता है कि भारतमें यह लड़ाई दक्षिण आफ्रिकासे कहीं ज्यादा कठिन होगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-९-१९३३

४५९. मन्दिर-प्रवेश बिल[1]

यह दुःखकी बात है कि विधानसभाने अस्पृश्यता-निवारक बिलको एक वर्षके लिए रोक दिया है, और सरकारने इस कदमका समर्थन किया है। पर जबतक विधि संहितासे अस्पृश्यता उड़ नहीं जाती, सुधारकोंको चैन नहीं लेना चाहिए। इस बीच ट्रस्टियों और मन्दिर जानेवालोंकी रायसे तथा मन्दिर-प्रवेशके सामान्य प्रचार द्वारा मन्दिरोंको खुलवानेका काम बराबर जारी रखना चाहिए।

मगर मुझे मालूम हुआ है कि आगरेके एक हरिजन सम्मेलनने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया है:[2]

> **. . . इस जाटव सम्मेलन . . . का यह विचार है कि इस [हरिजन] आन्दोलनकी कार्य-पद्धति सन्तोषजनक नहीं है। हरिजन-आन्दोलन आर्थिक और शिक्षा-सम्बन्धी समस्याओंकी अपेक्षा मन्दिर-प्रवेशपर अधिक जोर देता है। . . . इससे दासताकी मनोवृत्ति पैदा होगी . . .। अतः . . . आर्थिक और शिक्षा-सम्बन्धी उन्नतिपर अधिक जोर देना चाहिए। आन्दोलनके कार्यक्रममें अन्तर्जातीय विवाह और भोजको अवश्य स्थान मिलना चाहिए। . . . .**

आर्थिक और शिक्षा-सम्बन्धी उन्नति, निस्सन्देह, सवर्ण हिन्दुओंके सच्चे प्रायश्चित्तका मुख्य अंग होगी। यह उनके वचनोंकी सचाईकी कसौटी है। पर मन्दिरोंको खोले बिना पूरी उन्नति हो ही नहीं सकती। मन्दिरोंको खोल देना इस बातका प्रमाण होगा कि हरिजनोंकी धार्मिक समानता मान ली गई है। यह इस बातका निश्चित चिह्न होगा कि हरिजन, आजकी तरह हिन्दू-समाजसे अब और बहिष्कृत नहीं रहेंगे।

यह कहना असंगत है कि हजारों हरिजन मन्दिरोंमें जाना नहीं चाहते। इस बातकी यदि ठीक-ठीक जाँच की जाये, तो वस्तुस्थिति बिलकुल उल्टी ही निकलेगी। हजारों हरिजन मन्दिरोंमें जाना चाहते हैं, किन्तु प्रतिबन्धके वे इतने आदी हो गये हैं कि मन्दिरोंमें प्रवेशकी उनकी आशा-लता मुरझा गई है। उनका खयाल है कि अन्य हिन्दुओंके समान उनका मन्दिर-प्रवेश असम्भव है।

परन्तु हरिजन मन्दिर-प्रवेशका आश्वासन चाहें या न चाहें, मन्दिरोंके खुल जानेके बाद वे उन्हें प्रयोगमें लायें या न लाये, सवर्ण हिन्दुओंको तो अपना कर्त्तव्य पूरा करना ही है। उन्हें हरिजनोंके लिए मन्दिर पूजार्थ ठीक उन्हीं शर्तोंपर खोल देने चाहिए, जिन शर्तोंपर कि वे उनके खुदके लिए खुले हुए हैं। महाजन अगर

१. अस्पृश्यता-निवारक बिल सी० एस० रंगा अय्यर द्वारा २४ मार्च, १९३३ को पेश किया गया था; देखिए खण्ड ५३, पृ० १५ की पा० टि० संख्या १।

२. प्रस्तावके कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

कर्जेकी अदायगीकी परवाह नहीं करता या उसे भूल जाता है, तो देनदार कर्जा चुकानेके कर्त्तव्यसे मुक्त नहीं हो जाता।

जब मन्दिर हरिजनोंके लिए खुल जायेंगे, तो पाठशालाएँ, कुएँ और अन्य सुविधाएँ तो अपने-आप ही उन्हें मिल जायेंगी। यह समझना बिलकुल आसान है कि आर्थिक उन्नति हो जानेपर भी अस्पृश्यता बनी रह सकती है। त्रावणकोरके बहुत-से एजुआ लोगों और बंगालके नामशूद्रोंके पास अच्छी धन-दौलत है, फिर भी वे समाजसे बहिष्कृत ही समझे जाते हैं। आर्थिक स्थिति अच्छी होनेके कारण, उन्हें यह प्रतिबन्ध और भी अधिक खलता है। डॉक्टर अम्बेडकर उच्च शिक्षा-प्राप्त व्यक्ति हैं और उनकी आर्थिक स्थिति भी अच्छी है, फिर भी अस्पृश्यताके अभिशापसे उन्हें वेदना पहुँचती रहती है। अस्पृश्यताके अपमानसे उन्हें अधिक पीड़ा होना स्वाभाविक ही है। किन्तु यदि सवर्ण हिन्दू, ठीक अपने ही समान, हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेशकी अनुमति देकर अस्पृश्यताके अन्तकी घोषणा कर दें, तो यह कलंक उसी क्षण अपने-आप दूर हो जायेगा। तब यदि किसी हरिजनकी मन्दिरमें जानेकी इच्छा न होगी, तो उसके लिए मन्दिरमें जाना आवश्यक नहीं होगा। अन्य हरिजनोंके साथ-साथ, मन्दिरोंके खुल जानेकी घोषणा उसके लिए भी होगी। यह बात दासताके मूलोच्छेदन-जैसी ही होगी। हिन्दू-धर्ममें शुद्धिकी बहुत आवश्यकता है और यह शुद्धि आजसे बहुत पहले हो जानी चाहिए थी। अतः शुद्धिके मार्गपर हमारा यह बड़ा ही सुन्दर कार्य होगा।

मन्दिर-प्रवेशकी अनुमति तभी उपयोगी हो सकती है जब सवर्ण हिन्दू स्वेच्छासे यह बात मान जायें। इसलिए वह सवर्ण हिन्दुओंके सच्चे हृदय-परिवर्तनकी द्योतक होनी चाहिए। पर कानूनकी तो फिर भी जरूरत रहेगी, क्योंकि सवर्ण हिन्दुओंके मन्दिरोंमें हरिजनोंके प्रवेशकी कानूनन मनाही बताई जाती है। कानून विशाल हिन्दू समाजकी सम्मतिकी मोहर होगा। सवर्ण हिन्दुओंके सार्वजनिक विरोधके रहते हुए मैं, व्यक्तिगत रूपसे, कानून बनवाना नहीं चाहूँगा। पर मेरा विश्वास है कि सवर्ण हिन्दू सामूहिक रूप में हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके विरोधी नहीं हैं। इस विषयमें अगर ईमानदारीसे जनताका मत लिया जाये, तो मैं उसका परिणाम माननेको तैयार हूँ। हर हालतमें, सुधारकोंको समझ लेना चाहिए कि दिल्लीकी धारासभामें चाहे जो हो, मन्दिर-प्रवेश और तत्सम्बन्धी आवश्यक कानून बनवानेका आन्दोलन जारी रहना ही चाहिए।

ऊपर उद्धृत प्रस्तावमें कुछ और बातें भी हैं जिनकी व्याख्या या आलोचना आवश्यक है। पर उनपर 'हरिजन' के किसी और अंकमे विचार किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-९-१९३३

४६०. पत्र : डॉ० मोहम्मद आलमको

पर्णकुटी, पूना,
२ सितम्बर, १९३३

प्रिय डॉ० आलम,

ईश्वरकी लीला अपरम्पार है। वह अक्सर हमे चकित कर देता है। मुझे भान भी नहीं था कि मुझे इस ढंगसे रिहा होना पड़ेगा जैसाकि हुआ। अगला कदम क्या उठाना चाहिए, अब मै इसके लिए प्रकाश पानेकी प्रार्थना कर रहा हूँ। मुझे खेद है कि मैंने अभीतक आपका लेख नहीं पढ़ा है; लेकिन अब जरूर पढ़ूँगा। आपको अपनी जाँच अवश्य करवानी चाहिए और स्वस्थ बने रहनेका उपाय करना चाहिए। मैं खोई हुई ताकत फिरसे हासिल करनेकी दिशामें बराबर आगे बढ़ रहा हूँ।

बेगम आलमके लिए पत्र।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० एस० मोहम्मद आलम
१ लिटन रोड
लाहौर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१) से।

४६१. पत्र : न० रा० मलकानीको

२ सितम्बर, १९३३

प्रिय मलकानी,

तुम्हारा ११ तारीखका पत्र मिला।

लक्ष्मी[1] मुझे पहले ही बता चुकी थी कि किस प्रकार आप तथा आपकी पत्नी उसकी देखभाल कर रहे हैं। यह जानकर कि वह आपकी छत्रछायामें है, मैं पूरी तरह बेफिक्र हो गया। देखता हूँ कि अब वह वर्धा चली गई है। मेरी समझमें नहीं आया कि वह, इससे पहले कि देवदास दिल्लीसे हटाया जा सके, क्यों चली गई। उसके पहले पत्रसे मुझे विदित हुआ था कि वह तबतक दिल्ली रहेगी जबतक

१. च० राजगोपालाचारीकी बेटी और देवदास गांधीकी पत्नी।

देवदास दिल्लीमें है। मैंने राजाजी को पत्र लिखा है। मैं धैर्य रखनेके लिए उनका कहना समझ सकता हूँ क्योंकि उन्हें अपने बच्चोंके प्रति और विशेष रूपसे लड़कियोंके प्रति पिता-माता दोनों ही वनकर रहना है। मै यह भी जानता हूँ कि भीतर उनके मनमें शोभनीय शान्ति बनी रहती है।

मैं आशा करता हूँ कि वहाँका काम प्रगति कर रहा होगा। यदि तुम्हें हरिजन-कार्यके सम्बन्धमें अथवा 'हरिजन' के सम्पादनके बारेमें कोई सुझाव देने हों तो जब तक मै उन्हें पा सकनेकी स्थितिमें हूँ, भेजनेमें संकोच मत करना।

स्नेह।

बापू

श्रीयुत न० रा० मलकानी
सर्वेन्ट्स ऑफ अनटचेबल्स सोसायटी, बिड़ला मिल्स
दिल्ली

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०१) से।

४६२. पत्र : चारुप्रभा सेनको

२ सितम्बर, १९३३

प्रिय चारुप्रभा,

तुम्हारा छोटा-सा पत्र पाकर मुझे खुशी हुई।

मै समझता हूँ कि तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है। मेरा सहयोगी बनना किसीके लिए भी मजाक नहीं है। लेकिन मैं जानता हूँ कि परमेश्वर सभी सहयोगियोंको और मुझे वह शक्ति देता है जिसकी उन्हें या मुझे जरूरत पड़े। इसलिए तुम्हें मेरी दया या सहानुभूति नही मिलेगी; तुम्हें अपने सेवाभावका सच्चा परिचय देना पड़ेगा।

आशा है कि तुम ठीक चल रही होगी। मैं धीरे-धीरे लेकिन बराबर फिरसे ताकत हासिल कर रहा हूँ।

स्नेह।

बापू

श्रीमती चारुप्रभा सेन
राजबाड़ी, जिला फरीदपुर
(बंगाल)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७०२) से।

४६३. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२ सितम्बर, १९३३

चि० अमला,

तुम्हारे पत्र मिले। तुम्हें मुझसे पत्रोंके तत्काल उत्तरकी आशा नहीं करनी चाहिए। मैं जब कभी तुम्हें लिख सकूँगा, निश्चय ही लिखूँगा।

मैंने अपने स्वास्थ्यके बारेमे तुमसे कुछ नही कहा था; क्योंकि कुछ अन्य पत्रोंमें मैं उसका उल्लेख कर चुका था।[1] मैं जितना हो सकता है उतना ठीक हूँ। ताकत धीरे-धीरे बराबर लौट रही है। इसलिए चिन्ताका कोई कारण नही है। मैं दूध, फल और सब्जियाँ ले रहा हूँ।

आशा है कि तुम अपने-आपको लगातार योग्य बनाती जा रही होगी।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

४६४. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदीको

२ सितम्बर, १९३३

भाई बनारसीदास,

तुम्हारा पत्र मिला। आनंद हुआ। बंगालमें हिंदी प्रचारके लिये वेतन देकर अच्छे शिक्षक रखने चाहिये। रामानंद बाबुने, हिंदी भाषाकी बडी सेवा की है इसमें कोई संदेह नही है। 'विशाल भारत'[2] स्वावलंबी करनेके लिये तुमको धन्यवाद। मद्रासके दोरेका वर्णन मैंने देख लिया है। अच्छा है। तुमारी शारीरिक प्रकृति अच्छी होगी।

बापूके आशीर्वाद

पण्डित बनारसीदास चतुर्वेदी
सम्पादक, 'विशाल भारत'
१२०/२ अपर सर्कुलर रोड, कलकत्ता

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५६४) से।

१. देखिए "पत्र : जमनालाल बजाजको", ३०-८-१९३३।
२. कलकत्तासे प्रकाशित हिन्दी मासिक।

४६५. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

२ सितम्बर, १९३३

चि० विद्या,

तुम्हारा खत आया है। मेरा ख्याल है कि तुम्हारे वहीं रहना चाहिए। आगे देखा जाएगा। आजकल तो आनंद यहीं रहेगा। इस मासके आखिरतक में वर्धा पहुचनेकी कोशिश करूंगा। शरीर और मन स्वस्थ रखो।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द टी० हिंगोरानी।

४६६. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

२ सितम्बर, १९३३

पहलेकी सलाह देनेमें मैंने कोई गलती की हो, इसका मुझे भान नहीं। फिर भी, मैं मानता हूँ कि इस आकस्मिक रिहाईसे ऐसी स्थिति पैदा हो गई है जिसमें विशेष बरतावकी जरूरत है। अभी तो मैं बस यही कह सकता हूँ कि इस सम्बन्धमें मैं हृदयसे प्रार्थनापूर्वक विचार कर रहा हूँ। मेरे सामने कोई बनी-बनाई योजना नहीं है। मैं सभी मित्रोंसे विचार-विमर्श करूँगा, सभीकी राय सुनूँगा तथा जल्दबाजीमें कोई निर्णय नहीं लूँगा। मैं फिर कहता हूँ कि शान्तिके लिए मैं हृदयसे इच्छुक हूँ। अतः जहाँतक मेरा बस चलेगा मैं इसके लिए कुछ उठा नहीं रखूँगा।

[अंग्रेजीसे]

गृह-विभाग, राजनीतिक, फाइल सं० ४/११/३३, १९३३, पृ० ४; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार।

१. साधन-सूत्रमें यह अंश **नेशनल कॉल**, ३-९-१९३३ से लिया गया है। **नेशनल कॉल** ने इस समाचारके विवरणमें कहा था कि एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिके साथ इस भेंट-वार्तामें गांधीजी ब्रिटेनके राष्ट्रीय मजदूर दलकी पाक्षिक पत्रिका **न्यूज लेटर** द्वारा व्यक्त की गई इस आशापर टिप्पणी कर रहे थे कि उन्हें भारत सरकारके इस मैत्रीपूर्ण कदमका वैसा ही मैत्रीपूर्ण उत्तर देना चाहिए।

४६७. सलाह : मित्रोंको[1]

[३ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

मेरे लिए तो यह नया जन्म ही हुआ। मैं तो आशा छोड़ चुका था। २३ की रातको जब उलटी हुई तब मुझे लगा कि अब अधिक नहीं टिक सकूँगा, मृत्युसे अब लड़ नहीं सकूँगा। २४ की दोपहरको जो-कुछ मेरे पास था, वह मैंने दूसरेको सौंप दिया।

जो बातें हमारे लिए रोजमर्राकी हो जाती है, वे यदि अच्छी लगती हों तो हमें उनसे सुख नही होता और अगर वे हमें खराब लगती हों तो उनसे दुःख नहीं होता। मैं चाहूँ या न चाहूँ, उपवास मेरे लिए आये दिनकी बात हो गई है। आपको उसमें दुःख क्यों मानना चाहिए? आपको समझ लेना चाहिए कि ये तो अब मेरे जीवनके अंग हो गये हैं। यह सोचकर आपको मेरी देहके प्रति अपनी आसक्ति छोड़ देनी चाहिए। कष्ट तो मुझे भोगना ही पड़ा। किन्तु बिना महान कष्ट उठाये कृष्ण किसे मिले है?

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ३-९-१९३३

४६८. बातचीत : एक पारसी सज्जनसे[2]

[३ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

प्र० मुझे यह देखकर बड़ा दुःख होता है कि हरिजन-सेवाका काम कई जगहपर सेवा-भावनाके बजाय हरिजनोंपर उपकारकी भावनासे किया जा रहा है।

उ० यह बिल्कुल ठीक है। इसीलिए मैं तो सवर्ण हिन्दुओंसे कहता ही रहता हूँ कि आप जो-कुछ करें, अपना ही स्वार्थ समझकर करें। यह आपके लिए प्रायश्चित्त है, शुद्धि है।

प्र० किन्तु आप जैसा चाहते हैं काम उस तरह नहीं होता। कण-कणमें ऊँच-नीचका भाव भरा हुआ है।

उ० मैं यह बात स्वीकार करता हूँ। जबतक यह भाव नही जाता, तबतक यह नहीं कहा जा सकता कि अस्पृश्यता चली गई। हरिजनोंको छू लेना-भर काफी नहीं है।

१. यह और आगेके तीन शीर्षक, चन्द्रशंकर शुक्लकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से लिये गये है। उसमें ये "नया जन्म" शीर्षकसे प्रकाशित हुए थे।

२. यह "सारे जगतके लिए" उपशीर्षकसे प्रकाशित हुई थी।

प्र० हम पारसियोंमें भी ऊँच-नीच भाव है। हमारे बीचमें भी पहला दर्जा, दूसरा दर्जा, तीसरा दर्जा — इस तरहके वर्ग हैं। ये वर्ग परस्पर घुलते-मिलते नहीं हैं।

उ० आप हम लोगोंके साथ इतने वर्षोंसे रहते चले आ रहे है, इसलिए हमारी छूत आपको लगेगी ही। एक बार मुझसे एक पारसी भाई मिले थे। वे कहने लगे, ऊँच-नीच तो ईश्वरकी बनाई हुई है। मैंने कहा: "आप पारसी होकर ऐसी बात कर रहे हैं? यह इसीलिए कि आपको हमारी छूत लग गई है।"

प्र० यह बात मुसलमानोंमें भी है।

उ० इसी तरह ईसाइयोंमें भी समझिए। अभी पिछले दिनों मद्रासके ईसाई अस्पृश्यों की सभा हुई थी। क्या कभी ससारमें 'ईसाई अस्पृश्य' जैसा शब्द आपने सुना था?

प्र० मुझे तो लगता है कि अस्पृश्यता-का नाश उसे हृदयसे निकाले बिना नहीं हो सकता। आप क्या सोचते है?

उ० जबतक यह नहीं होता तबतक सब-कुछ कच्चा है। हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यताका नाश हो जाये तो अन्य अनेक समस्याओंका हल निकल आये। इसके बाद हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न भी हल हो जायेगा, ऐसा मैं सोचता हूँ। क्योंकि इस प्रश्नके मूलमें भी ऊँच-नीच भावना भरी है।

प्र० सच कहें तो जरथुस्तका इरादा अपना कोई अलग धर्म स्थापित करनेका नहीं था। धर्म तो बादमें स्थापित हुआ। अब तो पारसियोंके मनमें पारसी और दूसरोंके बीच भेदकी भावना घर कर गई है।

उ० यह भी हिन्दू-धर्मसे ली गई बात है। उन्हें यह भेदभाव हिन्दुस्तानकी हवामें से मिला। यदि यह भावना हिन्दू-धर्मसे समाप्त हो जाये तो दूसरे धर्मोंसे भी समाप्त हो जाये। दस-पाँच कुएँ खोद दिये या थोड़े-बहुत मन्दिर खोल दिये, तो मैं इतनेसे ही सन्तोष मानकर थोड़े ही बैठ जाऊँगा। यह तो केवल उदाहरण कहलायेंगे। इतना भी न हो तो कहना होगा मुँहकी बात मुँहतक ही रह गई। हमें तो इसके बहुत आगे जाना पड़ेगा।

प्र० आप हरिजनोंकी सेवामें केवल हिन्दुओंका विचार रखते हैं या दूसरोंका भी।

उ० दूसरोंका विचार उसमे निहित ही है, जिस प्रकार भारतीय स्वतन्त्रता सारे जगतके हितके लिए है। फिर भी मै ऐसा न कहकर केवल हिन्दुस्तानकी स्वतन्त्रताकी ही बात करता हूँ। इसी प्रकार मुझे पूरा विश्वास है कि हरिजन प्रश्नको हल करनेके व्यापक परिणाम होंगे। सारे संसारपर इसका असर पड़ेगा। यदि ऐसी आशा न होती तो हरिजन-कार्यमे पड़नेकी जरूरत ही क्या थी? मैं कह चुका हूँ और मैंने लिखा भी है कि इस मार्गसे चलकर मैं सम्पूर्ण मानव-जातिकी सेवा करना चाहता हूँ।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ३-९-१९३३

४६८. सलाह : एक हरिजन कार्यकर्त्ताको[1]

[३ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

मुझे इसके लिए कोई योजना नहीं चाहिए। मुझे तो योजक चाहिए। योजक न हो तो योजना किस कामकी? शक्ति न हो तो योजना बनाकर भी क्या कर सकते है? आप चमड़ेका काम हाथमें लेना चाहते हैं। मुझे यह काम बहुत पसन्द है। किन्तु आपने इसे सीखा नही है। केवल चप्पल बना लेना आता है, इसीसे काम नही चलेगा। हमें चमड़ा कमानेका काम भी हाथमें लेना पड़ेगा। यदि आपमे इसकी शक्ति हो तो मेरा और आपका काम बन जाये। हमे कोई बड़ा कारखाना खड़ा नहीं करना है, हमें तो केवल इस बातका विचार करना है कि गाँवमे चमड़ा कमानेका काम अच्छी तरह कैसे हो। मधुसूदन दासने क्या किया था? उन्होंने उत्कलके चर्मकारोंको इकट्ठा किया और यह समझा कि वे चमड़ा किस प्रकार कमाते हैं। किन्तु उन्हें इससे सन्तोष नहीं हुआ; इसलिए वे जर्मनी गये और वहाँ चमड़ेका काम सीखा। वे एक जर्मनको साथ लेकर लौटे और एक कारखाना स्थापित किया। वह कारखाना कटकमें मौजूद है। अब वह उनके हाथमें नही है। आजकी उसकी स्थितिके विषयमें मुझे जानकारी नहीं है। मधुसूदन दासके समयमे बहुत-से हरिजनोंने यह काम सीखा। आपको भी चाहिए कि आप मधुसूदन दासकी तरह पहले इस कलाको हस्तगत कर लें। यह काम एक महीनेमे आनेवाला नही है। इसे ठीक-ठीक सीख लिया जाये तो उत्तम काम बने। सीखनेकी सुविधा मै जुटा दूँगा।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ३-९-१९३३

४७०. चर्चा : उपवासपर[2]

[३ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

जिसे हम धर्म मानते हैं, रूढ़िवादी उसे अधर्म मानते हैं। यह उनका अज्ञान है। किन्तु इसके विरोधमे आमरण अनशन नहीं किया जा सकता। यह आमरण अनशनका विषय नहीं है। आमरण अनशन तो इनी-गिनी बातोंको लेकर ही किया जा सकता है। यह एक बहुत ही सख्त इलाज है। उपवास एक पेचीदा विषय है। सशर्त उपवास सापेक्ष है अर्थात्, परिस्थितिको तौलकर ही किया जा सकता है। इसीलिए मैंने हिन्दू-धर्मकी शुद्धिके लिए, शर्तसे स्वतन्त्र उपवास[3] की कल्पना की। अभीष्ट यह

१. यह "सेवाके लिए प्रशिक्षण" उपशीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२. यह "उपवासकी मर्यादा" उपशीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

३. ८ मईसे २९ मई, १९३३ तक।

है कि जिस तरह गंगाकी काँवर एक कंधे-से-दूसरे कंधेपर बदलते हुए आगे बढ़ती चली जाती है, उसी प्रकार उपवासकी शृंखला बँध जाये। धर्मकी शुद्धिके लिए सच्चे आदमी सच्चे ढंगसे आमरण अनशन करें, तो जनतापर इसका प्रभाव अवश्य पड़े। यह आसुरी नहीं, दैवी प्रवृत्ति है। हिन्दू-धर्ममें पाप प्रवेश कर गया है। यदि कोई उसके निवारणके लिए २१ दिनोंका अथवा ४० दिनोंका भी उपवास करे, तो ऐसा कोई नहीं कह सकता कि यह किसी प्रकारका बलप्रयोग है। क्योंकि यह तो ऐसा उपवास हुआ जो लोग कुछ भी क्यों न करें तोड़ा नहीं जा सकता।

प्रश्न: मैंने जिस आमरण अनशनकी कल्पना की है, उसमें आप बलप्रयोग कहाँ देखते हैं?

उत्तर: मन्दिरके न्यासियोंसे आपका किसी प्रकारका सम्बन्ध नहीं है। आप जिसे अधर्म मानते हैं, वे उसे धर्म मानते हैं। फिर उसके विरोधमें उपवास कैसे किया जा सकता है? उपवासका सहारा लेकर किसीका धर्म थोड़े ही परिवर्तित कराया जा सकता है। सशर्त उपवास किन परिस्थितियोंमें हो सकता है, सो मैं समझाता हूँ। मान लीजिए, मेरा भाई शराब पीता है। शराब पीना वह स्वयं भी बुरा मानता है, फिर भी उसे छोड़ नहीं पाता। यदि मैं उसके शराब छोड़ देनेतक उपवास करूँ तो यह उचित है। किन्तु यदि वह हिन्दू-धर्म छोड़कर ईसाई होना चाहता हो और मैं उसके इस कामको रोकनेके विचारसे उपवास करूँ, तो यह जबरदस्ती करना कहलायेगा। इसलिए आप फिलहाल तो मन्दिरके न्यासियोंसे मिलें, उनके साथ बातचीत करें, उनके मित्रोंकी मारफत अपनी दलीलें पेश करायें, लोकमत तैयार करें। अभी तो आपका यही कर्त्तव्य है। लोकमत अनुकूल हो जानेपर न्यासियोंको इसकी सूचना देनी चाहिए, जैसाकि गुरुवायुरमें मतसंग्रह[1] के द्वारा किया गया था। सम्भव है लोकमतको अनुकूल देखकर न्यासीगण मान जायें। सभामें हाथ उठवा कर मतसंग्रह करानेसे काम नहीं चलेगा। घर-घर जाकर मत लिये जाने चाहिए।

प्र०: यदि इसके बाद भी वे न मानें तो फिर मैं आमरण अनशन न करूँ तो क्या करूँ?

उ०: आमरण अनशन करनेकी सलाह तब भी नहीं दी जा सकती। हिन्दू-धर्मकी शुद्धि इस तरह सम्भव नहीं है। हिन्दू-धर्ममें कुछ ऐसी बातें हैं, जिन्हें सुधारा जाना चाहिए। फिर भी लोग उन्हें सुधारना मंजूर नहीं करते। मैंने कहा है कि अस्पृश्यताका नाश न हुआ तो हिन्दू-धर्मका नाश हो जायेगा। मेरा यह कथन अक्षरशः सच है। किन्तु यदि ईश्वरने ही निश्चय कर लिया हो कि हिन्दू-धर्म नष्ट हो जाना चाहिए तो फिर हम क्या कर सकते हैं? हम अपने प्राण अवश्य दे सकते हैं; किन्तु इसके योग्य अवसर होना चाहिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ३-९-१९३३

१. दिसम्बर, १९३२ में; देखिए खण्ड ५२।

४७१. इसमें अतिशयोक्ति नहीं है

एक भाईने नीचे लिखा पत्र भेजा है :

मैं 'हरिजनबन्धु' नियमपूर्वक पढ़ता हूँ। २७ अगस्तके 'हरिजनबन्धु' में मैंने आपका 'मेरा जीवन-प्राण'[1] शीर्षक वह लेख पढ़ा जिसमें आप कहते हैं — अन्न बिना तो मैं कुछ दिनतक जी भी सकता हूँ पर हरिजन-सेवाके बिना एक क्षण भी जीना मेरे लिए असम्भव है।

आपके अनेक लेखोंमें, मुझे भावोंकी अतिशयोक्ति जान पड़ती है। कितनी ही बार आपको लिखकर यह बात बतानेकी मेरी इच्छा हुई है, पर इस डरसे नहीं लिखा कि कहीं ऐसा मैं आवेशमें तो नहीं कर रहा हूँ। पर अब नहीं रहा जाता। मेरा कहना यह है कि ऐसे वाक्योंसे अनेक बार लोगोंके मनमें भ्रम पैदा हो जाता है। जो आपके कहनेका अभिप्राय समझते हैं, उनकी बात मैं नहीं लिख रहा हूँ। पर आपके कितने ही भोले श्रद्धालु भक्त और अनुयायी इसका उलटा ही अर्थ लगा सकते हैं। अगर आपके जीवनका हरएक क्षण हरिजन-सेवाके लिए अर्पित हो चुका है, तो फिर आप दूसरे कामोंके लिए कहाँसे समय निकाल लेते हैं? फिर सरकारकी भी तो यही दलील थी। एक म्यानमें दो तलवार नहीं रह सकतीं। मैं समझता हूँ कि आपके जीवनके कार्यक्षेत्रमें किसी प्रकारके विभाग नहीं हैं। आप जीवनके तमाम भिन्न-भिन्न कामोंको एक ही रूपमें देखते हैं। पर साधारण जनता आपकी यह बात नहीं समझ सकती। ऊपर लिखे हुए वाक्यको पढ़कर लोग यही अर्थ करते हैं कि अब गांधीजी हरिजन-सेवामें ही अपना सारा जीवन लगा देंगे, पर असलमें यह बात है नहीं। अवसर मिलते ही आप दूसरे काम भी करेंगे। मेरा खयाल है कि विचारोंकी आपकी इस अतिशयोक्तिसे लोगोंमें पहले भी काफी भ्रम फैल चुका है। अगर आप जैसा हो वैसा ही बोलें अथवा लिखें, तो भ्रम फैलनेकी सम्भावना बहुत कम रह जायेगी। प्रेमवश होकर ही मैंने यह पत्र लिखा है, इसलिए मुझे आशा है कि कहीं मुझसे नासमझी हो गई हो तो आप मुझे क्षमा करेंगे।

किसी तरहका फेरफार किये विना, पत्र मैंने ज्यों-का-त्यों उद्धृत कर दिया है। पत्रसे मालूम होता है कि लिखनेवालेके मनमें जैसा सन्देह हुआ है वैसा ही दूसरोंके मनमें भी हुआ है। अगर यह ठीक है, तो यह मेरे लिए बड़े दुःखकी बात है। मैं

१. देखिए पृ० ३८५।

अपने-आपको प्रामाणिक बात लिखनेवाला ही मानता हूँ। सत्यका पुजारी होनेके कारण, मुझे अतिशयोक्ति न तो शोभा ही देती है और न अच्छी ही लगती है। मैं मानता हूँ कि हरिजन-सेवाके विषयमें मैंने जो-कुछ लिखा है वह अक्षरशः ठीक है। पर यह सेवा ऐसी नहीं है कि इसे करते हुए और दूसरी सेवा न की जा सके। हरिजन-सेवाके बारेमे मैंने जो-कुछ कहा है, वही दरिद्रनारायणकी सेवाके सम्बन्धमें भी कह सकता हूँ। कारण यह है कि दरिद्रनारायणकी सेवा हरिजन-सेवाकी विरोधी नहीं है। इन दोनों सेवाओंके विषयमें जो-कुछ कह सकता हूँ, वही दूसरी वस्तुओके विषयमें भी कहा जा सकता है। मनुष्य-जीवन कोई जड़ वस्तु नहीं है। इस जीवनमे हममें से प्रत्येकको कितनी ही चीजे प्राणके समान प्यारी लगती है और उनके बिना वह जी नहीं सकता। इस बातकी सचाईका आधार उस समयकी निष्ठाके ऊपर निर्भर है। किसीको अमुक वस्तु प्राणके समान होनेपर भी उसके वियोगसे मरण नहीं होता; कितनोंको इस तरहका वियोग मृत्युदण्डके समान साबित होगा।

हरिजन आदिकी सेवाका कोई यह अर्थ नहीं करता कि बाह्य कार्य प्रतिक्षण सेवाके अनुकूल होना चाहिए; अवश्य इसका यह अर्थ है कि बीचबीचमें प्रसंगानुसार कार्य भी होते रहेंगे। आप जमीनमें बीज बोते हैं, तो वह तुरन्त ही वृक्षके या पौधेके रूपमें नहीं निकल आता। पर आप यह अवश्य जानते हैं कि उपयुक्त भूमिमें बोया हुआ उत्तम बीज प्रतिक्षण विकास कर रहा है — फिर आप भले ही उसे कुछ दिन या कुछ महीने बाद पौधे या वृक्षके रूपमे देखें। भौतिक बीजके विषयमें आपको जो-कुछ अनुभव होता है, वही मानसिक अथवा आध्यात्मिक बीजके विषयमें भी कहा जा सकता है।

हरिजन-सेवाके सम्बन्धमें मेरा कथन कहाँतक सच है, यह बात बिलकुल ठीक तो मेरी मृत्युके बाद ही मालूम हो सकेगी। पूर्ण ज्ञान तो सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान ईश्वरको ही है, क्योंकि वह हमारे हेतुतक को पहचानता है। एक-दूसरेका हेतु समझनेका कोई यन्त्र तो मनुष्यके पास है नहीं, इसलिए पूर्ण परीक्षा तो मृत्युके उपरान्त भी नहीं हो सकती। इसीसे हरिजन-सेवाके बारेमें मैंने जो-कुछ लिखा है, उसमें तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं है। मेरी इस प्रतिज्ञाके द्वारा ही पत्र-लेखक भाईको तथा उन-जैसे भ्रममें पड़े हुए दूसरे सज्जनोंको सन्तोष कर लेना चाहिए।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ३-९-१९३३

४७२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंके लिए[1]

३ सितम्बर, १९३३

अहिंसामे अपने पूर्ण विश्वासको और राजनैतिक अधिकारों अथवा राजनैतिक स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए हिंसाको साधन[2] बनानेमे सर्वथा अविश्वासको दोहराना मेरे लिए जरूरी नहीं है। मिदनापुरके मजिस्ट्रेट[3] की हत्यासे मेरे हृदयको बहुत आघात पहुँचा है। लेकिन साथ ही इस बातसे खेद न होना भी असम्भव है कि शासक अपनी उन बुराइयोंको जिनकी वजहसे ऐसी हत्याएँ होती है, दूर करनेको तैयार नही हैं। इतना ही नहीं, बल्कि वे बदलेमे, जैसाकि अध्यादेशोसे साफ जाहिर है, आतंकवाद द्वारा शासन करनेका दुराग्रह रखते है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ४-९-१९३३; जी० एन० १४६९ भी।

४७३. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

३ सितम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। जाहिर है कि तुम्हारी मौजूदगीने माँके लिए पौष्टिक दवाका काम किया। यदि वे ज्वरमुक्त रहती हैं तो अब तुम्हें कुछ दिनोंके लिए बाहर निकल सकना चाहिए। यदि वे ज्वरमुक्त रहें तो तुम्हें, जितनी जल्दी हो सके, मेरे पास आ जाना चाहिए। मै अगले शुक्रवार या शनिवारको यहाँसे बम्बईके लिए रवाना होनेको आतुर हूँ और वहाँ लगभग एक सप्ताह रहना चाहता हूँ; फिर वर्धा जाऊँगा।

जिस नवयुवक[5] का तुमने उल्लेख किया है, उसे मै नहीं जानता। मैं उसके परिवारको अच्छी तरहसे जानता हूँ। मै उससे मिला भी जरूर होऊँगा। लेकिन यदि मैं उसे देखूँ, तो पहचान नहीं पाऊँगा। परिवारकी परम्पराएँ उदार हैं। इसलिए कृष्णा उनके साथ शायद काफी खुश रहेगी। मैंने उसके बारेमें अनसूयाबहनको लिखा

१. वक्तव्यकी एक प्रति थोडा शाब्दिक फेर-बदलके साथ अगाथा हैरिसनको भेजी गई थी। (जी० एन० १४६९)

२. जी० एन० की प्रतिमें "मीन्स" की जगह "मैथड" है।

३. बी० ई० जी० बर्ग, जिनकी तीन बंगाली युवकोंने २ सितम्बरको हत्या कर दी थी। जी० एन० की प्रतिमें यहाँ भी थोड़ा शाब्दिक भेद है।

४. जी० एन० की प्रतिमें यहाँ, भी थोड़ा शाब्दिक भेद है।

५. गुणोत्तम हठीसिंह।

है। वह निश्चय ही इन सब लोगोंको अच्छी तरहसे जानती है। लेकिन इस बीच तुम उसको बुला भेजो, उससे मिलो और यदि तुम उसे ठीक मानो तो माँ से मिलाओ। इस सबमें मैं कोई नुकसान नहीं देखता। अनसूयाबहनसे जवाब आ जानेके बाद यदि जरूरी हुआ तो मैं तुम्हें लिखूँगा। अन्यथा मैं इस मामलेको काफी गोपनीय रख रहा हूँ। मै ऐसा मानता हूँ कि तुमने अनसूयाबहनको मेरे लिखनेका बुरा नहीं माना है।

कमलाको उत्तेजना और चिन्तासे मुक्त रहनेकी जरूरत है। मुझे लगता है, वह बम्बईमें नौरोजी बहनोंके साथ खुश रहती है। इसलिए मेरा खयाल है कि तुम जब यहाँ आओ तो उसे लेते आओ और फिर यहाँ छोड़ जाओ।

इस आशासे कि हमें शीघ्र मिलना ही है, मै राजनीतिक स्थिति तथा अपने उपवासके कारनामोंके बारेमें कुछ नही लिख रहा हूँ। मैं खोई हुई ताकतको बराबर धीरे-धीरे फिर हासिल कर रहा हूँ।

बेचारा महादेव बेलगाँवमें हैं। कष्टोंमें से गुजरना अच्छा होता है।

माँ को जरूर बता देना कि मैं उनको बराबर याद करता रहता हूँ। उन्हें यह देखनेके लिए कि बादल छँट गये हैं, काफी दिन जीना होगा।

तुम सबको मेरा प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू कागजात, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय।

४७४. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

३ सितम्बर, १९३३

चि० रुक्मिणी[1],

मैं सोच ही रहा था कि तू पत्र लिखेगी या नहीं, इतनेमे तेरा पत्र मिला। तेरे बारेमे समाचार तो मिलते ही रहते हैं। बच्चेका नाम तो बहुत बड़ा रखा है। उसके सामने बेचारा माधव[2] तो नगण्य-जैसा ही लगेगा। तेरा और देवेन्द्रका स्वास्थ्य अच्छा रहता होगा। मै ठीक हूँ। मीराबहन, व्रजकृष्ण और प्रभावती सेवा कर रहे हैं। बहुत करके शुक्रवारको मैं बम्बई जाऊँगा और वहाँसे वर्धा।

तुम दोनोंको
बापूके आशीर्वाद

श्री बनारसीदास बजाज
ठठेरी बाजार, बनारस शहर

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१५४) से।

१. मगनलाल गांधीकी पुत्री।

२. गांधीजी ने रुक्मिणीदेवी बजाजको अपने पुत्रका नाम माधवदास या गोपालदास रखनेकी सलाह दी थी।

४७५. पत्र : जमनालाल बजाजको

[४ सितम्बर, १९३३से पूर्व][१]

चि० जमनालाल,

नी० फिर रास्तेसे भटक गई है। उसके पत्रोंसे उसकी अव्यवस्था स्पष्ट झलकती है। इतने दिन हिन्दू-धर्मकी धुन थी, अब ईसाई-धर्मकी लगी है। इसमें भी यदि निश्चय हो तो अच्छी बात है, परन्तु मुझे ऐसा नहीं लगता। उसकी कल्पना-शक्ति उसे इधरसे-उधर झकझोरा करती है। मौन लेनेसे उसका मन अधिक चक्कर खा गया जान पड़ता है। साथवाला पत्र पढ़कर उसे दे देना और फुरसत मिल जाये तो उससे बात भी कर लेना, अथवा विनोबा करें। द्वारकानाथसे कुछ हो सकता हो तो वह आश्वासन दे।

मेरा तार[२] तुमको मिला होगा। तुम्हारे साथ बात तो करनी ही है। परन्तु मैं तुमको यहाँ घसीटना नहीं चाहता। पहले तो ऐसा ही लगता था कि बम्बई थोड़े दिन रहकर वर्धा जाऊँ, परन्तु दो-तीन दिनसे कुछ निश्चय नहीं कर पा रहा हूँ। कदाचित् वहाँ आकर बम्बई जाना ठीक होगा। लेकिन देखूँगा। जवाहरलाल छूट गया है, सो उससे मिलना भी जरूरी है; पर उससे मुलाकात तो वर्धामें भी हो सकती है। आखिर तो जो होना होगा वही होगा। इसलिए मैं बहुत योजनाएँ नहीं बनाता।

मेरा शरीर ठीक होता जा रहा है। दो पौंड दूध, साग और फल लेता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२४) से।

४७६. पत्र : नारणदास गांधीको

४ सितम्बर, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला था। उसके बाद पत्र नहीं मिला। मैंने तुम्हें एक पोस्टकार्ड लिखा था। तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक रहता होगा। तुम सबको कैदखानेमें डालकर मैं खुद छूट गया हूँ। कितनी आश्चर्यकी बात है!

तुम्हारे बारेमें मैं चिन्ता नहीं करता, क्योंकि मैं मानता हूँ कि तुम्हारी समवृत्ति तुम्हें हर प्रकारसे सकुशल ही रखेगी।

१. साधन-सूत्रके अनुसार पत्र इसी तारीखको मिला था।

२. ३० अगस्तका; देखिए पृ० ४०१।

मैं अच्छा हो रहा हूँ। अगले शुक्रवार बम्बई जानेका विचार है। वहाँ शायद एक सप्ताह रहूँगा। बादमें वर्धा जानेका विचार है।

जमनाका पत्र मुझे मिला था। अपना कार्यक्रम लिखना। चिमनलाल[1]का एक लम्बा पत्र आया था।

मेरे पास बा, मीरा, प्रभावती, मथुरादास, चन्द्रशंकर और नायर हैं। ब्रजकृष्ण सारा दिन मेरे पास रहता है। जितनी जरूरत है उससे ज्यादा सेवा मिल रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

४७७. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमुदारको

४ सितम्बर, १९३३

भाई परीक्षितलाल,

चन्द्रशंकरको लिखा तुम्हारा पत्र मैंने पढ़ लिया है। वीनाके सवर्ण हिन्दुओंने बिना किसी शर्तके बहिष्कार कैसे छोड दिया, यदि तुम यह मालूम कर पाये हो तो लिखना। क्या उन्हें अपने दोषका भान हो सका है?

भलाडा-सम्बन्धी आवश्यक उपाय तो अभी जारी होंगे। यदि सवर्ण हिन्दू किसी तरह न मानें और तुमसे बन सके तो हरिजनोंको ऐसे गाँवसे हटा लेना भी पड़ सकता है। और कुछ जानने लायक बात हो तो लिखना।[2]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९९७) से।

१. चिमनलाल शाह।

२. देखिए "बधाई" पृ०, ४४१ भी।

४७८. पत्र : शूरजी वल्लभदासको

४ सितम्बर, १९३३

भाई शूरजी,

आपको पत्र लिखनेवाला ही था कि इस बीच आपका पत्र मिला। मैं शुक्रवारको बम्बई पहुँचनेकी आशा करता हूँ। इसलिए आपको यहाँ आनेका कष्ट नहीं दूँगा। आपसे मिलनेके लिए उत्सुक अवश्य हूँ, किन्तु कुछ दिन धीरज रखूँगा। बच्चीका स्वास्थ्य सुधर रहा होगा। आप भी सकुशल होंगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०९५) से।

४७९. एक पत्र

मौनवार, ४ सितम्बर, १९३३

चि० . . .[1],

मुझे तुम्हारा करुणाजनक पत्र तीन-चार दिन पूर्व मिला। आज मौनवार है इसलिए कुछ समय निकाल यह लिखने बैठा हूँ।

तुम दो घोड़ोंकी सवारी नही कर सकते। यदि तुम ब्रह्मचर्य व्रतका पालन करना चाहते हो तो तुम्हें अपनी पत्नी या किसी भी स्त्रीके साथ एकान्त सेवन नहीं करना चाहिए। फिर एक ही चारपाईपर सोनेकी बात ही कहाँ उठती है? यदि एकान्तमें मिले बिना या एक ही चारपाईके बिना काम न चल सके तो ब्रह्मचर्य व्रतको छोड़ देना चाहिए। आश्रम भी छोड़ देना चाहिए और दूसरोंकी तरह केवल शुद्ध गृहस्थ जीवन व्यतीत करना चाहिए। इसमें कलककी कोई बात नही है। सभी अपनी शक्तिके अनुसार व्यवहार करें। उससे आगे जानेसे पाखण्ड तो आ ही जाता है। इसलिए मेरी सलाह है कि तुम गहरे सोच-विचारके बाद एक निश्चय कर लो। तुम्हारा वर्तमान व्यवहार तुम्हारी पत्नीके साथ भी न्याय नही करता। उसके मनमें विषय-वासना हो तो वह उसे सन्तुष्ट नही कर सकती; जबकि इच्छा होनेपर तुम ऐसा कर सकते हो और उसका सन्ताप बढ़ा सकते हो। हम स्त्रीकी

१. नाम छोड़ दिया गया है।

स्वतन्त्रता स्वीकार करते है, पर तुम्हारे व्यवहारमे उसका कुछ विचार नहीं दिखाई देता। अब गम्भीरतापूर्वक सोचनेके बाद जो तुम्हें सही लगे वही करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५११) से।

४८०. पत्र : दूधीबहन वा० देसाईको

४ सितम्बर, १९३३

चि० दूधीबहन,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। मैं तो राह देख ही रहा था। मुझे पत्र लिखती रहना। कोई समस्या हो तो बताना। मेरी चिन्ता न करना। मेरी शक्ति बढ़ती जा रही है। कितने समय बाहर रहूँगा, यह मालूम नहीं है। शुक्रवारको बम्बई पहुँचनेका विचार है, और एक सप्ताह बाद वर्धा चले जानेकी आशा करता हूँ। बा, मीराबहन और प्रभावती मेरे साथ है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती दूधीबहन वालजी देसाई
द्वारा : दक्षिणामूर्ति, भावनगर, काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१३४) से; सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई।

४८१. पत्र : अमतुस्सलामको

४ सितम्बर, १९३३

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुमको अब कैसा है? बा मुझे कहती थी कि तुमको अच्छा नहीं रहता था। लेकिन मेरी उम्मीद है कि अब तो अच्छी हो गई होगी। मेरे बारेमें कुछ भी फिकर करनेकी नही है। खुदा जब तक मुझे बचाना चाहता है, मूझे कुछ नही हो सकता। जब वह मुझको ले जाना चाहेगा तब मुझे कोई यहाँ नहीं रख सकता है। इसलिए मेरे बारेमें सब डर छोड़ो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोको-नकल (जी० एन० २८८) से।

४८२. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पूना,
५ सितम्बर, १९३३

चि० अमला,

तुम्हारी माताके एक पत्रके साथ ही तुम्हारा पत्र मिला। क्या तुम्हारी इच्छा है कि मैं उन्हें पुनः पत्र लिखूँ। अगर तुम चाहोगी तो मै प्रसन्नतासे लिखूँगा।

मेरे वर्धा पहुँचनेकी तारीख अभी निश्चित नही है, लेकिन इस मासके अन्तिम सप्ताहसे पहले नही जाऊँगा।

तुम चपातियाँ बनानेमें झंझट मानती हो। तुम उन्हें अपौष्टिक भी मानती हो। परन्तु चपातियाँ बनानेमें कोई झझट नही होता और अगर ये बिना चोकर निकाले हुए आटेकी बनी हों तो काफी पौष्टिक भी होती हैं।

तुम कहती हो कि ११ में से हिन्दी पहली भाषा होगी जिसे तुम सीखोगी। मुझे ११ भाषाओंकी सूची भेजो।

मैं ठीक चल रहा हूँ।

अपनी दिनचर्या लिखना।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल-कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

४८३. तार : जमनालाल बजाजको

पूना,
६ सितम्बर, १९३३

जमनालाल बजाज
वर्धा

लखनऊ व बनारस जाना अनावश्यक। दस दिनके लिए पहाड़पर तुरन्त हो आओ। जवाहरलाल यहाँ शायद शनिवारको पहुँचेंगे। मै बम्बई अगले सप्ताह जाऊँगा और एक सप्ताह ठहरूँगा। वर्धा २३ से पहले नहीं पहुँच रहा हूँ। मैं बिलकुल ठीक हूँ। अखबारोंकी रिपोर्टोंपर विश्वास न करना।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ११६

४८४. वक्तव्य : हरिजन दिवसपर[1]

[७ सितम्बर, १९३३][2]

हरिजन सेवक संघने २४ सितम्बरको 'हरिजन दिवस' मनानेकी घोषणा की है। यरवदा-समझौतेकी, जिसे पूना-समझौतेका गलत नाम भी दे दिया गया है, वह वर्ष-गाँठ होगी। खुशीकी बात यह है कि संयोगसे उस दिन रविवार पड़ता है। मै आशा करता हूँ कि हरिजन दिवस ठीक तरहसे मनाया जायेगा। हर व्यक्ति और हर हरि-जन-सस्थाको यह सोचना चाहिए कि अस्पृश्यताके अभिशापको मिटानेके लिए साल-भरमे उसने कितना काम किया। उस दिन अगले वर्षके लिए बजट बनाया जा सकता है या संकल्प किया जा सकता है। कार्यके लिए घर-घर जाकर चन्दा भी इकट्ठा किया जा सकता है। मेरा विश्वास है कि गत हरिजन दिवसोंपर जो-जो कार्य हुए हैं, २४ सितम्बरको वे और भी अधिक उत्साहसे किये जायेगे।

मैं आशा करता हूँ कि हरिजन भी इस बातपर विचार करेंगे कि इस सालमें उन्होंने खुद अपनी शुद्धिके लिए और इस प्रकार हिन्दू-समाजकी शुद्धिके लिए कितना काम किया। पर इसमें शक नहीं कि सवर्ण हिन्दुओंकी जिम्मेदारी सबसे ज्यादा

१. यह "हरिजन दिवस" शीर्षकसे छपा था।
२. **बॉम्बे क्रॉनिकल**, ९-९-१९३३ से।

है। सुधारकोंको इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि सौजन्य, नम्रता, त्याग और चरित्रकी अधिक-से-अधिक शुद्धि द्वारा कट्टर सनातनी हिन्दुओंके दिलोंको जीतना उनका कर्त्तव्य है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-९-१९३३

४८५. भेंट : गोसेवाके विषयमें[1]

८ सितम्बर, १९३३[2]

गांधीजी : सन्देश[3] देने योग्य उत्साह मुझमें नहीं है, क्योंकि मेरे विचारोंके मुताबिक गोसेवा कोई नहीं करता। आपके अध्यक्ष महोदयसे मैंने अपने विचार कहे थे। मैंने उन्हें यह भी बताया था कि आजकी गतिविधियोंमें क्या-कुछ सुधार किये जा सकते हैं। उन्होंने मेरे कहे मुताबिक करना स्वीकार किया था, यहाँतक कि आश्वस्त किया था। परन्तु तदनुसार काम नहीं किया। ऐसी अवस्थामें मेरे सन्देश देनेसे क्या लाभ?

भेंटकर्त्ता : यह तो गोसेवा में लगे हुए कुछ कार्यकर्त्ताओंके विषयमें ही हुआ। उनके सिवाय अनेक व्यक्ति और अनेक गोशालाएँ भी इस प्रकारका काम कर रही हैं। वे सभी अपनी गतिविधियोंके लिए आपके विचार सन्देश देनेपर ही जान सकते हैं। यदि आप स्वीकार करें तो अपने सन्देशमें उनकी त्रुटियों और अपेक्षित सुधारोंका दिग्दर्शन कर सकते हैं।

गांधीजी : यदि कोई गोरक्षा से सम्बन्धित व्यक्ति चन्दा माँगने आये तो दो-चार पैसे देकर जिस प्रकार उसे सामान्य रूपसे विदा कर दिया जाता है, उसी प्रकार मैं भी एक-आध सन्देश दे सकता हूँ। किन्तु मुझे लगता है कि इस तरहके सन्देशसे कोई काम नहीं बनता।

भेंटकर्त्ता : आप ठीक कहते हैं। सन्देशकी बात छोड़ दें तो क्या मैं आपसे पूछ सकता हूँ कि इतने वर्षोंके बाद आपको गोसेवा से सम्बन्धित अपने विचारोंमें कुछ फेरफार करना योग्य लगता है। आपके पहले जो विचार थे वे इस प्रकार थे — १. केवल गोसेवा का काम ही हमें स्वराज्यके निकट ले जा सकता है। २. मुझे ऐसा लगता है कि जबतक गोवध हो रहा है, तबतक मेरी ही हत्या की जा रही है। गायको बचानेके लिए मेरा प्रयत्न चलता ही रहता है। मेरा सारा प्रयत्न गो-

१. यह भेंट साधन-सूत्रमें भूमिकाके रूपमें दी गई है।
२. भेंट दो बारमें पूरी हुई थी। दूसरी बारकी तिथि निश्चित नहीं है।
३. सन्देश एक संस्था के प्रतिनिधिने अपने मासिक पत्रके लिए माँगा था।

वध समाप्त करनेके लिए ही है। जो गायको बचानेके लिए तैयार नहीं है, वह हिन्दू नहीं है। ३. मेरी दो भावनाएँ गहरी हैं: एक अस्पृश्यता-निवारण और दूसरी गो-सेवा। इन दो कामोंके सफल हो जानेपर ही स्वराज्यकी प्राप्ति होगी। मुझे मोक्ष इन दोनों कामोंके सिद्ध होनेपर ही दिखाई देता है।

गांधीजी: मुझे इन विचारोंमें कुछ भी फेरफार नहीं करना है। फिर भी इनका अर्थ करते हुए पूर्वापर सन्दर्भ और गोसेवा का जो व्यापक अर्थ मैं करता हूँ, उसपर ध्यान देना चाहिए। मैं गोरक्षा में जीवमात्रका समावेश करता हूँ। शायद आप नहीं जानते होंगे कि आपने गोरक्षा के विषयमें जो वाक्य उद्धृत किये हैं मैं उनसे अधिक कह चुका हूँ। उदाहरणके लिए मैंने तो यह भी कहा था कि गोरक्षा की भावना हिन्दू-धर्मकी मानवजातिको एक बहुत बड़ी देन है। किन्तु मेरे ये उद्‌गार गोरक्षा सम्बन्धी मेरी विशिष्ट कल्पनाको लेकर ही हैं।

भेंटकर्त्ता: आपने जो कहा, मैं उसका अभिप्राय समझता हूँ। मैं उसीसे सम्बन्धित एक और प्रश्न पूछता हूँ। कुछ लोगोंका कहना है कि गोरक्षा के कामको निरपेक्ष ढंगसे करते समय सत्य और असत्यके विधि-निषेधका आग्रह रखना आवश्यक नहीं है; गोरक्षा चाहे जिस प्रकारसे की जा सकती है। इस विषयमें आपका क्या मन्तव्य है?

गांधीजी: गोरक्षा के कार्यमें सत्यकी बलि देनेका अर्थ साक्षात् गायकी बलि देना है। इसी प्रकार प्रजाके हितके काममें सत्यकी बलि देनेका अर्थ साक्षात् प्रजासे विश्वासघात करने-जैसा है। मेरे ये विशिष्ट विचार जनताको पसन्द नहीं आये और उसके गले नहीं उतरे। इसलिए आज गोरक्षा का जो आन्दोलन चल रहा है, मैं उसमें नहीं पड़ना चाहता। सच कहें तो मैं आज भी गो-रक्षाके लिए प्रयत्नकी पराकाष्ठा कियेहूँ। सो किस प्रकार, यह एक पहेली ही है। समाचारपत्रोंके बलपर यह पहेली नहीं बुझाई जा सकती। तथापि, इस विषयमें स्वयं मैं तो आश्वस्त ही हूँ। सम्भव है, आप भी इस पहेलीका जवाब समझ गये होंगे।

भेंटकर्त्ता: जी हाँ; मैं आपका आशय समझ रहा हूँ।

गांधीजी: मैंने गोसेवा-सम्बन्धित प्रश्नका खासा अध्ययन किया है। मैं जितनी गोशालाओंमें गया हूँ, उतनी गोशालाओंमें शायद ही कोई गया हो। मैंने इनमें से हरएक संस्थाको भली-भाँति देखा और उनपर विचार किया। अपने विचार भी मैंने उन संस्थाओंको लिखकर दिये।

भेंटकर्त्ता: तब क्या आप गोशालाओंमें दिखाई पड़नेवाले दोषोंके विषयमें कुछ कहनेकी कृपा करेंगे?

गांधीजी: वे लगभग वैसे ही हैं जैसा अभी आपने पढ़कर सुनाया।

भेंटकर्त्ता: उस हालतमें आपके विचारसे गायका रक्षण किस प्रकार हो सकता है?

गांधीजी: मैं वह सभी कहूँगा; किन्तु आज तो भेंटके लिए जितना समय निश्चित किया था, वह समाप्त हो गया है। इसलिए समय निश्चित करनेके बाद

आप जब फिर मेरे पास आयेंगे, मैं अवश्य आपसे बातचीत करूँगा। तब हम और अधिक चर्चा करेंगे; और यदि आप सचमुच इस कामके प्रति उत्साह रखते होंगे तो मैं आपका सहकारी अथवा आप मेरे सहकारी होकर मिलजुल कर काम करेंगे

(२)

[८ सितम्बर, १९३३ के पश्चात्]

भेंटकर्त्ता : यदि मैं आपकी बातका ठीक-ठीक अभिप्राय समझा हूँ तो वह है, पूर्ण सत्य और अहिंसा, जाति-द्वेषका अभाव, परम सहिष्णुता और प्रेम तथा इसके साथ-साथ सम्यक् आर्थिक दृष्टि अर्थात्, दुग्धालयों और चर्मालयोंको बढ़ाना चाहिए। और इस प्रकार गायोंकी उपयोगिताको बढ़ानेका प्रयत्न करना चाहिए। आपकी गोसेवा-सम्बन्धी कल्पनाका वैशिष्ट्य यही है न?

गांधीजी : बिलकुल ठीक। जो लोग गोवध करते हैं, उनमें ज्ञानका अभाव है। उन्हें मारने-पीटनेसे ज्ञानका यह अभाव दूर नही होगा। उसके लिए तो सहानुभूति और प्रेमके साथ दूसरे प्रकारके प्रयत्न आवश्यक है। फिर आर्थिक दृष्टिसे गायको अधिक सक्षम किये बगैर चारा नही है।

भेंटकर्त्ता : आपका अभिप्राय ऐसा तो नहीं है कि यह प्रयत्न करते समय गायके प्रति विशिष्ट धार्मिक भावना अथवा विशिष्ट आदर रखना जरूरी नहीं है।

गांधीजी : नही नही। इसके विपरीत, गोसेवा विषवक मेरी कल्पनाके अनुसार अमल करनेपर ही यह भावना अथवा आदर-वृत्ति कायम रखी जा सकती है।

भेंटकर्त्ता : यदि हमें आपके ये विचार मान्य हों तो हमें काम आगे बढ़ानेके लिए क्या करना चाहिए? क्या आप कोई वार्षिक अथवा त्रैवार्षिक योजना सुझा सकेंगे?

गांधीजी : योजना वार्षिक हो चाहे त्रैवार्षिक, इतना काम तो करना ही चाहिए : (१) गायके दूधके उपयोग पर जोर देना और दूसरे प्रकारके दूधका उपयोग बन्द करना। (२) गायके मृत शरीरके सभी अंगोंका उपयोग। उसका कुछ भी बरबाद न हो, इसकी कोशिश करना और प्रचार करना। (३) गायकी नस्ल सुधारनेकी कोशिश करना। (४) गायोंको अधिक दूध देनेवाली बनाने आदिकी कोशिश करना।

भेंटकर्त्ता : गोसेवकोंसे इस प्रयत्नके दौरान क्या आप अस्पृश्यता-निवारण, हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य जैसे कामोंकी भी अपेक्षा करेंगे?

गांधीजी : बिलकुल नहीं। यदि वे गोसेवा का व्यापक अर्थ समझते हों तो इतना पर्याप्त है। केवल इतना समझ लेनेसे ही काफी काम हो सकता है। उसका अर्थ केवल यही हुआ कि आपने केवल विशेष रूपसे गोसेवा का काम अपने हाथमें लिया है। मैं अस्पृश्यता-निवारणका काम करते समय भी जो यह दावा करता हूँ कि मैं गोसेवा का काम भी कर रहा हूँ, सो इसी अर्थमें।

भेंटकर्त्ता : अपपके बताये हुए ढंगसे हम लोग काम करना चाहें तो हमें आपकी ओरसे किस प्रकारका सहयोग मिल सकता है?

गांधीजी: मैं मानता हूँ कि कार्यकर्त्ताओंमें कुछ गुण आवश्यक है। यदि उस कसौटीपर आपमेंसे कोई खरा उतरे तो मैं उसे पैसेकी ओरसे निश्चित कर दूँगा।

भेंटकर्त्ता: क्या आपको ऐसा लगता है कि इस कामके लिए 'हरिजन' जैसा कोई अखबार जरूरी होगा?

गांधीजी: अखबार निकालना बादका, बल्कि बिलकुल अन्तिम काम होगा। पहले तो विशिष्ट विचारोंसे प्रेरित एक संगठन होना चाहिए। उसके बाद अखबार निकालना ठीक हो सकता है। 'हरिजन'के विषयमें भी मेरी यह दृष्टि है।

भेंटकर्त्ता: हम इन दिनों गोरक्षा-सम्बन्धी संस्थाओंके एकीकरणपर बड़ा जोर दे रहे हैं? आप इसे कहाँतक पसन्द करते है?

गांधीजी: यह एक बड़ा कठिन काम है, किन्तु मैं इसे पूरी तरह पसन्द करता हूँ। यदि आप लोग इसमें सफल होंगे तो आपका अभिनन्दन करूँगा।

[गुजरातीसे]
गोसेवा, पृष्ठ ५-९

४८६. क्या उसमें दबाव था?

'मॉडर्न रिव्यू'के नये अंककी एक टिप्पणीमें मेरे पिछले उपवास[1] की कुछ चर्चा की गई है। 'मॉडर्न रिव्यू'की टिप्पणियाँ सदा ही पढ़ने-योग्य होती हैं। गत १४ अगस्तको सरकारको जो पत्र मैंने लिखा था, उसका निम्नलिखित अंश लेखकने उद्धृत किया है: . . .[2] और उसके बाद यह विचार प्रकट किया है:[3]

> . . . **हमें . . . विवश होकर कहना पड़ता है कि अपनी शुद्धि और सान्त्वनाके लिए किये गये उपवासका सम्बन्ध यद्यपि केवल उपवास करनेवाले व्यक्तिसे ही होता है, पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे राजनैतिक अथवा सामाजिक परिवर्तनोंके लिए किये गये उपवासोंका प्रभाव दबाव-जैसा ही होता है, भले ही दबावकी इच्छा उनमें न रही हो। . . . दूसरे दबावोंकी तरह, इस प्रकारका अनिच्छित दबाव भी व्यापक शुद्ध आचरण और स्थायी सुधारमें सहायक नहीं हो सकता।**

इस आलोचनाकी मैं चर्चा करना चाहता हूँ, क्योंकि यह उस विषयकी है जो अभी समाप्त नहीं हुआ है। पिछले अनेक वर्षोंसे उपवास मेरे जीवनका अभिन्न अंग बन गया है; और चाहे मैं जेलकी चारदीवारीके अन्दर रहूँ या बाहर, मुझे पुन: उपवास करनेकी आवश्यकता हो सकती है। अत: उपवासके विज्ञानपर, यदि मैं अपने उपवासोंके बारेमें 'विज्ञान' जैसा पवित्र शब्द प्रयुक्त कर सकूँ तो, जितना भी लिखा जाये कम है। जो लोग बेसोचे-समझे मेरा अनुकरण करते हैं, उनके लिए और जो

१. १६ से २३ अगस्त, १९३३ तक।
२. वह यहाँ नहीं दिया गया है; देखिए पृ० ३७१।
३. उसके कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

वस्तुस्थितिको पूरी तरह जाने बिना ही कभी-कभी मेरी आलोचना कर बैठते हैं, उनके लिए भी इस विषयका स्पष्टीकरण आवश्यक है।

लेखकने जो-कुछ लिखा है, उसके बहुत-से अंशसे मैं सहमत हूँ। मैं स्वीकार करता हूँ कि दुर्भाग्यसे मेरे सितम्बरके उपवासने कुछ लोगोंको ऐसा कार्य करनेको बाध्य किया जो यदि मैं उपवास न करता तो उन्होंने न किया होता। मुझे यह भी स्वीकार है कि पिछले उपवासके दबावके कारण सरकारको मुझे छोड़ना पड़ा तथा यह भी मानता हूँ कि इस तरहके दबावसे कभी-कभी अशुद्ध आचरण भी हो जाता है। यहाँतक मेरा और लेखकका एकमत है।

किन्तु मेरी इन स्वीकृतियोंसे उपवासके मूलपर कुठाराघात नहीं होता। इनसे तो यही पता चलता है कि सावधानीकी बहुत आवश्यकता है और जो लोग सुधार या न्यायके निमित्त उपवास करना चाहते हैं, उनमें विशेष योग्यता होनी चाहिए।

नैतिक आचरणकी जाँचमें मनुष्यका उद्देश्य ही मुख्य तत्त्व होता है। अपने कार्यकी नैतिकताका खयाल होनेके कारण, मैंने कह दिया था कि उपवासका उद्देश्य सरकारपर दबाव डालना नहीं है। मैं तो यही चाहता था कि यदि सरकारको वांछित सुविधाओंकी अनुमति देना उचित न जान पड़े, तो वह मेरा कथन सत्य मानकर मुझे शान्तिपूर्वक मरने दे। यदि जेलमें मेरी मृत्यु हो जाती, तो मेरे पत्रके प्रकट होनेपर वह हृदयहीनताके अपराधसे मुक्त हो सकती थी। बेशक, मैं यह जानता था कि सरकारपर मेरे उपवासका कुछ प्रभाव पड़ सकता है, यद्यपि अपना उद्देश्य मैं इसके प्रतिकूल घोषित कर चुका था। पर इस डरसे कि अवांछनीय परिणामोंकी सम्भावना है, किसीको उचित मार्गसे डिगना नहीं चाहिए। इस तरह अगर मनुष्य डिग जाये, तो फिर कोई महान् कार्य किया ही नहीं जा सकता।

अपना आशय और अधिक स्पष्ट करनेके लिए मैं सितम्बरके उपवासको लेता हूँ। जाँचके लिए यह एक अच्छा उदाहरण होगा, कारण कि सरकारका उससे कुछ सम्बन्ध नहीं था। उसका उद्देश्य सवर्णों और हरिजनों, दोनोंपर ही प्रभाव डालना था। लेकिन जो निर्णय मैं चाहता था, उसके गुण-दोषपर विचार किये बिना ही वह निर्णय कर दिया जाये, यह इरादा मेरा हरगिज नहीं था। मेरा आशय था अपने आत्मोत्सर्गसे हिन्दुओंको जागृत और सक्रिय करना। मेरा वह आशय पूरी तरह सफल हुआ और उस हदतक, व्यावहारिक दृष्टिसे, मेरे उपवासपर दोषारोपण नहीं किया जा सकता। उपवास उस आशयकी सीमासे भी बाहर गया और कुछ लोगोंने अपने विश्वासके विरुद्ध बाध्य होकर निर्णय किया, यह बात दुर्भाग्यपूर्ण हुई। परन्तु जीवनके साधारण व्यवहारोंमें मनुष्यसे ऐसी बातें तो सदा हुआ ही करती हैं। दूसरोंसे या अपने आसपासकी परिस्थितियोंसे अलिप्त रहकर मनुष्य हमेशा कब बरताव करता है? पर मैं इतना कह सकता हूँ कि समझौतेसे सम्बन्धित लोगोंकी बहुसंख्याने उसे आजादीसे और पूरी तरह बहस और विचार किये बिना स्वीकार नहीं किया। उन्होंने समझौतेको यदि स्वीकार किया तो यह विचार करके ही किया कि वह कुल मिलाकर उचित और न्याययुक्त है। मेरे प्राण बचानेके लिए उन्होंने सिद्धान्तकी बलि नहीं दी।

और अब, जब मैं समझौतेकी चर्चा कर रहा हूँ, प्रसंगवश मैं यह कहता हूँ कि यदि कुछ भी अन्याय हुआ है, तो वह अभी दूर हो सकता है। यदि सम्बन्धित पक्षोंको यह विश्वास दिला दिया जाये कि वास्तवमें अन्याय हुआ है, तो उसे दूर करनेका समय अभी भी निकल नहीं गया है। मुझे यह विश्वास दिलानेकी कोई आवश्यकता नहीं है कि यदि सचमुच कोई अन्याय हुआ है, तो उसे दूर करनेके लिए जितना मुझसे बन पड़ेगा उतना प्रयत्न करना मैं अपना धर्म समझूँगा।

अब फिर मैं अपने मूल विषयपर आता हूँ। सुधारके एक साधनके रूपमे, उपवासका बड़े पैमानेपर प्रयोग मैंने १९१३ मे[१] शुरू किया था। उससे पहले भी मैं बहुत बार उपवास कर चुका था, लेकिन उस ढगसे नही जिस ढंगसे १९१३ में किया। मेरा यह निश्चित मत है कि मेरे अनेक उपवासोंका सामान्य परिणाम निस्सन्देह लाभदायक ही रहा है। उन उपवासोंका जिनसे सम्बन्ध था और जिनपर प्रभाव डालना अभीष्ट था, उनकी अन्तरात्मा उन उपवासोंसे सदा जागृत हुई। मै नहीं जानता कि उन उपवासों द्वारा कभी कोई अन्याय हुआ है। यदि बगाल अन्यायको सिद्ध करता है तो वह एक अपवाद होगा। हर हालतमे, उसमें किसीपर दबाव डालने की कल्पनातक नहीं थी। वस्तुतः इन उपवासोंसे जो प्रभाव डाला गया है, उसके लिए दबाव एक भ्रामक शब्द है। दबावका अर्थ है, किसीसे जबरदस्ती अपनी मर्जीका कोई काम करानेके लिए उसपर किया गया हानिकारक बल-प्रयोग। उपवासोंमें तो बल-प्रयोग खुद मेरे ऊपर हुआ है। परपीड़न और आत्मपीड़न, दोनों एक ही कोटिमें नहीं आ सकते। यदि मैं अपने किसी ऐसे मित्रकी अन्तरात्माको जागृत करनेके लिए उपवास करता हूँ जिसने निश्चय ही गलती की है, तो मैं दबाव शब्दका सामान्यतः जो अर्थ होता है, उस अर्थमे उसपर दबाव नहीं डालता हूँ।

टिप्पणीकारने लिखा है कि कुछ उपवास ऐसे हो सकते है जिनका "दबावपूर्ण प्रभाव" नही पड़ता। परन्तु यदि मेरे उपवासोंके लिए "दबावपूर्ण प्रभाव" शब्दोंका प्रयोग उचित हो, तो यह साबित किया जा सकता है कि सभी उपवासोमें थोड़ा-बहुत दबाव रहता ही है। वास्तविकता यह है कि आध्यात्मिक उपवासके प्रभाव-क्षेत्रमे जो भी आता है, उसका हृदय प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। आध्यात्मिक उपवासको इसीलिए 'तप' कहते हैं। और तप जिनके हितार्थ किया जाता है, उन्हें शुद्ध किये बिना रह नहीं सकता।

बेशक, इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि उपवास सचमुच दबाव-पूर्ण हो सकते हैं। स्वार्थ-साधनके लिए किये जानेवाले उपवास इसी कोटिमें आते हैं। किसी व्यक्तिसे रुपया ऐंठनेके लिए या अपना कोई व्यक्तिगत स्वार्थ साधनेके लिए जो उपवास किया जाता है, उसे दबावपूर्ण या अनुचित प्रभाव डालनेवाला कह सकते है। ऐसे अनुचित प्रभावका विरोध करनेकी मैं निस्संकोच सलाह दूंगा। इस तरहके जो उपवास मेरे विरुद्ध किये गये हैं या करनेकी धमकी दी गई है, उनके

१. यह उपवास फीनिक्स आश्रमके एक सदस्य द्वारा हुई नैतिक भूलका प्रायश्चित्त करनेके लिए किया गया था; देखिए खण्ड १२, पृ० ४००।

अनुचित प्रभावको मैंने सफलताके साथ रोका है। यदि यह युक्ति पेश की जाये कि स्वार्थपूर्ण और निःस्वार्थ उद्देश्योंमें भेद करना प्रायः कठिन होता है, तो मैं कहूँगा कि यदि कोई व्यक्ति किसी उपवासका उद्देश्य स्वार्थपूर्ण या नीचतापूर्ण समझता है, तो उसे उसके आगे झुकनेसे दृढ़तापूर्वक इनकार कर देना चाहिए, चाहे उसके इस इनकारसे उपवास करनेवालेकी मृत्यु ही क्यों न हो जाये। यदि लोग उन उपवासोंकी उपेक्षा करनेकी आदत डाल लें जो, उनके मतमें, अनुचित उद्देश्योंके लिए किये गये हैं, तो ऐसे उपवास दबाव और अनुचित प्रभावके कलंकसे मुक्त हो जायेंगे। सभी मानव-विधियोंकी तरह, उपवासका भी सदुपयोग और दुरुपयोग हो सकता है। परन्तु इसे सत्याग्रहका एक महान् शस्त्र और हिंसाका एक कारगर विकल्प बनाया गया है। इसके प्रयोगका अभी आरम्भ-काल ही है, अतः यह अभी पूर्णतातक नहीं पहुँचा है। परन्तु आधुनिक सत्याग्रहका निर्माता होनेकी हैसियतसे, इसके अनेक उपयोगोंमें से एकका भी मैं त्याग नहीं कर सकता। यदि त्याग कर दूँ, तो मुझे अपना यह दावा छोड़ना पड़ेगा कि मैं इसका प्रयोग एक विनम्र सत्य-शोधककी भावनासे करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-९-१९३३

४८७. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

पर्णकुटी,
९ सितम्बर, १९३३

प्रिय भाई,

आपका पत्र मुझे अच्छा लगा।[1]

मैं चाहता हूँ कि आप मुझसे मनमें यह विश्वास रखकर झगड़ते रहें कि दिखनेको मैं जिद्दी दिखता हूँ लेकिन जिद्दी नहीं हूँ और मेरा स्वभाव समझौतेकी गुंजाइश ढूँढ़ निकालनेका है। गोखले मेरे बारेमें ऐसा मानते थे। यह जो प्रमाणपत्र उन्होंने मुझे दिया था, मैं हमेशा उसे मूल्यवान मानता आया हूँ तथा मैंने उसके अनुरूप जीवन जीनेकी कोशिश की है। आप चाहते हैं कि मैं कांग्रेसको स्वतन्त्र छोड़ दूँ। यदि यह मेरे बसकी बात होती, तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं आज ही उसे स्वतन्त्र छोड़ देता। लेकिन यह इतनी सरल बात नहीं है। पटनामें मैंने सारे अधिकार स्वराज

१. ४ सितम्बरको अन्य बातोंके साथ श्री शास्त्रीने यह लिखा था: "आपका जवाब हृदयस्पर्शी था। वह पूर्ण और तर्कसंगत था। हम दोनोंमें से कोई न तो जल्दबाजीमें कोई राय बनाता है और न जल्दी उसका त्याग करता है। हमें परस्पर एक-दूसरेसे पूरा सन्तोष है। सभी परिस्थितियोंमें हम एक-दूसरेको अच्छी तरह समझेंगे और एक-दूसरेकी भावनाओंका खयाल रखेंगे।... कांग्रेस आपके शासनसे मुक्त हो, इस बातकी मैं पैरवी करता हूँ। अगर आप इसपर सहमतिकी प्रतीक्षा करते हैं तो बहुत ज्यादा देर हो जायेगी। कांग्रेसको फौरन मुक्त कर दीजिए। क्या ब्रिटिश राज्यकी तरह आपको यह कार्य तबतक मुल्तवी रखना चाहिए जबतक वह अनिवार्य ही न हो जाये।"

पार्टीको सौंप दिये थे।[1] उस समय मोतीलालने बड़ी खूबीसे यह स्वीकार किया था कि यद्यपि मैं हमेशा अधिकार दे देनेके लिए तैयार था, किन्तु पार्टी केवल इसी बार उन अधिकारोंको लेनेकी स्थितिमें है। सच यह है कि मैं अधिकार नहीं चाहता। इसे मैं विशेषसुविधा-युक्त सेवा मानता हूँ। जिस क्षण मुझे ऐसा लगेगा कि कांग्रेसके हितमें मैं इसका त्याग कर सकता हूँ, मैं ऐसा अवश्य करूँगा। फिर भी आप मुझपर यह भरोसा रख सकते हैं कि आपके सुझावको स्वीकार करनेकी मैं पूरी कोशिश करूँगा। जवाहरलालके शनिवारको यहाँ आनेकी उम्मीद है। उनपर बहुत-कुछ निर्भर करेगा।

स्नेह।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

लैटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २६४-५

४८८. पत्र : धीरू सी० जोशीको

९ सितम्बर, १९३३

चि० धीरू,

अगर तू अक्षर अच्छी तरह और स्याहीसे लिखे तो और अच्छा हो। पढ़ने-लिखनेमें खूब मन लगाना। छगनलाल[2] को पत्र लिखकर उसे रमा[3] के पास भेज देना। वह उसे अपने लिफाफेमें भेज देगी।

कसरत खूब करना और मुझे पत्र लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८१३) से।

४८९. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

९ सितम्बर, १९३३

भाईश्री भगवानजी,

आपने रंगून जाकर अच्छा ही किया है। मुझे आशा है कि आपकी यात्रा सफल होगी और भाइयोंके बीच मेल हो जायेगा।[4]

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८१८) से। सी० डब्ल्यू० ३०४१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. सितम्बर, १९२५ में हुई अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें; देखिए खण्ड २८ पृ० २१९-२०।
२. और ३. क्रमश : धीरू जोशीके पिता और माता।
४ आशय डॉ० प्राणजीवन मेहताके पुत्रोंमें पैतृक सम्पत्ति-सम्बन्धी झगड़ेसे है। देखिए अगला शीर्षक।

४९०. पत्र : मगनलाल प्रा० मेहताको

९ सितम्बर, १९३३

चि० मगनलाल[1],

मैं तुम्हारे और मंजुला[2] के पत्रकी आशा कर रहा था। मेरा पहला पत्र उसे मिल गया होगा। मुगल स्ट्रीटके पतेपर भेजा था।

जेकीबहन[3] का पत्र आज मिला है; इसके साथ भेज रहा हूँ। इसपर विचार करके जवाब देना।

मुझे ब्यौरेवार पत्र लिखना। अब काम अच्छी तरह कर पाता हूँ। व्यापार कैसा चल रहा है? तुम्हारा अध्ययन चलता है? क्या घूमने जाते हो? उर्मिला[4] तो खूब बड़ी हो गई होगी। कुछ समझौता हो जाये तो बहुत अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८१९) से। सी० डब्ल्यू० ३०४२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

४९१. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

शनिवार, ९ सितम्बर, १९३३

चि० भगवानजी,

तुम्हारे दो पत्र मिले थे। लगता है, तुम्हें मेरा पत्र नहीं मिला। धीरे-धीरे तुम वाड़जमें ही बने रहना पसन्द करने लगोगे। अभी पारसी बंगला अनुकूल लगता हो तो वहीं रहो और खाना बना लिया करो। यदि वहाँ कोई ऐसा हरिजन हो जो तुम्हारे लिए खाना बना सकता हो तो उसे अपनी रुचिके अनुसार बनाना सिखा दो। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखते हुए काम करना। शालाको हानि न हो, यह मैंने चिमनलालको समझा दिया है। शान्तिका इलाज लीलाधर स्वयं करे तो मैं लाचार

१. डॉ० प्राणजीवन जी० मेहताके सबसे छोटे पुत्र।

२. मगनलाल मेहताकी पत्नी।

३. जयकुँवर डॉक्टर, मगनलाल मेहताकी बहन।

४. मगनलाल मेहताकी पुत्री।

हूँ। उसे कुछ समझ हो तो कोई हर्ज नहीं है। मुझे लिखते रहना। अगले गुरुवार या शुक्रवारको बम्बई जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री भगवानजी
द्वारा: डॉ० लीलाधर धरमशी
पुराना वाड़ज, अहमदाबाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३६२) से; सौजन्य: भगवानजी पु० पण्डया।

४९२. पत्र: महेन्द्र वा० देसाईको

९ सितम्बर, १९३३

चि० मनु,[1]

तेरा पत्र मिला। लिखनेमें स्याही-कलमका उपयोग करना चाहिए। मुझे तो लगता है कि तुझे एक पत्र लिख देना था। अब फिर मुझे पत्र लिखना तेरे सिर रहा। तू अच्छी तरह अध्ययन करता दिखता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१५९) से; सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई।

४९३. पत्र: दूधीबहन वा० देसाईको

९ सितम्बर, १९३३

चि० दूधीबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। मै ठीक ही हूँ। अगले सप्ताह बम्बई जाऊँगा। इसके साथ पाँच लड़कोंके पत्र हैं। कुसुम वहाँ आये और उसका स्वास्थ्य ठीक रहे तो अच्छा है। अपने सभी [आश्रमके] लड़कोंकी देखभाल करती हो, यह अच्छी बात है। हमें यही शोभा देता है।

वालजी नासिक रोड सैन्ट्रल जेलमें है। उसका स्वास्थ्य ठीक है। खबर यही है कि सभी मजेमें हैं। मुझे पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१३५) से; सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई।

१. वालजी गोविन्दजी देसाईका बड़ा लड़का।

४९४. पत्र : मदालसा बजाजको

९ सितम्बर, १९३३

चि० मदालसा,

तेरा पत्र मिला। यह डर नहीं रखना चाहिए कि विनोबाके लिए तू भाररूप हो जायेगी। शिक्षकका कार्य है कि वह शिष्यकी अपूर्णताओंको दूर करे। अगर तू पूर्ण होती तो तुझे शिक्षककी मददकी क्या जरूरत रहती?

बाल काट डालनेका इतना डर क्यों? बाल तो घासके समान उगते ही रहते हैं। मैंने देखा है कि काट डालनेपर बहुत-सी लड़कियोंके बाल बादमें पहलेसे भी ज्यादा लम्बे हो गये। इस कारण बालोंका मोह न हो तो उनको काट डालो। पोशाकमें चड्डीके अलावा और कोई दूसरा परिवर्तन करनेकी जरूरत नहीं। तुम्हारे समान बालिकाकी पोशाक सहज ही ऐसी बनाई जा सकती है कि उससे सहूलियत हो। पर अब तो हम थोड़े समयमें ही मिलेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३१५

४९५. पत्र : विपिन बिहारी वर्माको

९ सितम्बर, १९३३

भाई विपिन,

तुमारा खत मिला। तुमारे व्याधिका सुनकर मुझे दुःख होता है। ईश्वर तुमको शीघ्र आराम देवे। पैसेके बारेमें ब्रजकिशोर बाबुसे बात कर लो। मेरा कुछ निश्चय नहिं हुआ है। यदि मैं बाहर रहा तो मुझे दुबारा लिखो। तुमारा खत ब्रजकिशोर बाबुको भेजता हूँ।

बापुके आशीर्वाद

श्रीयुत विपिन बिहारी वर्मा, बार-एट-ला
शकरपुर, पो० ओ० नरकटिया गंज
चम्पारन

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६६९) से।

४९६. बातचीत : एक मित्रसे[१]

[१० सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

आप इस तरह न घबरायें। मैं आपकी गहरी भावनाको समझता हूँ।

किन्तु आपको कैसी जबर्दस्त तकलीफ हुई!

यह कष्ट तो शरीरका था और इसे मैंने न्यौता था। ईश्वर जब कष्टका प्रसंग लाता है तो उसे सहनेकी शक्ति भी दे देता है। जब उपवास करनेकी प्रेरणा होती है तब उसे न करूँ तो वह मेरे लिए एक बड़ी वेदना बन जाये।

किन्तु ऐसेमें आपके जीवनका क्या होगा?

जीवनका सीधा और सपाट रास्ता नहीं है। इसमें चक्कर और घुमाव, चढ़ाव और उतार भरे पड़े हैं। यह कोई रेलगाड़ीका रास्ता नहीं है कि गाड़ी छोड़ी कि चलती चली गई।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १०-९-१९३३

४९७. सलाह : पर्णकुटी कन्याशालाकी बालिकाओंको[२]

गांधीजी : ईश्वरपर लोगोंकी श्रद्धा बनी रहे और बढ़ती रहे, इसके लिए यदि इतना कष्ट उठाना जरूरी हो जाये तो उठाना चाहिए।

एक लड़की : प्रार्थना अनिवार्य होनी चाहिए या स्वेच्छा-निर्भर?

गां० : खाना अनिवार्य है कि स्वेच्छा-निर्भर?

एक लड़की : बिना खाये तो काम नहीं चलता।

तब फिर बिना प्रार्थनाके भी हमारा काम नहीं चलना चाहिए। जिस तरह बिना भोजनके देहका विकास नहीं होता, उसी तरह प्रार्थनाके बिना आत्माका विकास नहीं होता। जिस प्रकार अन्न देहकी खुराक है, उसी तरह प्रार्थना आत्माकी। प्रार्थनाके बिना आत्मा निस्तेज हो जाती है। मर जाती है, यह तो किस तरह कह सकते हैं? क्योंकि 'भगवद्गीता' में आत्माको अमर कहा गया है। आत्मा मूढ़ अवश्य हो जाती है। संसारमें ऐसे बहुत-से लोग पड़े हुए हैं जो प्रार्थना नहीं करते। वे मूढ़ ही

१. यह और आगेके दो शीर्षक चन्द्रशंकर शुक्लकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से लिये गये हैं।

२. पर्णकुटी कन्याशालाकी छात्राओं ने गांधीजी से ईश्वर-परायणता और प्रार्थनाके विषयमें कुछ प्रश्न किये थे।

हैं। जिसे आत्माका भान न हो वह मूढ़ ही है। यह कहा ही नहीं जा सकता कि आदेश हो तो प्रार्थना की जाये। वह तो स्वेच्छासे ही होनी चाहिए। यदि कोई बल-पूर्वक प्रार्थना करायेगा तो वह ढोंग बनकर रह जायेगी। फिर भी हमें यह चाहिए कि हम स्वयं इसे अपना कर्त्तव्य गिनें, अपने लिए अनिवार्य मानें। भोजन भी सदा धर्म नहीं होता। कुछ दिनोंतक बिना खाये भी काम चल सकता है। अजीर्ण हो गया हो तब तो न खाना ही धर्म है। किन्तु प्रार्थनाका अजीर्ण सम्भव ही नहीं है। आप लोगोंको चाहिए कि आप अपने लिए प्रार्थनाको इतना अनिवार्य बना लें कि उसके बिना एक दिन भी काम न चले। मान लीजिए, आप सब बालिकाओंने यह निश्चय किया हो कि भले ही हमें कोई राजपाट दे दे हम बदलेमे झूठ नहीं बोलेंगे, तो इसे क्या कहेंगे, हुक्म या स्वेच्छा? आप सबने यदि यह निश्चय मिल-जुलकर किया हो, ऐसा नियम बना लिया हो कि हम सवेरे चार बजे और शामको साढ़े सात बजे प्रार्थना करेंगी ही, तो क्या होगा? और यदि किसी बुजुर्गके कहनेसे ऐसा निश्चय किया हो तो? आपको ऐसी बातोंमें अपने प्रति कठोर बनना चाहिए, ऐसा नियम निश्चित करनेपर ही प्रार्थना सम्भव है। बिना नियमके संसारमें कुछ नहीं होता।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १०-९-१९३३

४९८. सलाह : एक विद्यार्थीको[1]

[१० सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

मैं रोज आधे घंटे कातनेको कहता हूँ। यह आपको कुछ ज्यादा लगता है? मान लीजिए कि आप रोज एक ही पैसेकी कीमतका सूत कातें। यदि इसमें तीस करोड़का गुणा करें तो तीस करोड़ पैसे हो जाते हैं। यदि भारतके तीस करोड़ लोग रोज एक-एक पैसेका सूत भी कातें तो भारतकी सम्पत्तिमें रोज तीस करोड़ पैसोंकी वृद्धि हो जाये। इस तरह एक बरसमें कितना रुपया हो जायेगा? इस गरीब देशकी राष्ट्रीय सम्पत्तिमें इतनी वृद्धि हो और उसी हदतक गरीबीका सवाल हल हो। इस तरह मैं आपसे कोई बड़ी चीज नहीं माँगता।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १०-९-१९३३

१. वह विद्यार्थी गांधीजी से संध्याकी प्रार्थनाके बाद मिला था और यह "हस्ताक्षरनी किमत" उपशीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

४९९. ब्राह्मण क्या करें?

एक महाराष्ट्रीय भाई लिखते हैं:[१]

मैं आशा रखता हूँ कि जो अनुभव इस ब्राह्मणको हुआ, वैसा बहुतोंको नहीं होता होगा। निस्सन्देह, ऐसा अनुभव होना तो एकको भी नहीं चाहिए। जो लायक है, उसे नौकरी मिलनी चाहिए। इसमें जाति, वर्ण या धर्मका भेद नहीं होना चाहिए। देशमें देशके लोगोंको नौकरी या धन्धा मिलना एक आसान बात होनी चाहिए।

यह हुआ आदर्श। किन्तु हमारे देशमें ऊँच-नीच वगैरहके भावोंने जड़ जमा ली है। इसलिए गुण-दोषकी जाँच करते वक्त जाति, वर्ण, धर्म, वगैरहकी जाँच ज्यादा होती है। इस कारण कहीं ब्राह्मणको न रखनेका आग्रह हो और उसे न रखा जाये तो उसमें अचम्भेकी बात नहीं है। हमारे पापके कारण, धर्ममें पैठी हुई सड़ांधके कारण अशुभ बातें होती ही रहेंगी। इसलिए प्रायश्चित्तके तौरपर हमें बातें सहन करनी चाहिए।

लेकिन जो जन्मसे ब्राह्मण हैं और ब्राह्मणका धर्म पालन करना चाहते हैं, वे नौकरी क्यों ढूँढ़ें? ब्राह्मण होनेका दावा करनेवालेके लिए तो लोगोंमें ब्रह्मज्ञान फैलाकर गुजारेके लिए धर्मभावनावाले यजमानोंपर आधारित होना ही ठीक है। नौकरी ढूँढ़नेवाले ब्राह्मणके लिए सच्चा आश्वासन तो यही होगा कि वह अपना धर्म पाले। फिर उसके लिए निराशाका कारण ही नहीं रहेगा।

मैं उम्मीद रखता हूँ कि कोई यह कहकर मेरी निन्दा न करेगा कि वर्णधर्म मिट गया, ऐसा कहनेवाला मैं आफतमें फँसनेपर वर्णधर्मका आसरा कैसे लेता हूँ। वर्णधर्म मिट गया तो इसका यह अर्थ नहीं है कि किसी को उसका पालन नहीं करना चाहिए। वर्णधर्मको माननेवालेके लिए तो अपनी तरफसे उस धर्मको पूरी तरह पालना ही ठीक है। उक्त ब्राह्मण ब्राह्मण होनेका दावा करता है, इससे यही प्रकट होता है कि वह स्वयं वर्णधर्मको मानता है। इसलिए मेरी तो यह सलाह है कि वह उसी धर्मपर चले और नौकरीका लालच छोड़ दे।

इस कठिन कालमें भी ब्राह्मणोंने व्यक्तिगत रूपसे देशकी कुछ कम सेवा नहीं की है। दूसरोंके मुकाबले ब्राह्मणोंका त्याग जरूर अधिक है। लेकिन ब्राह्मणोंके लिए उत्तम त्याग तो नौकरी आदि सभी अर्थपरक बातोंको छोड़ना है। ब्राह्मण धर्मकी शोभा तो सिर्फ परमार्थमें ही है। ब्राह्मण अगर वर्णधर्मका मर्म जानकर उसके मुताबिक चले, तो वर्णधर्मका आसानीसे उद्धार हो सकता है। इसलिए उक्त ब्राह्मण और उसके

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने शिकायत की थी कि एक पढ़े-लिखे व्यक्तिको केवल इसलिए काम नहीं मिल रहा है कि वह ब्राह्मण है।

जैसी हालतवाले दूसरे ब्राह्मणोंको मेरी सलाह है कि वे ब्राह्मणका धर्म पालनेकी योग्यता पैदा करें, उसके मुताबिक अपना आचरण रखें और अर्थलाभका लालच छोड़ दें।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १०-९-१९३३

५००. बधाई

वीना (गुजरात) गाँवमें हरिजन और सवर्ण हिन्दुओंके दरम्यान जो फूट पैदा हो गई थी और फलस्वरूप आपसमें जो कटुता आ गई थी, वह अब दूर हो गई है और हरिजनोंका बहिष्कार समाप्त कर दिया गया है। इसके लिए सवर्ण और हरिजन दोनों ही बधाईके पात्र हैं। आशा है कि अब यह प्रेम-सम्बन्ध सदा ऐसा ही निभता चला जायेगा। मैं हरिजन सेवा संघकी भी उसके सफल प्रयत्नके लिए सराहना करता हूँ।

जान पड़ता है कि एक दूसरे गाँवमें भी कुछ ऐसी ही कटुता पैदा हो गई है। मालूम नहीं, इस नोटके लिखते समय वहाँ शान्ति हो पाई या नहीं। पर आशा है कि वहाँ शान्ति स्थापित हो गई होगी।

यह आपसी फूट हम लोगोंके लिए शर्मकी चीज है। हर गाँवमें हरिजन भाई-बहनोंकी आबादी दूसरी आबादीके मुकाबलेमें बहुत कम होती है। उन गरीबोंपर जुल्म करना मानो चींटी मारनेके लिए कटक सजाना है। ढोरोंमें बीमारी फैले या वे मरने लगें, तो इसके लिए हरिजनोंपर शक करना अथवा दोषारोपण करना निरा वहम है। मान लो कि इसमें किसी हरिजनका ही दोष है तो उसे मारने-पीटनेसे या उसका सामाजिक बहिष्कार कर देनेसे तो उसकी वह आदत छूट नहीं जायेगी। बल्कि हरिजनोंके प्रति प्रेम दिखानेसे, उनमें विद्याका प्रचार करनेसे, उनके साथ अच्छा बरताव करनेसे और उन्हें भाई-बहनके समान माननेसे ही उनकी वह कुटेव छूट सकेगी। इसलिए शुद्ध और पूर्ण रीतिसे अस्पृश्यता दूर करके ही हरिजन हरिके सच्चे जन बनाये जा सकते हैं।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १०-९-१९३३

५०१. पत्र : माधवदास और कृष्णा कापड़ियाको

१० सितम्बर, १९३३

चि० माधवदास और कृष्णा,

तुम दोनोंके पत्र मिले। सुख और दुःख शीत और उष्णताकी तरह हमारे साथ लगे हुए हैं। एक दिन मोटर-गाड़ीमें तो दूसरे दिन पैदल यात्रा करनी पड़े, तो इसमें सुख या दुःख क्यों मानें? हिम्मत और धीरज कभी न छोड़ना। ये ही सच्चे दोस्त हैं। आशा है कि हम शुक्रवारकी शामको मणिभवन पहुँचेंगे।

बापूके आशीर्वाद

श्री माधवदास गोकुलदास
शामजी सावजीकी चाल
मनोरदास स्ट्रीट
फोर्ट, बम्बई

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

५०२. सन्देश : वर्ल्ड फेलोशिप ऑफ फेथ्सको

[११ सितम्बर, १९३३ से पूर्व][1]

यदि मैं अपने जीवन द्वारा कोई सन्देश नहीं दे पा रहा हूँ तो कलम द्वारा क्या सन्देश भेज सकता हूँ?

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-९-१९३३

५०३. सन्देश : स्वदेशी प्रदर्शनी व बाजारको[2]

[११ सितम्बर, १९३३से पूर्व][3]

यदि महिलाएँ स्वदेशीका कार्य आगे नहीं बढ़ायेंगी, तो अकेले पुरुष क्या कर सकते हैं? आपकी प्रदर्शनीका आयोजन महिलाओंने किया है। इसलिए वह सुव्यवस्थित और सुसज्जित होनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-९-१९३३

१. यह तथा अगला शीर्षक "शिकागो, ११ सितम्बर, १९३३" तिथिके अन्तर्गत छपे थे।
२. अखिल भारतीय महिला संघकी गुजरात तथा भड़ौच शाखाओंके द्वारा आयोजित।
३. यह सन्देश "अहमदाबाद, ११ सितम्बर, १९३३" तिथिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

५०४. पत्र : वियोगी हरिको

११ सितम्बर, १९३३

भाई वियोगी हरि,[१]

खत मिला। पहले तो हम ट्रामके कानून जान लेवे। यदि कपडोंकी हि बात है तो मामला सीधा हो जाता है। यूँ भी हमारे हरिजनोंको सफाईके नियम तो सीखानेके हैं ही। 'तुम कौन हो' ऐसा पूछनेका ट्रामवालोंको अधिकार नहि है इसलिये हरिजनोंकी अथवा किसीका उत्तर देनेका धर्म नहि है। समय मिलनेपर 'हरिजन सेवक' के लिये अवश्य लिखुंगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री वियोगी हरि
एस० यू० एस०[२]
बिरला मिल्स[३], दिल्ली[४]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९४) से।

५०५. पत्र : रमादेवी चौधरीको[५]

११ सितम्बर, १९३३

प्रिय भगिनी,

आपका खत मिल गया है। तुमारा कार्य अच्छा चल रहा प्रतीत होता है। ऐसे हि चलता रहे। मुझे लिखा करो।

बापूके आशीर्वाद

श्री रमादेवी[६]
सर्वेन्ट्स ऑफ अनटचेबल्स सोसाइटी[७]
कटक,[८]
उड़ीसा[९]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७८३) से।

१. हिन्दीके कवि और **हरिजन सेवक** के सम्पादक।
२, ३ और ४. अंग्रेजी लिपिमें लिखे हुए हैं।
५. गोपबन्धु चौधरीकी पत्नी।
६, ७, ८ और ९. अंग्रेजी लिपिमें लिखे हुए हैं।

५०६. बातचीत : एक जापानी साधुसे[1]

[१२ सितम्बर, १९३३][2]

तुम कई तरहसे मदद कर सकते हो।[3] हरेक देशको अपनी आजादी स्वयं हासिल करनी चाहिए। किन्तु जो लोग भारतके ऋणी हैं वे कई प्रकारसे उसकी सेवा कर सकते हैं।

मैं उपदेशक नहीं हूँ। मैं तो काम करनेवाला हूँ। मैं तुम्हें काम सिखा सकता हूँ। यह चरखा उपासना-चक्र है और कर्म-चक्र भी है। इसे चलाते हुए मनुष्य काम तो करता ही है, उसके साथ प्रार्थना भी करता रह सकता है। मैं तुम्हें यही काम करनेकी सलाह देता हूँ। देखो, यह कैसा सूत निकालता है। जब तुम इसमें प्रवीण हो जाओगे तब मैं तुम्हें कोई दूसरा काम बताऊँगा। मैं कर्म सिखानेवाला शिक्षक हूँ, इसमें तो कोई शंका है ही नहीं। कातना सीखो, इसका मतलब यह है कि तुम्हें ओटना, धुनना भी आना चाहिए। इतना सीख लो तो तुम कह सकते हो कि तुम कातनेके आन्दोलनमें शामिल हो गये हो। फिलहाल इतना काफी है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १७-९-१९३३

५०७. वक्तव्य : पत्र-प्रतिनिधियोंको

१४ सितम्बर, १९३३

जनसेवाकी लम्बी अवधिके दौरान आम तौरपर मेरे सामने यह स्पष्ट रहा है कि अगले क्षण मेरा कदम क्या होगा। परन्तु पिछले २३ अगस्तको जब मैं जेलसे अप्रत्याशित रूपमें रिहा कर दिया गया, तभीसे मेरे चारों ओर अँधेरा है और कर्त्तव्य-पथ मेरे आगे स्पष्ट नहीं है। मेरे स्वास्थ्यकी हालत अभी ऐसी है कि अपनी खोई हुई शक्ति फिरसे हासिल करनेमें मुझे कई हफ्ते लग सकते हैं।

मेरे सामने सवाल यह था कि जैसे ही मैं शारीरिक रूपसे स्वस्थ हो जाऊँ फिरसे जेल चला जाऊँ या अपनेको उस अवधितक विरत रखूँ जबतक मैं रिहा न किये जानेकी अवस्थामें जेलमें रहता।

१. यह "चरखा — कर्म-चक्र" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।
२. **गांधी : १९१५-१९४८ — ए डिटेल्ड क्रॉनोलाजी** से।
३. जापानी साधु भारतकी सेवा करना चाहता था। इस सम्बन्धमें उसने गांधीजी से आदेश माँगा था।

प्रार्थनारत रहकर और पर्याप्त सोच-विचारके बाद मैं इस निर्णयपर पहुँचा हूँ कि जबतक मेरी सजाकी अवधि समाप्त नहीं हो जाती अर्थात्, आगामी ३ अगस्त तक मैं आन्दोलनके रूपमें सत्याग्रह करके जेल नहीं जाऊँगा। बहरहाल, पूनामें हुए अनौपचारिक सम्मेलन[1] के बाद मैंने जो वक्तव्य दिया था, उसमें दी गई सलाहपर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। मेरे लिए कार्यवाही स्थगित रखनेकी अनिवार्यता दुर्भाग्यपूर्ण होते हुए भी अपरिहार्य है।

अपनी रिहाईसे मैं बड़ी दुविधामें पड़ गया हूँ। परन्तु सत्याग्रहीके नाते यानी, सत्यान्वेषीके रूपमें मेरी विवेकबुद्धि किसी तरह भी यह स्वीकार नहीं करती कि रिहाईसे जो स्थिति पैदा हो गई है, मैं उस स्थितिमें जेल चला जाऊँ। रिहाईके पीछे चाहे जो उद्देश्य रहा हो, मुझे अपनी रिहाईके प्रति कोई शिकायत नहीं करनी है। मैं इस कार्यवाही की इसके गुणावगुणके आधारपर परीक्षा करूँगा। यह मुझे अत्यन्त ओछापन जान पड़ता है कि मैं कोई उत्तेजनात्मक कार्य करके सरकारको जेलकी अवधि समाप्त होनेसे पूर्व मुझे फिरसे कैद करनेपर मजबूर कर दूँ। यह और बात है कि ऐसी कोई असाधारण परिस्थिति पैदा हो जाये जिसका अभी मुझे अनुमान नहीं हो रहा और जिसके कारण मुझे अपना निर्णय बदलनेके लिए बाध्य होना पड़े। सत्याग्रहमें ओछेपनके लिए कोई स्थान नहीं है।

स्वयं अपनेपर लगाया गया यह प्रतिबन्ध कड़वा घूँट है। कैद होनेके बाद अपने मुकदमेके दौरान मैंने यह कहा था[2] कि बाहर रहकर अध्यादेशके विनाशकारी और निराशाजनक प्रभावको असहाय बनकर देखते रहनेसे मुझे असह्य पीड़ा होती है। यह एक सीधे-सादे और सही तथ्यका बखान ही था। मुझे ४ अगस्त-जैसी पीड़ा आज भी है। परन्तु यह पीड़ा सहनेके सिवा चारा नहीं है।

यदि सरकारके मनमें ऐसी कोई बात हो तो मैं इस अशोभनीय बिल्ली-चूहेके खेलमें स्वेच्छासे साथ नहीं दूँगा। इसलिए यदि सरकारने मुझे किसी वक्त फिर कैद कर लिया और हरिजन-सेवाका हक छीन लिया, तो मैं वैसी स्थितिमें यदि आन्तरिक प्रेरणा हुई तो ऐसा उपवास जो अन्ततक चले, शुरू करनेसे नहीं झिझकूँगा और यदि सरकार खतरेकी घड़ी आ जानेपर पिछले २३ अगस्तकी तरह मुझे फिर रिहा कर देती है तो भी मैं उपवास नहीं तोड़ूँगा।

मैं स्पष्ट शब्दोंमें अपने आत्मसंयमकी सीमाओंको प्रस्तुत कर दूँ। हालाँकि मैं उग्र सत्याग्रहसे दूर रह सकता हूँ, परन्तु मैं, जबतक स्वतन्त्र हूँ, जो मेरी सलाह माँगते हैं उन लोगोंका निर्देशन किये बिना और राष्ट्रीय आन्दोलनको गलत रास्तेपर जानेसे रोकनेकी चेष्टा किये बिना नहीं रह सकूँगा। मेरा विश्वास है, और यह विश्वास बराबर बढ़ता जा रहा है, कि सत्य हिंसात्मक उपायों द्वारा नहीं खोजा जा सकता।

१. जुलाई १२ से १४ तक हुआ; देखिए पृ० २७४-५ और २७६-८।

२. ४ अगस्तको; देखिए पृ० ३५८-६०।

राष्ट्रीय स्वाधीनता हासिल करना मेरे लिए सत्यकी खोज ही है। मुझे विश्वास है कि आतंकवादी तरीकोंका जवाब, चाहे वे आक्रामक द्वारा अपनाये जायें या आक्रान्त व्यक्ति द्वारा, हिंसात्मक प्रतिरोध द्वारा प्रभावपूर्ण ढंगसे नहीं दिया जा सकता। वह तो केवल सविनय प्रतिरोधसे ही दिया जा सकता है।

इसलिए यदि मैं इस वक्तव्यमें प्रतिपादित बन्धनोंसे ज्यादा बन्धन अपने ऊपर लादनेकी कोशिश करता हूँ, तो मैं अपने सिद्धान्तके प्रति निष्ठा न रखनेका दोषी होऊँगा। इसलिए यदि सरकार मुझे स्वतंत्र छोड़ देती है तो मैं यह समय हरिजन-सेवामें और यदि सम्भव हुआ तो ऐसे रचनात्मक कार्योंमें लगानेकी कोशिश करूँगा जिन्हें मेरी सेहत गवारा कर सकेगी।

यह दोहरानेकी कोई जरूरत नहीं है कि शान्ति भी मेरे लिए उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि सत्याग्रह। निस्सन्देह, सत्याग्रही प्रतिरोध तभी करता है जब शान्तिका और कोई उपाय नहीं रह जाता। इसलिए जहाँतक मेरा सम्बन्ध है और जबतक मैं स्वतन्त्र हूँ, मैं अपनी ओरसे भरसक यही कोशिश करूँगा कि सम्मानजनक ढंगसे शान्तिका हर सम्भव मार्ग खोज निकाला जाये।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-९-१९३३

५०८. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

पर्णकुटी, पूना,
१४ सितम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

तुमने अपनी बात पूरी तरह और साफ-साफ लिखी,[१] इसकी मुझे खुशी है।

१९३१ के आखिरमें लन्दनसे लौटनेपर जब मुझे पता चला कि तुम्हें अचानक मुझसे छीन लिया गया है,[२] तो उस विछोहसे मुझे बड़ा दुःख हुआ था। इसलिए तुमसे मिलने और विचार-विनिमय करनेको मैं बहुत बेचैन था।[३]

अपने पत्रमें तुमने जो-कुछ कहा है उसके अधिकांशसे मैं पूर्णतया सहमत हूँ। कराची कांग्रेसके बादके अनुभवसे मुख्य प्रस्ताव और आर्थिक कार्यक्रम[४] में, जिसका तुमने जिक्र किया है, मेरी आस्था और दृढ़ ही हुई है। इस विषयमें मेरे मनमें रत्ती-भर भी सन्देह नहीं है कि हमारा लक्ष्य पूर्ण स्वाधीनतासे कम हो ही नहीं सकता।

१. जवाहरलाल नेहरूके १३ सितम्बर, १९३३ के पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट १४।

२. जवाहरलाल नेहरूको गांधीजी से मिलने जाते हुए २६ दिसम्बर, १९३१ को रास्तेमें ही गिरफ्तार कर लिया गया था।

३. गांधीजी और जवाहरलाल नेहरू १० सितम्बरको मिले और उनमें लम्बी बातचीत चली।

४. देखिए खण्ड ४५, पृ ३९२-३।

मैं तुम्हारी इस बातसे भी पूर्ण हार्दिक सहमति रखता हूँ कि निहित स्वार्थोंमें ठोस परिवर्तन किये विना जन-साधारणकी दशामें कदापि सुधार नहीं हो सकता। यद्यपि मैं उस हदतक नहीं जा सकता जहाँतक कि तुम गये हो, पर मेरा यह भी विश्वास है कि भारत एक समांगी सत्ता बन सके, इससे पहले नरेशोंको अपने बहुत-कुछ अधिकार छोड़ने होंगे और जिन लोगोंपर आज वे शासन कर रहे हैं उनका लोकप्रिय प्रतिनिधि बनना होगा। गोलमेज परिषदके बारेमें तुम जो कहते हो, उसके अधिकांशकी मैं अपने निजी अनुभवसे पुष्टि कर सकता हूँ। तुम्हारी इस बातसे भी सहमत होनेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं दिखती कि इस जमानेमें, जब अन्तःसंचार इतना तेज हो गया है और सारी मानव-जातिमें एकताकी चेतना बढ़ रही है, हमें यह समझ लेना चाहिए कि हमारा राष्ट्रवाद प्रगतिशील अन्तर्राष्ट्रीयतासे बेमेल नहीं होना चाहिए। विश्वके दूसरे भागोंमें जो-कुछ हो रहा है, भारत उससे अलग-थलग और अप्रभावित नहीं रह सकता। अतः मैं तुम्हारे साथ बहुत दूरतक जा सकता हूँ और यह कह सकता हूँ कि 'हमें अपने-आपको विश्वकी प्रगतिशील शक्तियोंके साथ पंक्तिबद्ध कर देना चाहिए।' परन्तु मैं यह जानता हूँ कि आदर्शोंके प्रतिपादनमें इस तरहकी सहमति होते हुए भी, हममें स्वभावगत मतभेद हैं। अतः तुमने लक्ष्यको स्पष्ट घोषित करनेकी आवश्यकतापर जोर दिया। परन्तु मैंने, उसे एक बार निश्चित कर लेनेके बाद, उसकी पुनरावृत्तिको कभी महत्त्व नहीं दिया। यदि हमें लक्ष्यकी प्राप्तिके साधनोंका पता नहीं है और हम उनका उपयोग नहीं करते हैं, तो लक्ष्यकी अधिक-से-अधिक स्पष्ट व्याख्या और समझ ही हमें उसतक नहीं ले जा सकेगी। इसलिए, मैंने मुख्यतया साधनोंके संरक्षण और उनके अधिकाधिक उपयोगसे सरोकार रखा है। मैं जानता हूँ कि यदि हम उनका खयाल रखें, तो लक्ष्यकी प्राप्ति निश्चित है। मैं यह भी महसूस करता हूँ कि हमारे साधन जितने पवित्र होंगे, लक्ष्यकी ओर हमारी प्रगति उतनी ही अधिक होगी। अपनी परम सत्यनिष्ठा और अहिंसाका यदि हम प्रत्यक्ष प्रमाण दे सकें, तो मुझे विश्वास है कि राष्ट्रीय लक्ष्यकी हमारी घोषणा उन हितोंकी भावनाओंको, जिनपर तुम्हारा पत्र आक्रमण करता लगता है, बहुत दिन ठेस नहीं पहुँचायेगी। हमें मालूम है कि यदि हम अपने तरीकोंको केवल निर्दोष रख सके, तो नरेश, जमींदार और वे सब लोग जिनका अस्तित्व जन-साधारणके शोषणपर निर्भर है, हमसे डरना और हमपर शक करना बन्द कर देंगे। हम किसीपर भी दबाव डालना नहीं चाहते हैं। हम तो उनका मत-परिवर्तन करना चाहते हैं। यह तरीका लम्बा, शायद बहुत लम्बा लग सकता है, पर मेरा यह विश्वास है कि यह सबसे छोटा है।

श्रीयुत अणेके आदेशों और उनपर मेरे नोट[1] का तुमने जो अर्थ किया है, मैं उससे मुख्यतया सहमत हूँ। इस विषयमें मेरा दिमाग बिलकुल साफ है कि यदि वे आदेश जारी नहीं किये जाते तो सत्याग्रहका पूरा आन्दोलन ही उत्तरोत्तर बढ़ती भीतरी कमजोरीसे खत्म हो जाता। कारण, कि कांग्रेसी यह भ्रम पाले हुए थे कि ऐसे संगठन हैं जो कारगर ढंगसे काम कर रहे हैं और जिनसे उन्हें मार्गदर्शन मिल

१. देखिए पृ० ३१०-५।

सकता है। जबकि वस्तुस्थिति यह थी कि आर्डिनेंस राज्यमें, जिसका अर्थ संगठित आतंक है, कांग्रेस समितियोंके लिए संगठित रूपसे काम करना असम्भव हो गया था। जो संगठन अवैध और शक्तिहीन हो चुके थे, उनकी सक्रियताका झूठा विश्वास बड़ी तेजीसे निराशा पैदा कर रहा था, और उसे रोकना आवश्यक था। ठीक तरह प्रयुक्त किये गये सत्याग्रहमें निराशा-जैसी कोई चीज होती ही नहीं है। तुमने यह ठीक ही कहा है कि कुछ भी हो, "सत्याग्रह तत्त्वतः एक व्यक्तिगत विषय है।" मैं एक कदम और आगे जाता हूँ और कहता हूँ कि जबतक एक भी सत्याग्रही सत्याग्रह कर रहा है, आन्दोलन मर नहीं सकता और आखिर सफल होकर रहेगा। व्यक्तिगत सत्याग्रहियोंको किसी संगठनकी सहायताकी आवश्यकता नहीं है। आखिर संगठन उसे बनानेवाले व्यक्तियोंके बिना तो कुछ अर्थ रखता नहीं है। इसलिए श्रीयुत अणेके आदेशोंको मैं आर्डिनेंसोंका एक कारगर जवाब मानता हूँ। कांग्रेससे सम्बन्ध रखनवाले नर-नारी यदि केवल उन आदेशोंकी आवश्यकता और उनके सभी गूढ़ार्थोंको समझ लें, तो आर्डिनेंस, कम-से-कम सत्याग्रहियोंके लिए तो, नगण्य हो जायेगा। वे एक ऐसी धुरी बन सकते हैं जिसके गिर्द अजेय सत्याग्रहियोंकी एक सैना खड़ी की जा सकती है। श्रीयुत अणेके आदेशों या मेरे नोटमें ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह माना जाये कि वे कांग्रेसियोंके संगठित कार्यको हर रूपमें निषिद्ध ठहराते हैं।

मैं चाहूँगा कि तुम यह न सोचो कि व्यक्तिगत सत्याग्रह और सामूहिक सत्याग्रहमें कोई मौलिक भेद नहीं है। मेरे खयालसे तुम्हारी इस अपनी स्वीकृतिमें ही कि "यह तत्त्वतः एक व्यक्तिगत विषय है" वह मौलिक भेद निहित है। सामूहिक सत्याग्रह और व्यक्तिगत सत्याग्रहमें मुख्य भेद यह है कि दूसरेमें प्रत्येक (व्यक्ति) एक पूर्ण स्वतन्त्र इकाई है और उसके पतनका औरोंपर प्रभाव नहीं पड़ता। सामूहिक सत्याग्रहमें एकका पतन, आम तौरपर, बाकीपर बुरा असर डालता है। सामूहिक सत्याग्रहमें नेतृत्व आवश्यक है, जबकि व्यक्तिगत सत्याग्रहमें प्रत्येक सत्याग्रही अपना नेता आप होता है। सामूहिक सत्याग्रहमें विफलताकी सम्भावना रहती है, जबकि व्यक्तिगत सत्याग्रहमें विफलता असम्भव है। और अन्तिम बात यह कि राज्य सामूहिक सत्याग्रहसे निपट सकता है, जबकि व्यक्तिगत सत्याग्रहसे जो निपट सके ऐसा राज्य अभीतक कोई देखा नहीं गया है।

मेरे इस बयानको भी, कि जो संगठन अपनेको शक्तिशाली अनुभव करता हो वह खुद अपनी जोखिमपर सामूहिक सत्याग्रहको अपना सकता है, बहुत तूल नहीं देना चाहिए। जहाँ यह, एक विचारके रूपमें, निर्विवाद है, वहाँ मैं यह भी जानता हूँ कि इस समय कोई भी संगठन ऐसा नहीं है जो इस भारको वहन कर सके। झूठी आशाएँ बँधाना मैं नहीं चाहता।

अब गुप्त तरीकोंकी बात लीजिए। मैं सदाकी तरह इस बातपर दृढ़ हूँ कि वे वर्जित होने चाहिए। मैं खुद इसमें कोई अपवाद मान नहीं सकता। गोपनीयताने बहुत गड़बड़ी की है और यदि उसे सख्तीसे दबाया नहीं गया तो वह आन्दोलनको तबाह कर सकती है। ऐसी असामान्य परिस्थितियाँ हो सकती हैं जिनमें गुप्त तरीके

जरूरी हों। पर मैं जन-साधारणकी खातिर, जिन्हें हम निर्भीकताकी शिक्षा देना चाहते है, उस सुविधाको छोड़ दूंगा। उनमे यह विचार पैदा करके कि कुछ परिस्थितियोंमें वे गुप्त तरीके अपना सकते है, मैं उनके दिमागोको उलझनमे नही डालूँगा। गोपनीयता सत्याग्रहकी भावनाके विकासके लिए प्रतिकूल है। यदि कांग्रेसी यह समझ लें कि सभी सम्पत्ति किसी भी समय जब्त हो सकती है, तो वे उससे बिलकुल मुक्त होना सीख जायेंगे।

तुम्हारी इस बातसे मैं बिलकुल सहमत हूँ कि व्यक्तियोंका स्थानीय अधिकारियोको यह सूचना देना कि उनका इरादा अमुक प्रकारका सत्याग्रह करनेका है, हास्यास्पद है। एक महान आन्दोलनको हम हास्यास्पद बनाना नही चाहते है। इसलिए, जब सत्याग्रह किया जाये तो वह गम्भीरतासे और, जहाँतक सम्भव हो, कारगर ढंगसे कांग्रेस कार्यक्रमको आगे बढ़ानेके लिए किया जाना चाहिए।

तुम्हारे पत्रमें मुझे एक चीज छूटी लगी। काग्रेसकी विविध रचनात्मक गतिविधियोंका तुमने कोई जिक्र नहीं किया। १९२० मे[1] पूरे विचार-विमर्शके बाद जो कांग्रेस-कार्यक्रम बना था, वे उसका अभिन्न अंग बन गई है। सत्याग्रहकी पृष्ठभूमिमें साम्प्रदायिक एकता, अस्पृश्यता-निवारण और चरखे व खद्दरके व्यापक प्रचार-जैसी रचनात्मक गतिविधियोंके बिना हमारा काम चल ही नहीं सकता। इस बारेमें सदाकी तरह आज भी मेरा दृढ़ मत है। हमें यह समझना चाहिए कि कांग्रेसियोंकी संख्या जहाँ लाखोंमें है, वहाँ कैद हुए सत्याग्रहियोकी संख्या कभी भी ज्यादा-से-ज्यादा लाखसे ऊपर नहीं गई है। यदि बाकी लाखोंको जड़ताने घेर लिया है, तो मेरे खयालसे कोई चीज बुनियादी तौरपर गलत जरूर है। जो लोग किसी भी कारण सत्याग्रहियोंकी पक्तिमें शामिल नहीं हो सकते, उनकी इस खुली आत्म-स्वीकृतिमे लज्जा की कोई बात नहीं है। जो लोग मेरी बताई इन रचनात्मक गतिविधियोंमेंसे — और इस सूचीको मैं और लम्बा कर सकता हूँ — किसी एकमें लगे हैं, वे भी देशकी सेवा कर रहे हैं और उसे लक्ष्यके निकट ले जा रहे हैं। कांग्रेसी नर-नारी, आर्डिनेंस है या नहीं इसकी परवाह किये बिना, व्यक्तिगत रूपसे यदि स्वाधीनताकी इमारतको खड़ा करनेमें अपने हिस्सेका काम करते रहनेकी कला सीख लें और अपने खुदके महत्वको समझ लें, तो, क्षितिजपर घटाएँ छाई होनेके बावजूद, हताशा या निराशाका कोई कारण नहीं रहेगा।

अन्तमें, यदि तुम इसे मेरा अहंकार न समझो तो, मैं यह कहना चाहूँगा कि मुझमें पराजयका कोई भाव नहीं है और यह विश्वास कि हमारा देश तेजीसे अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ रहा है मुझमे आज भी उतना ही ज्वलन्त है जितना कि १९२० में था, क्योंकि सत्याग्रहकी प्रभावकारितामें मेरी आस्था अडिग है। परन्तु, जैसा कि तुम्हें मालूम है, पूर्ण और प्रार्थनापूर्ण विचारके बाद मैंने यही निर्णय किया है कि यरवदा जेलमें लगी अदालतने ४ अगस्तको मुझे जो सजा सुनाई थी उसके पूरा होनेतक मैं आन्दोलन नही करूँगा। उसके कारणोंकी चर्चा यहाँ आवश्यक नही है, क्योंकि

१. देखिए खण्ड १९, परिशिष्ट १।

मैं उस बारेमें एक अलग वक्तव्य दे चुका हूँ।[१] व्यक्तिगत रूपसे मेरे उसे स्थगित करनेका फिलहाल यद्यपि गलत अर्थ लगाया जा सकता है, पर उससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि ऐसा करना कैसे और कब एक कर्त्तव्य बन सकता है। और यदि यह कर्त्तव्य है तो इससे ध्येयको कोई क्षति नहीं हो सकती।

तुम्हारा,
बापू

जवाहरलाल नेहरू
पूना

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), पृ० १५३-६१। **महात्मा,** खण्ड ३, पृ० ३०८-११ भी।

५०९. पत्र : मणिबहन पटेलको

'पर्णकुटी, पूना'
१५ सितम्बर, १९३३

चि० मणि,

नासिकसे पत्र[२] तुझे नियमित रूपसे मिलते ही हैं, इस कारण मैंने कुछ भी नहीं लिखा। अब देखता हूँ कि मैंने पत्र लिखे होते तो वे भी तुझे मिल जाते। खैर। अगर मैं बाहर रहा तो मै यह मान लेता हूँ कि मै जहाँ होऊँगा तू वहाँ मुझे मिलने आ ही जायेगी। मैं जानता हूँ कि तू दो दिन बेलगाँवमें रहेगी। फिर नासिक तो जायेगी ही। तेरा स्वास्थ्य अच्छा होगा। मै मजेमें हूँ। आज बम्बई जा रहा हूँ। २१ तारीखको अहमदाबाद, वहाँसे २३ तारीखको वर्धा।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मणिबहन पटेल
सेण्ट्रल जेल, हिंडलगा
बेलगाँव

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृ० १०७-८

१. देखिए पृ० ३४१-२।
२. सरदार वल्लभभाईके, जो उन दिनों नासिक जेलमें थे।

५१०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

पूनासे बम्बई जाते हुए रेलमें
१५ सितम्बर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

आपका पत्र रेलमें मिला और यह जवाब इसी समय रेलमे लिख रहा हूँ। बम्बई जा रहा हूँ। बुधवारको अहमदाबाद जाऊँगा। गुरुवारको दो काम[1] करने हैं। यह तो आपने पढ़ा ही होगा। २३ तारीखको वर्धा पहुँचनेकी आशा है। इसके बादका निश्चय वहाँ होगा।

मेरे स्वास्थ्यकी बिलकुल चिन्ता न करे। मै सावधानी रखकर ही चल रहा हूँ और चलूँगा। दो रतल दूध, शाक और फल लेता हूँ। वजन १०० रतल है। रोज मालिश होती है। डॉ० दिनशा[2] खूब देखरेख रखते हैं, बम्बई भी आयेगे। प्रेमलीला-बहनने खूब प्रेम बरसाया। पर्णकुटी घर-जैसी हो गई है। आपने शहद जारी रखा है, यह मुझे बहुत अच्छा लगा। आपके लिए शहद भेजनेको उनसे कहूँ? वे कल बम्बई आयेंगी। समय-समयपर वहाँ जाती है। बुआजी[3] सारे समय साथ थीं। वे एक अजीब मिश्रण है। प्रेम तो है ही। परन्तु दिक्कते भी पैदा करती हैं। जवाहरलालका स्वास्थ्य खूब अच्छा है। 'यथा नाम तथा गुण:' को अभीतक चरितार्थ कर रहे हैं। अब लखनऊ जायेंगे। पर्णकुटीमें ठहरे थे। साथमे उपाध्याय[4] थे। मंजरअली[5] और प्रोफेसर[6] तो थे ही। प्रोफेसरको बुखार आ गया था। चिन्ताकी कोई बात नही है। एन्ड्रयूज शान्तिके लिए दो दिन पूना रह गया। देवधर[7]का शरीर बहुत सूख गया है। उन्हें तबीयतके बारेमे पत्र लिखें। शास्त्री[8] फिर अच्छे होकर पूना आ गये हैं। बहुत करके चन्द्रशंकर मेरे साथ दौरा करेगा। उसका शरीर ही इसमे बाधक है। मथुरादास[9] तो साथ है ही। वह वर्धा जायेगा या नहीं, यह तय नहीं है। अधिक सम्भावना तो उसके आनेकी है। मीराबहन साथ ही है। वह अच्छी रहती है।

१. सेठ माणेकलाल जेठालाल पुस्तकालयके भवनका शिलान्यास और चिनुभाई माधवलालकी मूर्तिका उद्घाटन, देखिए खण्ड ५६, पृष्ठ १३-९।

२. डॉ० दिनशा मेहता।

३. सरोजिनी नायडू।

४. जवाहरलालके निजी सचिव।

५. मंजरअली सोख्ता।

६. आचार्य जे० बी० कृपलानी।

७. जी० के० देवधर।

८. आर० वी० शास्त्री, अंग्रेजी **हरिजन**के एक सम्पादक।

९. मथुरादास त्रिकमजी।

प्रभावती भी अभी तो साथ ही है। महादेवका लम्बा पत्र आया था। उसे ठीक कह सकते हैं। पढ़ता है और कातता है। पन्नालाल[१] पूना था[२] अब बम्बई आयेगा। काका भी दो-तीन दिनमें बम्बई आयेंगे। बा अच्छी है। दाँत ठीक करा लेना। संस्कृत की पढाई चल रही है, किसी भी प्रकारकी चिन्ता मत करना। मणिको छूटनेपर, आपसे मिलनेके बाद, मैं जहाँ रहूँ वहाँ मुझसे मिल जानेके लिए लिखा है। कमला नेहरूको हृदयकी बीमारी रहती है। वह लखनऊमें है।[३]

साथ मिले तो क्या और न मिले तो क्या?[४] जिसे भगवानके साथका भान है, उसे और किसीके साथकी जरूरत ही क्यों हो? परन्तु आपने जो लिखा है वह ठीक ही है। और यही बात मुलाकातोंके बारेमें है।

घनश्यामदास (बिड़ला) और ठक्करबापाके साथ बैठकर हरिजन-कार्यके लिए दौरेका कार्यक्रम तैयार करना है।

आनन्दी अच्छी रहती है। नरहरिके बालक बीमार रहते हैं। उनकी देखभाल अच्छी हो रही है। बाबलो अपनी मौसीके पास गया है। उसने रोकर राजी कर लिया। निर्मला[५] अच्छी है। इसी तरह शारदा[६] भी। आनन्दीके पत्र मिलते रहते हैं। बम्बईमें मणिभवनमें ठहरूँगा। अहमदाबादमें रणछोड़भाई[६]के यहाँ।

जो चाहिए सो मँगवा लें। लिफाफे बनानेका काम महादेवने ले लिया था[७]।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाई पटेलने, पृ० २२-२५

१. पन्नालाल झवेरी।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. श्री वल्लभभाई पटेल जेलमें अकेले रखे गये थे और उन्होंने सरकारसे एक साथीके लिए प्रार्थना की थी।

४. महादेव देसाईकी बहन।

५. चिमनलाल शाहकी पुत्री।

६. रणछोड़लाल अमृतलाल शोधन, एक मिल-मालिक।

७. श्री वल्लभभाई पटेल अपनी रुचिके अनुरूप रद्दी कागजोंके लिफाफे बनाया करते थे।

परिशिष्ट

परिशिष्ट–१

बातचीत : 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिसे[1]

२ मई, १९३३

इंग्लैंडसे मुझे अपने प्रिय मित्रोंके सन्देश प्राप्त हुए हैं जिन्हें पाकर मुझे बहुत आनन्द हुआ है। ऐसा लगता है कि मैं जो कदम उठानेवाला हूँ उसके औचित्यकी उन्हें अन्तर्वृत्तिसे ही प्रतीति हो गयी है। यह बात उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें तो नही कही किन्तु उनके सन्देशोंका मैं यही अर्थ करता हूँ। मुझे डर था कि इस उपवासकी असाधारणताके कारण वे शायद इसे समझ नही सकेंगे। किन्तु मेरा डर निराधार सिद्ध हुआ है। श्री एन्ड्र्यूजने अपनी ओरसे और मित्रोंकी ओरसे सन्देश भेजा है। एक अन्य सन्देश पोलक दम्पतिसे प्राप्त हुआ है। जब भी मेरी बात उनकी समझमें नहीं आयी उन्होने मेरी आलोचना करनेमें कोई संकोच नहीं किया। मेरे मनमें एक अस्पष्ट-सी आशंका थी कि मेरा यह कदम उन्हें रुचेगा नहीं। भारतीय मित्रोंसे भी मुझे सन्देश मिल रहे हैं और मैं आशा करता हूँ कि अगले कुछ दिनोंमें मेरे इस कार्यका औचित्य लोगोंकी समझमें आ जायेगा। जो भी हो, मेरी यह प्रतीति बढ़ती जा रही है कि यह उपवास मैं टाल नहीं सकता था। यदि इस अभियानको शुद्ध नैतिक भूमिकापर चलाना था और उन स्वार्थी तथा अशुद्ध लोगोंके मलिन स्पर्शसे बचाना था जो इसमें घुस आये हैं, तो दूसरा उपाय ही नहीं था। अब मैं आशा करता हूँ कि अस्पृश्यता-निवारणमें लगे हुए सारे कार्यकर्त्ता अस्पृश्यता-निवारणकी प्रवृत्तिके विविध अंगोंकी — जिनमें अस्पृश्यता-निवारण-सम्बन्धी विधेयकोंके पक्षमें लोकमत तैयार करना भी शामिल है — सफलताके लिए दुगुने जोरसे जुट जायेंगे। यदि मैंने यह कदम न उठाया होता तो निश्चित था कि प्रगति रुक गयी होती। मैं चाहता हूँ कि सनातनी और सुधारक, दोनों ही, आगामी सप्ताहोंमें मिल-जुलकर काम करें और मौजूदा कानूनोंमें जो भी त्रुटियाँ दिखाई दें, उन्हें दूर करके किसी समझौतेपर पहुँच जायें।

आप पूछते हैं कि यदि मुझे रिहा कर दिया गया तो? इस प्रश्नपर अभी तो मैं विचार भी नहीं कर सकता।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृ० २७९–८०

१. देखिए पृ० ८६।

परिशिष्ट–२

वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीका पत्र[1]

मयलापुर
७ मई, १९३३

वैयक्तिक

प्रियवर भाई,

काफी सोचने-विचारने और अनेक प्रारूपोंको फाड़नेके बाद मैंने निश्चय किया है कि आपकी 'याचना,' तथा इसी २ तारीखके आपके अत्यन्त मार्मिक पत्रका सर्वोत्तम उत्तर यहाँ संलग्न उद्धरण ही है। मेरा विश्वास है कि यह आपकी अग्निपरीक्षामें, जो इसके यरवदा पहुँचनेतक प्रारम्भ हो गयी होगी, रंचमात्र ही सहारा दे सकेगा। मेरा आपको इससे रोकनेके लिए प्रयत्न करना निरर्थक ही होता और, जैसाकि आपने अपने प्रथम वक्तव्यमें कहा था, खुद मेरे लिए एक उलझन बन जाता। आपके मित्रों और सहकर्मियोंके लिए तो मात्र यही कामना करना शेष रह जाता है कि आप इस अग्निपरीक्षाको न केवल अनाहत पार कर लें बल्कि अन्तहीन प्रतीत होनेवाले इस संघर्षके लिए इसमेंसे तपस्याकी नई शक्ति लेकर निकलें।

मैं एक क्षणके लिए भी ऐसा कोई दिखावा नहीं करूँगा कि मैं आपके उपवाससे सहमत हूँ। मेरे-जैसा व्यक्ति, जो हिन्दू-धर्ममें जन्मा और वर्षों इसीमें पला है, [उपवासके] पक्ष या विपक्षकी दलीलोंसे भली-भाँति परिचित है। धार्मिक ग्रन्थोंके सहारे आपके वक्तव्योंमें निहित प्रायः सभी तर्कोंका खंडन किया जा सकता है। परन्तु विवेक और मानवता इन ग्रन्थों और आप्त-वचनोंसे परे हैं और आप आदतन उन्हींका सहारा लेते हैं। तथापि मुझे ऐसा अन्देशा है कि हम इस आखिरी अदालतमें भी एक ही पक्षमें नहीं पाये जायेंगे। हमारी मान्यताओंमें मौलिक भिन्नता है। यह भिन्नता मूलभूत है, इसे किसी भी वाक्छलसे दूर नहीं किया जा सकता।

हाल ही में आपने अपना दिल खोलकर रखनेके लिए जो-कुछ कहा है, उसके बावजूद मेरा विश्वास है कि आपके अत्यधिक आत्म-निरीक्षण और आन्तरिक तर्कवितर्कने आपके विवेकको क्षति पहुँचाई है। हर्षोन्मादकी ऐसी स्थिति तो, जिसमें मान्यताएँ उलट जाती हैं, दिन रात और रात दिन हो जाते हैं, आनन्द कष्ट और कष्ट आनन्द बन जाते हैं, रहस्यवादी भी कदाचित् ही अनुभव करते है। आदतन ऐसी स्थितिमें रहनेका प्रयास करना और तदनुरूप भाषाको अपनी दैनिक बोलचालकी भाषा बनाना तो, यदि आप ऐसा कहनेकी अनुमति दें तो नैतिक पादयष्टियोपर चलने-जैसा

१. देखिए पृ० ९३-४।

है। कभी-कभी मुझे ऐसा लगता है कि आप, अपनी यथार्थवादिताके बिलकुल विपरीत, अपने इर्दगिर्दके आम स्त्री-पुरुषोंपर भी ऐसा ही आचरण थोपते हैं। इन परिस्थितियोंमें निराशा और दु:खद असफलताका वातावरण तो बनना ही है। यदि आत्म-सुधार ही एकमात्र सम्भव सुधार है, तो शिक्षकको पश्चात्तापकी कोठरीमें ही बन्द रहना होगा, जो करीब-करीब आत्महत्या ही है। आपमें इस बातको समझनेके लिए दार्शनिकताकी कमी नहीं है कि अपने किसी विशेष कदमके समर्थनमें ईश्वरीय आदेशका दावा करनेका अर्थ है, उसको विवेचनसे परे रखना और दूसरोंके लिए उसके औचित्यको समझना नामुमकिन बना देना। जब कभी मैं आपके लेखोंमें ऐसा दावा पाता हूँ, तो मन-ही-मन कालिदासकी यह प्रसिद्ध पंक्ति उद्धृत किये बिना रह नहीं पाता :

विचारमूढ़: प्रतिभासि मे त्वम्।

"मुझे तो ऐसा लगता है कि आप चिन्ताकुल विचारसे चकरा गये हैं।"

सदैव आपका,

वी० एस० श्रीनिवासन

संलग्न पत्र

'रेवोल्युशन एण्ड रिलीजन' रीनॉल्ड निबूहर की पुस्तक 'मॉरल मैन एण्ड इम्मॉरल सोसाइटी' की जॉन मिडलटन मरी द्वारा की गई समीक्षा है। यह समीक्षा इसी महीनेके 'आर्यन पाथ' में छपी है। नीचे उसके अन्तिम अनुच्छेदकी नकल दी जा रही है जिसमें गांधीजी का उल्लेख है।

'तब जो पाश्चात्य जगतमें सामाजिक संघर्षके लिये . . . भौतिक और आध्यात्मिक आवश्यकतामें एक-जैसा विश्वास रखते हैं, वे क्या हैं? यही हमारा दुर्भाग्य है। गांधीजीकी सबसे महत्त्वपूर्ण प्रशस्ति यह है कि वे ऐसे व्यक्ति हैं जिनमें निबूहरकी पुस्तककी कठिन किन्तु कल्पनाशील दलीलोंकी अनिवार्य परिणति मिलती है। जहाँतक पुस्तकका सम्बन्ध है, मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि यह पाश्चात्य सभ्यताकी भयंकर समस्यापर हुई किसी भी अन्य विवेचनासे, जिससे मैं परिचित हूँ, ऊँचे स्तरकी है। यह भविष्यकी झाँकी देनेवाली पुस्तक है; और मेरा यह विश्वास है कि यदि मैं यह कहूँ कि अंग्रेजीभाषी जगतमें एक नये और स्थायी राजनैतिक आन्दोलनकी अग्रदूत सिद्ध होगी, तो मुझे रोमानी छलनाका शिकार नहीं माना जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २५२-४

परिशिष्ट – ३

जवाहरलाल नेहरूका पत्र[1]

देहरादून जेल
५ मई, १९३३

प्रिय बापू,

आज ही आपका पत्र आया है। इसके आनेकी मुझे बहुत हदतक उम्मीद भी थी, क्योंकि अपने विशाल हृदयके कारण आप किसीको भी भूल नहीं सकते। मैं पहले ही आपको एक तार भेज चुका हूँ।

जैसाकि मेरे तारसे जाहिर होगा, मुझे कुछ नहीं सूझ रहा है कि मैं आपसे क्या कहूँ। धर्मके क्षेत्रमें मेरी कोई पहुँच नहीं है और जैसे-जैसे मैं बड़ा होता गया हूँ, निश्चय ही मैं इससे दूर होता गया हूँ। मैं मानता हूँ कि मेरे पास इसके बदलेमें कोई दूसरी चीज है, कोई ऐसी चीज जो महज बुद्धि और तर्कसे भिन्न है, जो मुझे शक्ति और आशा प्रदान करती है। इस अपरिभाष्य और अनिश्चित प्रेरणाके सिवा, जिसमें सम्भव है धर्मका कुछ पुट हो लेकिन जो उससे बिलकुल भिन्न है, मैंने पूर्णतया मनकी कार्यविधियोंपर ही भरोसा करना सीखा है। शायद ये भरोसेके लिए निर्बल आधार हैं, परन्तु इनसे अधिक मजबूत कोई आधार दिखाई भी तो नहीं देता। हाँ, इस दिशामें मैं खोज तो करूँगा ही। मुझे ऐसा लगता है कि धर्मसे भावावेश और भावुकता उत्पन्न होती है और मार्ग-दर्शनके लिए इनपर और भी कम भरोसा किया जा सकता है।

निस्सन्देह, अन्तर्बोध-जैसी चीज कोई है तो सही, परन्तु वह कहाँसे आती है, मैं नहीं कह सकता! शायद मनके पीछेसे, अवचेतनसे, जहाँ अनुभवोंका संचित भंडार है।

हरिजन-प्रश्न बुरा — बहुत बुरा है, लेकिन यह कहना कि ऐसा बुरा दुनियामें और कुछ भी नहीं, मुझे तो गलत मालूम पड़ता है। मैं समझता हूँ कि मैं बहुत-कुछ ऐसा ही बुरा, बल्कि इससे भी बुरा दिखा सकता हूँ। यह हरिजन-प्रश्न सारे संसारमें विभिन्न रूपोंमें मौजूद है। क्या यह खास वजहोंका फल नहीं है? निश्चय ही इसका कारण मात्र अज्ञान और दुर्भावनासे अधिक कुछ और है। उन कारणोंको हटाना अथवा उनके प्रभावको व्यर्थ करना ही इस मसलेको समूल समाप्त करनेका एकमात्र उपाय लगता है। लेकिन मैं इन मसलोंके बारेमें अभी क्यों लिखूँ। इस पत्रमें मैं कोई बहस करना नहीं चाहता, क्योंकि बहस करनेका समय तो निकल गया लगता है।

१. देखिए पृ० ९७-८।

आपसे इतनी दूर होना तो कठिन है ही, परन्तु आपके नजदीक होना उससे भी अधिक कठिन है। इस रेल-पेलवाली दुनियामें बड़ा अकेलापन है, परन्तु आप इस अकेलेपनको और भी बढ़ाना चाहते हैं। जीवन और मरण तो तुच्छ हैं, अथवा तुच्छ होने चाहिए। यदि कोई चीज महत्वपूर्ण है तो वह है ध्येय, जिसके लिए कोई प्रयत्नशील है और यदि उसे यह विश्वास हो जाये कि उस ध्येयके लिए मरना ही उसकी सर्वोत्कृष्ट सेवा है, तो मृत्यु सहजसे-भी-सहज मालूम पड़ेगी। मैंने जीवनसे प्यार किया है—पर्वत और समुद्र, सूर्य और वर्षा, तूफान और बर्फ और पशु, पुस्तक और कला, यहाँतक कि मनुष्योंसे भी—और जीवन मेरे लिए सुखकर रहा है। लेकिन मृत्युकी कल्पनासे मुझे कभी कोई भय नहीं हुआ है। दूरसे यह ऐसी प्रतीत होती है मानो हमारे प्रयत्नका मुकुट ही हो, परन्तु समीपसे देखनेपर यह उतनी सुखदायी नहीं है।

गत चौदह या पन्द्रह वर्ष, जबसे मुझे विभिन्न गतिविधियोंमें आपसे सम्बन्धित रहनेका सौभाग्य मिला है, मेरे लिए बहुत ही बढ़िया समय रहा है। जीवन और भी भरा-पूरा, समृद्ध और सार्थक बन गया है। यह एक प्रिय और बहुमूल्य स्मृति है जिसे मुझसे कोई भी छीन नहीं सकता। जब भी भविष्य अंधकारमय होगा, अतीतकी यह झलक अंधेरेको हटायेगी तथा शक्ति प्रदान करेगी।

आपको मेरा सम्पूर्ण प्रेम।

स्नेहाधीन,
ज०

[पुनश्च :]

कमला देहरादूनमें रह रही है। आपका सन्देश मैं उसतक पहुँचा दूँगा।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू कागजात, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

परिशिष्ट – ४

बातचीत : च० राजगोपालाचारीके साथ[1]

४ मई, १९३३

गांधीजी : विधिशास्त्रमें भी आत्मघातका अधिकार माना गया है। आप मुझसे पूछेंगे कि रामतीर्थ, रामकृष्ण, विवेकानन्द, आदिने भी क्या ऐसी तपस्या की थी? रामतीर्थने जान-बूझकर आत्मघात किया हो या उनकी मृत्यु समाधिमें हो गई हो, किन्तु क्या उसका कोई परिणाम निकला? ईसा सूलीपर चढ़ गये, क्या उसका कोई प्रभाव हुआ?

च० राजगोपालाचारी : किन्तु हिन्दू-धर्म आत्मघातको मान्य नहीं बताता।

१. देखिए पृ० ११३।

गां० : मै नहीं जानता, किन्तु महादेव मुझसे कहते थे कि गंगामें डूबकर मरनेकी प्रथा थी।

च० रा० : वह तो गंगाजलसे पावन होनेके लिए रही होगी। मैं इतना स्वीकार करता हूँ कि इस पापका कारण आप हों तो आप आत्मघात कर सकते हैं। तर्ककी दृष्टिसे इसमें आपकी जय मानी जायेगी। किन्तु ऐसी जय तो आपको नहीं चाहिए न?

गां० : मुझे तो प्रायश्चित्त करना है। नैतिक उद्देश्य सिद्ध करनेके लिए साधन भी नैतिक होना चाहिए। कॉर्डिनल मैनिंगको तीन बिस्कुट और पानीपर रखा गया था। उसे इस प्रकार जिस धीमी मृत्युका आलिंगन करना पड़ा, उसकी तुलनामें तो २१ दिनका उपवास बहुत आसान माना जायेगा। नैतिक सुधार तपस्या और आत्म-शुद्धि-जैसे नैतिक साधनोंसे ही हो सकते हैं। जिन वैज्ञानिकोंने इस चीजका अनुभव किया हो, हमें उनके उदाहरणोंपर विचार करना चाहिए। मेरा और मेरी माँका जन्म ऐसे परिवारोंमें हुआ जिनमें ऐसे व्रत रोजकी बात थे। उनका यह अनुभव है। सम्भव है, मेरी माँके ये कठिन व्रत मेरे पिताको नहीं भाते रहे हों। किन्तु उनपर इन व्रतोंका कोई अनिष्ट प्रभाव नहीं हुआ और उनके प्रति उनके व्रतोंके कारण मेरा आदर तो बढ़ा ही था।

च० रा० : यह उदाहरण केवल विचार-साहचर्यका है, क्या इसके बलपर यह सिद्ध किया जा सकता है कि आपकी माँ ऐसे व्रत करती थी इसलिए आपको भी करने चाहिए। यदि कोई आदमी अपने शरीरमें सूई चुभाकर उसे कष्ट दे तो उससे लोगोंको यह समझनेमें कैसे सहायता मिलेगी है कि किसीको अस्पृश्य मानना पाप है?

गां० : तब यदि मैं कुछ ही दिनके उपवास करूँ तो? अथवा यदि इस उपवासके अन्तमें मैं न मरूँ तो?

च० रा० : इन दोनोमें कोई सम्बन्ध नहीं है। आप तो ऐसा मानते मालूम होते है कि देहदमनके द्वारा लोगोंको किसी सत्यकी प्रतीति कराई जा सकती है। मानो इन दोनोंमें कोई गूढ़ सम्बन्ध हो! ऐसे देहदमनके खिलाफ बुद्धने सबसे पहले विरोधकी आवाज उठाई थी।

गां० : सच्चा उपवास तभी माना जा सकता है जब शरीरके साथ चित्त और आत्माका सहकार हो। बुद्धका विरोध मात्र दैहिक उपवासके खिलाफ था।

च० रा० : दस दिनके बाद क्या आपमें स्पष्ट विचार करनेकी शक्ति रह जायेगी?

गां० : इससे पहले तो मै ऐसा कर पाया हूँ। शुद्ध उपवासमें विचार ज्यादा पवित्र हो जाते हैं। यद्यपि उनका कोई बाहरी चिह्न नही होता। एक साथीने पचपन दिनका उपवास किया था, फिर भी उसके विचार शुद्ध नहीं हुए क्योंकि उसका चित्त शुद्ध नहीं था। अपने उपवासके पहले ही दिन वह मुझसे इस बातकी चर्चा करने लगा कि उपवासके अन्तमें क्या करेगा। अभी भी उसका मन स्थिर नहीं है। उसने मुझे एक पत्र लिखा था जिसमें अपने मनकी मलिनताका वर्णन किया था।

किन्तु जिस मनुष्यका चित्त ईश्वरमें अथवा किसी पवित्र कार्यमें रत हो उसे तो जो वस्तुएँ पहले अस्पष्ट होती है वे धीरे-धीरे अधिकाधिक स्पष्ट होने लगती है।

च० रा० : आपकी बात एक हदतक ही सच मानी जा सकती है।

गां० : ऐसा कहनेमें आप एक ऐसी भूमिपर पाँव रख रहे हैं जिसमें गलती होनेकी बहुत सम्भावना है। वैज्ञानिकके अनुभवको तो आपको मानना ही चाहिए। जो मनुष्य पवित्र है, सत्यपरायण है और सत्यका अनुसरण करनेके लिए प्रतिज्ञाबद्ध है, वह वैसा ही वैज्ञानिक है जैसा कोई भौतिक विज्ञानवेत्ता।

च० रा० : किन्तु यह तो अस्वाभाविक स्थिति कही जायेगी।

गां० : पशुओके लिए अस्वाभाविक हो सकती है, मनुष्यके लिए नही। किसीको अदृश्यका दर्शन करना हो तो स्वयं अदृश्य होना पड़ेगा।

च० रा० : क्या आपको अदृश्यका दर्शन करना है?

गां० : हाँ; क्योंकि मुझे हरिजनोंकी उत्तम सेवा करनी है। अस्पृश्यताका नाश करना हो तो हमें ऐसा कुछ करना ही पड़ेगा जो १६ करोड़ मनुष्योके हृदयोंको स्पर्श कर सके।

च० रा० : एक अन्धविश्वास है कि भूत-प्रेत आदिसे बचनेके लिए लकडी छू लेनी चाहिए और इसमें ईश्वरको भी सान लिया जाता है। किन्तु ऐसी गूढ़ बातोंकी भी एक हद तो होती है।

गां० : गूढ़ तत्त्वको मै मानता हूँ और मुझे इस बातकी लज्जा नहीं है। आप ऐसा कहना चाहते है कि गूढ़ तत्त्वको मानना हानिकारक है।

च० रा० : हाँ, यदि उसका परिणाम मृत्यु हो तो?

गां० : आप तो दूध भी चाहते हो और दही भी। दलीलके खातिर मै आपकी यह बात मान लेता हूँ कि आतमघातक उपवास गलत है। किन्तु सारे उपवास ऐसे नही होते। आपकी दलीलका अर्थ तो यह होगा कि देहदमनसे लाभ हो ही नही सकता।

च० रा० : कभी-कभी हो सकता है।

गां० : शारीरिक स्वास्थ्यकी दृष्टिसे?

च० रा० : नही, मानसिक लाभ भी हो सकता है।

गां० : तब तो आप हार गये। यदि ऐसा हो तो उपवास किया जाये या नहीं, यह बात उपवास करनेवालेपर ही छोड़ देनी चाहिए। यह उपवास मैं स्वेच्छासे नहीं कर रहा हूँ। मुझे इसका आदेश मिला है।

च० रा० : ठीक। इसके बारेमे मित्रजन आपको सलाह दे सकते हैं क्या?

गां० : जरूर।

च० रा० : यदि मृत्युकी सम्भावना अस्सी प्रतिशत हो तब तो यह जुआ कहा जायेगा। आप कहेंगे कि यह एक अच्छा जुआ है। मुझे ऐसा लगता है कि जेलमें रहते हुए आपके मनमें यही एक वस्तु घूमती रही है और उसका परिणाम यह हुआ है कि आपको तारतम्यका कोई बोध नही रह गया है। आपके मनमें नये-नये प्रयोग करनेका बड़ा उत्साह है। इस उपवासमें आप मृत्युके साथ प्रयोग कर रहे हैं और

मैं मानता हूँ कि गलत राहपर जा रहे हैं। अब मुझे कोई ऐसा आदमी बताइए जिसने आपके इस कदमको पसन्द किया हो।

गां० : डंकन, एन्ड्रयूज।

च० रा० : इन लोगोंकी रायकी क्या कीमत है? इनकी अपेक्षा तो मेरी राय ही कहीं अधिक कीमती है। एन्ड्रयूजको तो कमरेमें ताला लगानातक नहीं आता और वे जिन्दगीमें ताला लगानेकी बात कर रहे हैं। और आप भी ईश्वरके कानूनको पूरी तरह जाननेका दावा कैसे कर सकते है? मैं तो आपसे कहूँगा कि आप ज्यादा सावधान हो जायें। यह तो सम्भव है कि किसी बार ईश्वरकी प्रेरणा स्पष्ट रूपसे मिल जाये, किन्तु वह हमेशा नहीं मिल सकती।

गां० : आप ईश्वरकी प्रेरणाकी सम्भावनाको स्वीकार करते है न? यदि उसे आप स्वीकार करते है तो आप हार गये।

च० रा० : किन्तु इस प्रसंगमे यह प्रेरणा गलत भी हैं सकती है। यदि आप बुद्धिसे काम लेना बन्द करते हैं तो इससे आपकी अधीरता ही सूचित होती है। ईश्वर तो अनेक रूप धारण करता है; कभी किसी दुष्टका, कभी मछलीका, कभी कछुवेका। मैं तो इतना ही चाहता हूँ कि आप यह समझें कि किसी बार आपकी भूल भी हो सकती है। इस उदाहरणमें ऐसी भूल हो रही है, यह आप समझिए।

गां० : किन्तु जबतक परिणामसे यह सिद्ध नही हो जाता तब तक मैं अपनी भूल कैसे स्वीकार करूँ। इस उपवासका निश्चय मैंने अपनी इच्छाके विरुद्ध किया है। मेरा मन आजकल किस प्रकार काम कर रहा है यह बात आपको मेरे पत्रोंके आधारपर महादेव बतायेगा।

च० रा० : यह तो आप विचारकी क्रियाको जान-बूझकर रोक रहे है।

गां० : मैं अगर आपकी दलीलको स्वीकार कर लूँ तब तो मुझे काम करना बन्द कर देना पड़ेगा।

च० रा० : लेकिन ईश्वरकी कोई ऐसी प्रेरणा नही हो सकती जो बुद्धिके विरुद्ध हो।

गा० : हो सकता है कि वह मेरी बुद्धिके विरुद्ध न हो। . . . इसमें एकमात्र हेतु शुद्धिका है — मेरी अपनी शुद्धिका और साथियोंकी शुद्धिका। इसमे से दूसरे परिणाम भी निकलेंगे। मैं देखता हूँ कि मेरी उपस्थितिमें भी अशुद्धि रहती है। इसका मैं यह अर्थ करता हूँ कि मुझमें स्वयं कही-न-कहीं कोई अशुद्धि है।

दूसरे विचार ही न आयें ऐसी स्थिति अभी मेरी नहीं हुई। जिन वस्तुओंको मैं अशुद्ध कहता हूँ वे शुद्ध सिद्ध हो जायें तो भी मै उपवास करूँगा। अशुद्धियाँ तो हैं ही और मुझे लगता है कि उनके लिए मैं उत्तरदायी हूँ। इसके सिवा इस प्रश्नपर राजनीतिक दृष्टिसे विचार करना गलत है। मूल बात यह है कि यह आन्दोलन हमें धार्मिक वृत्तिसे ही चलाना चाहिए।

धर्म आन्तरिक समझका विषय है। धर्म हृदयकी, श्रद्धाकी, सनातन मूल्योंके स्वीकारकी बात है। शरीरके रूपमें हमारा कोई सनातन मूल्य नहीं है। ईश्वर कहता

है कि नामरूपधारी हरेक वस्तुका नाश है। सूर्य भी सनातन नहीं है। विज्ञान भी इस बातकी गवाही देता है। किन्तु हमारे कार्यभौतिक वस्तुओंसे जुड़े हुए हैं। मेरा उपवास पूर्णतः आध्यात्मिक उद्देश्यके लिए है। बुद्धिमें जो मुझसे बहुत ज्यादा हैं उनके साथ मैं कैसे टिक सकता हूँ? किन्तु जहाँ सवाल हृदयकी प्रतीतिका है वहाँ मैं उनके विरुद्ध खड़ा रह सकता हूँ, क्योंकि उसमें संस्कृत भाषाके गहरे ज्ञानकी आवश्यकता नही है। गरीबोंके सौभाग्यसे ईश्वरका निवास हृदयमें है और मै यह उपवास हृदयकी शुद्धिके लिए ही कर रहा हूँ — यद्यपि वर्षाके लिए और अन्यान्य भौतिक वस्तुओके लिए भी उपवास करनेकी प्रथा है अवश्य। . . . अपने हृदयमें मै जिस चीजका अनुभव कर रहा हूँ उसका आदर आपको करना ही चाहिए। आप तो मुझसे अपने हृदयकी प्रतीतिकी अवज्ञा करनेके लिए कह रहे है। मेरे साथ लड़िए, दलील कीजिए। यह सम्भव है कि मुझसे भूल हो रही हो। किन्तु आप तो मुझसे ऐसी वस्तुको निश्चित रूपसे माननेके लिए कह रहे है जो शक्य तो है पर निश्चित नहीं है। इस उपवासका परिणाम मेरी मृत्यु होगा, इस बातको यदि मैं निश्चयपूर्वक जानते हुए उपवास कर रहा हूँ तो मैं झूठा हूँ। जबतक आप मेरी कही हुई बातोके आधारपर मुझे इस बातका यकीन नही दिला देते कि मैं भूल कर रहा हूँ तबतक आपको मेरे विश्वासको डिगानेकी कोशिश नही करनी चाहिए। कोई भी व्यक्ति ईश्वर-जैसी निश्चितता प्राप्त नही कर सकता। किन्तु अपनी नौकाका कर्णधार तो मै ही हो सकता हूँ न?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृ० २८४-९

परिशिष्ट–५

एम० एस० अणेका सविनय अवज्ञा स्थगन-सम्बन्धी वक्तव्य[1]

पूना
९ मई, १९३३

मेरा पक्का विश्वास है कि यद्यपि महात्मा गांधीके अनशनकी खबरसे पूरे देश पर चिन्ता और विषादकी काली घटायें छा जायेंगी, फिर भी देशवासियों तथा दुनिया-भरके उनके मित्रों और अनुयायियोंको यह जानकर कुछ राहत मिलेगी कि बहरहाल सरकारने उन्हें बिना शर्त रिहा कर दिया है और उन्हें एक स्वतन्त्र नागरिककी तरह अपने व्रत-पालन और अपनी महान तपस्या करनेकी छूट दे दी है। गत रात रिहाईके बाद प्रेसको दिये गये अपने वक्तव्यमें उन्होंने सविनय अवज्ञा आन्दोलनके संचालनपर अपना विचार व्यक्त किया है, जिसपर निस्संदेह प्रत्येक

१. देखिए पृ० १६६।

सविनय अवज्ञाकारी यथोचित ध्यान देगा। यह एकदम सही है कि अनशनकी अवधिमें सविनय अवज्ञाकारी दुविधाकी स्थितिमें रहेंगे, इसीलिए उन्होंने मुझे अधिकृत रूपसे यह घोषणा करने और सविनय अवज्ञा आन्दोलन एक मास या छः सप्ताह लिए स्थगित करनेकी सलाह दी है।

अपने वक्तव्यमे उन्होंने उसी बातपर जोर दिया है जो मै गत चार महीनोंसे सविनय अवज्ञा आन्दोलनके विभिन्न आलोचकोंको जवाब देते हुए बार-बार कहता आया हूँ, यानी कि सविनय अवज्ञा तबतक बन्द नहीं की जा सकती जबतक कि अनेक सविनय अवज्ञाकारी कैदमें है, और जबतक सरदार वल्लभभाई पटेल, पण्डित जवाहरलाल नेहरू, खान अब्दुल गफ्फार खाँ आदि जेलमें हैं तबतक कोई समझौता नही हो सकता।

"सच तो यह है कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द करनेका अधिकार उन लोगोको है ही नही जो इस समय जेलसे बाहर हैं। ऐसा करना केवल पहलेकी कार्य समितिके लिए ही सम्भव है।" जिस दृष्टिकोणको महात्मा गाधीने ऊपर इतने स्पष्ट और जोरदार ढँगसे रखा है मै उसीको दुहराता हूँ। केवल यही एक युक्तिसंगत और संवैधानिक दृष्टिकोण है, जिसे कांग्रेसजन सविनय अवज्ञा आन्दोलन वन्द करनेके प्रश्नपर अपना सकते है। लेकिन किसी खास उद्देश्यकी पूर्तिके लिए सविनय अवज्ञा आन्दोलनको कुछ समयके लिए स्थगित करनेका प्रश्न निस्सन्देह एक अलग बात है। निश्चय ही यह एक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है जिसे निबाहनेके लिए मुझे कहा गया है। लेकिन मै एक शस्त्रसे सुसज्जित हूँ — वह है एक ऐसे व्यक्तिकी सलाह जो न केवल वर्तमान सविनय अवज्ञा आन्दोलनके प्रवर्तक है बल्कि जो सविनय अवज्ञाके विज्ञान और प्रयोगके जन्मदाता व एकमात्र अधिकारी विशेषज्ञ है। उनके सुझावके अनुरूप मैं अधिकृत रूपसे घोषित करता हूँ कि मंगलवार ९ मईसे छः सप्ताहके लिए सविनय अवज्ञा स्थगित रहेगी। यह कदम मुझे भी इस समय उचित जान पड़ता है। कारण, कि यह वातावरणमें व्याप्त उत्तेजनाके सभी तत्वोंको दूर कर देगा और उसे इस तरह हम सबके लिए स्वच्छ बना देगा। इस प्रकार हम प्रार्थनामय मन.स्थितिमें होकर उस महान ध्येयके लिए जिसकी खातिर महात्मा गांधी यह तपस्या कर रहे हैं, सर्वशक्तिमान् प्रभुसे आशीर्वादकी याचना कर सकेंगे और उन्हें प्रचुर मात्रामें आध्यात्मिक भोजन प्रदान कर सकेंगे, जो उनकी जीवन-रक्षाके लिए इस अग्नि-परीक्षामे नितान्त आवश्यक है।

अन्तमें मैं प्रत्येक स्त्री-पुरुषसे फिर यह अपील करता हूँ कि वे इस समयका उपयोग जो भी काम उन्हें हरिजनोके उत्थानके लिए सर्वोचित जान पड़े उसे अपनी योग्यता और शक्तिके अनुसार करके करें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १०-५-१९३३

परिशिष्ट–६

अनशनकी समाप्ति[१]

जिस दिनके लिए सैकड़ों और हजारों लोगोंने प्रार्थना की थी आखिर वह आ ही गया। दृश्य उतना ही भव्य था जितना कि ८ मईको था। द्वारपाल, श्रीमती सरोजिनी नायडूके निमन्त्रणपर वहाँ जो लोग उपस्थित थे, वे सभी धर्मोंके स्त्री-पुरुषोंका प्रतिनिधित्व कर रहे थे। श्रीमती नायडूने अपने जीवनमें एक बारके लिए अपनी अत्यधिक उदारताका त्याग कर दिया था और वे रोगीके हितमें, जिसपर उन्होंने अथक चौकसी की थी, उस समय कंजूस बन गई थी। कोई और खुशीका अवसर होता तो उन्होंने पूरे पूना शहरको ही निमन्त्रित कर लिया होता, लेकिन उस दिन ऐसा नही किया। मुझे उस हरिजन बालककी प्रतीक्षा थी जिसने ८ मईको गांधीजी से यह इकरार किया था कि वह २९ तारीखको ठीक दोपहरके समय वहाँ आ जायेगा। मैंने द्वारपालसे प्रार्थना की कि वे उसे खोजे और अन्दर आने दें। दुर्भाग्यवश मुझे उसका पता नहीं मालूम था, अन्यथा मैं खुद उसे जाकर ले आता। वह नही आया और संतरेका रस गांधीजीको उसके द्वारा नहीं बल्कि स्नेहमयी मेजबान, लेडी ठाकरसी द्वारा पेश किया गया। वे उस दिन अपनेको शायद सबसे अधिक भाग्यशाली मान रही थी, जैसे कि डॉ० अन्सारी अपनेको सबसे अधिक गौरवान्वित अनुभव कर रहे थे। हरिजन लड़का तो वहाँ नही था, परन्तु द्वारपालने सभी हरिजनोके लिए दरवाजा खुला रख छोड़ा था। गाधीजीको अनशन तोडनेसे पूर्व पहली और एकमात्र माला एक हरिजन लड़कीने ही पहनाई, जो उसके बाद अपनी गण्य-मान्य बहनोके बीच बैठ गई। श्रीयुत अमृतलाल ठक्कर और सेठ जमनालाल बजाजके साथ हरिजन लोग बीचमें बैठे थे, जिनमें से कुछ तो अहमदाबाद तकसे आये थे। रामनामके उच्चारणके साथ हमने समारोह शुरू किया, जिसका उद्घाटन डॉ० अन्सारीने कुरानके उद्धरणोंसे अनशनके आध्यात्मिक अर्थकी व्याख्या करते हुए किया और बताया कि प्रभु-कृपाके आकांक्षीको सभी अच्छाइयोंका भोजन ग्रहण करना चाहिए तथा सभी बुराइयोंसे उपवास रखना चाहिए। क्राइस्ट सेवा संघके भाइयोंने गांधीजीका प्रिय भजन "ह्वेन आई सर्वे द वन्ड्रस क्रॉस" गाया। प्रो० वाडियाने पारसी भजन गाया, जो उनके विचारसे पूरे संसारकी प्रार्थना बन सकता है; और काकासाहबने वह पद्य गाया जिसमें भक्त समस्त अच्छाइयोंके मूर्तरूप, सभी मनोविकारों और घृणासे मुक्त, प्रेम और करुणाकी मूर्ति भगवानकी उपासना करता है, चाहे लोग उसे किसी भी नामसे

१. देखिए पृ० १८६। यह महादेव देसाई द्वारा लिखित "स्पार्क्स फ्रॉम द सेक्रेड फायर–४" से लिया गया है।

क्यो न पुकारते हो। उसके बाद कवि [रवीन्द्रनाथ] ठाकुरके उस गीतकी बारी आइ जिसमें उन्होंने सर्वशक्तिमान्का आह्वान जीवन-निर्झरके सूख जानेपर अपनी दयाकी धारा बहाते हुए और समस्त माधुर्यकी समाप्तिपर अमृतमय संगीत बरसाते हुए आनेके लिए किया है। सितम्बरके उपवासकी तरह इस बार कवि उपवासकी समाप्ति पर अपना वह गीत गानेके लिए स्वयं नहीं आ सके थे। इसलिए मैंने ही उनके नामसे वह गाया। अन्तमें 'वैष्णव जन तो तेने कहिए' भजन, गाया गया, जो गांधीजीके लिए उनके जीवन-श्वासकी तरह है। यह सभी महत्वपूर्ण अवसरोंपर गाया जाता है और हमें दुःख और हर्षका सामना स्थितप्रज्ञतासे करनेके लिए कहता है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-६-१९३३

परिशिष्ट–७

बातचीत : च० राजगोपालाचारीके साथ[1]

१ जून, १९३३

दोनों पक्षोंने जो रुख लिया है, उससे हटना उनके लिए मुश्किल है। दोनोंकी स्थिति बिलकुल साफ है। सरकार अपनी अपनाई हुई नीतिपर निर्दयताके साथ पूरी तरह अमल करना चाहती है। मै इसे अच्छी तरह समझ सकता हूँ। मेरे मनमें उसका जवाब भी बिलकुल स्पष्ट है। किसानोंको और आम जनताको हमें इस लड़ाईमें शामिल नही करना चाहिए। हम उनपर जरा भी बोझ न पड़ने दें। शिक्षित वर्गमें से ही जो लोग हमारे पक्षमें आयें, सिर्फ उनपर ही आधार रखें। उन्हें भी कांग्रेसकी तरफसे किसी आर्थिक मददकी आशा नहीं रखनी चाहिए। जिन्हें मददकी जरूरत हो, वे अपने मित्रों, पड़ोसियों और ऐसे ही दूसरे लोगोंसे ले लें। वे लगातार जेलमे जाते ही रहें। कोई प्रदर्शन न किये जायें। जैसे, कांग्रेसके अधिवेशन करना बन्द हो जाना चाहिए। जरुरत हो तो नामको एक डिक्टेटर मुकर्रर कर दिया जाये। मगर ऐसा करनेमें मुश्किल आयेगी, यह मैं जानता हूँ। इसलिये डिक्टेटर भी मुकर्रर न किया जाये।

लड़ाईमें जरा भी गुप्तता नही होनी चाहिए। करबन्दीका कार्यक्रम भी नहीं हो सकता। मुझे खुद तो हमेशा ऐसा लगा है कि स्वराज्यके लिए करबन्दीकी लड़ाई बहुत मुश्किल चीज है। यह चीज बड़े महत्त्वकी जरूर है, पर इसके लिए हमारी तैयारी कभी थी ही नही। अबतक हमने करबन्दीकी जो लड़ाइयाँ लड़ी हैं, उनके उद्देश्य मर्यादित थे, और उनके लिए वे बिलकुल जरूरी थी। पर स्वराज्यके लिए करबन्दीकी लड़ाई लड़ना खेल नहीं है। हम यह बात साफ तौरपर जाहिर कर

१. देखिए पृ० १८८।

दें और अपने वक्तव्यमें लोगोंसे यह कह दें कि इस तरह लड़ाईको सीमित करनेमें हम लड़ाईको जरा भी छोड़ते नही हैं और जिन लोगोंने कष्ट सहन किया है उनका भी त्याग नहीं करते। बल्कि लड़ाईको और भी ऊँची भूमिकापर पहुँचा रहे हैं। किसी-न-किसी दिन तो जब्त हुई तमाम जमीन वापस मिलनेवाली ही है। लोगोंमें यह विश्वास होना ही चाहिए। लेकिन जिनमें यह विश्वास न हो, वे जमीनको खोई हुई समझ लें। बड़ी लड़ाइयोंमें लोगोंने हमेशा जान और माल गँवाया है।

अपने दावे और अपना ध्येय हम फिरसे जाहिर कर दें। देशको उस ध्येयसे दूर नहीं, बल्कि उसके ज्यादा नजदीक ले जानेके लिए जो-कुछ करना पड़े, उसे बेझिझक करनेके लिये राष्ट्रके सामने कार्यक्रम रखें। इस चीजकी चर्चा मैंने वल्लभभाईके साथ की है। मैंने इसपर खूब विचार किया है और मै इन बड़े-बड़े निर्णयोंपर पहुँचा हूँ।

राजाजी: परन्तु जिन लोगोंने अभीतक जमीन वगैरह गँवायी है, उनका क्या होगा? मुझे तो यह एक ही विचार — जायदाद वापस दिलानेका — सत्ता हस्तगत करनेको ललचाता है। जो विधान वे तैयार कर रहे है, उसमें मैं देखता हूँ कि जायदाद वापस लेनेमें कोई बाधा नहीं पड़ेगी। मै नहीं जानता कि यह विचार मुझे अपनी कमजोरीसे आ रहा है या इस प्रकारकी अपनी प्रतीतिके कारण आ रहा है।

बापू: इसमें कमजोरीका सवाल ही नही है। इस और ऐसी दूसरी चीजोके लिए सत्ता लेनेका विचार मुझे भी आया है। और वल्लभभाई भी उससे सहमत हुए हैं। किन्तु आज हमें सत्ता लेनेका विचार जरा भी नहीं करना चाहिए। आज तो हमें लड़ाईको चरमोत्कर्षपर जारी रखनेका ही विचार करना चाहिए। उसे चलानेके लिए हम सिर्फ आधे दर्जन ही रह जायें, तो भी मुझे परवाह नहीं।

फिर राजाजीने नीचे लिखे सवालोंपर विचार करनेका सुझाव दिया: (१) व्यक्तिगत रूपमें हम जो-कुछ कर सकते हों, उसके अलावा हम संगठित रूपमें कुछ कर सकते है या नही? (२) इस योजनामे एक-दूसरेके साथ सम्बन्ध रखना, संगठन बनाये रखना असम्भव हो जाता है।

बा०: मै खुद तो व्यक्तिगत रूपमें जितना हो सके, उसीसे सन्तोष मानूँगा।

रा०: आप गुप्तताकी मनाही कर देते हैं, तब कुछ तरहके काम तो असम्भव ही हो जाते है।

बा०: मुझे तो थोड़े लोगोमें सर्वोच्च बलिदानकी भावना जगानी है। इसके लिए शुद्ध कुन्दन-जैसी देशभक्तिकी जरूरत है। उसपर हम सुन्दर इमारत खड़ी कर सकेंगे। ऐसा नही करेंगे तो ताशके महलकी तरह सब-कुछ नीचे गिर जायेगा। इसमें से हम सच्चा सत्याग्रह पैदा कर लें। जो पूरी तरह शुद्ध न हों, ऐसी बहुत-सी चीजोंकी अपेक्षा बिलकुल शुद्ध एक ही चीज ज्यादा अच्छी है।

सवेरे छः बजे: २ जून, १९३३

रा०: उपवासके बादके आपके वक्तव्यके अलावा और भी कुछ करनेकी इस समय जरूरत है क्या?

बा० : शुरूमें मैंने वाइसरायको मुलाकातके लिए जो अर्जी दी थी, उसे फिरसे दुहराना चाहिए। मैं गाधी-ईर्विन समझौता फिरसे अमलमें लाने, नमक एकत्रित करनेकी इजाजत और विदेशी कपड़े और शराबकी दुकानोंपर शान्त धरना देनेकी छूटकी माँग करूँगा।

रा० : आपके वक्तव्यका जवाब तो वे दे चुके हैं। क्या आपको लगता है कि इस विषयमें फिर कुछ लिखा जाये?

बा० : मुझे लगता है कि बातचीत जहाँ रुक गई थी, वहाँसे फिर शुरू करनेका जो वचन मैंने दिया था, उसे हमें ईमानदारीसे पूरा करना चाहिए।

रा० : परन्तु इन लोगोंने तो कहा है कि सविनय अवज्ञा पूरी तरह वापस लेनेके बाद ही आइये।

बा० : बातचीत शुरू करनेके बाद वे ऐसा कह सकते हैं। यह चीज तो जब सुलहकी शर्तोकी चर्चा हो तब कही जा सकती है। आज सविनय-अवज्ञा वापस लेनेके लिए जो तन्त्र चाहिए वह कहाँ है? सविनय-अवज्ञा कोन वापस ले? इसलिए कैदियोको छोड़नेसे पहले सविनय-अवज्ञा वापस लेनेकी शर्त हो ही नहीं सकती। मुझमें हारकी भावना जरा भी नही है। हम यह खयाल ही बरदाश्त नही कर सकते कि हमने बुरा किया है या समझौतेको तोड़ा है। ऐसी शर्तोपर सुलह हो ही नहीं सकती। ऐसी शर्त मान ले, तो हम बाजी हार जायेंगे, और खत्म हो जायेंगे। हमारा दावा तो यह है कि गाधी-ईर्विन समझौतेका भंग हमारी तरफसे जरा भी नही हुआ। उन्हें जरूरत हों तो इसकी जाँचके लिए पंच मुकर्रर करें। निष्पक्ष पंचका फैसला माननेको मै तैयार हूँ। लेकिन ऐसे किसी सुझावपर विचार करनेके लिए वे तैयार ही नही है। मेरा तो खयाल है कि इस बार भी वाइसरायका उत्तर पिछली बार जैसा ही मिलेगा। वे कहेंगे, हम यह मानते है कि सविनय-अवज्ञा बिना शर्त और पूरी तरह छोड़ देनेके सिवा और किसी बातकी चर्चा करनी हो, तो आपसे मिलनेका कोई अर्थ ही नही। फिर भी यह जरूरी है कि कोई मार्ग सुझानेवाला नहीं, बल्कि सिर्फ उनसे मिलनेकी माँग करनेवाला पत्र लिखा जाये।

रा० : भारत-मन्त्रीको कुछ न लिखा जाये?

बा० : उनके विचार तो मै जानता हूँ। रंगस्वामीने मुझसे कहा था कि होरने उनको मित्रतापूर्ण निजी पत्र लिखा था कि श्वेत-पत्रमें अपरिवर्तनीय कुछ भी नही है, इसलिए उन्हें मिलने आना चाहिए। इसपर रंगस्वामी उनसे मिलने गये। होरको लगता है कि उनका काम कुछ सुधार कर देना और दुनियाको यह बता देना है कि सब दलो, नरम दलवालो और कांग्रेसका भी पूरा सहयोग उन्हें मिल रहा है। "रंगस्वामीसे सुधारोंके पक्षमें कुछ कहलवा सकें, तो बहुत अच्छी बात है। पर वे इनकार कर दें, तो भी ठीक है।" ऐसा उनका रुख है। वैसे, शिमलेका तंत्र भी वही चलाते हैं। इन सब बातोंके पीछे वाइसरायका नहीं, बल्कि उनका हाथ है। बर्कनहेडकी नीतिपर वे ज्यादा मीठे ढंगसे अमल कर रहे हैं। इसमें मैं आपसे कोई नई बात नही कह रहा हूँ। क्योंकि ये सब समाचार लेकर ही मै लन्दनसे

आया था। और इंग्लैडमें सभी -- इर्विन, बॉल्डविन, केण्टरबरीके आर्चविशप - उनकी नीतिका समर्थन कर रहे है।

रा० : इर्विन यह मानते दीखते है कि समझौता इतना ज्यादा भंग हुआ है कि उसको फिरसे ताजा नही किया जा सकता। इसलिए समझौतेकी जरा भी बात करना जरूरी नही है।

बा० : यदि चर्चा यहाँतक पहुँचे तो हम उसकी बात चलाएँ। पर हम मिलेंगे तो भी अन्तमें कोई नतीजा निकलनेवाला नही है। बर्कनहेड और रीडिगने यही कहा था: 'अगर लड़ाई न करनी हो, तो पार्लियामेट जो दे रही है वह आपको ले लेना चाहिए; और पार्लियामेट धीरे-धीरे सुधार देनेवाली है। उससे आपको संतोष होना चाहिए।'

लेकिन अभी तो आपसमें विश्वास या आदर है ही नही।

रा० : इस सारे प्रकरणकी आलोचना शास्त्रीने ठीक की है। आज उनकी क्या राय है, यह हम उनसे पूछें?

बा० : आपको उनसे मिलना हो तो मिलिये। यहाँ तो वे आयेंगे नही। सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसायटीके वार्षिक अधिवेशनपर भी उन्होंने कोई खास बात नही कही और न अपनी नीति जाहिर की।

रा० : आप जो नीति सुझा रहे हैं, वह इतनी अधिक क्रान्तिकारी है कि उसे कुछ ही व्यक्ति अमलमें ला सकते है। लेकिन सरकारपर या लोगोपर उसका कोई असर नही होगा।

बा० : मुझे इसकी परवाह नही। आप जैसा कहते है, वैसा हो सकता है। ऐसा परिणाम मुझे इष्ट है। छोटी-छोटी बातोंमें लोगो को जो परेशान किया जाता है, उससे मुझे चोट लगती है। इसमे तो जो राजी-खुशीसे आगे आयेंगे, उन्हें ही सहन करना होगा।

रा० : तब सामूहिक लड़ाई तो बिलकुल बन्द ही हो जाती है।

बा० : यही सारी बातोकी कुंजी बन जायेगी। हमने बिना किसी योजनाके सामूहिक लड़ाईको चाहे जैसे चलने देनेमे भूल की है। जब शुरूसे आखिरतककी निश्चित योजना लोग दिलसे समझ लेंगे, तब सामूहिक लड़ाई होगी। जब जिम्मेदार लोगोको यह महसूस हो जायेगा कि लोग जमीन-जायदाद गँवाने और इससे भी भारी कष्ट सहन करनेको तैयार हैं, तब लोग ऐसी लड़ाई छेड़ेंगे।

रा० : क्या आप ऐसा नहीं मानते कि जनवरी, १९३२ में करबन्दीकी लड़ाईकी जो घोषणा की गई थी, वह असामयिक थी?

बा० : थी तो जरूर। मैने तो १९३१ में टंडन वगैरहसे कहा था कि स्वराज्यके लिए करबन्दीकी लड़ाई चलानेकी हमारी शक्तिके बारेमे मुझे विश्वास नही है।

रा० : अगर भूल हुई थी, तो क्या उसे हमे सुधार नही लेना चाहिए?

बा० : भूल सुधारनेके लिए भी मै ऐसा नही कहूँगा कि यह लड़ाई वापस ले ली जाये।

रा० : हम लड़ाई पूरी तरह वापस ले लें, तो भी सरकार सारी जमीन-जायदाद वापस नही देगी।

बा० : सरकार ऐसी कोई बात सुनेगी ही नही।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी भाग–३, पृ० २९६-३०१

परिशिष्ट–८

प्रश्नोंके उत्तर[1]

१४ जुलाई, १९३३

बापू : मुझसे एक सवाल पूछा गया है कि जेलमें जानेके बाद क्या मैं वहाँ से फिर हरिजन-कार्य शुरू करूँगा? जवाबमे मुझे इतना ही कहना है कि मुझे देखना पड़ेगा कि मुझे कैसी जेल मिलती है? किसी भी तरह की हो, मैं देखूँगा कि हरिजन-कार्य जारी रखना संभव है या नही? हमारी लड़ाईकी शुरूआत १९२० से हुई है। लाहौर और कराचीके प्रस्तावोसे हमने उसके मुद्दे ज्यादा व्यापक बना दिये हैं। मुझे आशा तो यही है कि जबतक आजादी नहीं मिल जाती, तबतक लड़ाई जारी ही रहेगी। मेरा एक पैर यरवदा जेलमें है और दूसरा यहाँ है। हमारी लड़ाई जारी ही रहे, यह आपको सोचना है। यह तो अवैध सभा है। यहाँ किसी को, हमारे काम-चलाऊ अध्यक्षको भी, लड़ाई बन्द करनेका अधिकार नही है। मैं जो-कुछ यहाँ कह रहा हूँ, वह भी सलाहके तौरपर है। मान लीजिए, आपको लड़ाई बन्द करनी है, तो उसके लिए कांग्रेसकी महासमिति बुलानी चाहिए। आप मुझे वाइसरायको पत्र लिखनेकी इजाजत दें, तो उसमें भी मेरा स्थान दूतका होगा। मै जो भी शर्ते पेश करूँगा, उन्हें मुझे कांग्रेस-महासमितिसे मंजूर करवाना पडेगा। इस तरहके समझौतेसे आजादी तो कोसो दूर होगी। हमे आजादी देना इंग्लैंडके हाथमें नही है। आजादी तो हमें अपनी ताकतसे लेनी हे। फिलहाल अनुभवियोंकी राय यह है कि सुधार १९३५ के अन्तमें आयेंगे। लेकिन आजादी मिलनेसे पहले हमें जानकी बाजी लगाकर लड़ना होगा। हरएक सत्याग्रहीको अपने लिए सविनय-अवज्ञाका कार्यक्रम स्वयं बनाना होगा। तीस करोड़ आदमी भी, हरेक अपना नेता बनकर, व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञा कर सकते है। या एक आदमीकी सरदारीमें सौ आदमी इकट्ठे होकर भी व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञा कर सकते है। व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञामें किसी भी मनुष्यकी शक्ति या उत्साहको रोका नहीं जा सकता। मेरी स्थिति क्या है, यह यहाँ अप्रासंगिक है। विधानके अनुसार तो सविनय-अवज्ञा जारी रखनेका मुझे पूरा अधिकार है। ऐसा हो सकता है कि कांग्रेस-महासमितिकी बैठक होनेसे पहले ही मै जेलमें पहुँच जाऊँ। जब मुझे यह मालूम हो जाये कि मैं आपके साथ बातचीत नहीं कर सकता, या आजादीसे चल-फिर नहीं सकता, या मुझपर किसी भी तरहकी पाबन्दी लगानेवाला

[1]. देखिए पृ० २७८।

हुक्म निकाल दिया जाये, तो क्या ऐसे हुक्मको मानना मुझे या आपमें से किसीको भी शोभा दे सकता है? अपने भाषणमें मैंने जो यह कहा कि हम स्थायी बंधनमे हैं, उसका यही अर्थ था।

प्रश्न : कांग्रेसके अधिनायककी व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञामें क्या स्थिति होगी?

बापू : व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञा करनेवालेके लिए किसी भी अधिनायककी इजाजत लेनेका सवाल ही नही है। हरएक आदमी अपना नेता बन जाता है। व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञामे अधिनायककी कोई जरूरत नही। किसी हुक्मकी भी जरूरत नहीं।

प्र० : कोई एक ताल्लुका भस्मीभूत हो जाना चाहे, तो क्या वह ऐसा कर सकता है?

बा० : जरूर। मैं तो चाहता हूँ कि हरएक ताल्लुका ऐसा करे। इसके लिए कांग्रेसके हुक्मकी जरूरत नही। लेकिन यह ताल्लुका कांग्रेसके नामपर और कांग्रेसके आश्रयमें ऐसा करेगा। . . वाइसरायको लिखनेकी मुझे कोई उतावली नही है। आप इजाजत नहीं देंगे तो मैं नहीं लिखूँगा। . . . गढ़वाल और मेरठके कैदी छूटने ही चाहिए, ऐसी शर्त समझौतेके लिए अनिवार्य नही है।

प्र० : व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञाके आपके सुझावमें क्या कोई ऐसा आदमी सम्मति दे सकता है जो थोड़े महीने बाद सविनय-अवज्ञा करनेवाला हो?

बा० : यह नाजुक सवाल है। मनुष्य ऐसी सम्मति तो दे सकता है, पर उसे राष्ट्रके प्रति और अपने-आपके प्रति वफादार होना चाहिए। . . . बचपनसे ही अपने बच्चोंको मैंने अपने खिलाफ विद्रोह करना सिखाया है। . . . मैंने यह आशा नही रखी है कि आज राय देनेवाला हरएक आदमी कल ही सीधा जेलमें पहुँच जायेगा। . . . किसी भी सत्याग्रहीका, जबतक वह खुद जिन्दा है, यह कहना ठीक नहीं कि संगठनका कोई मार्गदर्शक नही है। . . . जो मनुष्य बहादुर होनेका दिखावा करता है उसमें सच्ची बहादुरी नही होती। . . . जिन शर्तोंमें आम जनताकी रक्षा न होती हो, उन्हें मैं सम्मानपूर्ण नहीं मानूँगा। . . . कांग्रेस किसी भी किसानको जमीनका लगान अदा करनेके लिए हुक्म नहीं दे सकती। जो लोग जेलमें जायेंगे या दूसरी तकलीफें बरदाश्त करेंगे, उन्हें कांग्रेस शाबाशी ही देगी।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृ० ३१५-१७

परिशिष्ट–९

सामूहिक सविनय-अवज्ञा बन्द करनेके सम्बन्धमें अणेका वक्तव्य[1]

२२ जुलाई, १९३३

हालमें पूनामें हुए अनौपचारिक सम्मेलनकी सिफारिशों, सम्मेलनके भीतर और बाहर हुए कांग्रेसजनोंके आपसी विचार-विमर्श तथा गांधीजी द्वारा दी गई सलाहपर बहुत ध्यानपूर्वक विचार करनेके बाद मै इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि देशका सर्वोपरि हित निम्न हिदायतोंके पालन करनेमें ही है:

पहली बात यह है कि वर्तमान परिस्थितियोंमें सविनय-अवज्ञा आन्दोलनको बिना शर्त वापस नहीं लेना चाहिए। दूसरे, सामूहिक सविनय-अवज्ञाको, जिसमें कर और लगान न देनेका आन्दोलन भी शामिल है, फिलहाल बन्द कर देना चाहिए। हॉ, जो व्यक्ति हर कष्ट सहने और अपनी ही जिम्मेदारीपर सविनय-अवज्ञा चलाते रहनेके लिए तैयार हों, उनका ऐसा करनेका अधिकार बना रहेगा।

तीसरे, जो व्यक्ति, बिना किसी अपवाद के, कांग्रेस-संस्थासे कोई भी सहायता लिये बिना अपनी ही जिम्मेदारीपर व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञा करनेमें समर्थ है और उसके इच्छुक हैं, उनसे आशा की जाती है कि वे वैसा करेंगे।

चौथे, अबतक जो गुप्त तरीके अपनाये जाते रहे है उन्हें छोड़ देना चाहिए।

पाँचवे, अखिल भारतीय कांग्रेस समितिके कार्यालय समेत सभी कांग्रेस-संगठनोंको फिलहाल विघटित कर देना चाहिए। परन्तु, जहाँ भी सम्भव हो, प्रान्तोके अधिनायक तथा अखिल भारतीय अधिनायक कायम रहें।

छठे, जो कांग्रेसजन किसी भी वजहसे सविनय अवज्ञा करनेमें असमर्थ हैं, उनसे आशा की जाती है कि वे कांग्रेसके जिन रचनात्मक कार्योंके करने योग्य हैं उन्हें व्यक्तिगत अथवा संयुक्त रूपसे करते रहेंगे।

मुझे खेद है कि अबतक आन्दोलनको खत्म करना सम्भव नही हो सका है, और मेरे लिए इन हिदायतोको जारी करना आवश्यक हो गया है। काग्रेसजनों और अन्य लोगोके साथ-साथ मुझे भी इस बातसे निराशा हुई है कि शान्तिकी सम्भावनाओं की खोज करनेके लिए गांधीजी ने बिना किसी शर्तके वाइसरायसे भेंटका जो एक साधारण-सा अनुरोध किया था, वह तुरन्त ही ठुकरा दिया गया। अनौपचारिक सम्मेलनकी गुप्त कार्यवाहियोंको शान्ति-प्रयासोको आगे बढ़ानेके उद्देश्यसे ही जान-बूझकर प्रकाशित नहीं किया गया था। परन्तु उनकी अनधिकृत रिपोर्टोंसे प्रभावित होकर वाइसराय महोदयने ठीक नही किया। वाइसराय महोदयको जानना चाहिए कि सम्मेलनमें भारी बहुमत सम्मानजनक शान्तिके लिए एक ऐसी भेंटके पक्षमें था। शान्ति-

१. देखिए पृ० ३०७

वार्त्ता शुरू करनेके लिए वाइसराय महोदयने हठपूर्वक जो शर्तें रखीं, उन्हें स्वीकार करना, मै समझता हूँ, काग्रेसके किसी भी संगठन या प्रतिनिधिके लिए असम्भव है। मुझे आशा है कि देश अपनेमें आवश्यक शक्तिका विकास कर, चाहे उसकी कीमत कुछ भी क्यों न देनी पड़े, इस रवैयेमें सुधार करवा कर रहेगा।

उक्त हिदायतोके बावजूद, इस महीनेके अन्ततक आन्दोलन स्थगित ही रखना है।

[अंग्रेजीसे]

दि इंडियन ऐन्युअल रजिस्टर, १९३३, खंड २, पृ० ३३२–३३

परिशिष्ट–१०

सर नृपेन्द्रनाथ सरकारको भेजा गया रवीन्द्रनाथ ठाकुरका तार

मुझे याद है कि मैंने प्रधान मन्त्रीको एक तार दिया था, जिसमें मैंने उनसे निवेदन किया था कि साम्प्रदायिक पंच-निर्णय-सम्बन्धी जो सुझाव महात्माजी ने उनके सम्मुख रखा है उसे स्वीकार करनेमें देर न करें। उस क्षण एक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दी गई थी जो अत्यन्त ही दु:खद थी, क्योंकि तब हमारे लिए न तो कोई समय बचा था और न मानसिक शान्तिकी ही गुंजाइश थी कि हम पूना-समझौतेके सम्भावी नतीजोंपर शान्तिपूर्वक विचार कर सकते। वह तो मेरे पहुँचनेसे पहले ही जब कि सप्रू और जयकर जा चुके थे, अन्य सदस्योंकी सहायतासे, जिनमे बंगालका एक भी उत्तरदायी प्रतिनिधि नहीं था, कार्यान्वित किया जा चुका था। इस प्रश्नके शीघ्र समाधानपर ही तब महात्माजी का जीवन निर्भर था और ऐसे संकटसे उत्पन्न असह्य चिन्ताके कारण मैंने हड़बड़ीमें एक ऐसा वायदा कर लिया जो, अब मुझे महसूस हो रहा है, देशके स्थायी हितके विरुद्ध था। राजनैतिक दाँव-पेंचका कोई अनुभव न होने और महात्माजी के प्रति अगाध प्रेम और भारतीय राजनीतिके विषयमें उनकी बुद्धिमत्तामें पूर्ण आस्था होनेके कारण, मैं और अधिक विचार-विमर्शके लिए प्रतीक्षा नहीं कर सका और इस बातपर ध्यान नहीं दे सका कि बंगालके मामलेमें न्यायकी हत्या की गई है। अब मुझे जरा भी सन्देह नहीं है कि इस प्रकारका अन्याय सभी दलोके लिए अहितकर रहेगा, जिससे हमारे प्रान्तमें तीव्र साम्प्रदायिक कलहकी मनोवृत्ति बराबर बनी रहेगी। फलस्वरूप, शान्तिपूर्ण सरकार बनाना हमेशाके लिए दुष्कर हो जायेगा। मुझे इससे न तो कोई अधिक आश्चर्य ही हो रहा है और न बहुत दु:ख ही कि ब्रिटिश सरकारके मन्त्री इस विषयपर, जो हमारे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है, विचार करनेके लिए कतई राजी नहीं हैं, जबकि वे श्वेत-पत्रमें निहित अन्य सुझावोंपर निस्संकोच बार-बार विचार कर रहे हैं। कारण, कि क्या ये वही लोग नही हैं जो बार-बार उस दुर्दिनकी भविष्यवाणी करते हुए अघाते नहीं थे, जब हम भाई-भाई बिना उनकी मददके आपसमें लड़ेंगे और [स्वशासनमें] असफल रहेंगे। इसलिए यह स्वाभाविक ही है कि वे आज साम्प्रदायिक मेल-मिलापके मार्गको

सुगम बनानेमें हमारी मदद करनेमें कतई उत्साह न दिखायें। लेकिन सम्मेलनके अन्य प्रान्तोंके भारतीय सदस्योंका बंगालके दुर्भाग्यके प्रति न केवल उदासीन रहना बल्कि उसको बदतर बनानेमें सोत्साह भाग लेना एक भयानक अपशकुन है, जो हमारे भावी इतिहासके लिए किसी शुभका सूचक नहीं है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर

[अंग्रेजीसे]

होम डिपार्टमेंट, प्रिटेड पोलिटिकल फाइल सं० ३/१७/३३, पृ० १६–१७; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार।

परिशिष्ट–११

गांधीजीकी गतिविधियोंपर रोक लगानेका आदेश

आदेश नं० एस० डी०, ३८०६

मोहनदास करमचन्द गांधीको,

क्योंकि गवर्नरको, सपरिषद्, यह यकीन है कि ऐसा माननेके लिए युक्तियुक्त आधार है कि आप, मोहनदास करमचन्द गांधी, कुछ ऐसा कर चुके हैं और करनेवाले हैं जिससे जन-सुरक्षा और शान्तिको खतरा है और जिससे जन-सुरक्षा और शान्तिके लिए खतरनाक एक आन्दोलनको बढ़ावा मिलेगा, और क्योंकि पूनाके जिला-मजिस्ट्रेटने आपके वक्तव्यका जो लिखित विवरण दिया है उसपर गवर्नर, सपरिषद्, विचार कर चुके हैं;

इसलिए, बम्बई विशेष (आपात) अधिकार अधिनियम १९३२ की धारा ४ की उपधारा (१) द्वारा प्रदत्त अधिकारोंका उपयोग करते हुए गवर्नर, सपरिषद्, इसके द्वारा यह लिखित आदेश देते हैं:

१. कि आप आज सुबह ९.३० बजेसे पहले ही यरवदा गाँवको छोड़ दें; कि आप पूनाके छावनी क्षेत्रमें प्रवेश न करें; कि आप आज प्रातः १०.३० बजेसे पूना नगरपालिकाके सीमा-क्षेत्रमें ही रहें, और कि आप उक्त नगरपालिका क्षेत्रसे बाहर न जायें;

२. कि आप कोई भी ऐसा कदम न उठायें जिससे सविनय-अवज्ञा आन्दोलन अथवा किसी भी ऐसे आन्दोलनको बढ़ावा मिले जो जन-सुरक्षा और शान्तिके हितोंके विरुद्ध हो;

३. कि आप किसी भी व्यक्तिको कानूनके प्रयोग या कानून और व्यवस्थाके पालनमें हस्तक्षेप करने, या कोई जुर्म करने, या सरकारको देय किसी भी मालगुजारी, कर, शुल्क, उपकर या किसी अन्य धनराशिको देनेसे इनकार करने या न देनेके लिए बढ़ावा न दें और न भड़कायें।

४. कि पूनाके जिला-मजिस्ट्रेटकी पूर्व अनुमतिके बिना आप बारह या इससे अधिक लोगोंकी किसी भी सभा या किसी भी आम प्रदर्शन या जुलूसमें मौजूद न रहें और भाषण न दें।

धारा ४की उपधारा (२)के अधीन गवर्नर, सपरिषद्, यह आदेश देते हैं कि यह आदेश जारी होनेके समयसे लेकर अगले आदेशोंके जारी होनेतक एक महीनेसे अधिक लागू रहेगा।

गवर्नर, सपरिषद्, पूनाके आदेशसे आज ४ अगस्त, १९३३ को जारी किया गया।

आर० एम० मैक्सवेल
सचिव, बम्बई सरकार
गृह-विभाग

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (१४) ५, पृ० ६७

परिशिष्ट–१२

वाइसराय द्वारा भारत-मन्त्रीको दिये गये तारके कुछ अंश[1]

१८ अगस्त, १९३३

५. श्री गांधीको यह स्पष्ट कर दिया गया है कि (उक्त) आदेशोंके अन्तर्गत उन्हें 'हरिजन' के सम्पादकसे, अपने रोजके मुलाकातियोंकी तरह, मिलने और उसे अपनी पाण्डुलिपि देनेकी छूट है और 'हरिजन' विषयक पत्र भी श्री गांधीको दे दिये जायेंगे।

६. सरकारको यह जानकारी नही है कि श्री गांधीका यह कहनेसे कि जेलमें हरिजन-कार्य करनेकी छूट तो यरवदा समझौतेमें ही अन्तर्निहित है, क्या आशय है। यद्यपि यह सच है कि उक्त समझौतेके तुरन्त बादकी विशेष परिस्थितियोंमें सरकारने श्री गांधीको राज्यबन्दीकी हैसियतसे वह आन्दोलन शुरू करनेकी अनुमति दे दी थी जिसपर वे तब अपना सारा ध्यान केन्द्रित कर रहे लगते थे। उस समय सनातनी हिन्दू समुदायकी ओरसे, जो इस विषयपर श्री गांधीकी नीतिसे सहमत नही था, इस बातपर एतराज किया गया था कि उन्हें जेलसे एक जन-आन्दोलन चलानेकी सुविधाएँ दे दी गई है। और अब यह तर्क दिया जा सकता है कि क्योंकि श्री गांधीने अपनी रिहाईके कुछ समय बाद ही एक विशुद्ध राजनैतिक प्रश्नपर अपनेको पुनः गिरफ्तार करवाया है, अतः उन्हें ऐसी कोई सुविधा नहीं देनी चाहिए जो अन्य 'ए' श्रेणीके कैदियोंको उपलब्ध नहीं है। तथापि सरकार ऐसी कोई कार्रवाई करनेसे हिचकिचाती रही है जिसे एक सामाजिक सुधारकके कार्यमें अयुक्तियुक्त हस्तक्षेप समझा जा सके। साथ ही वह इस तथ्यके आधारपर कि श्री गांधी जान-बूझकर बन्दी बने है और

१- देखिए पृ० ३८०।

उन्हें कानून तोड़नेके जुर्ममें सजा मिली है, कोई सख्त कदम उठानेसे भी हिचकिचाती रही है। यद्यपि यह बात जेल-अनुशासनके लिए असुविधाजनक थी और अनियमित थी, फिर भी सरकारने श्री गांधीको अस्पृश्यता-विरोधी काम करते रहनेकी सुविधा प्रदान की, ताकि वे इस दिशामें महत्त्वपूर्ण और प्रभावशाली योगदान कर सके। ध्यान देने योग्य बात तो यह है कि जब श्री गाधी स्वतन्त्र थे तो वे अपना अधिक समय या ध्यान इस आन्दोलनके लिए लगाते प्रतीत नहीं होते थे। उनकी मुख्य शक्ति राजनीतिमें और सविनय अवज्ञा आन्दोलनको जिस रूपमें भी सम्भव हो उस रूपमें चलानेमें लगी 'थी। अब उनका यह दावा कि उन्हें "बिना किसी रोक-टोक या रुकावटके" जेलसे अपना हरिजन-कार्य करते रहनेकी छूट होनी चाहिए, एक तरहसे यह अर्थ रखता है कि अपनी वास्तविक शारीरिक स्वतन्त्रतापर प्रतिबन्धके सिवा वे कारावासके अन्य सामान्य प्रतिबन्धोंका पालन अस्वीकार करते है। वस्तुतः यह अपने कारावासकी शर्तोको स्वयं ही निर्धारित करनेकी माँग है।

सरकारको विश्वास है कि उसने जो सुविधाएँ प्रदान की है वे इसके लिए पर्याप्त है कि श्री गांधी अस्पृश्यता-निवारणके लिए वर्तमान परिस्थितियोंमें जो कार्य उचित है, वह कर सकें। लेकिन अगर अब श्री गांधी ऐसा महसूस करते हो कि यदि वे बिना किसी रोक-टोक या रुकावटके हरिजन-सेवा-कार्य नहीं कर सके तो उनके लिए जीवनमें कोई आकर्षण नहीं रहेगा तो सरकार उन्हें तुरन्त रिहा कर देनेके लिए भी तैयार है, ताकि वे पूरी तरहसे और बिना किसी प्रतिबन्धके सामाजिक सुधारके कार्यमें लग सकें, वशर्ते कि श्री गाधी सविनय-अवज्ञाकी सभी गतिविधियोसे और उत्तेजना फैलानेसे बाज आनेको राजी हों। अतएव श्री गांधीको सूचित कर दिया गया है।

[अंग्रेजीमे]

होम डिपार्टमेंट, प्रिन्टेड पोलिटिकल फाइल सं० ३/१७/३३, पृ० ३८-३९; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार।

परिशिष्ट–१३

वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीका पत्र

कोयम्बटूर,
२७ अगस्त, १९३३

प्रियवर भाई,

'सरकारके लिए तो आपको पहलेवाली सुविधाएँ दे देना ही अच्छा रहता। एक अभिशापने उसे उदार या समयोचित कदम उठानेके अयोग्य बना दिया है।

लेकिन उसने आपको न तो कोई अधिकार प्रदान किया है और न आपसे कोई वायदा ही किया है। एक अवसरपर और एक तरहकी परिस्थितियोंमें उसने

आपको जो-कुछ दिया उसे दूसरे अवसरपर और दूसरी तरहकी परिस्थितियोंमें भी देनेके लिए वह बाध्य नही है। पूना-समझौतेके बाद जो आदेश जारी किया गया और जिससे आप उद्धरण दे रहे है, वह एक अपरिवर्तनीय और शर्त्तरहित वायदा नही है। जब आप उसपर वायदा-खिलाफीका आरोप लगाते हैं तो आप खास तरहका और बुरे ढंगका तर्क प्रस्तुत करते है। 'हिरासतमे रह रहे कैदीको दिया गया' शब्द जोड़ देनेसे उसका जो आशय अन्यथा हो सकता था वह समाप्त हो जाता है।

एक दर्शक, जिसे सरकारसे कोई द्वेष नही है, कह सकता है कि जहाँ हरिजन उद्धार आपको प्रिय है वहाँ सरकारपर दोषारोपण करना उससे भी अधिक प्रिय है। सद्भाव रखनेवाले लोगोंको मैने यह कहते सुना है कि जेलमें मर जाने और उसकी जिम्मेदारी सरकारपर पड़ जानेसे अधिक आपको और कुछ पसन्द नही होगा।

सरकारके साथ आपके मौजूदा टकरावके पीछे और उससे परे देशके भविष्यका सवाल है। उस भविष्यकी अच्छी-से-अच्छी सुरक्षा कांग्रेस किस प्रकार कर सकती है? आपका उत्तर स्पष्ट है। लेकिन लोगोके मनमें एक दूसरा ही उत्तर घर करता जा रहा है। वह यह है कि सामूहिक और व्यक्तिगत, दोनों तरहकी सविनय-अवज्ञा बन्द कर देनी चाहिए। कांग्रेसके तथाकथित रचनात्मक कार्यक्रमके अतिरिक्त, एक नई नीतिकी आवश्यकता बहुत दिनोंसे रही है, जिसका उद्देश्य विधान, वित्त और प्रशासनमें सर्वत्र राष्ट्रका रचनात्मक कल्याण होना चाहिए और अब इस नीतिको हमें अवश्य आजमाना चाहिए। मेरा विश्वास है कि कांग्रेससे बाहर ऐसा ही आम तौर पर महसूस किया जा रहा है और कांग्रेसके भीतर भी यह भावना जोर पकड़ती जा रही है। यह स्थिति किस प्रकार लायी जा सकती है?

यह आपकी वर्तमान नीतिसे इतनी भिन्न और विपरीत लगती है कि यह सन्देह होता है कि आप भला इसे क्योंकर अपनायेंगे? शायद आपकी पूरी तैयारी और साधना इससे विपरीत दिशामें है। यह कहना कि अमुक व्यक्ति हर दशा और हर दिशामें देशको नेतृत्व देनेके योग्य नहीं है, उसकी कोई निन्दा नही है। दुर्भाग्यवश किसी भी व्यक्तिपर, चाहे वह कितना ही महान् क्यों न हो, सदैव यह विश्वास नही किया जा सकता कि वह अपनी सीमाओंको समझ लेगा और जिस ध्येयके प्रति वह निष्ठावान है, उसके लिए आवश्यक होनेपर दूसरेको अपनी जगह दे देगा। उसकी महानता ही परिवर्तनके रास्तेमें दीवार बन जाती है। जैसाकि मैंने एक नही अनेक बार आपसे कहा है, आप अन्य नेताओसे बहुत दिनोसे और निश्चित रूपसे इतने ऊपर उठ गये हैं कि ऐसा कोई भी व्यक्ति नजर नही आता जो एकाएक आपकी जगह ले सके। यदि आप नये युगके लिए बदले जा सकते और पुनः निर्मित किये जा सकते तो यह कितना बड़ा वरदान होता! लेकिन आप इतने अच्छे है, अपने प्रति इतने सच्चे है कि अगर सिद्धान्त आपका न हो और अनुष्ठान ऐसा हो जिसका आपने कभी संचालन न किया हो, तो आप यह दिखावा कदापि नही करेंगे कि आप वही पहलेवाले शिक्षक हैं।

इस दारुण संकटमें देश आपकी ओर देख रहा है कि आप अबतक जो भूमिका अदा करते रहे हैं, उससे बड़ी भूमिका अदा करें। (क्षमा करें, मैं ऐसा दलोंको देखते हुए देशके लिए बड़ी भूमिकाके अर्थमें कह रहा हूँ।) आप अपनी अन्तरात्माकी रक्षा करें, सविनय अवज्ञा चलाते रहें, लक्ष्यके प्रति प्रयत्नशील रहें, सरकारको परेशान करें -- लेकिन कांग्रेसको एक नया कार्यक्रम बनानेके लिए स्वतन्त्र छोड़ दें। व्यक्तिगत [सविनय] अवज्ञाको मान्यता और समर्थन देते हुए यह (कांग्रेस) ऐसा कर ही नहीं सकती। आपको याद है जब मैं आपसे पिछली बार पर्णकुटीमें मिला था तो मैंने आपसे यही रास्ता अपनानेके लिए प्रार्थना की थी। आपने मुझे बताया कि आपने इसे कार्यसमितिके सम्मुख रखा था, पर उसने इसे स्वीकार नही किया। यह स्वाभाविक और एक तरहसे ठीक ही था। समिति आपको त्याग देनेका लांछन सह नही सकती। मुझे आश्चर्य नहीं कि यह विचारतक उसे घृणित लगा होगा। अब वह समय आ गया है -- मेरे विचारसे तो बहुत पहले ही आ गया था -- जब आपको यह कह देना चाहिए 'मैं कांग्रेसको दूसरे तरीके आजमानेकी छूट देता हूँ। मेरे पास भगवानका बहुत-सा काम पड़ा है -- हरिजनोंके साथ देशके कल्याणके लिए काम करना है।'

तो मैंने आपसे सचाई, जैसी मुझे प्रतीत होती है, कह दी है। क्या यह आशा की जा सकती है कि आप समस्याको एक नये दृष्टिकोणसे देखेंगे? मै एक चीज जानता हूँ। कोई भी ऐसा आत्मत्याग नही है जो आपके सामर्थ्यसे बाहर हो। बात केवल इतनी ही है कि वह आपको आवश्यक जान पड़े।

एक दोस्त और भाई तो संकेत-भर ही कर सकता है।

सस्नेह,
वी० एस० श्रीनिवासन

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २५८-६०

परिशिष्ट--१४

जवाहरलाल नेहरूका पत्र

पर्णकुटी, पूना
१३ सितम्बर, १९३३

प्रिय बापू,

आपको याद होगा कि अपनी हालकी बातचीतके दौरान मैंने राष्ट्रीय लक्ष्यको फिरसे दुहराने और उसकी स्पष्ट रूपसे व्याख्या करनेपर जोर दिया था। कांग्रेसने राजनैतिक स्वतन्त्रताका लक्ष्य अन्तिम रूपसे निर्धारित कर ही दिया है और उसमें कुछ और जोड़ा या घटाया नही जा सकता। हम पूर्ण स्वतन्त्रताके पक्षमें हैं। कभी-कभी अस्पष्ट पदावली और भ्रामक प्रचारकी वजहसे थोड़ी भ्रान्ति खड़ी हो

जाती है। अतः अपनी राजनैतिक माँगको दुहराकर इस भ्रान्तिको समाप्त कर देना ही अच्छा है। स्वतन्त्रता शब्दतकका प्रयोग विभिन्न अर्थोमें किया जाता है। जाहिर है कि इसमें, जैसाकि कांग्रेसने स्पष्ट तथा सुनिश्चित रूपसे कह दिया है, सेना और वैदेशिक विषयोंपर पूर्ण नियन्त्रण तथा वित्तीय और आर्थिक नियन्त्रण जरूर शामिल होना चाहिए।

आर्थिक विषयोंके सम्बन्धमें कराची कांग्रेसने 'मौलिक अधिकार और आर्थिक नीति' पर एक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पास करके अगुआई की और बताया कि हमें किस दिशामें बढ़ना चाहिए।

मै उक्त प्रस्तावको बहुत ही महत्त्वपूर्ण मानता हूँ। लेकिन व्यक्तिगत रूपसे मैं इससे भी आगे जाना और स्थितिको और अधिक स्पष्ट करना चाहूँगा।

मुझे ऐसा लगता है कि यदि हम आम लोगोंकी दशा सुधारना चाहते हैं, उनका आर्थिक स्तर ऊँचा उठाना चाहते है और उन्हें स्वतन्त्रता देना चाहते है, तो भारतमें निहित स्वार्थोको अपना विशिष्ट स्थान और अपने बहुत-से विशेषाधिकार अनिवार्य रूपसे छोड़ने होंगे। किसी और तरहसे आम जनता उठ सकती है, यह मेरी कल्पनासे परेकी बात है। इसलिए स्वतन्त्रता-प्राप्तिका प्रश्न निहित स्वार्थोमें आम जनताके पक्षमें सुधार लानेका प्रश्न बन जाता है। जिस सीमातक यह किया जा सके, उस सीमातक ही स्वतन्त्रता आ पायेगी। भारतमे सबसे बड़ा निहित स्वार्थ है ब्रिटिश सरकारका; उसके बाद आते हैं भारतीय रजवाड़े और अन्य लोग। हम किसी वर्ग या समूहको चोट पहुँचाना नही चाहते है और उनसे उनके ये अधिकार यथासम्भव नरमीके साथ ले लिये जाने चाहिए तथा हर तरहसे ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि किसीको कोई क्षति न पहुँचे। परन्तु यह स्पष्ट है कि अधिकारोंके इस आहरणसे उन वर्गो या समूहोको घाटा होगा ही जो आम जनताको क्षति पहुँचाकर विशेषाधिकारका भोग करते है। यह भी स्पष्ट है कि अधिकारोंके आहरणकी यह प्रक्रिया यथासम्भव ज्यादा-से-ज्यादा तेजीसे चलनी चाहिए ताकि आम जनताको, जिसकी स्थिति, जैसाकि आप जानते ही है, आखिरी हदतक खराब है, राहत मिल सके। सच तो यह है कि आज आर्थिक शक्तियाँ खुद ही आश्चर्यजनक तेजीसे काम कर रही हैं और पुरानी व्यवस्थाको तोड़ रही हैं। संयुक्त प्रान्तमें बड़ी जमींदारी और ताल्लुकेदारीकी प्रथा प्रायः ध्वस्त हो चुकी है, यद्यपि बाह्य शक्तियाँ उसे कुछ और समयतक खड़ा रख सकती है। जमींदारोंकी भी स्थिति बहुत खराब है और किसानोंकी स्थिति तो उससे भी बदतर है।

हम सभी इससे सहमत हैं कि गोलमेज सम्मेलन और उससे उत्पन्न विभिन्न योजनाएँ भारतकी अनेक समस्याओंमें से एकका भी समाधान करनेके लिए एकदम बेकार है। मैं यह समझता हूँ कि गोलमेज सम्मेलन भारतके निहित स्वार्थोको ब्रिटिश सरकारके पीछे संगठित करनेका एक प्रयास था, ताकि ये उभरते हुए शक्तिशाली राष्ट्रीय और आर्थिक आन्दोलनोंका, जिनसे इन स्वार्थोको खतरा है, सामना कर सकें। अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावलीमें, तत्त्वतः यह निहित और अधिकार-सम्पन्न स्वार्थोका फासिस्ट जमाव था, और भारतमें राष्ट्रीय आन्दोलनको कुचलनेके लिए फासिस्ट तरीके अपनाये

गये। और क्योंकि भारतके इन सभी निहित स्वार्थोंको कायम रखनेसे हमारी आर्थिक बुराइयाँ, चाहे वे आम जनताकी हो या मध्यमवर्गीय लोगोकी, दूर नही हो सकतीं, इसलिए इस प्रयासकी असफलता पहलेसे ही निश्चित है। प्रजातात्रिक राष्ट्रवादकी दृष्टिसे भी, जैसा कि आपने स्वयं ही गोलमेज सम्मेलनमें कहा था, प्रजातत्र और निरंकुश शासन साथ-साथ नही चल सकते।

एक दूसरे पहलूको भी ध्यानमें रखना है। भारतीय स्वतन्त्रताकी समस्याको संसारकी प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओसे अलग नही किया जा सकता। विश्वके मामलों में जो संकट अभी वर्तमान है उसकी प्रतिक्रियाएँ भारतमें भी हो रही हैं। इसका नतीजा यह हो सकता है कि किसी भी समय सारी व्यवस्था ठप्प हो जायेगी या हिसक अन्तर्राष्ट्रीय ज्वाला भड़क उठेगी। प्रगति और आमजनताकी भलाई चाहनेवाली शक्तियो तथा प्रतिक्रियावादी और निहित-स्वार्थोंकी शक्तियोके बीच सर्वत्र कलह और संघर्ष छिड़ा हुआ है। हम इस भीषण संघर्षमें मात्र मूक दर्शक बनकर नहीं रह सकते, क्योंकि इसका गहरा प्रभाव हमपर भी पड़ रहा है। मै समझता हूँ कि अपने निजी हितोके संकुचित आधार और अन्तर्राष्ट्रीय कल्याण और मानव प्रगतिके विस्तृत आधार, दोनो आधारोपर हमे निश्चित रूपसे प्रगतिशील शक्तियोका पक्ष लेना चाहिए। निस्सन्देह हमारा यह पक्ष लेना अभी महज सैद्धान्तिक ही हो सकता है।

ये कुछ बड़े-बड़े मसले है जो मेरे दिमागमे है और मेरा विश्वास है कि जहाँ इनको नजरअन्दाज करनेसे हमें मुसीबतमे पड़ना पड़ेगा वहाँ इनका सम्यक् मूल्यांकन करनेसे हमारी स्वतन्त्रताकी लड़ाईको, जिसे हमें निश्चित रूपसे तबतक चलाते रहना है जबतक हमारा लक्ष्य पूरा नही हो जाता, नया जीवन और नया अर्थ मिलेगा।

ये बड़े-बड़े मसले तो महत्त्वपूर्ण है ही, परन्तु, जैसाकि आप जानते हैं, हमारे देशके अधिकांश लोगोंके दिमागमे इस समय तात्कालिक राष्ट्रीय समस्याएँ, खासकर (स्वतन्त्रता-) संघर्ष जारी रखनेकी समस्या चक्कर काट रही है। कुछ समय पहले आपने और श्रीयुत अणेने देशको मार्ग सुझानेके लिए जो वक्तव्य दिये थे, उनसे मुझे लगता है कि कुछ घपला पैदा हो गया है और उनमें बताये गये कुछ खास निर्देशोके प्रति लोगोंमें असन्तोष भी फैल गया है। अच्छी जानकारी रखनेवाले क्षेत्रोमें ऐसी भी कानाफूसी चल रही है कि काग्रेसको भंग कर दिया गया है। यह तो स्पष्ट है कि ऐसा कुछ नही किया गया है और संविधानके अनुसार किया भी नही जा सकता था। आपके और श्री अणेके निर्देशमें मै तो यही समझता हूँ कि एक विशेष परिस्थितिसे निपटनेके लिए, जो पैदा हो गई थी, परामर्श या सुझाव-ही थे। काग्रेस पूर्ववत् चल रही है। लेकिन यह स्पष्ट है कि यदि सरकार इसकी समितियोंको अवैध करार कर देती है तो यह सामान्य रूपसे काम नही कर सकती, कोई नियमित कार्यालय या खुले कार्यक्रम नही हो सकते। इस तथ्यको समझना और तदनुसार अपनेको ढालनेका अर्थ कांग्रेसकी किसी भी समितिको भंग करना नहीं है, पूरे कांग्रेस संगठनकी तो बात ही छोड़िये।

इसका एक आवश्यक परिणाम इस सम्भावनाको रोकना था कि पुराने सदस्यों और अन्य विश्वसनीय कार्यकर्त्ताओंके जेल चले जानेके बाद जो थोड़े-से नये लोग समितियाँ बनायें, वे अथवा अन्य व्यक्ति कांग्रेसको गलत काममे न लगा दें। जैसा कि ज्ञात है, पहले भी हमे इस खतरेका सामना करना पड़ा है। अविश्वसनीय लोग कुछ स्थानीय क्षेत्रोंमें ऊँचे पदोपर इसी उद्देश्यसे आसीन हो गये थे कि जिन कार्य-क्रमोंको आगे बढ़ानेकी उनसे उम्मीद थी, वे उन्हीको रोके या होने ही न दें। अतः यह वांछनीय है कि इस तरहके अविश्वसनीय लोगोंको कांग्रेस समितिके नामका दुरुपयोग न करने दिया जाये। परन्तु इसका अर्थ यह नही है कि किसी भी क्षेत्रमें कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंको संगठित रूपमे हमारे कार्यक्रमको आगे बढ़ानेसे रोका जाये।

देशमें व्यक्तिगत और सामूहिक सविनय अवज्ञाके गूढ़ार्थोंके सम्बन्धमें भी भ्रम पैदा हो गया है। मै कुछ हदतक इनके अन्तरको समझता हूँ। लेकिन मुझे यह अन्तर मौलिक अन्तर नही मालूम पडता, क्योकि हर हालतमें सविनय अवज्ञा तत्त्वतः व्यक्तिगत मामला ही है। व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञा बढ़कर सामूहिक सविनय-अवज्ञा हो सकती है। इसके अलावा, आपने मुझसे कहा था कि यदि कोई संगठन अपनेमे उत्तर-दायित्व और जोखिम उठाने लायक शक्ति अनुभव करता है, तो वह खुद पहलकदमी कर सामूहिक सविनय-अवज्ञा शुरू कर सकता है। वास्तवमें तो आपका यह विचार था कि कोई स्थानीय संगठन इस प्रकार किसी भी ऐसी दशामें जो कांग्रेसके तरीकों या सिद्धान्तोंके विपरीत हो, आगे बढ सकता है।

आपके पिछले वक्तव्यमें गोपनीयताकी अवांछनीयतापर जोर दिया गया था, यद्यपि आपने यह भी बताया था कि गुप्त तरीके स्वभावतः गलत नही होते है। मेरा विश्वास है हममें से अधिकांश इससे सहमत है। मै तो निश्चित रूपसे ऐसा विचार रखता हूँ कि हमारा आन्दोलन तत्त्वतः एक खुला आन्दोलन है और गुप्त तरीके इससे मेल नहीं खाते। ऐसे तरीके यदि बहुत हदतक अपनाये गये तो इस आन्दोलनके जिस स्वरूपकी कल्पना की गई है वे उसे बिलकुल बदल सकते है और उनसे हिम्मत भी कुछ टूट सकती है। हममें से कुछ लोग, इससे सहमत होते हुए भी, ऐसा महसूस करते हैं कि कुछ हदतक, उदाहरणके लिए एक-दूसरेको सन्देश भेजने, हिदायतें भेजने या सम्पर्क बनाये रखनेके लिए, थोडी गोपनीयता आवश्यक हो सकती है। शायद इन कार्यवाहियोके लिए गोपनीयता शब्द उतना उपयुक्त नही है, अन्तरंगता शब्द ही अधिक उपयुक्त है। निस्सन्देह सभी समूहो या लोगोको अन्तरंगताका सदैव अधिकार है। निस्सन्देह जैसाकि आपने कहा था, गोपनीयता या उसके अभावको अन्धश्रद्धाका सिद्धान्त नही बनाया जा सकता।

किन्तु समाचारपत्रों या बुलेटिनोको मुद्रित करने या उनकी प्रतियाँ तैयार करनेमें गोपनीयता तो निश्चित रूपसे रहती ही है। पहले ये बुलेटिन मुख्यालय और जिलोंमें सम्बन्ध बनाये रखने और सूचना और निर्देश भेजनेमें प्राय. बहुत लाभप्रद साबित हुए थे। इन गुप्त प्रेसों और प्रतियाँ तैयार करनेवाली मशीनोंके संचालनकी कठिनाइयों और उसके अवांछित परिणामोंकी ओर आपने मेरा ध्यान दिलाया था।

कितने ही अच्छे कार्यकर्त्ता इसमें फँसे हुए हैं और उन्हें उग्र कार्यवाहीसे बचना पड़ता है। इन मशीनोंमें पूँजी लगानी पडती है और प्रायः पुलिस इन्हें जब्त कर लेती है। व्यावहारिक दृष्टिकोणसे भी लगातार ऐसा घाटा उठाना और कार्यकर्त्ताओंको फँसाये रखना उचित नही है, और निस्सन्देह कभी-कभी इससे उत्साह टूट जाता है। आपने सुझाया था कि सबसे अच्छा तरीका बुलेटिनों आदिकी हस्तलिखित प्रतियाँ बनाना है जिनमें प्रकाशकका नाम भी अंकित हो। मोटे तौरपर मैं इस सबसे सहमत हूँ और आपकी दलीलमें बल है यह मानता हूँ। फिर भी मै यह महसूस करता हूँ कि कुछ परिस्थितियोंमें स्थानीय या प्रान्तीय समिति या समूहके लिए निर्देश आदि देनेवाले बुलेटिन गुप्त रूपसे जारी करना जरूरी हो सकता है। वैसे इसको बढ़ावा कतई नहीं देना चाहिए, वास्तवमे तो इसे रोकना ही चाहिए। परन्तु विशेष परिस्थितियोंमें कुछ छूट दी जा सकती है।

एक और छोटी बात है जो मुझे तो हास्यास्पद-सी लगती है। यदि आप अनुमति दे तो मै कहूँगा कि अधिकारियोंको अपने इरादेकी पूर्व-सूचना देकर अपनी गिरफ्तारी कराना आपके लिए तो ठीक और उचित था। परन्तु दूसरे लोगोंका, कांग्रेसी स्वयंसेवको तकका, अधिकारियोंके पास ऐसी सूचना या सन्देश भेजना मुझे बिलकुल बेतुका लगता है। जो भी व्यक्ति सविनय-अवज्ञा करना चाहता है उसे खुलेआम वे काम जारी रखने चाहिए जिनसे हमारा लक्ष्य आगे बढ़े और इस तरह अपनेको गिरफ्तार कराना चाहिए। उसे उन कामोंको भुलाकर या उनकी उपेक्षा करते हुए महज गिरफ्तारीकी माँग नही करनी चाहिए।

यह पत्र काफी लम्बा हो गया है। इसलिए मैं यहाँ बहुत-सी अन्य बातोंका जिनपर आपके साथ बातचीत करनेका मुझे सौभाग्य मिला था, जिक्र नही कर रहा हूँ।

सस्नेह,
जवाहर

महात्मा गांधी
पूना

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (११) सी; **महात्मा** भाग-३, पृ० ३०५-८ भी।

अवशिष्टांश

१. पत्र : नारणदास गांधीको

१७ जुलाई, १९३३

चि० नारणदासजी,

वाइसरायकी 'नहीं'[1] आ गयी है, इसलिए मुझे दो घड़ीका ही मेहमान मानो। मैं तैयारी कर रहा हूँ। इस अन्तिम बलिदानमें सम्पूर्ण आश्रमकी आहुति हो जाये, ऐसी मेरी तीव्र इच्छा है। मैं चाहूँगा कि आश्रमकी जंगम सम्पत्तिकी देखभाल अम्बालालभाई अथवा ऐसा ही कोई और मित्र सार्वजनिक रूपसे करे। स्थावर सम्पत्ति सरकारको सौंप देनेका विचार मनमें आता रहता है।[2] बादमें जो लोग जाना चाहें, वे भले चले जायें और जो बाकी रहें, वे अपनी इच्छाके अनुसार जहाँ उनकी सुविधा हो, वहाँ रह जायें। यह विचार तुम्हें पसन्द न हो, तो मुझे जबरदस्ती कुछ नही करना है। आश्रमकी और उसके उद्देश्योंकी रक्षाकी जिम्मेदारी जो लोग पीछे रह जायेंगे, उनकी होगी। वे अपनी शक्तिके अनुसार आचरण करें। मैं तो केवल मार्ग-दर्शन ही कर सकता हूँ। ऐसा हुआ तो नीलाकी और अमलाकी क्या व्यवस्था की जाये, इस बातका विचार करना होगा। अमला हरिजन-सेवाके किसी कार्यमें लगना चाहे, तो वैसा करे। नीलाकी जिम्मेदारी यदि जमनालालजी ले लें, तो वह वर्धा चली जाये। दूसरी जो समस्याएँ होंगी, वे अभी मुझे एकाएक नही सूझ रही हैं। डंकनका नाम मैं नहीं लेता, क्योंकि डंकन तो पुरुष है। इसके सिवा वह यहींका रहनेवाला है। यदि वह हरिजन-सेवा करना चाहे, तो उस कार्यमें उसका समावेश आसानीसे हो सकता है।[3]

बापू

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३७१-२

१. देखिए पृ० २७८।
२. देखिए पृ० ३१६-१९ और ३४३।
३. देखिए पृ० ३४३-४५ भी।

२. पत्र : अहमदाबादके कलैक्टरको[१]

३१ जुलाई, १९३४

आप मुझे पहले ही यह अनुमति दे चुके है कि मै जो भी पुस्तकें चाहूँ ले जा सकता हूँ। विद्यापीठकी इमारतसे सभी पुस्तकें और जिन शैल्फोंमें वे रखी हैं वे भी ले जाना मेरे लिए नियमित होगा न? जैसाकि आप जानते हैं, निश्चय यह किया गया है कि साबरमती आश्रमकी पुस्तकें सार्वजनिक उपयोगके लिए दे दी जायें। विद्यापीठके ट्रस्टियोंका इरादा है कि विद्यापीठके पुस्तकालयके साथ भी यही किया जाये। इसीलिए मैंने यह पूछा है।[२]

[अंग्रेजीसे]

बापुना पत्रो : २ सरदार वल्लभभाई पटेलने, भाग-२, पृष्ठ १६१

१. साधन-सूत्रमें नरहरि परीखने स्पष्ट किया है कि पत्रका यह मसौदा डा० बी० कालेलकरके लिए तैयार किया गया था, जिन्होंने "३१ जुलाईको अहमदाबाद पहुँचनेके बाद" इसे कलैक्टरको भेज दिया था।

२. नरहरि परीखके अनुसार, कलैक्टरने इसके जवाबमें कहा था कि पुस्तकें और उनके जो शैल्फ इमारतमें जड़े नहीं हैं, वे हटा लेनेपर उन्हें कोई आपत्ति नहीं होगी।

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली: गांधी साहित्य और गांधीजी-सम्बन्धी कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय; देखिए खण्ड १, पृ० ३५९ (प्रथम संस्करण १५ अगस्त, १९५८) तथा पृ० ३५५ (द्वितीय संशोधित संस्करण, जून, १९७०)।

नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया), नई दिल्ली।

साबरमती संग्रहालय, अहमदाबाद: पुस्तकालय तथा संग्रहालय, जिसमें गांधीजी के दक्षिण आफ्रिकी काल तथा १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात रखे हैं; देखिए, खण्ड १, पृ० ३६० (प्रथम संस्करण १५ अगस्त, १९५२) तथा पृ० ३५५ (द्वितीय संशोधित संस्करण जून, १९७०)।

'अमृतबाजार पत्रिका,': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'टाइम्स ऑफ इंडिया', बम्बई तथा नई दिल्लीसे एकसाथ प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'दि इंडियन क्वार्टर्ली रजिस्टर', भाग–२ १९३३: नृपेन्द्रनाथ मित्र, दि ऐन्युअल रजिस्टर ऑफिस, कलकत्ता।

'विश्वभारतीय न्यूज', शांतिनिकेतनसे प्रकशित अंग्रेजी मासिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स,': नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'दि ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ़ वेरीयर एलविन': ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, १९६४।

'पाँचमा पुत्रने बापुना आशीर्वाद' (गुजराती): सम्पादक: काका कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद',: सम्पादक: काका कालेलकर, जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अंग्रेजी): सम्पादक: जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९५८।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष': हीरालाल शर्मा, ईश्वरशरण आश्रम, इलाहाबाद; १९५७।

'बापूज लेटर्स टु मीरा' (अंग्रेजी) : नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'बापूना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाई पटेलने' (गुजराती) : सम्पादक : मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने' (गुजराती) : सम्पादक : मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) : मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'महादेव भाईनी डायरी, भाग – ३ (गुजराती) : सम्पादक : नरहरि द्वा० पारीख, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी) : सम्पादक : एलिस एम० बर्नेस, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५६।

'लेटर्स ऑफ़ श्रीनिवास शास्त्री' (अंग्रेजी) : सम्पादक : टी० एन० जगदीशन, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९६३।

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, १९३३ : बम्बई सरकारके सरकारी कागजात।

होम डिपार्टमेंट, बम्बई सरकार।

मैन्युस्क्रिप्ट ऑफ महादेव देसाईज़ डायरी (अंग्रेजी) : स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमें रखी महादेव देसाईकी हस्तलिखित दैनन्दिनी।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(२३ अप्रैल से १५ सितम्बर, १९३३ तक)

२३ अप्रैल : गांधीजी यरवदा सैंट्रल जेल, पूनामें थे।

बी० आर० अम्बेडकरसे हुई बातचीतपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको भेंट।

२७ अप्रैल : 'हरिजन' में प्रकाशित लेख "यरवदा समझौता" में गांधीजी ने बताया कि पेनल व्यवस्थामें हेरफेर करनेका अम्बेडकरका सुझाव "किसी भी तरहसे हरिजनोंके हितमें नहीं है।"

पी० एन० राजभोजको लिखे पत्रमें कहा कि "जिस यज्ञका श्रीगणेश सितम्बरमें हुआ था . . . वह अभी भी चल रहा है और उसकी पूर्णाहुति अस्पृश्यताके उन्मूलनसे ही हो सकती है।"

३० अप्रैल : "अपनी तथा सहयोगियोंकी आत्मशुद्धिके लिए" ८ मई से २१ दिनका शर्तहीन और अपरिवर्तनीय अनशन करनेके निर्णयकी घोषणा की।

अनशनपर वक्तव्य जारी किया।

तार द्वारा गृह-विभागको अनशन करनेके निर्णयकी सूचना दी।

१ मई : रावजीभाई पटेलको लिखे पत्रमें कहा कि प्रस्तावित अनशन "उन लोगोंके लिए सजाके तौरपर है जो यह सोचते हैं कि उन्होंने जो प्रतिज्ञा की है, उसको पूरा करनेके लिए वे सक्षम नहीं हैं।"

दोपहरको मौन तोड़ा।

अनशन करनेके निर्णयपर समाचारपत्रोंको भेंट दी और सहकर्मियोंसे मुलाकात की।

२ मई : जनरल स्मट्सका तार मिला जिसमें अनशन न करनेके लिए आग्रह था।

३ मई : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको भेंट।

गांधीजी की सेवा-शुश्रूषाके लिए सरोजिनी नायडू आईं।

४ मई : डॉ० एम० ए० अन्सारीको भेजे गये तारमें गांधीजी ने कहा कि "ईश्वर मेरा अदृश्य परिचारक होगा।"

५ मई : च० राजगोपालाचारीको लिखे पत्रमें गांधीजी अपनी डाक्टरी जाँच करानेके लिए, जिसे उन्होंने एक दिन पहले अस्वीकृत कर दिया था, राजी हो गये।

६ मई या उससे पूर्व : आर्यसमाज सम्मेलनको सन्देश भेजा।

६ मई: शामको मिलनेके लिए आये अनेक मित्रों और प्रशंसकोंको एक सन्देश दिया।

८ मईसे पूर्व: प्रस्तावित अनशनपर समाचारपत्रोंको भेंट।

८ मई: १२ बजे दोपहरसे २१ दिवसीय अनशन शुरू किया; अनशनका स्पष्टीकरण करते हुए एक वक्तव्य दिया।

शामको ६.४५ बजे जेलसे रिहाई; रात ९ बजे लेडी ठाकरसीकी कोठीपर पहुँचे।

एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको भेंट।

सविनय अवज्ञा आन्दोलनको छः सप्ताहके लिए स्थगित करनेकी घोषणा की; सरकारसे अध्यादेशोंको वापस लेने और सभी सविनय अवज्ञाकारियोंको रिहा करनेका आग्रह किया।

९ मई: एम० एस० अणेने सविनय अवज्ञा आन्दोलन छः सप्ताहके लिए स्थगित करनेका वक्तव्य जारी किया।

भारत सरकारने गांधीजी की रिहाईपर विज्ञप्ति जारी की।

१० मई: गांधीजी ने एक तारमें कस्तूरबाको "बहादुर बनने"के लिए कहा।

११ मई: 'हरिजन' में 'पाठकोंको' सन्देश दिया।

डॉ० फाटक और घड़पुरेने ९ बजे सुबहसे ९बजे राततक बारी-बारी गांधीजी की देखभाल की।

१३ मई: साबरमती जेलसे कस्तूरबाकी रिहाई।

गांधीजी ने अम्लताको काबूमें रखनेके लिए 'विची' जल लेना शुरू किया।

१४ मई: कस्तूरबा और हरिलाल गांधीजी से मिलने आये।

१८ मई: डॉ० एम० ए० अन्सारीने गांधीजी की डॉक्टरी जाँच की और उनकी हालत बेहतर बताई।

२० मई: गांधीजी के कहनेपर महादेव देसाई साबरमती आश्रमको लौट गये।

एक तारमें गांधीजी ने सेनापति वापटको अनशन छोड़नेकी सलाह दी।

सिंहगढ़ झरनेका जल सोडा बाइकार्बोनेट मिलाकर लेना शुरू किया, वह 'विची' जलसे मीठा था तथा शिवाजी और तिलककी स्मृतियोंसे जुड़ा था।

'पर्णकुटी' से जारी की गई डॉक्टरी विज्ञप्तिमें लिखा था: "महात्मा गांधीकी एक और रात अच्छी तरह बीती। उनकी हालतमें, जो काफी सन्तोषजनक चल रही है, कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण पत्र उन्हें आज सुबह पढ़कर सुनाये गये।"

२१ मई: 'पर्णकुटी' की एक और विज्ञप्ति: "गांधीजी की एक और रात अच्छी तरह बीती और प्रातः प्रार्थनाके समयतक वे आरामसे सोते रहे। मतली आनी प्रायः बिलकुल बन्द हो गई है। कल तीसरे पहरसे वे सिंहगढ़ झरनेका जल

पी रहे हैं। उनकी सामान्य दशा बहुत सन्तोषप्रद है और वे शान्त एवं प्रफुल्लित हैं।

सेनापति बापटने अनशन समाप्त करनेका गांधीजी का अनुरोध अस्वीकार कर दिया।

२३ मई: डॉ० विधानचन्द्र रायके यह पूछनेपर कि आप कैसा महसूस कर रहे हैं, गांधीजी ने कहा कि "चित भी मेरी पट भी मेरी।"

गांधीजी के विषयमें निकली डॉक्टरी विज्ञप्तिमें कहा गया था: "गांधीजी को अच्छी नींद आई, उन्होंने पूरा आराम किया और वे अच्छे हैं।"

२५ मई: डॉ० विधानचन्द्र राय और डॉ० एम० ए० अन्सारी गांधीजी की शय्याके पास रहे।

२६ मई: आश्रमके प्रबन्धके विषयमें महादेव देसाईके साथ विचार-विमर्श किया।

२७ मई: देवदासके साथ विचार-विमर्श किया।

२९ मई: सन्देश दिया, जिसे महादेव देसाईने पढ़कर सुनाया; अनशन तोड़ा।

६ जून: देवदास-लक्ष्मीके विवाहकी सूचना विवाह-पंजीयक, पूनाको दी गई।

१० जून: देवदास गांधी और लक्ष्मीने विशेष विवाह अधिनियमकी धारा १० के अधीन घोषणापत्र दाखिल किये।

१६ जून: 'पर्णकुटी', पूनामें देवदास और लक्ष्मीका विवाह हिन्दू-रीतिसे सम्पन्न हुआ। गांधीजी ने वर-वधूको आशीर्वाद देते हुए कुछ शब्द कहे।

१७ जून: दक्षिण भारतीयोंको दिये एक सन्देशमें यह इच्छा व्यक्त की कि हर गाँवमें हिन्दीका प्रचार होना चाहिए।

१८ जूनसे पूर्व: एक सन्देशमें इच्छा व्यक्त की कि आश्रमवासी "पहलेसे भी अधिक पवित्र जीवन बितायें।"

२१ जून: विवाह-पंजीयक, पूनाने देवदास-लक्ष्मीके विवाहको १८७२ के अधिनियम ३ के अधीन पंजीकृत किया।

२६ जून: आसफ अलीके खुले पत्रके उत्तरमें गांधीजी ने कहा: ". . . अहिंसा मेरे लिए केवल प्रयोग नहीं है। यह मेरे जीवनका अंग है . . . मेरा यह विश्वास और दृढ़ हो गया है कि भारतके सामने जो जटिल स्थिति है, उसमें सच्ची स्वतन्त्रता पानेका कोई दूसरा उपाय नहीं है।"

२ जुलाई: १२ जुलाईको होनेवाले नेताओंके सम्मेलनके लिए कांग्रेसजनोंको आमन्त्रित किया।

हरिजन कार्यकर्त्ताओंसे बातचीत की।

८ जुलाई: 'हरिजन' में "अनशनके बारेमें" लिखा।

११ जुलाई: पूनामें एम० एस० अणे, म० मो० मालवीय, च० राजगोपालाचारी, भुलाभाई देसाई, डॉ० आलम तथा अबुल कलाम आजादसे बातचीत की।

१२ जुलाई : नेताओंके सम्मेलनमें भाषण दिया।
सम्मेलनने सविनय अवज्ञा आन्दोलनको बिना शर्त स्थगित करनेका सुझाव दिया।
गांधीजी ने सम्मेलन-स्थल, तिलक मेमोरियल हॉलके छज्जेसे सार्वजनिक भाषण दिया।

१४ जुलाई : नेताओंके सम्मेलनके समापन अधिवेशनमें बोले। अधिवेशनने उन्हें वाइसरायसे भेंट करनेका अधिकार दिया।
वाइसरायसे भेंटके लिए तार दिया। तिलक स्मारक मन्दिरमें भाषण दिया।

१७ जुलाई : वाइसरायने भेंटकी प्रार्थना अस्वीकृत कर दी; गांधीजी ने पुनः आग्रह किया, वह भी अस्वीकृत कर दिया गया।

१८ जुलाई : समाचारपत्रोंको भेंट।
अहमदाबाद जाते हुए बम्बई पहुँचे।
बम्बईमें 'हिन्दू' और 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधियोंको भेंट।

१९ जुलाई : अहमदाबाद पहुँचे; सेठ रणछोड़लालके अमृत भुवनमें ठहरे; हरिजन और अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ताओंसे बातचीत की।
हाउस ऑफ कॉमन्समें सैम्युअल होरके भाषणपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको भेंट।
तीसरे पहर साबरमती आश्रम गये।
अहमदाबादके डॉक्टरोंने गांधीजी की जाँच की; दशा 'अच्छी' बताई।

२० जुलाई : 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिके साथ भेंटमें व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाका स्पष्टीकरण किया।

२१ जुलाई : कस्तूरबा गांधीके साथ साबरमती जेल जाकर मीराबहनसे मुलाकात की।

२२ जुलाई : 'हरिजन' में "एक अमरीकी आलोचना" का उत्तर प्रकाशित किया।
जमनालाल बजाज और देवदास गांधीको लिखे पत्रोंमें साबरमती आश्रमको भंग करनेका निर्णय व्यक्त किया।
एम० एस० अणेने सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित करनेके सम्बन्धमें वक्तव्य दिया।

२३ जुलाई : आश्रमकी प्रार्थना-सभामें महादेव देसाईने अस्पृश्यता-निवारणके लिए गांधीजी की चन्देकी अपील पढ़कर सुनाई; सभा-स्थलपर चन्दा इकट्ठा किया गया।

२४ जुलाई : सतीश चन्द्र दासगुप्तको लिखे पत्रमें गांधीजी ने सुझाया कि यदि बंगाली 'हरिजन' लाभकारी नहीं है तो उसका प्रकाशन बन्द कर देना चाहिए।
एम० एस० अणेके वक्तव्यपर 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको भेंट।

२५ जुलाई : साबरमती आश्रमको भंग करनेके निर्णयपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको भेंट।

२६ जुलाई : एम० एस० अणेके वक्तव्यपर अपना वक्तव्य जारी किया।

बम्बई सरकारके गृह-सचिवको एक पत्र लिखकर साबरमती आश्रमको भंग करनेके निर्णयकी सूचना दी।

एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको भेंट।

आश्रमको भंग करनेके विषयपर 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको भेंट।

२७ जुलाई : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको लिखे पत्रमें कहा कि यरवदा समझौतेमें "बंगालके साथ कोई अन्याय नहीं हुआ है।"

आश्रमको भंग करनेके विषयपर 'डेली हेरॉल्ड' के प्रतिनिधिको भेंट।

'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको भेंट।

२८ जुलाई : आश्रमको भंग करनेके विषयपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको भेंट।

२९ जुलाई : कांग्रेस-समितियोंके स्थगनपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको भेंट।

शारदा मन्दिरके स्थापना-दिवसपर गांधीजी वहाँ गये।

३० जुलाई : ६ अगस्तको सेनगुप्त दिवस मनानेकी अपीलके समर्थनमें वक्तव्य दिया।

एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको दिये एक वक्तव्यमें कांग्रेसजनोंसे आग्रह किया कि वे सविनय अवज्ञा-सम्बन्धी निर्णयपर वाद-विवादमें अपनी शक्ति न गँवायें। अंग्रेजोंको यह बात याद दिलाई कि "भारतसे सच्ची मित्रताका तरीका अध्यादेश शासन नहीं है . . . कांग्रेसका तरीका ही एकमात्र तरीका है।

बम्बई सरकारके गृह-सचिवको तार देकर रासतक कूच करनेके निर्णयकी सूचना दी।

गुजरातके लोगोंसे अपील करते हुए यह घोषणा की कि अपने ३३ साथियोंके साथ वे १ अगस्त, १९३३ को आश्रमसे रासतक के कूचके लिए निकलेंगे।

समाचारपत्रोंको भेंट। जमनालाल बजाज गांधीजी से मिलने आये।

अहमदाबाद नगरपालिकाके अध्यक्षको एक पत्र लिखकर साबरमती आश्रम तथा गुजरात विद्यापीठके पुस्तकालयोंको भेंट करनेका प्रस्ताव रखा।

१ अगस्त : प्रार्थनाके बाद कस्तूरबा और महादेव देसाई सहित गिरफ्तार कर लिये गये।

साबरमती जेल जानेवाली सड़कपर एकत्रित हरिजनोंसे बिदाई ली।

अहमदाबादके जिला मजिस्ट्रेटके समक्ष वक्तव्य दिया।

अहमदाबाद सेंट्रल जेलके अधीक्षकको पत्र लिखकर हरिजन-कार्य करनेकी अनुमति मांगी।

अहमदाबादमें हड़ताल रही।

२ अगस्त : गांधीजी यरवदा जेल भेजे गये।

३ अगस्त : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर अपनी गतिविधियोंपर लगाये जानेवाले प्रस्तावित प्रतिबन्धको माननेसे इनकार किया।

पूनाके जिला मजिस्ट्रेटके समक्ष वक्तव्य देते हुए उसी दिन कुछ देर पहले बम्बई सरकारके गृह-सचिवको लिखे अपने पत्रका जिक्र किया।

४ अगस्त : यरवदा जेलसे रिहा किये गये और यरवदा गाँवसे चले जानेका आदेश दिया गया।

उक्त आदेशका उल्लंघन करनेपर पुनः गिरफ्तार कर लिये गये और मुकदमा चलानेके लिए उन्हें यरवदा जेल भेजा गया।

मुकदमेकी सुनवाईके समय "बम्बई सरकारके आदेशको जान-बूझकर तोड़ने" की अपनी कार्यवाहीका स्पष्टीकरण करते हुए छोटा-सा वक्तव्य दिया।

एक सालकी साधारण कैद हुई और 'ए' क्लास दी गई।

महादेव देसाईको भी एक सालकी साधारण कैदकी सजा मिली, उन्हें 'बी' क्लास दी गई।

बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर "अस्पृश्यता-विरोधी कार्य फिर करने" देनेकी अपनी प्रार्थना फिर दोहराई और सोमवार, ७ अगस्त से पहले ही सरकारी निर्णय देनेकी मांग की।

५ अगस्त : 'हरिजन' में प्रकाशित लेख "उपवासकी नैतिकता" में गांधीजी ने लिखा : "जिस तरह खोई हुई शक्तिको पुनः प्राप्त करनेके लिए किया गया अनशन अस्वाभाविक या दण्डनीय आत्मपीड़न नहीं है, उसी तरह अपनी तथा दूसरोंकी आत्मशुद्धिके लिए किया गया अनशन भी नहीं है।

आर० वी० मार्टिनको पत्र लिखकर "किसी भी अतिरिक्त भोजनके लिए दाम चुकाने" से इनकार किया तथा सरकारसे वही सुविधाएँ माँगीं जो उन्हें पहले मिली हुई थीं।

६ अगस्त : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर यह अनुरोध किया कि सुविधाएँ देनेकी उनकी प्रार्थनापर जल्दी ही निर्णय दे दिया जाये।

८ अगस्त : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर कुछ मुद्दोंपर "सीमित अनुमति" देनेके लिए धन्यवाद व्यक्त किया और सरकारसे यह कहा कि [उनकी] "आत्माकी आवश्यकताओं" से सम्बन्धित कुछ मुद्दोंपर भी वह उसी तरह ध्यान दे।

१० अगस्त : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर सोमवार, १४ अगस्तको या उससे पहले निर्णय दे देनेकी अपील की।

१४ अगस्त : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर अपने इस निश्चय की सूचना दी कि यदि माँगें बुधवार, १६ अगस्तसे पहले न मान ली गई तो वे कोई भी पौष्टिक आहार स्वीकार नहीं करेंगे।

१५ अगस्त : आर० वी० मार्टिनको लिखे पत्रमें प्रस्तावित अनशनको रोकनेके लिए अन्तिम आदेश निकलने तक तीन मुद्दोंपर मंजूरी देनेका अनुरोध किया।

१६ अगस्त : कुछ सुविधाएँ प्राप्त हो जानेके बावजूद, जिन्हें उन्होंने "अनिच्छासे दी गई" बताया, तीसरे पहर अनशन शुरू कर दिया।

१७ अगस्त : आर० वी० मार्टिनको लिखे पत्रमें समझौतेके मुद्दोंका उल्लेख किया।

१९ अगस्त : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको लिखे पत्रमें यह विचार व्यक्त किया कि सविनय अवज्ञाको, जो "पूर्णतया वैधानिक गतिविधि" है, यद्यपि सरकार अवैध मानती है, परन्तु वह उनका धर्म है।

२० अगस्त : 'हरिजनबन्धु' में भावनगरके हरिप्रसाद देसाईके प्रति श्रद्धांजलि देते हुए उन्हें "हरिजन-आन्दोलनका मूक कार्यकर्त्ता" बताया।

२१ अगस्त : दशा बिगड़ जानेके कारण सेसून अस्पताल, पूना लाये गये। एण्ड्रयूज और कस्तूरबा मिलने आये। गांधीजी ने यह मानकर कि मृत्यु सन्निकट है, अपनी चीजें अस्पतालके उन कर्मचारियोंमें बाँट दीं जो उनकी परिचर्या कर रहे थे।[1]

२३ अगस्त : सरकारी हिरासतसे बिना शर्त रिहाई। संतरेका एक ग्लास रस ग्रहण कर अपराह्न, ३.४५ पर अनशन तोड़ा। अस्पतालकी गाड़ीसे "पर्णकुटी" में लाये गये; डॉ० दिनशा मेहताने उनकी देख-भालकी जिम्मेदारी ली।

२४ अगस्त : विधानसभाने "मन्दिर-प्रवेश विधेयक" को एक साल रोके रखनेका फैसला किया।

२५ अगस्त : समाचारपत्रोंको भेंट।

२८ अगस्त : विधानसभामें वाइसरायने घोषणा की कि सुधारके प्रश्नपर उनकी नीति सदा एक-सी रही है "ताकि भारतकी उत्तरदायी सरकार, स्वशासन या डोमिनियन स्टेटस" की ओर बढ़नेमें सहायता की जा सके।

३० अगस्त : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको लिखे पत्रमें गांधीजी ने कहा कि वे खुशीसे कांग्रेससे अलग हो जायेंगे और अपनेको पूर्णतया सविनय अवज्ञाके विकासमें लगा देंगे।

१. पृष्ठ ४१३ पर गांधीजी ने यह घटना २४ तारीख की बताई है, जो याददाश्त की भूल लगती है। **महात्मा** (भाग-३, पृष्ठ २६४) में इस घटना की तारीख २१ अगस्त ही दी गई है।

२ सितम्बर: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियको भेंट।
गृह-सचिव, हालेटने सी० एफ० एन्ड्रयूजसे भेंट की जिन्होंने, गांधीजी से उनकी रिहाईके बाद हुई अपनी दैनिक मुलाकातोंके आधारपर, उन्हें गांधीजी की चिन्ता-धारासे अवगत किया।

३ सितम्बर: 'हरिजनबन्धु' में प्रकाशित लेख "अतिशयोक्ति नहीं है!" में गांधीजी ने लिखा: "हरिजन सेवा मेरा जीवन-श्वास है, इसलिए मैं इसके बिना एक क्षण भी जिन्दा नहीं रह सकता।"
समाचारपत्रोंको दिये वक्तव्यमें मिदनापुरके मजिस्ट्रेट बी० ई० जी० बर्गकी हत्याकी भर्त्सना की।

७ सितम्बर: २४ सितम्बरको मनाये जानेवाले 'हरिजन दिवस' के लिए वक्तव्य जारी किया।

९ सितम्बर: 'हरिजन' में प्रकाशित लेख "क्या उसमें दबाव था?" में गांधीजी ने लिखा कि अनशन "सत्याग्रहके शस्त्रागारका एक बड़ा शस्त्र है, अतः सम्भावित दुरुपयोगके कारण इसे छोड़ा नहीं जा सकता।"
वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको लिखे पत्रमें कहा: ". . . मैं सत्ता नहीं चाहता। मैं इसे सेवाका विशेषाधिकार मानता हूँ। जैसे ही मुझे ऐसा लगेगा कि कांग्रेसकी भलाईके लिए मैं उससे बाहर आ सकता हूँ वैसा करनेसे मैं पीछे नहीं हटूँगा।"

१० सितम्बर: 'हरिजन' में वीना के हिन्दुओं और हरिजनोंको अपने आपसी मतभेद दूर कर लेनेके लिए बधाई दी।

१०–१४ सितम्बर: जवाहरलाल नेहरूसे बातचीत की।

११ सितम्बरसे पूर्व: 'वर्ल्ड फेलोशिप ऑफ फेथ्स' को तथा गुजरात और भड़ौचके अखिल भारतीय महिला सम्मेलन द्वारा आयोजित 'स्वदेशी प्रदर्शनी' को सन्देश भेजे।

१३ सितम्बर: गांधीजी को लिखे एक पत्रमें जवाहरलाल नेहरूने कहा कि कराची कांग्रेस द्वारा पारित "मूल अधिकार और आर्थिक नीति" प्रस्ताव "वह दिशा बताता है जिसमें हमें बढ़ना चाहिए।"

१४ सितम्बर: जवाहरलाल नेहरूको लिखे पत्रमें गांधीजी ने कहा: "मैं तुम्हारे साथ आखिरी हदतक जा सकता हूँ और कह सकता हूँ कि 'हमें विश्वकी प्रगतिशील शक्तियोंका पक्ष लेना चाहिए।' लेकिन . . . यद्यपि आदर्शोंके प्रतिपादनमें हम इतने एकमत हैं, फिर भी हमारे मिजाजोंमें अन्तर है।"

१५ सितम्बर: बम्बईके लिए पूनासे प्रस्थान।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

ई

उ

ख

ग

घ

च

ध

न

म

य

र

ल

व

स

ह